चौथा संस्करण
संशोधित और विस्तारित

स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!



हम पुरुषों को
क्या सुधारना है
स्त्री और पुरुष की भूमिका के विषय में

HANS-JÖRG RONSDORF

स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!

हम पुरुषों को क्या सुधारना है

स्त्री और पुरुष की भूमिका के विषय में

Hans-Jörg Ronsdorf

जर्मन पेपरबैक संस्करण www.hans-joerg-ronsdorf.de पर € 13.80 (डाक-व्यय अतिरिक्त) में मँगाया जा सकता है।

चौथा परिवर्धित संस्करण, जुलाई 2023 (जर्मन संस्करण)

जर्मन से अनुवाद, 2026 – www.hans-joerg-ronsdorf.de पर मुफ़्त डाउनलोड

© Hans-Jörg Ronsdorf – सर्वाधिकार सुरक्षित।

Albis 6½

87477 Sulzberg

टाइपसेटिंग: Hans-Jörg Ronsdorf, Papyrus Autor के साथ

सम्पर्क ई-मेल: hj-ronsdorf@t-online.de

जर्मन संस्करण का ISBN 978-3-9820715-5-8

आवरण-सज्जा: टोबियास श्ट्रिकर (Tobias Stricker)

चित्रांकन: लाउरा-क्रिस्टिन रॉन्सडॉर्फ़ (Laura-Kristin Ronsdorf)

मुद्रण: www.wir-machen-druck.de

जर्मन संस्करण में प्रयुक्त बाइबल-अनुवाद, यदि अन्यथा न बताया गया हो:

एल्बरफेल्डर अनुवाद (Elberfelder Übersetzung, जर्मन बाइबल अनुवाद), Edition CSV Hückeswagen

अपनी प्रिय पत्नी के लिए,

अपनी अद्भुत बेटियों के लिए,

अपनी आदरणीय माँ के लिए,

अपनी दादी-नानी के लिए,

अपनी बहन के लिए,

मसीह में अपनी बहनों

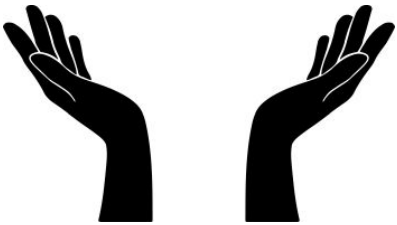
और सहेलियों के लिए,

हव्वा की सब बेटियों के लिए,

जिनके साथ मिलकर मैंने

परमेश्वर के राज्य के लिए काम किया है

और आगे भी सेवा करूँगा।



विषय-सूची

1 प्रस्तावना **10**
1.1 दूसरे परिवर्धित संस्करण की प्रस्तावना **12**
1.2 चौथे संस्करण की प्रस्तावना **13**
1.3 यह पुस्तक कौन लिख रहा है **13**

2 सृष्टि और पतन **18**
2.1 सब कुछ कैसे आरम्भ हुआ **18**
2.1.1 छठे दिन का काम 19
2.1.2 मनुष्य: परमेश्वर का स्वरूप – Imago Dei 20
2.1.3 पुरुष और स्त्री के रूप में मनुष्य 21
2.1.4 मनुष्य और परमेश्वर का सौंपा हुआ कार्य 21
2.1.5 आदम और हव्वा की सृष्टि 22
2.1.6 इब्रानी मुख्य शब्दों पर एक संक्षिप्त विषयान्तर 23
2.1.7 आदम को सहायता चाहिए 24
2.1.8 हव्वा की सृष्टि होती है 26
2.1.9 पसली से 27
2.1.10 नारी (Männin) 28
2.1.11 एक-दूसरे के लिए दिए गए वरदान 29
2.2 पुरुष और स्त्री का पतन **31**
2.2.1 हव्वा का उत्तर 34
2.2.2 हव्वा का कष्ट, गर्भावस्था और वश में किया जाना 35
2.2.3 तेरी लालसा उसकी ओर होगी, वह तुझ पर प्रभुता करेगा 38
2.3 समानता के विरुद्ध आपत्तियाँ **41**
2.4 पुरुष और स्त्री की भिन्नता **44**
2.5 सृष्टि की व्यवस्था **46**
2.5.1 अदन की वाटिका से नए यरूशलेम तक 48
2.6 वह तुझ पर प्रभुता करेगा – इतिहास **49**
2.6.1 प्राचीन काल 49
2.6.2 अरस्तू 50
2.6.3 सम्पत्ति के रूप में स्त्री 52
2.6.4 पितृसत्ता 52
2.6.5 यहूदी चिन्तन पर यूनानी प्रभाव 53
2.6.6 कलीसियाई पिता 54
2.6.7 धर्मसुधार 55
2.6.8 धर्मनिरपेक्ष स्त्री-अधिकार आन्दोलन 57

3 यीशु, मसीहा, और स्त्रियाँ **60**

3.1 सेवा करनेवाली शिष्याएँ **61**
3.2 स्त्रियों को सीखना चाहिए **62**
3.3 सब बराबर **62**
3.4 मासिक धर्म अब अशुद्धता नहीं **63**
3.5 निकाली गई और पाई गई **63**
3.6 व्यभिचार में दो लोग होते हैं **64**
3.7 सीधी और पूरे कद में खड़ी होना **65**
3.8 कोई दोहरा मापदण्ड नहीं **66**
3.9 बेहिसाब अनुग्रह **66**
3.10 क्रूस: पुरुष कहाँ हैं? **67**
3.11 मरियम, प्रेरिता **68**

4 पौलुस, स्त्रियों का मित्र **71**
4.1 लुदिया **72**
4.2 फीबे **72**
4.3 प्रिस्का **74**
4.4 यूनिया **75**
4.5 मरियम, त्रूफैना और त्रूफोसा, पिरसिस **76**
4.6 यूओदिया और सुन्तुखे **77**
4.7 खलोए **77**
4.8 नुमफा **78**
4.9 पौलुस, दूध पिलानेवाली माता **79**

5 विवाह में पुरुष और स्त्री **82**
5.1 प्राचीन घराना और उसके नियम **82**
5.1.1 नए नियम में घर-परिवार के नियम 83
5.1.2 मसीही घर-परिवार के नियमों का प्रभाव 84
5.1.3 इफिसियों 5 में घर-परिवार के नियम 85
5.1.4 पारस्परिक समर्पण का कारण 87
5.1.5 मसीही जीवन के लिए निर्देश – आज 88
5.1.6 प्राचीन घराने में स्त्री 89
5.2 सिर और अधीनता: इफिसियों 5 ..... **90**
5.2.1 सिर 91
5.2.2 प्राचीन काल में परिवार 91
5.2.3 शब्दशः लें? 92
5.2.4 सन्दर्भीकरण 94
5.2.5 एक बार फिर: सिर 95
5.2.6 निष्कर्ष 96
5.3 समर्पणशील होना **98**
5.3.1 निष्कर्ष 103

6 कलीसिया में पुरुष और स्त्री 106
6.1 1 कुरिन्थियों 11 – सिर, बाल और ओढ़नी 108
6.1.1 पाठ की व्याख्या के लिए मार्गदर्शक सिद्धान्त और संकेत 109
6.1.2 पाठ का लागू होने का क्षेत्र 110
6.1.3 एक सिर वाले तीन जोड़े 111
6.1.4 सिर का क्या अर्थ है? 112
6.1.5 कुरिन्थुस में सिर ढाँकना 115
6.1.6 सिर पर अधिकार का चिह्न रखना? 118
6.1.7 आज की प्रासंगिकता 119
6.1.8 व्याख्यात्मक भावानुवाद 120
6.1.9 समापन और सारांश 122
6.1.10 1 कुरिन्थियों 11 का एक और पाठ-दृष्टिकोण 123
उद्धरणों के उदाहरण 123
6.1.11 1 कुरिन्थियों 11:2-16 का वैकल्पिक अनुवाद 125
6.1.12 निष्कर्ष 126
6.2 बोलना नहीं, बल्कि चुप रहना 128
6.2.1 प्रश्न 129
6.2.2 अध्याय के अन्त में उलझन 131
6.2.3 उद्धरण के रूप में पढ़ना 131
6.2.4 एक रोमी कानून? 134
6.2.5 कदापि नहीं! 135
6.2.6 अन्य व्याख्याएँ 136
6.2.7 संभवतः पौलुस का नहीं 137
6.2.8 अंतिम मूल्यांकन 143
6.3 क्या स्त्रियाँ शिक्षा दे सकती हैं? 146
6.3.1 पाठ 1 तीमुथियुस 2:8-15 147
6.3.2 इफिसुस की ऐतिहासिक परिस्थिति 148
6.3.3 पृष्ठभूमि 149
6.3.4 हर जगह प्रार्थना, क्रोध और आभूषण 150
6.3.5 शांति और अधीनता में सीखना 151
6.3.6 न शिक्षा देना और न पुरुष पर प्रभुता करना 152
6.3.7 क्या शिक्षा देना प्रभुता करना है? 152
6.3.8 “प्रभुता करने” का क्या अर्थ है? 153
6.3.9 इफिसुस में आदम और हव्वा 156
6.3.10 मैं अभी अनुमति नहीं देता 157
6.3.11 बच्चे जनने के द्वारा उद्धार? 158
6.3.12 1 तीमुथियुस आज 159
6.3.13 निष्कर्ष 160
6.3.14 तीमुथियुस के पाठ का व्याख्यात्मक भावानुवाद 160

6.4 सार्वभौमिक और समय से बँधी आज्ञाएँ **161**
6.4.1 बाइबलवाद और Sola Scriptura 162
6.4.2 शब्दशः लेना और शाब्दिक अर्थ 164

7 याजिकाएँ, प्राचीनाएँ और सेविकाएँ **165**
7.1 सब विश्वासियों का याजकपद **165**
7.2 प्राचीन और प्राचीनाएँ **166**
7.3 वह एक भले काम की लालसा रखती है **167**
7.4 सेविकाएँ (डीकन) **168**
7.5 प्रचारिकाएँ **170**
7.6 सार **171**

8 "मसीह में एक जन": गलातियों 3:28 ..... **173**
8.1 पाठ क्या कहता है **173**
8.2 पाठ सीधे क्या नहीं कहता **175**
8.3 पाठ परोक्ष रूप से फिर भी क्या कहता है **175**
8.3.1 यहूदी और यूनानी 176
8.3.2 दास और स्वतंत्र 176
8.3.3 दास-प्रथा के विषय में जानकारी 177
8.3.4 पुरुष और स्त्री 177
8.3.5 सांसारिक और आत्मिक? 178
8.3.6 न कोई नर है, न नारी 179
8.4 सारांश और निष्कर्ष **180**

9 परमेश्वर पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा **182**
9.1 क्या परमेश्वर पुरुष है? **183**
9.2 तू अपने लिए कोई मूर्ति न बनाना **184**
9.3 परमेश्वर के स्त्री-रूपी चित्र **185**
9.4 पिता और पुत्र **186**
9.5 अनन्त पुत्र की अधीनता? **187**
9.6 यीशु और उसके 12 चेले **189**
9.7 निष्कर्ष **191**

10 मेरा पाप-स्वीकार **192**

11 निष्कर्ष और आगे की दृष्टि **195**
11.1 संकेत और सुझाव **197**

12 अन्तर **199**
12.1 वरदान-केंद्रित मॉडल **199**
12.2 पदानुक्रमिक मॉडल **201**

13 विभिन्न पाठकों के उपसंहार **203**

13.1 खुली दृष्टि पर झाड़ियाँ उग आई हैं! **203**
13.2 क्या कुछ सम्भव हो सकता था! **205**
“स्त्रियों का प्रश्न” और “भाई-बहनों का प्रेम” **206**
13.3 परिवर्तन **207**

14 समापन-निवेदन: क्या स्त्रियों का प्रश्न इतना महत्वपूर्ण है? **209**
14.1 बात कुछ (वर्जित) सेवाओं की नहीं है **209**
14.2 पुरुष क्या अनुभव करते हैं और क्या नहीं **210**
14.3 स्त्रियों के प्रश्न में हम बाइबल कैसे पढ़ते हैं **210**
14.4 अंतर्बोध **211**
14.5 मेरा उद्देश्य क्या नहीं है **212**
14.6 अलग होने का कारण? **212**
14.7 स्त्रियों को खड़ा होना होगा **213**
14.8 आगे चलकर और अभी **213**

15 ग्रन्थ-सूची **215**

16 लेखक की पुस्तकें **219**

17 अनुशंसित पुस्तकें **220**
हन्ना-मारिया श्मालेनबाख (Hanna-Maria Schmalenbach) **221**
Frausein zur Ehre Gottes 221

1 प्रस्तावना

इस सदाबहार विवाद पर एक और पुस्तक? क्या इस पर सब कुछ कहा और लिखा नहीं जा चुका? फिर से झगड़ना, या झगड़ा जारी रखना? क्या विश्वास की रक्षा के लिए कोई मसीही-प्रतिवाद (अपोलोजेटिक्स) का विषय अधिक महत्वपूर्ण नहीं होता? मुझे स्पष्ट हुआ कि यह विषय भी अपोलोजेटिक्स का ही भाग है। यह एक उत्तर-आधुनिक धर्मनिरपेक्ष समाज में सार्वभौमिक नैतिक मानदण्डों की रक्षा है, पर साथ ही एक रूढ़िवादी और बाइबलवादी मसीहियत के भीतर भी। मैं स्पष्ट करूँगा कि दूसरी बात भी क्यों सच है।

इन प्रश्नों पर छोटी-छोटी लड़ाइयाँ, संघर्ष और खींचतान इस पुस्तक के बिना भी चलती रहेंगी। यह आज भी कलीसियाओं को बाँट रही है। कुछ तो इसी प्रश्न पर कि क्या आराधना सभा में स्त्रियों की आवाज़ सुनाई भी दे सकती है। दूसरे इस प्रश्न पर कि क्या उनके यहाँ सेविकाएँ (डीकन) या प्राचीनाएँ[1] हो सकती हैं। या क्या स्त्रियाँ अगुवाई के दायित्व निभा सकती हैं और प्रचार कर सकती हैं।

कुछ दृष्टिकोण ऐसे हैं जो हमारे मन में किलों की तरह अजेय बने हुए हैं: कि परमेश्वर के वचन को हर युग-धारा के विरुद्ध शब्दशः लिया जाना चाहिए। और वे लोग, जिनके मन में प्रश्न और सन्देह हैं कि क्या आज हमें इसे इसी तरह शब्दशः मानना है।

इस पुस्तक में मैं इस विषय पर अपने अध्ययन का सार प्रस्तुत करता हूँ। जो इस विषय के साहित्य से परिचित है, वह शायद ही नई अन्तर्दृष्टियों की आशा कर सकता है। न ही यहाँ उन सब दृष्टिकोणों का विवेचन है, जो अत्यन्त रूढ़िवादी से लेकर अत्यन्त प्रगतिशील तक पाए जाते हैं। यह पुस्तक कोई खुले परिणाम वाला अध्ययन नहीं है – यह एक स्पष्ट दृष्टिकोण है। उसे खोजने और प्रमाणित करने में मुझे दशकों लगे। यह उससे भिन्न है जो मैंने पहले सीखा और जिसका समर्थन किया था।

क्या इसे समझाने के लिए पूरी पुस्तक चाहिए? क्या यह इतना जटिल है? हाँ और नहीं। यदि आप न्याय की भूलों का इतिहास देखें, जैसा कि अमेरिका में मृत्युदण्ड पाए लोगों के मामलों में दिखाई देता है, तो अक्सर निर्दोषता सिद्ध करने के लिए प्रमाणों और परिस्थितिजन्य साक्ष्यों को जुटाने में भारी परिश्रम करना पड़ता है। पर कभी-कभी एक जीन-परीक्षण (डीएनए टेस्ट) ही काफ़ी होता है। उसमें चाहे जितना परिश्रम लगे, ऐसे मृत्युदण्ड पाए लोगों के चेहरे देखिए, जो 30, 40 या 50 वर्ष बाद रिहा होते हैं! इसी तरह आप इस पुस्तक में सरल विचार पाएँगे, कभी-कभी कुछ अधिक जटिल भी। बाइबल को समझना हमेशा सरल नहीं है। ऐसा मानना भ्रम होगा। स्वयं मछुआरे और प्रेरित पतरस ने भी यह बात कही, जब वह पौलुस की पत्रियों के विषय में कहता है (2 पतरस 3:15-16) कि उन्हें समझना सरल नहीं है।

जब यह पुस्तक पढ़ी जाएगी, तो खण्डन, प्रतिवाद और आक्रोश आने में देर नहीं लगेगी। मैं इन प्रक्रियाओं को जानता हूँ और स्वयं इनका भाग रहा हूँ। चाहे सोच में कोई परिवर्तन न भी आए, कम से कम यह विषय चर्चा में तो आएगा।

1. अधिकतर स्थानों पर मैं स्पष्टता के लिए इस शब्द का स्त्रीलिंग रूप प्रयोग करता हूँ। आज प्रचलित, और बाइबल की मूल भाषाओं में भी, सामान्य पुल्लिंग (जेनेरिक मैस्कुलिन) है, जिसमें स्त्रीलिंग रूप भी सम्मिलित रहता है (देखें अध्याय 6.4.1)।

ठीक अभी, जब मैं ये पंक्तियाँ लिख रहा हूँ, अमेरिका के सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) जगत में इस पर एक बार फिर तीखी बहस चल रही है। मैं यह दावा नहीं कर सकता कि मैंने यह पुस्तक बिना भावनाओं के लिखी है। फिर भी मैंने वस्तुनिष्ठ रहने का प्रयास किया है। इसका निर्णय पाठक करें।

और: निश्चय ही कुछ बातें ऐसी हैं जिन पर भिन्न मत रखा जा सकता है। वहाँ मैं अपने निर्णय इस प्रकार लेता हूँ कि वे मेरी समझ के अनुसार बाइबल के बड़े चित्र में ठीक बैठें।

मेरे हृदय में वे बहुत-सी स्त्रियाँ और प्रभावित पुरुष हैं, जो यीशु के पीछे चलते हैं और लिंग-भूमिकाओं के इस विषय को तथा बोलने, शिक्षा देने और अगुवाई करने पर लगे प्रतिबन्धों को सन्दिग्ध और बोझ अनुभव करते हैं। क्योंकि एक ओर वे बाइबल को गम्भीरता से लेना चाहते हैं, पर दूसरी ओर इसे व्यवहार में नहीं ला पाते। इसके साथ, और यह कोई छोटी बात नहीं, यह भी जुड़ा है कि इस मामले में संसार हमें किस दृष्टि से देखता है। वही संसार, जिसके पास हम सुसमाचार ले जाते हैं।

क्या परमेश्वर ने इसे हमारे लिए इतना कठिन बना दिया है? क्या उसकी यह इच्छा है कि इन प्रश्नों में अध्ययन, प्रार्थना और चर्चा के लाखों घण्टे लगाए जाएँ? कि फूट को स्वीकार किया जाए और एकता की बलि दी जाए?

मुझे पूरा विश्वास है, और यह पुस्तक इसी के पक्ष में मेरा निवेदन है, कि ये प्रश्न अत्यन्त सामयिक हैं। क्योंकि यदि स्त्रियाँ पदानुक्रम में पुरुष के नीचे हैं, और इसी कारण कलीसिया में उनकी सेवा सीमित है (इस हर आश्वासन के बावजूद कि अनगिनत अन्य, ग़ैर-सार्वजनिक सेवाएँ हैं), तो यदि हम भूल पर हैं तो परमेश्वर हम पर दया करे।

यह आज्ञाकारिता का प्रश्न है। दोनों लिंगों के लिए। किसी व्यवस्थावादी, दासवत् और भयभीत आज्ञाकारिता का नहीं।

यह पुस्तक पिछले लगभग 40 वर्षों में मेरे अध्ययनों, अनगिनत बातचीतों और इंटरनेट-मंचों पर हुई चर्चाओं का सार है। मैंने दूसरों से बहुत कुछ सीखा है।

मैं एक बाइबलीय मार्ग दिखाने का प्रयास करता हूँ। मैं इसे यथासम्भव सरलता से समझाता हूँ। कभी-कभी किसी पाठिका या पाठक के लिए यह शायद बहुत जटिल हो जाए। तब मेरा सुझाव है कि उस भाग को छोड़कर अगला अध्याय पढ़ें। मैं धर्मविज्ञानी के रूप में नहीं लिखता, न धर्मविज्ञानियों के लिए, और न उनके लिए जो स्वयं को ऐसा समझते हैं। मेरे सामने वे लोग हैं, जिनके साथ मैं लम्बे समय तक चला हूँ, और वे जो नए-नए विश्वास में आते हैं, जिनकी शिक्षा के द्वारा मुझे सेवा करनी है। मैं आशा और प्रार्थना करता हूँ कि यह पुस्तक पुरुषों और स्त्रियों दोनों के लिए सहायक हो।

कुछ बाइबल-वचनों पर नए सिरे से विचार करना होगा। ऐसा पहली बार नहीं हो रहा है। कुछ लोगों के लिए बाइबल के पाठों की नई व्याख्या धृष्टता और सन्देहजनक है। उनके अनुसार सीमाएँ खिसकाई जा रही हैं। पर “जो धर्मविज्ञान स्वयं को धर्मसुधार की परम्परा में देखता है, उसके स्वभाव में ही यह बात है कि आदतों पर प्रश्न उठाए जाएँ और बाइबल के पाठ नए सिरे से पढ़े जाएँ”।[2]

2. Wunderli, 53, “Ihm gegenüber”: Geschlechter-Gleichberechtigung in der Kirche und was die Bibel dazu (nicht) sagt, 2020

आपको इस पुस्तक में बहुत-से उद्धरण मिलेंगे। ये मूल्यवान विचार मुझे अक्सर अंग्रेज़ी-भाषी जगत में मिले, और मैं उन्हें जर्मन-भाषी पाठकों तक पहुँचाना चाहता हूँ।

अन्त में: हमारा धर्मविज्ञान त्रुटिहीन नहीं है। कभी नहीं। हम चाहे इसकी कितनी भी इच्छा करें। सब पुस्तकों की तरह इस पुस्तक में भी त्रुटियाँ, कमज़ोरियाँ और ख़ूबियाँ हैं। इस पुस्तक पर भी यह लागू होता है कि दूसरे इसे बेहतर लिख सकते थे। मैं उन सब बहनों और भाइयों का धन्यवाद करता हूँ जिन्होंने अपने विचार, सुधार, सुझाव और उपसंहार दिए। विशेष रूप से मैं कॉनी एन्ड्रोस (Conny Endrös, Lauben bei Kempten im Allgäu) और बर्न्ड ह्युस्केन (Bernd Hüsken, Schwelm) का सम्पादन (लेक्टोरेट) के लिए धन्यवाद करता हूँ। इससे मुझे आनन्द होता है और Schwelm में बिताई अपनी युवावस्था याद आती है, जहाँ मैं बड़ा हुआ और जहाँ मुझे एक अच्छी आत्मिक नींव मिली।

Hans-Jörg Ronsdorf

Sulzberg im Allgäu, नवम्बर 2020

मैं तेरी विधियों से आनन्दित रहता हूँ, मैं तेरे वचन को नहीं भूलूँगा।

तेरी चितौनियाँ मेरा सुख-आनन्द हैं, वे मेरी परामर्शदाता हैं।

मैं तेरी आज्ञाओं के मार्ग पर दौड़ता हूँ, क्योंकि तू मेरे हृदय को विशाल करता है।

भजन संहिता 119:16; 24; 32 (Zürcher Bibel, जर्मन बाइबल अनुवाद)

1.1 दूसरे परिवर्धित संस्करण की प्रस्तावना

दूसरे संस्करण के लिए मैंने हल्के संशोधन और कुछ परिवर्धन करने का निर्णय लिया। कुछ सुधार, पर उससे अधिक परिवर्धन और शैली-सम्बन्धी सुधार मुझे आवश्यक लगे।

मुख्य रूप से मैंने इस विषय के तीन केन्द्रीय पाठों वाले अध्यायों को संशोधित किया, उनमें जोड़ा, पर जहाँ सम्भव था वहाँ छोटा भी किया। यह विशेष रूप से सिर, बाल और ओढ़नी वाले अध्याय पर लागू होता है।

पहले संस्करण के प्रकाशन के बाद मैंने और भी सामग्री देखी और स्वयं भी तैयार की। उसमें से कुछ आपको मेरी वेबसाइट www.hans-joerg-ronsdorf.de पर मिलेगी।

अमेरिका में लगभग हर महीने इस विषय पर एक नई पुस्तक प्रकाशित होती है। इनमें से अधिकतर उच्च धर्मवैज्ञानिक गुणवत्ता की होती हैं और नए नियम के पाठों पर काम करती हैं। वे इस विषय पर इस प्रकार प्रकाश डालती हैं कि उससे वही पुष्ट होता है जो मैं इस पुस्तक में कहना चाहता हूँ। मुझे पहले से कहीं अधिक निश्चय है कि जीवन के सब क्षेत्रों में पुरुष और स्त्री का पूर्ण समान दर्जा परमेश्वर की इच्छा है।

मैं आशा और प्रार्थना करता हूँ कि यह बाइबलीय सत्य विवाहों, परिवारों और कलीसियाओं में चंगाई लाए। शायद यह पुस्तक अब जाकर वैसी बनी है जैसी उसे होना चाहिए। फिर भी यह अब भी भूल कर सकती है;

यह सत्य नहीं, बल्कि मेरी व्याख्या है।

Hans-Jörg Ronsdorf,

Sulzberg, जुलाई 2021

तीसरा संस्करण बढ़ी हुई माँग के कारण आवश्यक हुआ। साथ ही मैंने इस अवसर का उपयोग कुछ और छोटे सुधार और परिवर्धन करने के लिए किया। इससे इस पुस्तक के सन्देश में कोई परिवर्तन नहीं होता। मुझे आनन्द है कि यह विषय अधिक से अधिक चर्चा में आ रहा है और प्रभु में बहनें अधिक से अधिक समझ रही हैं कि उनकी बुलाहट क्या है।

Hans-Jörg Ronsdorf,

Augsburg, नवम्बर 2021

1.2 चौथे संस्करण की प्रस्तावना

लगभग 2 वर्ष बीत गए हैं। इस पुस्तक का विषय सदाबहार विवाद बना हुआ है। इन दिनों अमेरिका में दक्षिणी बैपटिस्ट संघ (SBC) से कलीसियाओं को निकाला जा रहा है, जब वे स्त्रियों को अगुवाई के पदों पर नियुक्त करती हैं या उनके यहाँ स्त्री पास्टर होती हैं। और वह भी उन दक्षिणी राज्यों में, जहाँ बहुत-से मसीहियों ने दास-प्रथा को भी बाइबल के आधार पर उचित ठहराया था।

इस चौथे संस्करण में 1 कुरिन्थियों 14 में चुप रहने की आज्ञा के विषय पर एक महत्वपूर्ण परिवर्धन है।

मेरी वेबसाइट www.hans-joerg-ronsdorf.de देखिए, क्योंकि वहाँ इस विषय पर बार-बार नए लेख प्रकाशित होते हैं।

Hans-Jörg Ronsdorf

Augsburg, जुलाई 2023

1.3 यह पुस्तक कौन लिख रहा है

अधिकतर किसी पुस्तक की विषय-वस्तु उसके लेखक से अधिक महत्वपूर्ण होती है। इस मामले में, रूढ़िवादी मसीहियों के बीच इतने संवेदनशील विषय पर, मैं पाठक को बताना चाहता हूँ कि यह पुस्तक कौन लिख रहा है। और वह उन दृष्टिकोणों तक कैसे पहुँचा, जिनका यहाँ वर्णन किया गया है।

अपनी आयु के छत्तीसवें वर्ष तक मैं अपनी पत्नी और पाँच बच्चों के साथ एक (बन्द, एक्सक्लूसिव) ब्रदरन सभा (Brüderversammlung) का भाग था, जिसे “पुरानी सभा” (Alte Versammlung) के नाम

से भी जाना जाता है। वे स्वयं को यह नाम नहीं देते, क्योंकि वे हर प्रकार के "नामकरण" को अस्वीकार करते हैं। इन सभाओं या आराधना सभाओं में स्त्रियाँ चुप रहती हैं। वे भाग नहीं लेतीं। लगभग हमेशा पुरुष और स्त्रियाँ अलग-अलग बैठते हैं। आराधना सभा में स्त्रियाँ पतलून नहीं पहनतीं। स्त्रियाँ सिर ढाँकती हैं।

फिर हम Allgäu की एक कलीसिया(-आन्दोलन) का भाग बने, जिसका आरम्भ 80 के दशक में परमेश्वर के एक कार्य से हुआ था। वहाँ कुछ कलीसियाओं में स्त्रियों को ऊँचे स्वर में प्रार्थना करने, अपने जीवन की गवाही देने या कोई गीत सुझाने की अनुमति थी। अपने अतीत के कारण मुझे इसमें कठिनाई होती थी, क्योंकि 1 कुरिन्थियों 14 स्त्रियों को चुप रहने की आज्ञा देता है।

कुछ वर्षों के बाद मैंने इस प्रश्न का फिर से सामना किया और पवित्रशास्त्र की गहराई से जाँच की। मुझे सचमुच स्पष्ट हुआ कि यह प्रथा, कि स्त्रियाँ ऊँचे स्वर में प्रार्थना करें, गवाही दें और गीत सुझाएँ, पूरी तरह बाइबलीय है। मेरे कारण आगे के अध्यायों में मिलेंगे।

उनकी भागीदारी को मैंने अधिकाधिक सकारात्मक रूप में अनुभव किया। यहीं यह आपत्ति उठाई जा सकती है कि पवित्रशास्त्र की मेरी जाँच इसी सकारात्मक रवैये के कारण पहले से उस दिशा में प्रभावित थी। अचेतन रूप से ऐसा हो सकता है। सचेत रूप से ऐसा नहीं था। मेरा विश्वास ठीक-ठीक क्यों बदला, यह मैं दिखाऊँगा।

अब उस कलीसिया में स्थिति यह थी कि स्त्रियाँ प्रचार नहीं करती थीं, और न सेविका (डीकन) और न प्राचीना बन सकती थीं। मित्र कलीसियाओं में भी ऐसा ही था और है। कुछ में तो बहनें चुप भी रहती हैं, जिसका कारण जर्मनी की स्वतन्त्र ब्रदरन सभाओं और Salzburgerland की एक कलीसियाई धारा का प्रभाव या उनसे निकटता है।

कुछ वर्ष पहले मैंने वह कलीसिया छोड़ दी। ऐसे कारणों से, जिनका यहाँ इस विषय से कोई सम्बन्ध नहीं है। इससे मुझे वह अनुभव हुआ, जो दूसरों को भी हुआ है। स्थान और समय की दूरी मुझे उस बात पर एक नई, विश्लेषण करने वाली दृष्टि देती है, जिसका मैं वर्षों तक भाग रहा। मैं वहाँ सात वर्ष तक प्राचीन रहा और स्त्री की भूमिका के इस दृष्टिकोण को स्वयं माना, उसका बचाव किया और उसे लागू किया। पर दूरी ने इस प्रश्न पर नए सिरे से सोचना सम्भव बनाया। किसी समुदाय के इस बाहरी दबाव के बिना मैं समय के साथ दूसरी अन्तर्दृष्टियों तक पहुँचा। सम्भवतः दूरी के बिना यह सम्भव न होता।

मत-परिवर्तन की इस प्रक्रिया को, जिसे मैं पाठक से नहीं छिपाता, जान-बूझकर नकारात्मक रूप में पतन, धर्मत्याग, सांसारिकता के रूप में समझा जा सकता है। ये विचार-ढाँचे और उद्देश्यों पर लगाए जाने वाले निर्णय मैं अपनी युवावस्था से लगभग "भविष्यद्वाणी" जैसे पैमाने पर जानता हूँ। वे प्रबल हैं और गहरे बैठे हैं। उनसे छूटना कठिन है। मैं स्वयं उनका सक्रिय भाग था।

यह मेरी कलीसियाई स्थिति और अतीत है। बाइबल कलीसियाई जीवन में बड़ी स्वतन्त्रता देती है। एकत्र होने का स्वरूप निर्धारित नहीं किया गया है। एकमात्र सही मार्ग कोई नहीं है। चाहे कुछ मसीही ऐसा मानते हों। आराधना सभा का रूप – और ऐसे रूप बहुत-से हैं – स्वतन्त्र है! उसमें स्त्रियों की भूमिका इस पुस्तक का विषय है।

मेरे व्यक्तित्व के विषय में सबसे महत्वपूर्ण बात अभी बाकी है। या बेहतर कहूँ, मेरे जीवन का सबसे महत्वपूर्ण व्यक्ति। मेरी पत्नी क्रिस्टीन (Christine)। उसके लिए मैंने माता-पिता को छोड़ा, ताकि उसके साथ जीवन बाँट सकूँ। हमारे पाँच वयस्क बच्चे हैं। मेरी पत्नी एक सशक्त व्यक्तित्व है। एक सिंहनी-सी माँ, जो लड़ सकती है। एक बुद्धिमान स्त्री। जिसके लिए मैं सबसे बढ़कर आभारी हूँ, जैसे प्रभु में मेरे बहुत-से भाई भी अपनी पत्नियों के लिए आभारी हैं। लिंग-सम्बन्धी प्रश्नों में मेरी व्यक्तिगत समझ की यात्रा का वह भी भाग है। उसके बिना मैं वहाँ न होता जहाँ आज खड़ा हूँ। मैं सीखने वाला हूँ और रहूँगा, भूल करने वाला भी।

हम दोनों एक स्वतन्त्र और लोकतान्त्रिक देश में बड़े हुए। पुरुष और स्त्री के समान अधिकारों के कानून के साथ, यद्यपि आज तक स्त्रियों के साथ भेदभाव होता है। मैं जर्मनी और पश्चिमी सांस्कृतिक जगत की बात कर रहा हूँ। हमने अभी तक कोई युद्ध नहीं देखा। कोई अकाल नहीं। इस वर्ष हम अपनी पीढ़ी की पहली महामारी देख रहे हैं। अनन्त और अटल सुरक्षा और उन्नति की भावना पहली बार हिल रही है।

अब तक के ये असाधारण रूप से सकारात्मक जीवन-अनुभव हमारी सोच को और दूसरी संस्कृतियों के प्रति हमारी दृष्टि को आकार देते हैं। मैं समान अधिकारों को आधुनिक लोकतन्त्र की एक आशीषमय उपलब्धि मानता हूँ। दास-प्रथा के उन्मूलन के समान, जो कभी भी परमेश्वर की इच्छा के अनुरूप नहीं है।

मैं इसका उल्लेख इसलिए करता हूँ, क्योंकि हमारा सामाजिक-संस्कार (एक्सक्लूसिव) ब्रदरन आंदोलन की सोच से निर्धारित हुआ था। वहाँ पुरुष और स्त्री को समान मूल्य का माना जाता था और आज भी माना जाता है, पर स्त्री को कलीसिया की आराधना सभा में भागीदारी से बाहर रखा जाता है। स्त्री अधीन है। वह पुरुष की सहायक (Gehilfin) है। पुरुष सिर है और विवाह में अगुवाई उसी की है। इस प्रकार लोग मानते हैं कि वे परमेश्वर के वचन के आज्ञाकारी हैं। बाइबल के प्रति विश्वासयोग्य।

कोई यह विश्वास रख सकता है। पर यह प्रश्न पूछना उचित है कि यह आज के जीवन की वास्तविकता से कहाँ तक मेल खाता है, और क्या मेल खा भी सकता है। मेरा विवाह कैसा था, और मैंने माता-पिता, दादा-दादी और आज मित्रों और परिचितों के विवाहों को कैसा अनुभव किया, जो दृढ़ विश्वास के कारण लिंगों के भिन्न दर्जे या अधिकार को जीने का प्रयास करते हैं?

यद्यपि अपने विवाह के आरम्भिक वर्षों में मैंने बहुत-सी बातें स्वयं और अपनी पत्नी से परामर्श किए बिना तय कीं, आज मैं लगभग ऐसा नहीं करता। हम सबसे अच्छे तब चले, जब हमने एक टीम के रूप में निर्णय लिए और काम किया। आदर और प्रेम एकतरफ़ा रास्ता नहीं हैं। एक-दूसरे से विचारों का आदान-प्रदान और साथ-साथ जीना, बराबरी के स्तर पर बोलना और सुनना – यही आदर्श स्थिति है। हर किसी के मज़बूत और कमज़ोर दौर आते हैं। एक-दूसरे को पूरा करना, जब भी आवश्यक हो, और वैसे भी यह सामान्य है। हमेशा पुरुष ही आगे नहीं चलता। स्त्री भी हो सकती है। बारी-बारी से। एक-दूसरे को पूरा करते हुए। तालमेल के साथ। खुले मन से। सुधार स्वीकार करने को तैयार। सुनते हुए। साथ मिलकर प्रार्थना करते हुए। यही मैं जीवन की वास्तविकता के रूप में अनुभव करता हूँ। इसके अतिरिक्त कुछ भी पीछे की ओर कदम होगा। मैं प्राचीन पूर्व के समान, अब्राहम या दाऊद के समय के समान विवाह नहीं चलाना चाहता और न चलाऊँगा। न यीशु के समय के समान, और उतना ही कम धर्मसुधार के समय के समान। न अपने दादा-दादी के समान। इस बात में मैं आभारी हूँ कि मैं 21वीं शताब्दी में जी रहा हूँ।

अब मैं देखता हूँ कि जो लोग मानते हैं कि वे पुरुष और स्त्री के प्रश्न में बाइबल के प्रति विश्वासयोग्य रहकर जीते हैं, वे व्यवहार में हमसे शायद ही अलग जीते हैं। उनका विवाह भी समान अधिकारों से भरा है, एकतरफ़ापन से नहीं, बल्कि एकता में द्वैत से। इससे मेरा आशय यह है कि कुछ अपवादों को छोड़कर मुझे कहीं ऐसे मसीही विवाह दिखाई नहीं देते, जैसा पौलुस और पतरस उनका वर्णन करते हैं (इन पाठों पर विस्तार से चर्चा होगी)। इसके विपरीत, ये पत्नियाँ अपने पतियों के साथ बराबरी के स्तर पर चलती हैं। वे अधिकतर एक टीम हैं। यह सामान्य आरोप कि स्त्रियाँ अपने पतियों को अपने वश में करना या उन पर हुक्म चलाना चाहती हैं, अन्यायपूर्ण है। चाहे ऐसा होता भी हो। पाप हर विवाह में छोटी या बड़ी आग का स्रोत बना रहता है। पर अच्छे आपसी सम्बन्ध में यह आग अधिकतर बुझ जाती है।

जब मैं इस पुस्तक में विवाह के विषय में अभी बताए गए दृष्टिकोण का और कलीसिया में स्त्री की एक भिन्न भूमिका का समर्थन करता हूँ और उसके कारण बताता हूँ, तो इससे कुछ लोगों में नासमझी, अस्वीकृति, घबराहट और आतंक उत्पन्न होगा। अपने विश्वास का समर्थन करने का हमेशा कुछ मूल्य चुकाना पड़ता है। विशेषकर तब, जब कोई अपनी कलीसिया या मित्रों के दृष्टिकोण के विरुद्ध तर्क देता है। मैं यह पुराने, रूढ़िवादी दृष्टिकोणों के प्रति आदर के साथ करता हूँ। यद्यपि मैं उन्हें ग़लत मानता हूँ। वे परमेश्वर के आत्मा को दबाते हैं और उसका विरोध करते हैं। मैं हर पाठक के लिए कामना करता हूँ कि वह पुस्तक के अन्त तक पढ़े और टिका रहे। अपनी पुस्तक की विषय-वस्तु पर मैं प्रसन्नता से बातचीत करूँगा, जब उसे पूरा पढ़ लिया गया हो।

आप मुझे अवश्य लिख सकते हैं, जब तक तर्क वस्तुनिष्ठ हों और आरोपों से मुक्त हों। मैं इस क्षेत्र को जानता हूँ, जहाँ विशेषकर इन प्रश्नों पर अक्सर गरमागरमी और अवस्तुनिष्ठता होती है, और कभी-कभी बात व्यक्तिगत और चोट पहुँचाने वाली हो जाती है।

हर कोई परमेश्वर के सामने स्वयं को जाँचे और यह समझे कि हमारी समझ टुकड़ों में और कदम-दर-कदम आती है, और हमारे परिवेश तथा उसके समय से गहराई से प्रभावित होती है।

अपनी युवावस्था से ही मुझे पवित्रशास्त्र पढ़ने की सलाह दी गई। प्रतिदिन। और उसका अध्ययन करने की। मैंने ऐसा किया। मैं उस अच्छी बाइबलीय नींव के लिए आभारी हूँ, जो मुझे “सभा” (Versammlung) में मिली। यह पुस्तक मेरे अतीत पर कोई आरोप या उसका लेखा-जोखा नहीं है, यदि कोई इसे ऐसा समझना चाहे। जो भी हो, बाइबल का अध्ययन मेरी आरम्भिक युवावस्था से मेरा शौक बन गया, और उससे भी बढ़कर। और आज तक बना हुआ है। उस समय मैं भी अपने आदर्शों की तरह पवित्रशास्त्र का एक प्रतिष्ठित शिक्षक बनना चाहता था, जिनमें से कुछ आज भी जीवित हैं। यह उद्देश्य बहुत पहले समाप्त हो चुका है। अब यदि कोई पवित्रशास्त्र का इतना अधिक और गहराई से अध्ययन करता है, तो हम क्या सोचते हैं, उससे कौन-सी अन्तर्दृष्टियाँ निकलती हैं? बार-बार वही?

कभी-कभी पवित्रशास्त्र के अध्ययन में हमारी दशा इस्राएल जैसी होती है, जिसकी आँखों पर परदा पड़ा है (2 कुरिन्थियों 3:15)। अक्सर पवित्र आत्मा की उपस्थिति के बावजूद हम हमेशा वही देखते हैं। पर जो बार-बार पवित्रशास्त्र का अध्ययन करता है, उसे आश्चर्य नहीं होना चाहिए जब यही आत्मा अचानक कुछ नया दिखाता है (मत्ती 13:52), लगभग 2000 वर्षों के बाद भी। क्या परमेश्वर का वचन अक्षय नहीं है? धर्मविज्ञानियों और

बाइबल-विज्ञान की सहायता से भी। बाइबल स्कूलों और सेमिनरियों की सहायता से भी, जो पवित्रशास्त्र का अध्ययन करते हैं। जब कलीसिया में, विवाह में और परमेश्वर के राज्य में पुरुष और स्त्री के इस विषय-समूह में ऐसी नई या भिन्न अन्तर्दृष्टियाँ सामने आती हैं, जो सदियों से एकमात्र सही मानी गई बातों से अलग हैं, तो उन्हें केवल इसी कारण तुरन्त ठुकराया नहीं जाना चाहिए। यह विषय उद्धार के लिए निर्णायक नहीं है, और हमें ऐसा व्यवहार नहीं करना चाहिए मानो यह हो! यह बाइबल के प्रति विश्वासयोग्यता की कसौटी नहीं है।

अनुभव से मैं जानता हूँ कि कई दशकों से प्रिय लगने वाले सत्यों पर प्रश्न उठाना कैसा होता है, क्योंकि पवित्रशास्त्र का प्रमाण उतना स्पष्ट और साफ़ नहीं है जितना हमेशा सोचा गया या सिखाया गया था। सोच बदलने की प्रक्रियाएँ पीड़ादायक होती हैं, वे हम पर असर डालती हैं। वे दिखाती हैं कि हम कितने भूल करने वाले, असहाय और बस परमेश्वर पर निर्भर हैं। उसके सामने हम अपनी शिकायत रख सकते हैं, उसके पास अपनी अज्ञानता, अपने प्रश्न और सन्देह भी ला सकते हैं। और अपनी वह "आदतन अन्धता" (Betriebsblindheit) भी, जो अनजाने में वहाँ आ जाती है, जहाँ कोई केवल अपने कलीसियाई परिवेश में ही रहता है और अपने संसार को एकमात्र वैध या बाइबल के प्रति विश्वासयोग्य मानता है।

कुछ वर्षों तक मैं बाइबलीय यूनानी भाषा के एक फ़ोरम का सदस्य रहा। बहुत-सी बातों पर बात हुई और रचनात्मक चर्चा हुई। इस पुस्तक के विषय पर भी चर्चा हुई। उस समय मैंने बहुत कुछ इकट्ठा किया था और अब फिर से पढ़ा। कुछ वर्षों की दूरी से मुझे यह दिखाई देता है कि तर्क शायद ही कभी, या कभी नहीं, खुले परिणाम वाले होते थे। भाषा-ज्ञान चाहे कितना भी ऊँचा हो, किसी दृष्टिकोण के पक्ष में पहले से लिया गया निर्णय और संस्कार ही पक्ष या विपक्ष के तर्कों के लिए निर्णायक होते थे। इस मामले में, कि क्या स्त्रियाँ आराधना सभा में कुछ भी बोल सकती हैं, क्या उन्हें आज सिर ढाँकना चाहिए – शिक्षा देने या अगुवाई करने की तो बात ही छोड़ दें। क्या बाइबल से सचमुच सब कुछ सिद्ध या खण्डित किया जा सकता है?

मेरा इस विषय पर लिखने का कभी इरादा नहीं था। यह विवादित है और इस पर संघर्ष होता है। एक बारूदी सुरंगों वाला क्षेत्र। यहाँ कोई प्रशंसा नहीं मिल सकती। मैं अपना समय परमेश्वर के राज्य की दूसरी बातों में भली-भाँति लगा सकता था। फिर भी मैं जानता था कि मुझे व्यक्तिगत रूप से इसके लिए बुलाया गया है। मुझ पर यह आरोप लगाया जाएगा कि मैं युग-धारा के अनुसार ढल रहा हूँ। इसके विरुद्ध मैं कुछ नहीं कर सकता। मैं किसी मुक्ति-आन्दोलन वाले दृष्टिकोण का बचाव नहीं करता, जिसके लिए संसार संघर्ष करता है। मेरा मार्ग वही होना चाहिए जो बाइबल मुझे सिखाती है।

जहाँ मैं चलता हूँ, वहाँ तेरा वचन मेरे लिए चमकता है; वह मेरे मार्ग पर एक ज्योति है।

अद्भुत बातों से भरा है वह, जिसकी गवाही तू अपने वचन में देता है; इसलिए मैं पूरे मन से उसे थामे रहता हूँ।

भजन संहिता 119:105; 129 (Neue Genfer Übersetzung NGÜ, जर्मन बाइबल अनुवाद)

2 सृष्टि और पतन

किसी बात को ठीक से समझने के लिए उसके उद्गम की जाँच करनी चाहिए। इस विषय पर लिखी लगभग हर मसीही पुस्तक आदि-इतिहास से आरम्भ होती है। जब फरीसी तलाक़ के विषय पर यीशु को फँसाना चाहते थे, तो उसने इस समस्या को सृष्टि के वृत्तान्त के प्रकाश में रखा (मत्ती 19:3-9)। उसके लिए यह निर्णायक था कि आरम्भ में कैसा था। परमेश्वर की भली योजना ने मनुष्यजाति के लिए क्या ठहराया था। तलाक़ के विषय में उसने जो कहा, वह वैसे स्त्रियों की सुरक्षा के लिए था, जो त्यागे जाने के मामले में अपने पतियों की मनमानी के कमोबेश अधीन थीं।

इस पुस्तक में मैं दृढ़ता से यीशु के इसी दृष्टिकोण का अनुसरण करने का प्रयास करता हूँ। मैं अदन की वाटिका में समय बिताता हूँ और ध्यान से देखूँगा कि क्या हुआ। क्या और कैसे रचा गया। क्या कहा गया। क्योंकि जब बात स्त्री और पुरुष के सम्बन्ध की हो, तो बाइबल के पहले तीन अध्याय निर्णायक हैं। यदि आरम्भ – पतन से पहले – आदर्श स्थिति का वर्णन करता है, तो हर विवरण महत्व रखता है। पर मानना होगा कि यह एक छोटा-सा पाठ है। सृष्टि का वृत्तान्त अद्वितीय और गहरा है। पर संक्षिप्त। ऐसी भाषा में, जो आज बोली नहीं जाती। और प्राचीन पूर्व के लोग उत्पत्ति के विषय में जो प्रश्न पूछते थे, वे उन प्रश्नों से भिन्न हैं जो हम पूछते हैं। बहुत कुछ खुला रह जाता है।

इसलिए सामान्य निष्कर्षों या बाध्यकारी परिणामों को सावधानी से लेना चाहिए। कम से कम पहले मानव-दम्पति की सृष्टि के इस अपेक्षाकृत छोटे वर्णन पर निष्कर्षों का अधिक बोझ नहीं लादा जाना चाहिए।

2.1 सब कुछ कैसे आरम्भ हुआ

इस विषय पर लिखी बहुत-सी पुस्तकों में लगभग हमेशा यह दिखाई देता है कि कोई इस आदि-इतिहास की जैसी व्याख्या करता है, वैसी ही वह नए नियम के सब सम्बन्धित पाठों की भी व्याख्या करता है। आदि-इतिहास के प्रति दृष्टि ही उस दृष्टिकोण की दिशा तय करती है, जिसे कोई इस विषय पर अपनाता है। व्याख्या के ढाँचे के अनुसार परस्पर विरोधी, एक-दूसरे का खण्डन करने वाले दृष्टिकोण बनते हैं। कुल मिलाकर ये दो हैं:

पुरुष और स्त्री का समान दर्जा, बिना किसी पदानुक्रम-भेद के (अंग्रेज़ी-भाषी जगत में इसे समानतावाद कहा जाता है)।

पदानुक्रम के एक भेद के आधार पर पुरुष की अगुवाई की भूमिका और स्त्री की अधीनता (पूरकतावाद)।

दोनों दृष्टिकोण दृढ़ विश्वास के साथ समान मूल्य और भिन्नता का समर्थन करते हैं, पर लिंगों की भूमिकाओं और पदानुक्रम के विषय में उनकी समझ अलग-अलग है। अध्याय 12 (“अन्तर”) में आपको दोनों दृष्टिकोणों

का एक रेखाचित्र-रूपी सार मिलेगा।

अंग्रेज़ी-भाषी जगत में प्रयुक्त इन शब्दों को मैं जर्मन-भाषी जगत के लिए अनुपयुक्त मानता हूँ। पूरक (komplementär) का अर्थ है: दूसरे को पूरा करने वाला। यह बात दर्जे के भिन्न क्रम में भी लागू होती है। एक-दूसरे को पूरा करने का समर्थन तो दोनों पक्ष करते हैं। पर एक पदानुक्रम-भेद के साथ, दूसरा उसके बिना।

मैं उन घटनाओं पर एक जिज्ञासु दृष्टि से आरम्भ करता हूँ, जिन्हें हुए हज़ारों वर्ष बीत चुके हैं। इसी कारण, कि ये लेख और यह घटना इतने पुराने हैं, इन वृत्तान्तों पर हमारी दृष्टि कालातीत नहीं है और व्याख्या से मुक्त किसी स्थान में नहीं है। सृष्टि का वृत्तान्त एक ऐतिहासिक परिस्थिति में लिखा गया, अर्थात् प्राचीन पूर्व के परिवेश में। यह पाठ 21वीं शताब्दी में हमें सम्बोधित करके नहीं लिखा गया। मानो 21वीं शताब्दी के हम ही इसके पहले पाठक हों। पर ये पाठ हमारे लिए लिखे गए हैं। यह एक ऐसा अन्तर है, जिसे भूलना नहीं चाहिए।

प्रेरित पौलुस अपनी पत्रियों में कुछ बार पुरुष और स्त्री की सृष्टि का हवाला देता है। इन्हें मैं समझने के सहायक के रूप में नहीं लूँगा, क्योंकि इन पाठों में पौलुस पुरुष और स्त्री की सृष्टि की व्याख्या या स्पष्टीकरण नहीं करता, बल्कि उसे विशेष परिस्थितियों पर लागू करता है। यह एक बड़ा अन्तर है। सृष्टि का वृत्तान्त पहले स्वयं अपनी बात कहेगा। बाद में मैं विस्तार से पौलुस के पाठों और उसकी व्याख्या पर आऊँगा। पहले मैं उत्पत्ति के पहले दो अध्यायों के वृत्तान्त से एक चित्र बनाता हूँ। पतन से पहले। उससे पहले, जब लिंग-भूमिका पर नकारात्मक और विकृत करने वाले सांस्कृतिक प्रभाव पड़े। अर्थात् ठीक वैसे ही, जैसे यीशु आरम्भ की बात करता है।

2.1.1 छठे दिन का काम

सृष्टि के वृत्तान्त के अन्तिम दिन तक प्रतीक्षा करनी पड़ती है, तब जाकर मनुष्य की सृष्टि होती है। भूमि के पशुओं के साथ पृथ्वी उसका घर बनती है। यह छठे दिन का वर्णन है, भूमि के पशुओं की सृष्टि के बाद:

> [उत्पत्ति 1:26-31, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और परमेश्वर ने कहा: हम मनुष्य को अपने स्वरूप में, अपनी समानता के अनुसार बनाएँ; और वे प्रभुता करें समुद्र की मछलियों पर, और आकाश के पक्षियों पर, और पशुओं पर, और सारी पृथ्वी पर, और सब रेंगनेवाले जन्तुओं पर, जो पृथ्वी पर रेंगते हैं!
>
> और परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप में रचा, परमेश्वर के स्वरूप में उसने उसे रचा; पुरुष और स्त्री करके उसने उन्हें रचा।
>
> और परमेश्वर ने उन्हें आशीष दी, और परमेश्वर ने उनसे कहा: फूलो-फलो और बढ़ो, और पृथ्वी को भर दो और उसे अपने वश में कर लो; और समुद्र की मछलियों पर, और आकाश के पक्षियों पर, और पृथ्वी पर चलनेवाले सब जीव-जन्तुओं पर प्रभुता करो!

> और परमेश्वर ने कहा: देखो, मैंने तुम्हें सारी पृथ्वी के ऊपर का हर बीज देनेवाला पौधा, और हर वह वृक्ष जिसमें बीज देनेवाला फल लगता है, दिया है: वह तुम्हारे भोजन के लिए होगा; और पृथ्वी के सब पशुओं, और आकाश के सब पक्षियों, और पृथ्वी पर रेंगनेवाले हर उस प्राणी को, जिसमें जीवित प्राण है, मैंने सब हरे पौधे भोजन के लिए दिए हैं। और वैसा ही हो गया। और परमेश्वर ने सब कुछ देखा जो उसने बनाया था, और देखो, वह बहुत अच्छा था। और साँझ हुई, और भोर हुई: छठा दिन।

इस पाठ और आगे के सब पाठों की जाँच में बात किसी सामान्य व्याख्या या टीका की नहीं है। ध्यान स्त्री और पुरुष के जोड़े पर है – एक-दूसरे के साथ और अपने सृष्टिकर्ता के साथ उनके सम्बन्ध पर। ये पाठ इस पुस्तक के विषय पर कौन-सा प्रकाश डाल सकते हैं? उनकी व्याख्या कैसे की गई और उन्हें कैसे लागू किया गया?

बहुत कुछ लिखा, गिनाया और उद्धृत किया जा सकता है। इस पुस्तक की सीमा में मैं संक्षेप में रहता हूँ और बड़े चित्र का वर्णन करने का प्रयास करता हूँ।

2.1.2 मनुष्य: परमेश्वर का स्वरूप – Imago Dei

मनुष्य – इब्रानी शब्द है adam (मिट्टी से बना, "धरती-जन") – सब दूसरे प्राणियों से ऊपर उठाया जाता है। शायद बोलचाल का शब्द "सृष्टि का मुकुट" इसके लिए ठीक बैठता है। स्पष्ट है कि मनुष्य बाकी सब की तुलना में असाधारण है। परमेश्वर के स्वरूप के रूप में, उसके समान होकर, वह मानो रची गई, दिखाई देने वाली दुनिया में उसका प्रतिनिधि बनता है। पृथ्वी पर परमेश्वर की ओर से प्रभुता उसे सौंपी गई है।[3] वह अपने सृष्टिकर्ता का प्रतिनिधि बनता है। परमेश्वर के स्वरूप के रूप में इसी "साज-सज्जा" में, उसके समान (उसके बराबर नहीं), वह पशुओं से भिन्न होकर वह भी है, जो परमेश्वर से बात कर सकता है। एक सामने खड़ा साथी, जिससे सृष्टिकर्ता बात करता है और संगति रखता है।

यह होने के लिए, अर्थात् परमेश्वर के समान होने के लिए, मनुष्य को "राजसी" रूप से सजाया गया है और उन योग्यताओं और सम्भावनाओं से सम्पन्न किया गया है, जो परमेश्वर में भी हैं। क्योंकि परमेश्वर भौतिक नहीं, बल्कि आत्मा है, इसलिए पृथ्वी पर मनुष्य में उसका बहुत कुछ दिखाई देता है।

प्राचीन पूर्व में राजा और शासक जीते हुए क्षेत्रों में अपनी मूर्तियाँ खड़ी करते थे, ताकि अपनी प्रभुता का दावा दिखाएँ। एक प्रतिमा, स्वयं सशरीर उपस्थित हुए बिना।

इसलिए सृष्टि का वृत्तान्त अपने सांस्कृतिक परिवेश में अद्वितीय है, क्योंकि वह हर मनुष्य को – स्त्री और पुरुष को, यहाँ तक कि दासों को भी – राजा और शासक बनाता है। हर एक मनुष्य परमेश्वर का स्वरूप है। और इससे उसे एक गरिमा, एक मूल्य और एक सुरक्षा मिलती है। यही बाइबल का मनुष्य-दर्शन है। वह नींव, जिस पर बाकी सब कुछ टिका है, जो मनुष्य होने और साथ रहने को बनाता है या बनाना चाहिए।

3. परमेश्वर मनुष्य को प्रभुता सौंपने के विषय में गम्भीर है। उन सब सम्भावित परिणामों के साथ, जो इस अधिकार-प्रदान और स्वतन्त्रता से मनुष्य के लिए निकल सकते हैं। अच्छे भी और बुरे भी। परमेश्वर इस सौंपे हुए कार्य का आदर करता है और बार-बार सुधारने के लिए हस्तक्षेप नहीं करेगा।

हर पुरुष और हर स्त्री परमेश्वर के स्वरूप में होने की अनुपम गरिमा धारण करते हैं। पुरुष और स्त्री के रूप में मनुष्य होने का अर्थ है परमेश्वर का प्रतिरूप होना।

2.1.3 पुरुष और स्त्री के रूप में मनुष्य

परमेश्वर के स्वरूप को धारण करने की भूमिका मनुष्य को मिली है, चाहे वह पुरुष हो या स्त्री। अतः यही अभिप्राय है और इसके सिवा कुछ सम्भव नहीं: परमेश्वर का प्रतिनिधित्व करने और सृष्टि के कार्य को पूरा करने के लिए दोनों लिंगों की आवश्यकता है। अन्ततः कोई भी अकेले पूरी तरह परमेश्वर का स्वरूप नहीं हो सकता।

परमेश्वर स्वयं लिंग-भेद पर कोई टिप्पणी नहीं करता। योग्यता, मूल्य, महत्व, भूमिका और स्थान में किसी भी भेद के बिना दोनों का उल्लेख एक ही साँस में होता है। एक ही शब्द में: मनुष्य। उस समय के लिए यह भी अद्वितीय था। यहाँ स्त्री पुरुष के समान दर्जे पर उसके साथ खड़ी है। प्राचीन पूर्व की संस्कृतियों में यह सामान्य बात नहीं थी।

यहाँ प्रश्न यह नहीं है कि लिंग अपनी बनावट, कार्य या भूमिका में भिन्न हैं या नहीं। बाइबल के पहले पृष्ठ पर, जहाँ हर बात की नींव रखी जाती है, पहले बात समानता की है। स्त्री और पुरुष के विषय में बाइबल का आरम्भ यही है। यही पवित्रशास्त्र का स्वयं का सबसे महत्वपूर्ण दिशा-निर्धारण, पूर्वधारणा और मूल मान्यता है, जिसके अनुसार उसकी कही बाकी हर बात की व्याख्या होती है और जिससे वह दिशा पाती है। और जिसके अनुसार शायद हमें अपना सुधार करना होगा। इसी प्रकाश में, न कि उलटे, पौलुस की भी व्याख्या होनी चाहिए। इस पर बाद में और।

2.1.4 मनुष्य और परमेश्वर का सौंपा हुआ कार्य

परमेश्वर मनुष्यों को आशीष देता है और इसके द्वारा उन्हें परमेश्वर के प्रतिनिधि के रूप में अपना कार्य करने के योग्य बनाता है। एक ओर यह पृथ्वी और पशुओं पर प्रभुता है। दूसरी ओर यह आज्ञा है कि वे फूलें-फलें और बढ़ें, ताकि पृथ्वी को, पूरे भूमण्डल को, आबाद करें और अपने अधिकार में लें, उस पर देखभाल के साथ शासन करें और उसे सावधानी से उपयोगी बनाएँ। दूसरे शब्दों में: स्वर्गलोक जैसी वाटिका को पूरी पृथ्वी पर फैलाना। हम ठीक-ठीक नहीं जानते कि जब यह कार्य सौंपा गया, तब प्रकृति किस दशा में थी।

यह सभ्यता का कार्य है। इसे सांस्कृतिक दायित्व (कल्चरल मैंडेट) भी कहा जाता है। यह परमेश्वर की दी हुई सब योग्यताओं को पृथ्वी के उन सब संसाधनों के उपयोग में जीना है, जो परमेश्वर ने दिए हैं, जैसे उसने उन्हें रचा। इस पाठ के जीवन-परिवेश में खेती, किसानी और पशुपालन हैं। पर आज तक के हज़ारों वर्षों का विकास दिखाता है कि एक ओर पृथ्वी और उसके संसाधन, और दूसरी ओर मनुष्य की योग्यताएँ और प्रतिभाएँ कितनी बहुआयामी हैं। एक ऐसी सम्भावना, जिसे परमेश्वर ने स्वयं रखा है।

बात यह नहीं है कि यह कार्य कैसे पूरा किया गया। यह पतन से पहले का कार्य है।[4] पतन के बाद यह बदला नहीं। जैसा यहाँ वर्णित है, वैसा ही यह आज तक लागू है, पुरुष और स्त्री के लिए।

वंश-वृद्धि, जैसी पशु-जगत में भी होती है, केवल पुरुष और स्त्री मिलकर ही पूरी कर सकते हैं। दोनों लिंगों को मिलकर इस तथ्य के साथ और यौनिकता के साथ ठीक से जीना सीखना है।

इस विशाल, अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण कार्य में पुरुष और स्त्री बराबर हैं, समकक्ष हैं, एक-दूसरे पर उतने ही निर्भर, जितने परमेश्वर की आशीष पर। बिना किसी पदानुक्रम के, बिना इस प्रश्न या निर्देश के कि जीवन के इस कार्य में अधिकार किसका है और निर्णय कौन लेता है।

मनुष्य – पुरुष और स्त्री – स्वर्गलोक जैसी वाटिका के परिवेश में और अपने कार्य के साथ उचित ही राजा-याजक कहलाते हैं।[5] एक ओर वे परमेश्वर के प्रतिनिधियों के रूप में पृथ्वी पर प्रभुता करते हैं। पर वे वे भी हैं, जो परमेश्वर की उपस्थिति में, उस वाटिका में रहते हैं। दोनों पर, पुरुष और स्त्री पर, यह भूमिका समान रूप से लागू होती है।

यह महत्वपूर्ण पहलू, जिसकी यहाँ और गहराई में नहीं जाया जाएगा, अदन की वाटिका और मन्दिर के प्रतीकों के बीच कई समानताओं से उत्पन्न होता है।[6]

कलीसिया में और आराधना की सभाओं में पुरुष और स्त्री के विषय में यहाँ एक पहला, चाहे परोक्ष, संकेत मिलता है कि वहाँ भी वे समान दर्जे पर सक्रिय हैं। यहाँ सब विश्वासियों के याजकपद का पूर्वाभास पहले से मिलता है।

2.1.5 आदम और हव्वा की सृष्टि

उत्पत्ति 2 में वृत्तान्त ठोस रूप से मनुष्य की सृष्टि पर आता है। जो अध्याय 1 में परमेश्वर एलोहीम के छह दिनों के काम के ढाँचे में सामान्य रूप से बताया गया है, वह अब एक सजीव कथा में बदल जाता है। मानो अध्याय 1 की सबसे महत्वपूर्ण बात लेकर उसे गहराई दी जाती है। अध्याय 1 में सृष्टि का वृत्तान्त है, अध्याय 2 में अदन की वाटिका का वृत्तान्त। अदन की वाटिका घटनाओं का स्थान है। परमेश्वर का नाम अब याहवे

4. (status integritatis – पतन से पहले अखण्डता की दशा, इसके विपरीत status corruptionis – पतन के बाद भ्रष्टता की दशा)
5. Beale, Gregory K., 65 आगे, Der Tempel aller Zeiten, 2011
6. उत्पत्ति 2 की अदन की वाटिका और मन्दिर के बीच सीधा सम्बन्ध है: पूर्वी प्रवेश-द्वार: वाटिका का प्रवेश-द्वार ठीक वास्तविक मन्दिर-भवन और शेकिना के डेरे की तरह पूर्व की ओर था (उत्पत्ति 3:24; miqedem = पूर्व की ओर)। नदी: अदन से निकलने वाली नदी का अद्भुत प्रतिरूप यहेजकेल की योजना के अनुसार पवित्रस्थान की मन्दिर-नदी में मिलता है (यहेजकेल 47)। परमेश्वर की उपस्थिति: अदन की वाटिका में परमेश्वर की उपस्थिति और परमेश्वर का घूमना-फिरना विशेष रूप से अनुभव किया जा सकता था, जैसे मन्दिर में (उत्पत्ति 3:8-9; लैव्यव्यवस्था 26:11-12)। करूब: मन्दिर के सम्बन्ध में इतने महत्वपूर्ण करूबों (जैसे निर्गमन 25:18; 26:1, 31; 1 राजाओं 6:23, 29) का अदन की वाटिका में पहरेदार के रूप में बहुत महत्वपूर्ण कार्य था (उत्पत्ति 3:24)। आराधना-सेवा: वाटिका में आदम के काम का वर्णन “खेती करना” (’avad) और “रक्षा करना” (shamar) शब्दों से परमेश्वर की सेवा के रूप में किया गया है (उत्पत्ति 2:5, 15)। पवित्रस्थान के सम्बन्ध में ये क्रियाएँ याजकों और लेवियों की आराधना-सेवा का वर्णन करने वाले विशिष्ट शब्द हैं (’avad: गिनती 4:24, 26, 30, 37, 41, 47; 8:11, 15, 19, 22, 25, 26; shamar: गिनती 3:7, 8, 10, 28, 32, 38; 18:3, 4, 5, 7)। देखें Roger Liebi, Genesis 2: Die Schöpfung des Menschen

एलोहीम (Jahwe Elohim) है। वह परमेश्वर, जो सृष्टिकर्ता के रूप में मनुष्य को गढ़ता है, उसके निकट आता है और उसके लिए उपस्थित रहता है।

> [उत्पत्ति 2:4-9, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] यह आकाश और पृथ्वी का इतिहास है, जब वे रचे गए, उस दिन, जब यहोवा परमेश्वर ने पृथ्वी और आकाश बनाए, और इससे पहले कि मैदान की कोई झाड़ी पृथ्वी पर थी, और इससे पहले कि मैदान का कोई पौधा उगा था; क्योंकि यहोवा परमेश्वर ने पृथ्वी पर वर्षा नहीं की थी, और भूमि पर खेती करने के लिए कोई मनुष्य न था।
>
> पर पृथ्वी से कुहरा उठता था और भूमि के सारे तल को सींचता था। और यहोवा परमेश्वर ने मनुष्य को, भूमि की धूल से, रचा और उसके नथनों में जीवन का श्वास फूँक दिया; और मनुष्य एक जीवित प्राण बन गया।

यह वृत्तान्त भूमि की धूल से आदम की सृष्टि को बताता है। जो परमेश्वर का प्रतिरूप है, वह पृथ्वी से रचा जाता है। पृथ्वी उसका घर है और सदा रहेगी। नई सृष्टि में भी। सृष्टि की इस अनोखी प्रक्रिया में धरती से उसकी निकटता और उसकी नश्वरता दोनों प्रकट होती हैं। मिट्टी से तो घर बनाए जाते हैं, मनुष्य नहीं। फिर भी परमेश्वर इसे इसी अनोखे, रहस्यमय ढंग से करता है। परमेश्वर के श्वास से, परमेश्वर के आत्मा से जीवन पाकर आदम एक जीवित प्राण बनता है।

2.1.6 इब्रानी मुख्य शब्दों पर एक संक्षिप्त विषयान्तर

इब्रानी बाइबल-पाठों में मुख्य शब्दों (Leitworte) का बड़ा महत्व है। पर ये केवल इब्रानी पाठ को सुनने पर ही खुलते हैं!

ऐसी ही एक मुख्य-शब्द शृंखला में ये शब्द आते हैं: आदम (मनुष्य), अदामा (खेत की भूमि), दाम (लहू) – तीनों की भाषाई जड़ "लाल पदार्थ" है। इन शब्दों में पृथ्वी के साथ मनुष्य का कई प्रकार का जुड़ाव स्पष्ट होता है।

"अदामा" पृथ्वी है। "आदम" वह धरती-जन है, जो उससे उत्पन्न हुआ। "दाम", लहू, जीवन का वाहक है (वह मनुष्य-लहू, जो कैन द्वारा हाबिल की भाई-हत्या में बहाया गया, धरती में लौट जाता है – उत्पत्ति 4:10 आगे)।

इससे भी बढ़कर: एक तिहरी नाल हमें धरती माता से बाँधती है। उसी से हम लिए गए हैं, उसी में हमारा लौटना है, उसी से हम सब पोषण पाते हैं। ... आदम और अदामा एक ऐसे साझे भाग्य में बँधे हैं, जिसे हम में से कोई नहीं तोड़ सकता। बाइबल में "आदम" हमें पहले मनुष्य के व्यक्तिगत नाम के रूप में मिलता है। पर "आदम" हमेशा (साथ ही) जाति-सूचक शब्द "मनुष्य" भी है, जो आदम के सब वंशजों को एक साथ भी और हर एक मनुष्य-सन्तान को व्यक्तिगत रूप से भी सूचित कर सकता है। दोनों दशाओं में "धरती-जन" धरती से बँधे होने के सार के रूप में हमारी मानवता की दुर्बलता और नश्वरता की ओर संकेत करता है। बाइबल के भविष्यद्वक्ताओं के पाठों की इब्रानी में हर दो पैरों वाले के लिए सामूहिक नाम "मनुष्य का पुत्र"

(वास्तव में: आदम का पुत्र) है, जैसा यीशु स्वयं को भी कहता है।[7]

> और यहोवा परमेश्वर ने पूर्व की ओर अदन में एक वाटिका लगाई, और वहाँ उसने उस मनुष्य को रखा, जिसे उसने रचा था। और यहोवा परमेश्वर ने भूमि से हर प्रकार के वृक्ष उगाए, जो देखने में मनभावने और भोजन के लिए अच्छे थे; और वाटिका के बीच में जीवन का वृक्ष, और भले और बुरे के ज्ञान का वृक्ष।
>
> [उत्पत्ति 2:15, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और यहोवा परमेश्वर ने मनुष्य को लेकर अदन की वाटिका में रखा, कि वह उस पर खेती करे और उसकी रक्षा करे।

अध्याय 1 में पहले से वर्णित कार्य यहाँ और ठोस हो जाता है। यहाँ अन्य बातों के साथ भूमि को जोतना, भोजन और अन्न के पौधों को उगाना दृष्टि में है। अर्थात् खेती। उसी तरह, और उतनी ही महत्वपूर्ण, उस स्थान की रक्षा भी, जिसे परमेश्वर ने मनुष्य के लिए तैयार किया है। रक्षा करना सृष्टि के कार्य का भाग है। इसके अनुसार वर्णित स्थिति में भी पहले से नकारात्मक प्रवृत्तियाँ और शक्तियाँ हैं, जिन्हें रोकना और दूर रखना है। साँप इसका एक उदाहरण है।

यहाँ ध्यान आदम पर है। हव्वा की सृष्टि से पहले।

2.1.7 आदम को सहायता चाहिए

> [उत्पत्ति 2:18-20, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और यहोवा परमेश्वर ने कहा: मनुष्य का अकेला रहना अच्छा नहीं; मैं उसके लिए एक सहायक बनाऊँगा, जो उसके अनुरूप हो। और यहोवा परमेश्वर ने भूमि में से मैदान के सब पशुओं और आकाश के सब पक्षियों को रचा, और उन्हें मनुष्य के पास ले आया, कि देखे कि वह उनका क्या नाम रखेगा; और मनुष्य जिस जीवित प्राणी का जो भी नाम रखे, वही उसका नाम हो। और मनुष्य ने सब घरेलू पशुओं, और आकाश के पक्षियों, और मैदान के सब पशुओं के नाम रखे। पर आदम के लिए उसे कोई ऐसा सहायक न मिला, जो उसके अनुरूप हो।

अध्याय 1 में इसका उल्लेख एक स्वाभाविक बात के रूप में हुआ है: पुरुष और स्त्री हर एक अकेले भी, और मिलकर भी, परमेश्वर का स्वरूप हैं। यहाँ उस विशेष प्रक्रिया का उल्लेख है, जिससे यह जोड़ा बना। यह कल्पना करना कठिन है कि यह सब छठे दिन हुआ। छठे दिन के 24 घण्टों की तंग समय-सीमा के विचार से हम मन में अपने को अलग कर सकते हैं।

यह वृत्तान्त आवश्यक बातें स्पष्ट करना चाहता है। यहाँ परमेश्वर जो करता है, वह उसके अपने लिए कोई प्रयोग नहीं, बल्कि आदम के लिए एक सबक है। और हमारे लिए। बहुत-से पशुओं के नाम रखना मनुष्य से पशुओं तक सब जीवित प्राणियों की निकटता दिखाता है, पर साथ ही पशु की तुलना में मनुष्य का ऊँचा स्थान भी। यहाँ सचमुच एक पदानुक्रम स्पष्ट होता है।

यदि सृष्टि के छठे दिन सब कुछ बहुत अच्छा था, तो अब कुछ अच्छा नहीं है। आदम एक सामाजिक प्राणी था और ऐसे प्राणी के रूप में अकेला था। मनुष्यों को जानने वाला परमेश्वर यह जानता था, इससे पहले कि

7. P. Lapide के अनुसार, War Eva an allem schuld? 1998, पृ. 71 आगे।

आदम इसे अनुभव करता। शायद यह पहले से कई बातों में दिखने लगा था। क्या उसने पशुओं में पहले ही देख लिया था कि वहाँ नर और मादा थे, और उसका स्त्री-साथी उसके पास नहीं था?

जब आदम ने अन्य प्राणियों के साथ टाइरैनोसॉरस रेक्स, एक कृपाण-दाँत बाघ, चींटियों और मधुमक्खियों के नाम रख दिए, तब भी साथी की खोज निष्फल रही। कोई पशु यह सामने खड़ा साथी, पहेली का यह खोया हुआ टुकड़ा, नहीं हो सकता था। परमेश्वर आदम के लिए एक सहायक ढूँढ़ रहा था, ताकि वह सृष्टि का अपना कार्य पूरा कर सके। अकेले वह पूर्ण नहीं था। और अकेले वह वह होने में समर्थ नहीं था, जो परमेश्वर ने सोचा था। यह "पद का विज्ञापन" किसी ऐसे को ढूँढ़ता है, जो आदम का भला करे। एक आत्मीय साथी। एक सहयोगी। एक सामने खड़ा साथी, एक पूरक। उसके अस्तित्व के हर पहलू का एक प्रतिरूप: शारीरिक, भावनात्मक, आत्मिक; मानसिक; बाहरी और भीतरी। संक्षेप में, यही वह है जिसका अर्थ "एक सहायक, जो उसके अनुरूप हो" से है।

आदम का वर्णन ऐसे सिर के रूप में नहीं होता, जिसका शरीर / देह न हो। उसका वर्णन ऐसे धरती-जन के रूप में होता है, जिसे सहायता चाहिए। उसे कोई प्रजा, कोई सहायक कर्मचारी नहीं चाहिए, बल्कि अपने बगल में उतना ही सशक्त एक व्यक्तित्व। एक सहायक, जो साथ मिलकर काम करना सम्भव बनाए।

पुरुष अक्सर ऐसा व्यवहार करता है, मानो वह सब कुछ अकेले कर लेता हो। मानो उसे किसी सहायता की ज़रूरत न हो। परमेश्वर आगे देखता है। वह जानता है कि जीवन को सँभालने के लिए पुरुष को क्या चाहिए।

"एक सहायक, जो उसके अनुरूप हो" इस अभिव्यक्ति के विषय में मैं असीरियाविद् और सेमिटिक भाषाओं के प्रोफ़ेसर आर. डेविड फ़्रीडमैन (R. David Freedman)[8] को उद्धृत करता हूँ: "मेरा विश्वास है कि इन दो शब्दों [अर्थात् ezer kenegdo या 'सहायक'] का प्रचलित अनुवाद, लगभग सार्वभौमिक रूप से स्वीकार किए जाने के बावजूद, ग़लत है। ये शब्द यह नहीं बताना चाहते। इसके बजाय उनका अनुवाद ऐसे होना चाहिए कि उनका अर्थ लगभग 'मनुष्य के बराबर एक शक्ति या बल' हो। अर्थात् जब परमेश्वर इस निष्कर्ष पर पहुँचा कि वह एक और प्राणी रचेगा, ताकि मनुष्य अकेला न रहे, तो उसने 'एक ऐसी शक्ति या बल, जो मनुष्य के बराबर हो' रचने का निर्णय लिया। कोई ऐसा, जिसकी शक्ति मनुष्य की शक्ति के अनुरूप हो। स्त्री केवल पुरुष की सहायिका होने के लिए नहीं ठहराई गई थी। बल्कि उसे उसकी साझेदार होना था।"

"फिर फ़्रीडमैन अपना ध्यान अगले शब्द kenegdo पर लगाते हैं, जिसका अनुवाद अक्सर 'उपयुक्त' या 'योग्य' किया जाता है। यह शब्द बाइबल में केवल एक बार आता है, इसलिए हमारे पास कोई दूसरी बाइबलीय तुलना नहीं है, जो अनुवाद में हमारी सहायता करे। पर बाद की मिश्नाई इब्रानी में इस शब्द की जड़ का अर्थ 'बराबर' है।"

फ़्रीडमैन निष्कर्ष निकालते हैं (और हम अगले पद को पहले ही ले लेते हैं): "जब परमेश्वर हव्वा को आदम की बगल से रचता है, तो उसका अभिप्राय यह है कि वह – पशुओं के विपरीत – 'एक ऐसी शक्ति (या बल) होगी, जो उसके बराबर है'। मेरा विश्वास है कि 'ezer kenegdo' अभिव्यक्ति को समझने का कोई दूसरा

8. R. David Freedman, "Woman, a Power Equal to a Man: Translation of Woman as a 'Fit Helpmate' for Man Is Questioned," Biblical Archaeology Review 9, 1 (1983): 56.

ऐसा तरीका नहीं है, जिसका भाषाशास्त्रीय रूप से बचाव किया जा सके। पारम्परिक अनुवाद ezer (सहायता) की एक बाद की अर्थ-छाया पर आधारित है, जिसे सन्दर्भ उचित नहीं ठहराता"।

इस भाषावैज्ञानिक अन्तर्दृष्टि के बिना भी हर स्त्री और हर पुरुष यह निष्कर्ष निकाल सकता है कि स्त्री एक समान दर्जे की सामने खड़ी साथी है। इसकी विशेषताएँ हैं सार की समानता, भिन्नता और पूरकता। न कि पदानुक्रम, अधिकार, अनुसरण या अधीनता।

अतः स्त्री आदम की सेवा करने के लिए नहीं रची गई, बल्कि आदम के साथ सेवा करने के लिए।

किसी के लिए सहायक होना कोई पदानुक्रम-भेद स्थापित नहीं करता। परमेश्वर भी हमारा सहायक है! यह निष्कर्ष निकालना एक घातक भूल है कि सहायक होना पदानुक्रम-भेद स्थापित करता है। इससे स्त्री का कैसा नकारात्मक, बल्कि दुखद चित्र बनाया जाता है, और इसके कैसे दूरगामी परिणाम होते हैं। बात यह नहीं है कि आदम अपना सृष्टि-कार्य पूरा करे, बल्कि यह कि दोनों अपना साझा कार्य पूरा करें (1:28)।

जब कोई पति अपनी पत्नी की सहायता करता है – ऐसा भी होता है – तो पदानुक्रम उलट नहीं जाता। सहायता का पदानुक्रम से कोई लेना-देना नहीं है, न बाइबल में और न रोज़मर्रा के जीवन में।

"उत्पत्ति 2:18, 20 में विचार यह है कि स्त्री पुरुष की शक्ति या बल का एक स्रोत है, जिसकी वह मित्र और सहयोगी के रूप में सेवा करती है। अधीनता पाठ का अभिप्राय नहीं है।"[9]

2.1.8 हव्वा की सृष्टि होती है

> [उत्पत्ति 2:21-22, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और यहोवा परमेश्वर ने मनुष्य पर गहरी नींद डाली, और वह सो गया। और उसने उसकी पसलियों में से एक निकाली और उसके स्थान को मांस से भर दिया; और यहोवा परमेश्वर ने उस पसली से, जो उसने मनुष्य में से निकाली थी, एक स्त्री बनाई, और उसे मनुष्य के पास ले आया।

यह वृत्तान्त एक रहस्यमय प्रक्रिया बताता है, जिसकी हम कल्पना भी कठिनाई से कर सकते हैं। यहाँ थोड़े-से शब्दों में ठीक-ठीक क्या वर्णित है, उसे केवल स्वर्गदूत देख सके। ये पवित्र दर्शक चकित हुए, जैसे हम चकित होते। उसकी बगल से हव्वा उत्पन्न होती है। मानो वह आदम में से जन्मी हो। वह मिट्टी से नहीं रची जाती। किसी दूसरे आदम की आवश्यकता नहीं, बल्कि एक ऐसे मनुष्य की, जो आदम के पूरी तरह अनुरूप हो। यदि हव्वा पहले रची जाती, तो उसे भी एक सहायक की आवश्यकता होती। सृष्टि के अनुसार न पुरुष और न स्त्री अकेले रहने के लिए सोचे गए हैं।

इस पाठ में भी बहुत अधिक अर्थ नहीं भरा जा सकता। आनुवंशिक गुणों, अस्थि-मज्जा या गुणसूत्रों पर विचार करने का कोई विशेष अर्थ नहीं है। यह एक गहरी, शारीरिक-आत्मिक प्रक्रिया है, जो परमेश्वर की दृष्टि में आदम के लिए अनुरूप साथी और सहायक उत्पन्न करने का एकमात्र मार्ग थी।

9. WKG-Studienpapier, सितम्बर 2003

किसी प्राचीन पाठ को समझने के लिए शब्दों की समझ और उनका अनुवाद हमेशा अकेले पर्याप्त नहीं होते, इसे इस व्याख्या से उदाहरण के रूप में स्पष्ट किया जाए:

"जब हम पढ़ते हैं कि आदम को गहरी नींद में डाला गया और हव्वा 'बनाई' गई, तो हम अपने आप सोचते हैं कि आदम को ऑपरेशन के लिए ऑपरेशन-थिएटर में ले जाया जा रहा है। पर एक प्राचीन पूर्वी व्यक्ति ऐसा नहीं सोचता। 'गहरी नींद' के लिए इब्रानी शब्द पूरे पुराने नियम में किसी दर्शन के अनुभव को सूचित करने के लिए प्रयुक्त होता है। एक इस्राएली पाठक इसे ऐसे ही समझता। इसलिए मेरा विश्वास है कि आदम के लिए यह गहरी नींद दर्शन वाली थी, न कि कोई शल्य-क्रिया। दूसरे शब्दों में, वह कुछ देखता है, और फिर हव्वा को और अधिक देखता है।"[10]

2.1.9 पसली से

मैं मानता हूँ कि यह वर्णन मुझे विचित्र लगता है। लगभग पौराणिक। जैसा कहा गया, उस समय के विचार-जगत के लिए यह हमसे अधिक समझ में आने वाला था। इस प्रक्रिया को प्राकृतिक-विज्ञान, चिकित्सा, जीव-विज्ञान या शरीर-रचना के चश्मे से देखने का कोई विशेष अर्थ नहीं है। फिर भी यह इतनी गहरी और मूलभूत है कि इससे और भी बातें प्रकाश में आनी चाहिए।

अतः दोनों एक ही पदार्थ से हैं। सार में सम्बन्धी। हर एक अलग, स्वतन्त्र सृष्टि नहीं, बल्कि उसी एक सृष्टि की अलग अभिव्यक्ति।

यह विचित्र है कि अनुवादक यहाँ "पसली" शब्द क्यों रखते हैं। पुराने नियम में कहीं भी इस शब्द का अनुवाद ऐसे नहीं किया गया। और यहाँ भी इसका कोई कारण नहीं है।[11] अधिकतर इसका अनुवाद किसी भवन के अंग के रूप में किया जाता है: तख़्ता, बगल का भवन-भाग, लकड़ी की परत, किवाड़ का पल्ला और बगल। हमेशा बात निर्माण की होती है। इन सब शब्दों में साझा बात है "बगल"।

हव्वा बगल (zela) से बनाई जाती है। आदम मानो मिट्टी से कुम्हार की तरह गढ़ा गया था, और अब हव्वा बगल (या बगल के भवन-भाग) से बनाई जाती है। यहाँ बात चित्रात्मक है, शरीर-रचना की नहीं।

पुरुष की 24 पसलियाँ होती हैं, और वह एक के बिना भली-भाँति रह सकता है। पर बगलें उसकी केवल दो हैं (देखें सुलैमान के मन्दिर के द्वार के दो पल्ले, वही शब्द, 1 राजाओं 6:34)। शरीर का बायाँ और दायाँ आधा भाग। यहाँ 1:27 का शब्द-युग्म "नर-नारी" आगे बढ़ता है। स्त्री किसी एक हड्डी से नहीं, बल्कि पुरुष के आधे भाग से बनी है। "वह पुरुष की बगल से ली गई है, ताकि दोनों मनुष्य कन्धे से कन्धा मिलाकर जीवन में चलें और हर एक दूसरे में अपना 'बेहतर आधा भाग' पाए।"[12]

10. John Walton, Interview by Kevin P. Emmert/ March 19, 2015
11. Bielefeldt, 43, Die Sache mit der Rippe, Die himmlische Idee von den Geschlechtern, Asslar, 2007
12. Bielefeldt, 45

पिंकस लापिडे (Pinchas Lapide) इसके विषय में लिखते हैं: “यहाँ प्रयुक्त इब्रानी शब्द का अर्थ बहुत कम ही पसली हो सकता है, और सामान्यतः इसका अनुवाद पार्श्व या बगल किया जाता है। ... इसलिए कोई आश्चर्य नहीं कि ‘पसली’ के इस ग़लत अनुवाद का परिणाम अनिवार्य रूप से मसीही जगत में स्त्री को तुच्छ समझना होना ही था।”[13]

बदले हुए शब्दों के साथ यह पद ऐसे पढ़ा जाता है:

> और प्रभु परमेश्वर ने आदम की बगल में हाथ डाला (या: आदम का शरीर का एक आधा भाग लिया) और उस स्थान को फिर भर दिया। फिर उसने उस बगल के भवन-भाग को लिया और उससे एक स्त्री का निर्माण किया।

वे दो ऐसे मनुष्य बनते हैं, जो एक-दूसरे को समझते हैं और एक-दूसरे की ओर खिंचते हैं। जो एक तन हो जाते हैं, मानो अलग होना फिर से उलट दिया गया हो। यही विवाह का, पुरुष और स्त्री के विश्वासयोग्यता और प्रेम के वाचा-बन्धन का भेद है।

यह कि स्त्री पुरुष के एक आधे भाग से बनाई जाती है, शायद उसकी ओर संकेत करता है, जो प्रजनन की फलवन्तता में सच होगा: जनन-कोशिका का विभाजन। कोशिकाएँ आधी-आधी होती हैं, और हर एक पूर्ण कोशिका होती है। न स्त्री पुरुष के बिना है, न पुरुष स्त्री के बिना।

क्या यह महत्वपूर्ण है कि इस शब्द का अनुवाद कैसे किया जाए? निश्चय ही। पसली स्त्रियों में कुछ ऐसा जगाती है, जिससे वे स्वयं को किसी परिशिष्ट-सा अनुभव करती हैं। यदि हम पुरुष किसी “पसली” से बनाए गए होते, तो हमें कैसा लगता?

2.1.10 नारी (Männin)

> और मनुष्य ने कहा: अब यह मेरी हड्डियों में की हड्डी और मेरे मांस में का मांस है; यह नारी (Männin, ischah) कहलाएगी, क्योंकि यह नर (isch) में से निकाली गई है।

आदम आनन्द से जयजयकार करता है और उत्साह से भर उठता है। हम काव्यात्मक शब्द सुनते हैं। कैसा पवित्र क्षण। उसके सामने संसार की सबसे सुन्दर स्त्री खड़ी है। नग्न और बिना लज्जा के। एक उपहार की तरह। वह तुरन्त देख लेता है कि वह पशु-जगत से नहीं आई। उससे तो वह गहराई से जूझ चुका था। यह अब कुछ बिलकुल अलग है। यही वह है, जिसकी उसे कमी थी। जो उसके बराबर है। वही जाति। उसके जैसी, पर एक वह (स्त्री)। एक नारी। आदम कहता है: आख़िरकार कोई मेरे जैसा!

क्या आदम को परमेश्वर के उस हस्तक्षेप का पता चला, कि वह यह भी जानता है कि वह उसी में से निकली है? वह उसके लिए पराई नहीं है; वे तुरन्त एक-दूसरे के निकट हैं। वाटिका में केवल वे दोनों हैं। और पशु।

> इस कारण पुरुष अपने पिता और अपनी माता को छोड़कर अपनी पत्नी से मिला रहेगा, और वे एक तन होंगे।

13. Lapide, 161, Lapide, Pinchas, Ist die Bibel richtig übersetzt? Gütersloh, 2004

और वे दोनों, मनुष्य और उसकी पत्नी, नग्न थे, और लजाते न थे।

हव्वा, नारी, भविष्य में पुरुष के लिए इतनी आकर्षक होगी कि वह उसके पास रहने के लिए सब कुछ छोड़ देगा। इसके द्वारा एक बार फिर स्त्री की गरिमा पर विशेष रूप से बात की जाती है। वही है, जिसकी चाह की जाती है। इसका वर्णन उलटे रूप में नहीं होता।

एक तन हो जाना दिखाता है कि इससे अधिक एकता और समानता सम्भव नहीं।

इन शब्दों को ऐतिहासिक रूप से भी देखना होगा। पुरुष में इतनी स्वतन्त्रता होनी चाहिए कि वह अपने माता-पिता के बिना रह सके, ताकि एक नया परिवार बसाए।

यहाँ स्त्री को ऐतिहासिक रूप से ऐसे देखा जाता है कि वह अपने पति के विपरीत अपने मायके से जुड़ी रहती है और इस तरह उसे एक प्रकार की सुरक्षा मिलती है। वह उसे पुरुष की तरह नहीं छोड़ती। मायके की सुरक्षा में या उसके निकट, बड़े परिवार के दायरे में, उसे किसी सम्भावित हिंसक या धोखेबाज़ पति से सुरक्षा मिलती है। माता-पिता के निकट या उनके घर में रहते हुए स्त्री को सहायता मिलती है।

फिर भी दोनों एक नई, बहुत हद तक स्वतन्त्र और आत्मनिर्भर इकाई बनाते हैं। एक तन होना फलवन्त होने के कार्य की पूर्ति को सूचित करता है। अर्थात् शारीरिक संसर्ग, एक होने की अभिव्यक्ति और उसका चरम भी, और सन्तान उत्पन्न करने या वंश-वृद्धि की भी। यह एकता विवाह के पूरे जीवन का भी वर्णन करती है। विवाह की वाचा, जिसकी यहाँ सीधे चर्चा नहीं होती, एक स्त्री और एक पुरुष के जीवन भर के जुड़ाव का वर्णन करती है। जैसा यीशु कहता है, आरम्भ में ऐसा ही था और ऐसा ही रहना चाहिए।

कई स्त्रियों के साथ आरम्भ में फलवन्तता और इसके साथ जनसंख्या तेज़ी से बढ़ती। मनुष्यों और समाजों ने बहुविवाह आरम्भ किया। पर वह कभी परमेश्वर का विचार नहीं था, चाहे उसे अपने लोगों में (जैसे कुलपिताओं, दाऊद आदि में) इसे सहना पड़ा।

2.1.11 एक-दूसरे के लिए दिए गए वरदान

दो मनुष्य आमने-सामने खड़े हैं। आदम हव्वा को परमेश्वर के वरदान के रूप में ग्रहण करता है। मनुष्य के दो भिन्न प्रकार पहली बार एक-दूसरे से मिलते हैं। दोनों के भिन्न और एक-दूसरे के अनुकूल शरीर एक-दूसरे को और एक-दूसरे के लिए उपहार में दिए जाते हैं। भिन्न लिंग में और उससे जुड़ी यौनिकता में परमेश्वर अपनी प्रेम की योजना दिखाता है। इस तरह यौनिकता एक-दूसरे के लिए परमेश्वर का वरदान बनती है। यह परस्पर समृद्धि और परिपूर्णता के लिए है और इसे यौन भिन्नता के लिए कृतज्ञता की ओर ले जाना चाहिए।

जब आदम अकेला था, तो वह इस कृतज्ञता को परस्परता में व्यक्त नहीं कर सकता था। अपने अकेलेपन में वह स्वयं को एक व्यक्ति के रूप में पूरी तरह पहचानने में भी समर्थ नहीं था, क्योंकि अभी कोई दूसरा “मैं” नहीं था। व्यक्तित्व होने के लिए सम्बन्ध और सामने खड़ा साथी चाहिए। पुरुष के लिए स्त्री वह सहायक है, जिससे वह अपनी मानवता को और परस्पर समृद्धि की चेतना को पहचानता है। केवल हव्वा ही वरदान नहीं है, बल्कि वह आदम को यह पहचानने में समर्थ बनाती है कि वह स्वयं उसके लिए वरदान है। केवल साथ-

साथ नहीं, बल्कि एक-दूसरे के लिए जीना – यही वह संगति है, जैसी परमेश्वर ने योजना बनाई। इस तरह वे अपने पुरुषत्व और स्त्रीत्व के द्वारा एक-दूसरे के लिए परस्पर वरदानों के रूप में परमेश्वर के प्रेम को प्रतिबिम्बित करते हैं।

आदम का आनन्द, उसकी कृतज्ञता, कि वह हव्वा में केवल एक अधीन सहायक नहीं, बल्कि परमेश्वर का वरदान देखता है, उसके व्यक्तित्व की गरिमा को प्रकट करते हैं – वह गरिमा, जिसे हव्वा ने अपनी ओर से आदम में भी पहचाना। हव्वा एक स्वतन्त्र, समान अधिकार वाला व्यक्तित्व है। आज भी इसे समझना, उसे परमेश्वर के वरदान और उपहार के रूप में स्वीकार करना है। स्त्रीत्व परमेश्वर का वरदान है। वह पहला वरदान (उसके अपने जीवन और अस्तित्व के अतिरिक्त), जो पुरुष को मिला।

अधिकार, जो अधीनता की माँग करता है, वरदान को नकारता है। जब किसी को कोई वरदान मिलता है, तो एक तरह से उसे उस वरदान पर अधिकार मिलता है। जब आदम ने हव्वा को ग्रहण किया, तो उसे किस बात का अधिकार मिला? अपने शरीर को प्रेम में उसके लिए लगाने का – यौनिकता से भी आगे बढ़कर। उसे उसे ग्रहण करने का अधिकार मिला है – एक बहन की तरह। यह आदेश देने या उस पर प्रभुता करने का अधिकार नहीं है। वह तो पतन का बुरा परिणाम बनकर ही आएगा।

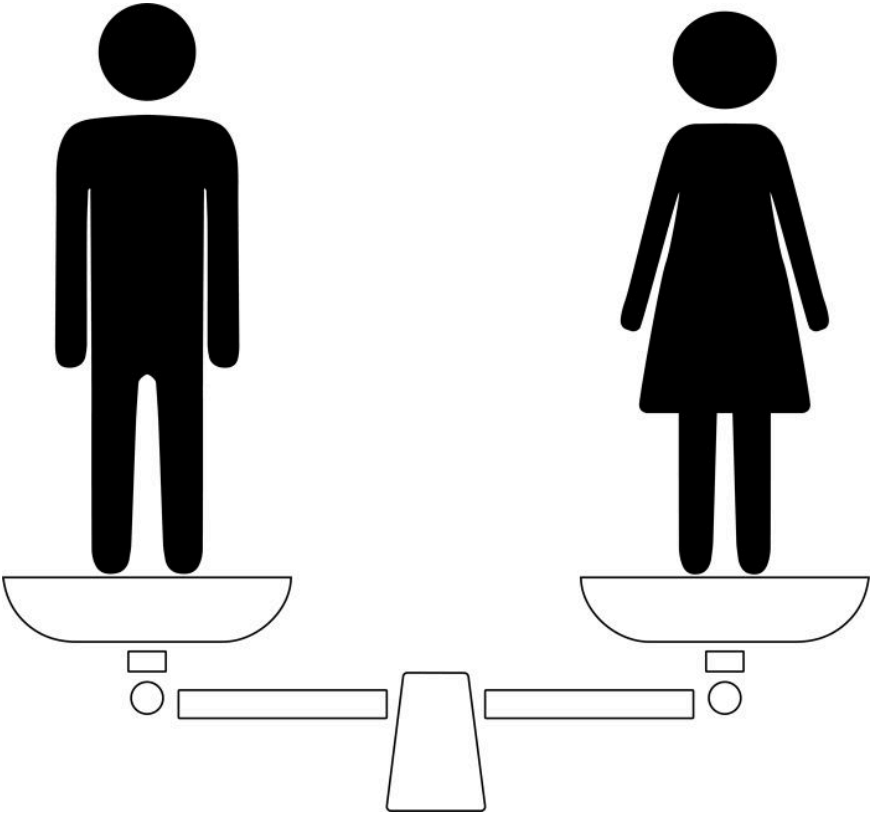
हव्वा को देखकर आदम के पहले शब्दों की गूँज श्रेष्ठगीत 4:9 में दूल्हे के शब्दों में मिलती है: "मेरी बहन, मेरी दुल्हन, तूने मेरा हृदय चुरा लिया है; अपनी एक ही चितवन से तूने मेरा हृदय चुरा लिया है।"

पुरुष, जो पहले रचा गया, उसे पहले प्रेम करने का, पहले स्वयं को बलिदान करने का, पहले सेवा करने का, पहले उसे सामर्थ्य देने का अधिकार मिला है – उस पर सामर्थ्य चलाने का नहीं।

एक-दूसरे के प्रति कृतज्ञता का यह भाव अपनी पूर्ण अभिव्यक्ति अपनी कलीसिया के प्रति मसीह के प्रेम में पाता है। यही बात हमारे चर्चों, कलीसियाओं और सभाओं में सबके लिए – अविश्वासी आगन्तुकों के लिए भी – और हमारे आसपास के लोगों के लिए दिखाई देनी और अनुभव होनी चाहिए।

"बाइबल का आरम्भ मनुष्य के एक आदिम स्वप्न की प्रतिज्ञा करता है: लिंगों की समानता और निःसंकोच यौनिकता।"

अर्नोल्ड आंगेनेंट (Arnold Angenendt)



तेरी धार्मिकता सदा की धार्मिकता बनी रहती है, और तेरी शिक्षा सत्य है।

भजन संहिता 119:142 (Zürcher Bibel, जर्मन बाइबल अनुवाद)

2.2 पुरुष और स्त्री का पतन

जब मैं पहले तीन अध्यायों के आदि-इतिहास से होकर गुज़रता हूँ, तो जान-बूझकर प्रतीकात्मक (टाइपोलॉजिकल) व्याख्याओं या आदर्श-रूप अर्थों की गहराई में नहीं जाता। बात मनुष्य होने की है, जैसा वह पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध में उनके शाब्दिक अस्तित्व में प्रकट होता है। यहाँ अभी व्याख्या के लिए पौलुस के पाठों को लाने का कोई अर्थ नहीं है। मैं कहता हूँ “इस स्थान पर”, क्योंकि बाद में मुझे निश्चय ही ऐसा करना पड़ेगा। बाइबल पढ़ने का एक महत्वपूर्ण नियम है: सन्दर्भ, सन्दर्भ, सन्दर्भ। पहले और सबसे बढ़कर पाठ को उसके सीधे सन्दर्भ में, उसके परिवेश और ऐतिहासिक परिस्थितियों में समझना, जहाँ तक यह

सम्भव हो। इसके लिए आज बहुत-से साधन और स्रोत भी उपलब्ध हैं। उसके बाद ही व्याख्या के आगे के कदम सही मार्ग पर होते हैं।

उत्पत्ति 3 हव्वा के और फिर आदम के दुखद धोखे और आज्ञा-उल्लंघन का वर्णन करता है, जिनसे टूटन के कई स्तर उत्पन्न हुए: लज्जा, दोष, शत्रुता, पीड़ादायक कष्ट, मृत्यु और अदन की वाटिका से निष्कासन। परमेश्वर सब सम्बन्धित पक्षों से बात करता है – साँप से, पुरुष से और स्त्री से – और उन्हें उनके कामों के परिणामों के विषय में चेताता है। और कुछ हद तक उन्हें उन सब बातों के लिए तैयार करता है, जो उन पर आने वाली हैं। एक पद है, जो बहस के केन्द्र में आ गया है। वह है उत्पत्ति 3:16: "तू अपने पति की लालसा करेगी, और वह तुझ पर प्रभुता करेगा"। फिर भी पहले की तरह हम संक्षेप में बाइबल के वृत्तान्त से होकर चलें [उत्पत्ति 3:1-7, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित]:

> और साँप मैदान के उन सब पशुओं से अधिक चतुर था, जिन्हें यहोवा परमेश्वर ने बनाया था; और उसने स्त्री से कहा: क्या परमेश्वर ने सचमुच कहा है: तुम वाटिका के किसी भी वृक्ष का फल न खाना?
>
> और स्त्री ने साँप से कहा: वाटिका के वृक्षों के फल हम खाते हैं; पर जो वृक्ष वाटिका के बीच में है, उसके फल के विषय में परमेश्वर ने कहा है: तुम उसमें से न खाना और न उसे छूना, ऐसा न हो कि तुम मर जाओ।
>
> और साँप ने स्त्री से कहा: तुम निश्चय नहीं मरोगे, बल्कि परमेश्वर जानता है कि जिस दिन तुम उसमें से खाओगे, उसी दिन तुम्हारी आँखें खुल जाएँगी और तुम परमेश्वर के समान हो जाओगे, भले और बुरे का ज्ञान रखने वाले। और स्त्री ने देखा कि वह वृक्ष खाने के लिए अच्छा है, और कि वह आँखों को लुभाने वाला है, और कि वह वृक्ष समझ देने के लिए चाहने योग्य है; और उसने उसके फल में से लेकर खाया, और अपने पति को भी, जो उसके साथ था, दिया, और उसने खाया।
>
> तब उन दोनों की आँखें खुल गईं, और उन्होंने जाना कि वे नंगे हैं; और उन्होंने अंजीर के पत्ते जोड़-जोड़कर अपने लिए लंगोट बना लिए।

हव्वा के होने से पहले परमेश्वर ने आदम से कहा था [उत्पत्ति 2:16-17, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित]:

> और यहोवा परमेश्वर ने मनुष्य को आज्ञा दी और कहा: वाटिका के हर वृक्ष का फल तू अपनी इच्छा से खा सकता है; पर भले और बुरे के ज्ञान का जो वृक्ष है, उसमें से तू न खाना; क्योंकि जिस दिन तू उसमें से खाएगा, उसी दिन अवश्य मर जाएगा।

बोलने वाला साँप अपनी धोखे की चाल में जान-बूझकर हव्वा की ओर मुड़ता है। क्या वह कमज़ोर थी? या दोनों में से उसे बहकाना सबसे सरल था? इस परिस्थिति की ऐसी व्याख्या की जा सकती है। इसलिए नहीं कि वह स्त्री थी। बल्कि इसलिए कि शायद वह आज्ञा को केवल दूसरे के मुँह से जानती थी। जो वह जानती थी, वह केवल आदम से ही जान सकती थी। एक छोटा-सा विवरण सम्भवतः दिखाता है कि आदम ने उसे उससे अधिक बताया था, जितना परमेश्वर ने उसे बताया था। या उसने आदम की बताई बात में कुछ जोड़ दिया।

शायद सावधानी के उपाय के रूप में भी: न छूना, हव्वा ने कहा। और बीच में तो वह कहीं अधिक महत्वपूर्ण जीवन का वृक्ष खड़ा था, न कि भले और बुरे के ज्ञान का वृक्ष (2:9)।

कुछ लोग हव्वा के शब्दों में पहले से ही कमज़ोरी या आज्ञा-उल्लंघन के पहले लक्षण देखते हैं। पर हो सकता है कि हव्वा के शब्द, जैसा मूसा ने उन्हें लिखा, यह बताएँ कि हम पाप को चित्र-रूप में अशुद्धता के रूप में कैसे समझ सकते हैं। मूसा की व्यवस्था के अनुसार जो किसी अशुद्ध वस्तु को छूता था, वह अशुद्ध हो जाता था और उसे शुद्धिकरण की आवश्यकता होती थी। लैव्यव्यवस्था की पुस्तक में इसका वर्णन 160 से अधिक बार हुआ है। इस दृष्टि से हव्वा के शब्द स्पष्ट करते हैं कि पाप में गिरने और अशुद्ध होने का क्या अर्थ है।

बहकाने वाले, अर्थात् साँप, का धोखा सफल होता है। वह परमेश्वर की भलाई और सच्चाई पर सन्देह फैलाता है। हव्वा इस पर विश्वास कर लेती है, और वर्जित फल चाहा हुआ फल बन जाता है। भूख ने नहीं, बल्कि उस समझ और ज्ञान को पाने की इच्छा ने, जिसे परमेश्वर उनसे रोके रखता प्रतीत होता था, हव्वा को हाथ बढ़ाने के लिए प्रेरित किया। एक घातक निर्णय। बड़े प्रभाव वाला एक छोटा कदम।

हव्वा और आदम साथ-साथ वहाँ थे। आदम उसके पास था। क्या आदम ने भी साँप को बोलते सुना था? क्या उसने अपनी अगुवाई की भूमिका छोड़ दी थी? यह सब अनुमान है। हव्वा उसे वह फल देती है, जिसे वह स्वयं चख चुकी है। आदम वर्जित फल लेता है। आदम जान-बूझकर परमेश्वर की उस आज्ञा का उल्लंघन करता है, जो उसे स्वयं उससे मिली थी।

यद्यपि इस घटना से कोई अच्छी बात नहीं निकाली जा सकती, फिर भी यह परिस्थिति भी दिखाती है कि दोनों कैसे समान रूप से सशक्त और साथ ही समान रूप से ग़लत व्यवहार करते हैं। हव्वा बहकाई जाती है। वह जानती थी कि वह वृक्ष वर्जित था। आदम बिना एक शब्द कहे बहक जाता है, यद्यपि वह जानता था कि यह वृक्ष वर्जित था।

उसी क्षण वे पहचान लेते हैं कि वे नंगे हैं। एक नया ज्ञान। जैसा साँप ने वादा किया था।

> [उत्पत्ति 3:8-19, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और उन्होंने यहोवा परमेश्वर का शब्द सुना, जो दिन की ठण्डक के समय वाटिका में चल रहा था। और मनुष्य और उसकी पत्नी वाटिका के वृक्षों के बीच यहोवा परमेश्वर की दृष्टि से छिप गए। और यहोवा परमेश्वर ने मनुष्य को पुकारा और उससे कहा: तू कहाँ है?

कैसा अकल्पनीय सौभाग्य – वाटिका में प्रतिदिन दिन की ठण्डक में, साँझ के आरम्भ में, स्वयं परमेश्वर से दिखाई देने वाले रूप में मिलना। जैसे पवित्रस्थान में। पर अब सब कुछ बदल गया है। भय और जागा हुआ विवेक उन्हें परमेश्वर से भागने के लिए प्रेरित करते हैं। वे जानते हैं कि अच्छा सम्बन्ध बिगड़ गया है। जो बात परमेश्वर के लिए बहुत महत्वपूर्ण थी, उसकी उन्होंने अवहेलना की है।

> और उसने (आदम ने) कहा: मैंने वाटिका में तेरा शब्द सुना और मैं डर गया, क्योंकि मैं नंगा हूँ, और मैं छिप गया। और उसने कहा: तुझे किसने बताया कि तू नंगा है? क्या तूने उस वृक्ष का फल खाया है,

> जिसके विषय में मैंने तुझे आज्ञा दी थी कि उसमें से न खाना? और मनुष्य ने कहा: जिस स्त्री को तूने मेरे साथ रहने को दिया है, उसी ने उस वृक्ष में से मुझे दिया, और मैंने खाया।

नंगे होने की चेतना आज्ञा-उल्लंघन के साथ आती है। एक के पीछे दूसरा आता है। नंगापन लज्जा बन जाता है, कलंक बन जाता है। दोष का चिह्न। निर्दोषता बीती बात हो गई।

परमेश्वर उल्लंघन की बात ठोस रूप से उठाता है। आदम को अपने दोष का बोध है। पर वह कोई दूसरा दोषी, कोई बलि का बकरा ढूँढ़ता है, जिस पर वह अपना दोष डाल सके। चाहे यह कितना भी दयनीय हो: वह अपनी पत्नी को ज़िम्मेदार ठहराता है। कितनी कायरता! अपने दोष को स्वीकार करने के बजाय वह अपनी पत्नी पर आरोप लगाता है। और मानो परमेश्वर को भी (साथ में) ज़िम्मेदार ठहराता है, क्योंकि उसी ने उसे वह स्त्री दी थी।

वास्तव में इस वृत्तान्त में परमेश्वर मामला केवल आदम के साथ पूरी तरह नहीं निपटाता, बल्कि स्त्री से भी बात करता है। हर एक से व्यक्तिगत रूप से और समान दर्जे पर बात की जाती है और उसे देखा जाता है, जैसे परमेश्वर सब मनुष्यों का धार्मिकता से न्याय करेगा और कोई भी विवरण अनदेखा नहीं करेगा।

2.2.1 हव्वा का उत्तर

हव्वा बहकाई गई थी, उस झूठे और मनुष्य-घातक ने उसे छल लिया था। जब परमेश्वर ने उससे बात की, तो उसने उसकी ओर संकेत किया, जिसका दोष सबसे बड़ा था: साँप।

> और यहोवा परमेश्वर ने स्त्री से कहा: तूने यह क्या किया! और स्त्री ने कहा: साँप ने मुझे धोखा दिया, और मैंने खाया।

हव्वा स्वयं को साँप से अलग करती है, उस पर आरोप लगाती है। वह बड़ा उल्लंघन, जिससे हव्वा एक हिमस्खलन आरम्भ कर देती है, बहकावे से हुआ। और वह स्वीकार करती है कि उसने खाया है। उसका रवैया आदम के रवैये से अच्छा है। उसके उल्लंघन की मात्रा की तुलना आदम के उल्लंघन से नहीं की जा सकती।

“परमेश्वर ने स्त्री से पूछा, जैसे उत्पत्ति 3:13 में: ‘तूने क्या किया?’ उसने परमेश्वर को बिना बहानों के उत्तर दिया। उसने परमेश्वर को बिना आरोपों के उत्तर दिया। उसने पुरुष से बिलकुल भिन्न ढंग से बात की। वह अब और धोखा नहीं खा रही थी। शायद जब उसने सुना कि परमेश्वर पुरुष से कैसे पूछ रहा है, तब उसे सब कुछ स्पष्ट हो गया। जो भी हो, अब उसने देख लिया कि क्या हुआ था। अपनी नई बुद्धि में उसने बुराई को पहचाना और कहा: ‘साँप ने मुझे बहकाया, और मैंने खाया।’ इस उत्तर से उसने दुष्ट साँप को अपने धोखे के स्रोत के रूप में प्रकट कर दिया। और उसने वह बुराई स्वीकार की, जो उसने धोखा खाते हुए की थी: ‘और मैंने खाया।’ क्या उसने उससे अधिक बुराई की थी, जितनी पुरुष ने अभी-अभी की थी? नहीं। क्या उसने उस पुरुष पर दोष लगाया, जो उसके साथ था? नहीं। क्या उसने परमेश्वर पर दोष लगाया? नहीं। फिर भी,

बाइबल हमें उसके विषय में जो बताती है, वह उस ढंग से मेल नहीं खाता, जिस ढंग से उसे अक्सर प्रस्तुत किया जाता है। और उसका यह ग़लत चित्रण लम्बे समय से चला आ रहा है।"[14]

2.2.2 हव्वा का कष्ट, गर्भावस्था और वश में किया जाना

हव्वा से कहे गए परमेश्वर के दण्ड-वचन एल्बरफेल्डर अनुवाद (Elberfelder, जर्मन बाइबल अनुवाद) में इस प्रकार हैं:

> स्त्री से उसने कहा: मैं तेरी गर्भावस्था के कष्ट को बहुत बढ़ाऊँगा, तू पीड़ा के साथ बच्चे जनेगी; और तेरी लालसा तेरे पति की ओर होगी, परन्तु वह तुझ पर प्रभुता करेगा।

ज़्यूरिख़ बाइबल (Zürcher Bibel, जर्मन बाइबल अनुवाद) – और आइनहाइट्स-अनुवाद (Einheitsübersetzung, जर्मन बाइबल अनुवाद) भी – कष्ट को गर्भावस्था से अलग करती है। और यही सही है, क्योंकि बात दो चीज़ों की है:

> स्त्री से उसने कहा: मैं तुझे बहुत कष्ट दूँगा और तेरे गर्भ बहुत-से होने दूँगा, तू पीड़ा के साथ बच्चे जनेगी। तू अपने पति की लालसा करेगी, और वह तुझ पर प्रभुता करेगा।

ऊपर उद्धृत ब्रूस फ़्लेमिंग (Bruce Fleming) इन शब्दों को इस प्रकार प्रस्तुत करते हैं:

> मैं निश्चय ही बढ़ाऊँगा (1) खेत में तेरे परिश्रम भरे काम को और (2) तेरे गर्भधारण को।

फिर परमेश्वर स्त्री को उसके विषय में शिक्षा देता है, जो उसके साथ और उन दोनों के साथ हुआ है, अब जब वे नश्वर और पतित हो गए हैं।

> परिश्रम के साथ तू बच्चे जनेगी
>
> तेरी [प्रेम-भरी] लालसा तेरे पति की ओर [है]
>
> पर वह [विद्रोह करके स्वयं पर प्रभुता करता है और] तुझ पर प्रभुता करेगा।

क्या पद 16 के पहले भाग में यह भेद महत्वपूर्ण है? इससे हव्वा से कहे गए शब्दों का स्वर बिलकुल बदल जाता है, और इससे भी महत्वपूर्ण, उनकी विषय-वस्तु भी। पहले यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि परमेश्वर के इस सम्बोधन में हव्वा पर कोई भी शाप नहीं आता। इसके विपरीत! पहले उसे बताया जाता है कि खेती के सम्बन्ध में उसे बहुत परिश्रम और मेहनत करनी पड़ेगी। इसमें पशुपालन और जीवन चलाने वाला अन्य हाथ का काम भी आता है। कष्ट (Mühsal) शब्द इस रूप में केवल तीन बार आता है और हमेशा खेत में परिश्रम भरे काम का अर्थ देता है। आदम इसे ऐसे सुनता है: भूमि तेरे कारण शापित है: "कष्ट के साथ तू जीवन भर उसकी उपज खाएगा।" और बाद में लेमेक अपने पुत्र नूह के विषय में यही कहता है (उत्पत्ति 5:29): "यह

14. Fleming, Bruce; Fleming, Joy; Hagemeyer, Joanne. The Book of Eden, Genesis 2-3: God Didn't Curse Eve (or Adam) or Limit Woman in Any Way. Kindle-संस्करण, पृ. 56

हमें हमारे काम के विषय में, और उस भूमि के कारण हमारे हाथों के कष्ट के विषय में शान्ति देगा, जिसे यहोवा ने शाप दिया है।"

आदम ने निषेध को पूरी तरह जानते हुए हव्वा से फल ले लिया और खा लिया। पर परमेश्वर का शाप आदम पर नहीं पड़ता। वह उसके पास से निकल जाता है और भूमि पर पड़ता है। यह अदन में अनुग्रह है। इसके परिणाम हैं भोजन उत्पन्न करने में कष्ट। अदन के विपरीत, जीवन अस्तित्व बचाने का संघर्ष बन जाता है। और क्योंकि हव्वा उसी भूमि पर रहती है और वे पति-पत्नी के रूप में साथ मिलकर जीवन सँभालते हैं, इसलिए उस पर भी वही कष्ट आता है जो आदम पर। कारण हव्वा नहीं, बल्कि आदम है, क्योंकि उसके काम के कारण भूमि शापित है।

पर अब, पहले वाक्य के दूसरे भाग में, शुभ सन्देश आता है, सुसमाचार। गर्भ (बहुवचन) बढ़ाए जाएँगे!

उल्लंघन के बावजूद हव्वा सृष्टि का कार्य पूरा कर सकती है: फूलो-फलो और बढ़ो, और पृथ्वी को भर दो! उल्लंघन के बावजूद जीवन आगे चलेगा। बहुत-से वंशज होंगे। इससे भी महत्वपूर्ण, इन वंशजों में से एक साँप का सिर कुचलेगा। साँप ने पहले ये शब्द सुने, जो परमेश्वर ने उससे कहे:

> और मैं तेरे और स्त्री के बीच में, और तेरे वंश और उसके वंश के बीच में शत्रुता उत्पन्न करूँगा; वह तेरे सिर को कुचलेगा, और तू उसकी एड़ी को कुचलेगा।

इन शब्दों को आदि-सुसमाचार या प्रोटो-इवैन्जेलियम (Proto-Evangelium) कहा जाता है। पर ये शैतान से कहे गए हैं, और उसके लिए यह निश्चय ही कोई शुभ सन्देश नहीं है। फिर साँप को यह सुनना पड़ता है कि परमेश्वर सुनिश्चित करता है और इसकी गारण्टी देता है कि वंशज होंगे, कि स्त्री का वंश होगा। हव्वा के लिए यह शुभ सन्देश है, जैसे आदम के लिए और हमारे लिए, जो वाटिका में साथ सुन सकते हैं। इस प्रकार हव्वा से कहे गए शब्दों का अर्थ सकारात्मक है, आशा से भरा है।

हव्वा के लिए बच्चे जनना कष्टदायक होगा, जैसे आदम के लिए खेती। पतन के बाद जीवन बदल गया है। जब हव्वा ने ये शब्द सुने, तब उसने अभी कोई बच्चा नहीं जना था। साँप और आदम शाप और दण्ड के वचन सुनते हैं: एक अच्छा पहले है और एक बुरा बाद में। हव्वा के साथ ऐसा नहीं! जब परमेश्वर अदन में उससे बात करता है, तो वह स्त्री के शरीर को नहीं बदलता। पर कुछ अनुवाद ऐसे लगते हैं, मानो परमेश्वर स्त्री को किसी तरह बदल देता है और जनने को एक बुरी बात में बदल देता है।

जन्म एक जोखिम भरी प्रक्रिया है, जब आज के समान चिकित्सा-सुविधाएँ उपलब्ध न हों, जैसी आज संसार के बहुत-से भागों में हैं। पर परमेश्वर स्त्रियों के पक्ष में खड़ा है। वह उनका सहायक और उद्धारकर्ता है (1 तीमुथियुस 2:15)।

एक दृष्टान्त में यीशु ने अपने चेलों से कहा – और हम मान सकते हैं कि यह वही है, जिसने वाटिका में हव्वा से बात की थी:

> [यूहन्ना 16:21, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] स्त्री जब जनती है, तो कठिनाई (या: कष्ट) सहती है, क्योंकि उसकी घड़ी आ पहुँची है; पर जब वह बच्चे को जन्म दे चुकती है, तो इस आनन्द के

कारण कि संसार में एक मनुष्य उत्पन्न हुआ है, उस संकट (या: पीड़ा) को फिर स्मरण नहीं करती।

“पद 16-19 में लेखक मानव अस्तित्व की कठोरताओं का हिसाब करता है, विशेष रूप से जीवन के सृजनात्मक पहलू का: वंश-वृद्धि और भोजन का उत्पादन। पहले की निश्चिन्तता अब कष्ट के साथ मिल जाती है: अच्छा (वंशज, भोजन) बुरे (कष्ट) के साथ आता है।”

> और यहोवा परमेश्वर ने साँप से कहा: क्योंकि तूने यह किया है, इसलिए तू सब घरेलू पशुओं और मैदान के सब पशुओं से अधिक शापित होगा! तू पेट के बल रेंगेगा और जीवन भर धूल खाएगा। और मैं तेरे और स्त्री के बीच में, और तेरे वंश और उसके वंश के बीच में शत्रुता उत्पन्न करूँगा; वह तेरे सिर को कुचलेगा, और तू उसकी एड़ी को कुचलेगा।

साँप से बात करते हुए परमेश्वर बताता है कि इस उल्लंघन के तीनों सम्बन्धित पक्षों के लिए क्या परिणाम हैं। साँप को भूमि पर और धूल में नीचा किया जाता है। साँप के लिए स्त्री पर किए गए आक्रमण के विनाशकारी परिणाम होते हैं। उसने एक ऐसी भूल की है, जिसकी कीमत उसे अपने जीवन से चुकानी पड़ेगी।

पहले स्त्री और साँप के बीच स्थायी शत्रुता होगी। रोचक बात: आदम और साँप के बीच नहीं। इससे भी उल्लेखनीय: साँप के वंश और स्त्री के वंश के बीच। यहाँ स्त्री के वंशज, अर्थात् उसका वंश, होगा। इन वंशजों में से एक साँप का सिर कुचलकर उसे मार डालेगा। पर एड़ी में एक पीड़ादायक डंक की कीमत पर।

इन थोड़े-से शब्दों का महत्व और विस्तार बहुत बड़ा है। साँप एक रेंगने वाले जन्तु से अधिक है। वह मनुष्यों का शत्रु और परमेश्वर का शत्रु है – शैतान, इब्लीस।

मुझे यह आश्चर्यजनक लगता है कि इस ब्रह्माण्डीय संघर्ष में हव्वा की, और उसके साथ स्त्रियों की, क्या भूमिका होगी। जब हम संसार के इतिहास और उद्धार के इतिहास पर पीछे दृष्टि डालते हैं, तो यह संघर्ष सचमुच ऐसा ही सिद्ध होता है। शैतान स्त्री पर उसकी “उद्धार लाने वाली” भूमिका में आक्रमण करेगा। वह उसे अपमानित करने, उसकी प्रभावशीलता को कमज़ोर करने, उसके शब्दों को अनसुना करवाने के लिए सब कुछ करेगा। इस ब्रह्माण्डीय संघर्ष में स्त्री कितनी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है! उसके बिना किसी वंशज के द्वारा परमेश्वर की कोई विजय नहीं हो सकती।

यद्यपि वह अभी-अभी बहकाई गई और उसने पाप किया, फिर भी सृष्टिकर्ता उसे उद्धार के साधन के रूप में नियुक्त करता है। आदम को नहीं। उसे एक बड़ी प्रतिज्ञा का अनुग्रह मिलता है।

पतन के इस अध्याय में भी स्त्री का वर्णन किसी अधीन भूमिका में नहीं होता। लगभग इसके विपरीत है। मानो पतन को भविष्य में उलटने के लिए वह अधिक महत्वपूर्ण हो।

अब उल्लंघन के दूसरे परिणाम के रूप में पुरुष के साथ उसके सम्बन्ध का वर्णन होता है। हर पाठक अनुभव करता है कि यह उनके सम्बन्ध में एक गम्भीर बिगाड़ का वर्णन है। यह कोई अच्छी बात नहीं है। कोई आशीष नहीं, बल्कि एक शाप जैसा। जो संसार के इतिहास में ऐसे ही सच हुआ है।

आदम को भी, जिसे इस पाप के लिए ज़िम्मेदार ठहराया जाता है, अपने काम के कड़वे परिणाम सुनने पड़ते हैं:

> और आदम से उसने कहा: क्योंकि तूने अपनी पत्नी की बात सुनी और उस वृक्ष का फल खाया, जिसके विषय में मैंने तुझे आज्ञा दी और कहा था: तू उसमें से न खाना! – इसलिए भूमि तेरे कारण शापित हो: कष्ट के साथ तू जीवन भर उसकी उपज खाएगा; और वह तेरे लिए काँटे और ऊँटकटारे उगाएगी, और तू मैदान का साग-पात खाएगा। अपने माथे के पसीने से तू अपनी रोटी खाएगा, जब तक तू मिट्टी में न लौट जाए, क्योंकि तू उसी में से लिया गया है। क्योंकि तू धूल है और धूल में ही फिर लौट जाएगा!

परमेश्वर आदम को उत्तरदायित्व से मुक्त नहीं करता। उसी को उसने आज्ञा दी थी, और उसी ने उसका उल्लंघन किया था। चाहे परोक्ष रूप से उसकी पत्नी के द्वारा हुआ हो, इसका कोई महत्व नहीं है। आज्ञा उसे मिली थी, और उसने उसका उल्लंघन किया था।

परिणाम अन्धकारमय हैं। कष्ट और परिश्रम – एक ही शब्द में, जीवित रहने और अस्तित्व बचाने का संघर्ष – आदम और आदम के सब पुत्रों के जीवन का भाग्य बन जाएगा। जबकि हव्वा "आदि-सुसमाचार या प्रोटो-इवैन्जेलियम" सुनती है और उसमें निर्णायक रूप से भागीदार है, आदम के लिए अन्त में केवल यही बचता है कि वह फिर वही बन जाए, जिससे वह लिया गया था। एक दुखद निर्णय। कोई आशा-भरी सम्भावना नहीं। पर स्त्री की विजय, अर्थात् स्त्री का वंश, एक दिन पुरुष को भी धूल में से खींचकर जीवन में ले आएगा।

2.2.3 तेरी लालसा उसकी ओर होगी, वह तुझ पर प्रभुता करेगा

यह दण्ड-वचन बाइबल के सबसे दुखद वचनों में से है और (दुर्भाग्य से) आज तक इसकी भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ होती हैं। यह हमारी जाँच के केन्द्र में है। गूटे नाख़रिष्ट (Gute Nachricht, जर्मन बाइबल अनुवाद) में यहाँ लिखा है: तू अपने पति की ओर खिंचेगी, पर वह तुझ पर प्रभुता करेगा। जिस शब्द का अनुवाद एल्बरफेल्डर अनुवाद में लालसा किया गया है, उसका अर्थ है अपने पति के प्रति दृढ़, अडिग भक्ति।

प्रभुता करना शब्द अपने आप में तटस्थ है। अभी यह स्पष्ट नहीं लगता कि बात अच्छी प्रभुता की है या बुरी। पर यह अनुभव होता है कि दोनों के सम्बन्ध और नाते का यह वर्णन वह नहीं है, जो उत्पत्ति 1 और 2 दिखाते हैं। यहाँ एक टूटन है, एक असन्तुलन। एक तनाव का क्षेत्र, जिसमें असमानता और असन्तुलन हावी हो जाएँगे। एक ओर स्त्री, जो पुरुष की ओर रची गई थी, निराशा अनुभव करती है। वह अपनी दुर्बलता और असुरक्षा में स्वयं को पुरुष के हाथ में सौंपती है। दुर्बलता इसलिए, क्योंकि वह शारीरिक रूप से कमज़ोर है। पर इसलिए भी, क्योंकि उसकी सामाजिक और सांस्कृतिक परिस्थितियाँ कमज़ोर और वंचित हो गईं (1 पतरस 3:7)।

पर पुरुष के पास उसे अपनी लालसा का उचित उत्तर नहीं मिलता। उसकी ओर जो आता है, वह सहानुभूति या परस्पर आकर्षण नहीं है (देखें अध्याय 2:24)। न ही "एक तन" होना। शारीरिक संसर्ग और सन्तान उत्पन्न करने में तो हाँ, पर साझा जीवन के सब क्षेत्रों में नहीं। हृदय की एकता ख़तरे में है। प्रभुता पुरुष का उत्तर है।

बराबरी के स्तर पर साथ-साथ नहीं, बल्कि वश में किया जाना, दमन और भेदभाव लिंगों के सम्बन्ध के साथ-साथ चलेंगे। यह कोई आशीष नहीं है। यह पाप का परिणाम है। पाप का जारी रहना, यहाँ पुरुष का पाप। पत्नी पर या सामान्य रूप से स्त्री पर प्रभुता करना उनके सम्बन्ध का भाग नहीं था और कभी नहीं होना चाहिए था। पवित्रशास्त्र कहीं भी पुरुषों को उस पर प्रभुता करने के निर्देश नहीं देता!

यह वह नहीं है, जिसकी परमेश्वर ने योजना बनाई थी और जैसा उसने दोनों को रचा था। हव्वा की सृष्टि और उनकी पहली भेंट कितनी आशाजनक थी। पर "अदन के उस पार" (Jenseits von Eden) दूसरी हवा चलती है। वहाँ पुरुष-जाति शायद ही कभी सज्जन के रूप में, बल्कि अधिकतर निरंकुश शासक और मर्दानगी जताने वाले (माचो) के रूप में सामने आती है।[15] फिर भी बहुत-सी स्त्रियाँ ऐसे लोगों की ओर भी खिंचती हैं।

एक दूसरी व्याख्या इस शब्द को ऐसे समझती है, मानो स्त्री पुरुष पर प्रभुता पाने का प्रयास करेगी।[16] पर पुरुष – अपवादों को छोड़कर, निश्चय ही – उसके विरुद्ध अपनी बात मनवाएगा और अपनी शक्ति और प्रभुत्व की रक्षा करेगा। मैंने यह व्याख्या अक्सर सुनी है। मानो स्त्री स्वभाव से ही मुकुट की ओर हाथ बढ़ाती हो। उसे छोटी उँगली दो, तो वह पूरा हाथ पकड़ लेगी। ऐसी स्त्रियाँ होंगी। ऐसी, जो अपने पतियों को अपने वश में करना और उन पर हुक्म चलाना चाहती हैं। इसमें कोई प्रश्न नहीं। पर पूरी स्त्री-जाति को इस सामान्य सन्देह के घेरे में खड़ा करना, या पूरे कुल को एक साथ दोषी ठहराना, अधिकतर पुरुष-जाति की बिगड़ी हुई मानसिकता और रवैये से निकलता है। यह पुरुष-जाति स्वयं केवल सन्देह के घेरे में नहीं, बल्कि परमेश्वर के वचनों के अनुसार इस निर्णय के अधीन आती है कि वह अपने अधिकार के प्रति अत्यधिक सजग है। यहाँ भी जोड़ना होगा: अपवादों को छोड़कर। दोनों प्रकार के व्यवहार हर सम्भव तीव्र और हल्के रूपों में पाए जाते हैं। और इससे यह कभी नहीं निकलता कि सकारात्मक, प्रेम-भरी साझेदारियाँ नहीं हैं! निश्चय ही मसीही विवाहों के बाहर भी।

स्त्री की लालसा प्रभुत्व जमाने का प्रयास नहीं है। वह बच्चे पाने की कोई यौन लालसा भी नहीं है। वह उसमें सम्मिलित हो सकती है। गहराई में वह पुरुष की ओर खिंचाव है, सुरक्षा ढूँढ़ना, साथ खोजना, जैसा सृष्टि में रखा गया है। और कमज़ोर और अधिकतर साधनहीन की अपनी भूमिका में यही उसका भाग्य बन जाता है: "मूल विचार यह है कि स्त्री की वह इच्छा, जो उसे निर्भर बनाती है, उसकी इस आवश्यकता से निकलती है कि वह अपनी मातृ-प्रवृत्ति को पूरा करे ... आइए हम याद करें कि समाजशास्त्रियों ने किसे कम या न्यूनतम रुचि का सिद्धान्त कहा है: जिस सम्बन्ध में दो साथी होते हैं, उसमें जो दूसरे साथी पर अधिक निर्भर होता है, वह अधिक असुरक्षित होता है, जबकि जिसकी उस सम्बन्ध से जुड़े रहने में कम रुचि होती है, वह प्रभुत्व की स्थिति में होता है।"[17]

यदि हम उत्पत्ति 1-2 के विषय में फ़्रीडमैन (Freedman) का पारस्परिकतावादी[18] दृष्टिकोण लें, तो उत्पत्ति 3:16 की व्याख्या बिलकुल भिन्न होगी: "एक बिलकुल दूसरे परिमाण की त्रासदी। परस्पर सहारे और शक्ति

15. प्रश्न उठता है कि क्या परमेश्वर का यह दण्ड-वचन पशु-जगत के कुछ भागों पर भी लागू होता है।
16. देखें 4:7 जैसी ही वाक्य-रचना; पर साथ ही श्रेष्ठगीत 7:10 भी। यह शब्द केवल इन्हीं दो स्थानों पर और आता है।
17. Walton, 228, Genesis, The NIV Application Commentary, Zondervan, Grand Rapids, 2001
18. पारस्परिकतावादी (mutualistisch) का अर्थ है परस्पर, एक-दूसरे पर आश्रित और एक-दूसरे पर निर्भर होना, समानता और एकता में।

का, समानता और बाँटने का, बराबर वालों के बीच मान्यता का और दूसरे को सबसे निकट साथी के रूप में पहचानने का मूल सम्बन्ध एक भयानक रूप से अव्यवस्थित और भावनात्मक रूप से असमान, शक्ति पर आधारित, प्रेमहीन सम्बन्ध बन गया है। स्त्री अपने पति की लालसा करेगी, पर वह उस पर प्रभुत्व जमाएगा। यह एक भयावह टूटन और उलट-पुलट है।"

एंड्रयू मैकिन्टॉश (Andrew Macintosh) बताते हैं कि हव्वा के पाप के परिणाम "सृष्टि में लिंगों की इसी आमूल पूरकता (समानता और एक-दूसरे को पूरा करने) की पृष्ठभूमि में परिभाषित होते हैं: ठीक वहीं, जहाँ जीवन में स्त्री की आनन्दपूर्ण परिपूर्णता मिलनी है, अब पीड़ा का और वश में किए जाने का बोझ आ जाता है।"

मैथ्यू लिंच (Matthew Lynch) इस पद पर ऐसे टिप्पणी करते हैं: "जैसे उसका जनना एक 'भलाई' है, जो अब पीड़ा से कलंकित है (3:16a), वैसे ही उसकी 'भक्ति' भी एक भलाई है, जो अब प्रभुता से कलंकित है (3:16b)।"[19]

यह पद स्त्री और पुरुष दोनों की उलझन, बिगाड़ और त्रासदी का चिह्न है। एक स्त्री अपनी टूटन और असुरक्षा में अपनी आवश्यकताएँ पूरी करने के लिए परमेश्वर की ओर नहीं, बल्कि किसी पुरुष की ओर मुड़ती है, और दयालुता और करुणा के बजाय उसका सामना उसकी उस टूटी हुई और अव्यवस्थित आवश्यकता से होता है कि वह उस पर प्रभुत्व जमाए। एक त्रासदी, जो इतिहास के क्रम में भयावह नियमितता से दोहराई जाती है।

पतन का उत्तरदायित्व आदम को उठाना होगा। हव्वा एक पीड़ित थी (और निश्चय ही फिर भी उत्तरदायी)। आदम अपराधी था। उसने "हाथ उठाकर" (जान-बूझकर, ढिठाई से) पाप किया। खुली आँखों से और परमेश्वर की आज्ञा को पूरी तरह जानते हुए उसने फल खाया। वह, न कि हव्वा, पतित मनुष्यजाति का सिर बनता है (रोमियों 5; 1 कुरिन्थियों 15), यद्यपि वह सब जीवितों की माता है।

शापित भूमि आदम के जीवन को निर्धारित करेगी, उस पर हावी होगी और उसका जीवन कठिन बनाएगी। इसी तरह वह अपनी ओर से अपनी पत्नी और पूरी स्त्री-जाति के साथ व्यवहार करेगा।

पूरे मानव-इतिहास में स्त्री बार-बार पूर्ण निर्भरता और वश में किए जाने की स्थिति में पहुँच जाती है। पूरे-पूरे समाज इसी से आकार पाते हैं। बात अपवादों की नहीं, बल्कि नियम की है। अधिकतर संस्कृतियों में यह सामान्य बात थी, और आज भी अक्सर है।

अब दोनों, पुरुष और स्त्री, पापी हैं। पतित। पापी के रूप में पुरुष अपनी पत्नी पर प्रभुता करेगा, और वह पापिनी के रूप में अपनी सब सम्भावनाओं का पूरा उपयोग करेगी, ताकि इस सम्बन्ध में घाटे में न रहे, अपना बचाव करे और अपना मार्ग खोजे। और अपने पति को अपने ढंग से चलाए और फिर भी परोक्ष रूप से प्रभाव डाले, जो उसके लिए अधिकतर वर्जित है।

"लिंगों का यह संघर्ष आगे सब जातियों की संस्कृतियों के सब स्तरों पर दिखाई देगा। यह तभी चंगा हो सकता है, जब इसे उत्पन्न करने वाली बुराई को जड़ से पकड़ा जाए।"[20]

19. Lynch, Contrary Women Genesis 3:16b on the ESV
20. Schmalenbach, 87, Frausein zur Ehre Gottes: ... im Kontext verschiedener Kulturen, 2007

2.3 समानता के विरुद्ध आपत्तियाँ

सृष्टि के वृत्तान्त में जो दृष्टिकोण मुझे मिलता है, उसके विरुद्ध इन्हीं थोड़े-से पाठों की उलटी व्याख्या भी है। जो लोग पुरुष के सिर होने और उसकी प्रधानता में विश्वास करते हैं, वे सृष्टि के वृत्तान्त को इस बात के प्रमाण के रूप में पढ़ते हैं कि आदम हव्वा का सिर है[21] और वह पदानुक्रम में पुरुष की अगुवाई के अधीन है।

आदम नाम भी है और मानव-जाति का पद भी।

इस मामले में हव्वा भी "आदम" है, अर्थात् मनुष्य। परमेश्वर ने मानव-जाति को "स्त्री" नाम नहीं दिया। मानो इसमें पुरुष की अगुवाई की "गन्ध" आती हो।[22] मैं इसमें पुरुष और स्त्री के धरती से बँधे होने पर ज़ोर देखता हूँ। अदामा (पृथ्वी) से आदम लिया गया, और उसके बाद आदम से हव्वा। वह भी आदम की तरह एक दिन पृथ्वी में लौट जाएगी। इसमें अगुवाई की कोई भूमिका पहचानना कठिन है, जब तक कोई उसे ढूँढ़ने का प्रयास न करे।

परमेश्वर आदम को केन्द्र बनाता है।

आदम के साथ "मनुष्यजाति" नाम की परियोजना आरम्भ होती है। पहले बात उसी की है। जब तक यह स्पष्ट नहीं होता कि कुछ कमी है। जीवन का दूसरा आधा भाग। जो प्रक्रिया इस कमी को स्पष्ट करती है (पशुओं के नाम रखना), वही साथ-साथ उस स्त्री का मूल्य भी दिखाती है, जो इस कमी को पूरा करती है। मनुष्य – पुरुष और स्त्री के रूप में – मिलकर सृष्टि का केन्द्र है। यही उत्पत्ति 1:26-27 दिखाता है।

आदम पहले रचा गया, हव्वा नहीं। इसलिए पदानुक्रम में वह हव्वा से ऊपर है।

आदम और हव्वा की सृष्टि के बीच कितना अधिक या कितना कम समय बीता होगा? चाहे प्राचीन काल में, आज के विपरीत, पुराना या बड़ा हमेशा अधिक भारी और प्रधान माना जाता था, फिर भी यह निष्कर्ष इस प्रकार के निर्धारण के लिए उपयुक्त नहीं है। पवित्रशास्त्र कहीं नहीं कहता कि यह क्रम पुरुष की अगुवाई की भूमिका का कारण है। ये मनमाने निष्कर्ष हैं और रहेंगे। इस क्रम की व्याख्या दर्जे के क्रम के रूप में नहीं की जानी चाहिए। जब पौलुस – जिस पर मैं अभी विस्तार से आऊँगा – 1 तीमुथियुस 2 में इस बात पर ज़ोर देता है कि आदम पहले रचा गया, तो वहाँ बात बाइबल की कोई अतिरिक्त कक्षा की नहीं है, बल्कि दूसरे प्रश्नों की है, जिनका किसी पदानुक्रम-व्यवस्था से कोई सम्बन्ध नहीं है।

पहिलौठे का अधिकार, जैसा कि सब जानते हैं, समय के इसी क्रम के सिद्धान्त पर चलता है। पर इसे कहीं भी पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध पर लागू नहीं किया गया है।

हम बाइबल को कैसे पढ़ते हैं, इस पर निर्भर करता है कि वह हमारे ग़लत या सही विचारों को और पक्का कर दे। अक्सर हमारी बाइबल की समझ परमेश्वर की इच्छा को नहीं, बल्कि हमारी अपनी सोच या हृदय के रवैये

21. अन्य लेखकों के साथ-साथ मैं विशेष रूप से उन तर्कों का उल्लेख करता हूँ, जो अलेक्ज़ेंडर स्ट्राउख (Alexander Strauch) प्रस्तुत करते हैं। Strauch, Alexander, 2001, Die Revolution der Geschlechter, Bielefeld
22. Ortlund, 119

को प्रतिबिम्बित करती है।

इस क्रम की व्याख्या दूसरे ढंग से भी की जा सकती है: पहला प्रधान नहीं, बल्कि दूसरा मनुष्य की सृष्टि की साहित्यिक कथा का चरमोत्कर्ष, शिखर है। पहले वृत्तान्त में मनुष्य (पुरुष और स्त्री) सृष्टि का शिखर है। दूसरे वृत्तान्त में पुरुष नहीं, बल्कि स्त्री। मैं इसे उदाहरण के रूप में प्रस्तुत करता हूँ – इस पर अपना निष्कर्ष टिकाने के लिए नहीं, बल्कि यह दिखाने के लिए कि दृष्टिकोण कितने भिन्न हो सकते हैं, और ग़लत निष्कर्ष कितनी दूर तक जाते हैं, जब हम सोचते हैं कि केवल एक ही दृष्टिकोण है, या केवल हमारा।

भले और बुरे के ज्ञान के वृक्ष के विषय में परमेश्वर की आज्ञाएँ आदम को दी जाती हैं, हव्वा को नहीं, जो इस ओर संकेत करता है कि वह स्वाभाविक सिर/अगुवा है।

सृष्टि के वृत्तान्त के अनुसार जब परमेश्वर ने यह आज्ञा दी, तब हव्वा थी ही नहीं। यह विचार तभी उचित होता, जब वह पहले से होती और परमेश्वर ने फिर भी यह केवल आदम से कहा होता।

स्त्री पुरुष में से बनाई गई है, इसलिए वह उस पर निर्भर है।

पितृसत्तात्मक जीवन-रूपों में यह निर्भरता होती है। पर पवित्रशास्त्र कभी इसे आदर्श के रूप में समर्थन नहीं देता। चाहे पुराने नियम के सब लोग इसी में जीते थे और बाइबल इसका वर्णन करती है। आज स्त्री पुरुष पर निर्भर नहीं है। दोनों अपने लिए या अकेले जी सकते हैं और अपना अस्तित्व चला सकते हैं। तटस्थ होकर देखें, तो इसे प्रगति माना जा सकता है। यह अच्छा है कि ऐसा है।

आदम स्त्री को हव्वा नाम देता है, जो इस बात का चिह्न है कि उसका उस पर अधिकार है।

नाम रखने का अधिकार से कोई सम्बन्ध नहीं है। बल्कि ज्ञान, परख और पहचान से, क्योंकि बाइबल में नाम अक्सर किसी व्यक्ति के स्वभाव का वर्णन करते हैं। इसीलिए आदम हव्वा को “सब जीवितों की माता” कहता है। जो नाम रखने को अधिकार से जोड़ता है, उसे ध्यान देना चाहिए कि यह पतन से पहले नहीं, बल्कि उसके तुरन्त बाद हुआ।

स्त्री पुरुष में से इसलिए रची गई कि वह उसकी “सहायक” (Gehilfin) हो।

लेखक “सहायक” शब्द का जिस प्रकार प्रयोग करता है, उसमें कोई अधीनस्थ नहीं, बल्कि उतना ही सशक्त और समान दर्जे का व्यक्ति दृष्टि में है।

पुरुष स्त्री की सहायक-भूमिका का बड़े चाव से स्वागत करते हैं, ताकि वे अपने वे लक्ष्य पाएँ, जिन्हें केवल वे स्वयं तय करते हैं। पर विचार यह नहीं है। सहायता कभी अधिकार या दर्जे का भेद स्थापित नहीं करती। इसे परमेश्वर पर कैसे लागू किया जाए, जो हमारा सहायक है? और क्या पुरुष भी अपनी प्रिय पत्नी के लिए सहायक नहीं होना चाहेगा? बिना इसके कि इससे कोई पदानुक्रम बने?

हव्वा पुरुष के लिए रची गई है। उलटा नहीं।

ऐसा ही बताया गया है। फिर भी हव्वा आदम की सम्पत्ति या मिल्कियत नहीं बनती। वह आदम की बगल से एक उतने ही सशक्त सामने खड़े साथी के रूप में रची गई है। जब बात विवाह की वाचा की हो, तो स्त्री की

ओर पुरुष की लालसा एक ऐसी दिशा या गति है, जिससे कोई – यदि चाहे – यह निष्कर्ष भी निकाल सकता है कि वही अधिक शक्तिशाली है। वह उसकी ओर खिंचता है।

हव्वा पहले पाप करती है। यह इस बात का चिह्न है कि स्त्री कमज़ोर लिंग है, जो परीक्षाओं और धोखों के प्रति अधिक संवेदनशील है।

यदि यह निष्कर्ष सही भी हो – जिस पर मैं विश्वास नहीं करता –, तो भी यह उन अनगिनत पुरुषों को देखते हुए कोई पदानुक्रम स्थापित नहीं करता, जो स्त्रियों द्वारा बहकाए गए और पाप में गिरे।

परीक्षा लेने वाला कैसे जानता कि वह कमज़ोर लिंग थी? आदम को तो पाप करने के लिए परीक्षा में डालने की भी आवश्यकता नहीं पड़ी!

आदम ने अगुवाई सँभालने और सिर होने का अपना कर्तव्य पूरा नहीं किया। इसी कारण यह त्रासदी हुई।

इस घटना और इस मूल पाप को रोकने के लिए किसी पदानुक्रम की आवश्यकता नहीं है। ऐसी परिस्थितियाँ प्रतिदिन हज़ारों बार आती हैं। पाप एक स्पष्ट "नहीं" से रुकता है। यह सच है कि आदम को, क्योंकि उसे परमेश्वर की आज्ञा मिली थी, हव्वा का विरोध करना चाहिए था। पदानुक्रम के विषय में यह घटना कुछ भी स्थापित नहीं करती। दोनों के लिए यह एक उत्तरदायी और निर्णय लेने के अधिकारी मनुष्य का स्वतन्त्र निर्णय था।

यदि आदम सिर था और अगुवाई की भूमिका उसकी थी और वह उसमें असफल रहा, तो हव्वा को उत्तरदायी ठहराया ही क्यों जाता है? तब तो केवल आदम को ही उत्तरदायी ठहराया जाना चाहिए था। पर ठीक इसलिए कि दोनों समान रूप से उत्तरदायी हैं, दोनों को समान रूप से उत्तर देना पड़ता है। आदम का दोष हव्वा के दोष से कहीं बड़ा है। वह छल से बहकाई गई, और उसने यह तुरन्त समझ लिया और उचित ही मुख्य दोष साँप पर डाला। आदम ने बिना हिचकिचाए "हाथ उठाकर" पाप किया, और फिर इसके लिए हव्वा को भी ज़िम्मेदार ठहराया, और अन्त में परमेश्वर को भी, जिसने उसे वह स्त्री दी थी।

क्या उलटा तर्क भी सम्भव नहीं है? यदि हव्वा यहाँ अगुवाई की भूमिका लेती है, चाहे वह पाप की ओर ले गई, तो क्या यह नहीं दिखाता कि विवाह में स्त्री भी अगुवाई कर सकती है, ठीक वैसे ही जैसे पुरुष? एक "विवाह-टीम" में हर कोई कभी कमज़ोर होता है और कभी मज़बूत। इसलिए हर कोई परिस्थितियों के अनुसार परस्पर सहायता के लिए और एक दूसरे के अधीन रहते हुए अगुवाई सँभालेगा।

शायद और भी तर्क हों, पर कोई भी पुरुष और स्त्री के परमेश्वर-इच्छित सन्तुलन को नहीं बिगाड़ सकता। बाइबल का मूल पाठ समान दर्जे की साझेदारी के लिए सबसे प्रबल तर्क बना रहता है। आदम की किसी परमेश्वर-इच्छित या स्पष्ट अगुवाई का कोई संकेत नहीं है। हमारे पास जो कुछ है, वह साझेदारों के साथ-साथ चलने की ओर संकेत करता है। फिर भी सृष्टि के पाठ की व्याख्या स्पष्ट रूप से भिन्न दृष्टिकोणों तक ले जाती है। यहीं, आरम्भ में, यह निर्णय होता है कि लिंग-प्रश्न का उत्तर कैसे दिया जाए और उसे कैसे लागू किया जाए, और हम इस विषय पर नए नियम के कथनों की व्याख्या कैसे करें।

2.4 पुरुष और स्त्री की भिन्नता

क्योंकि मैं स्त्री और पुरुष की समानता और समान दर्जे पर ज़ोर देता हूँ, इसलिए यह आपत्ति की जाएगी कि मैं भिन्नताओं को अनदेखा करता हूँ। पर मैं कहीं भी ऐसा नहीं करता। इसके विपरीत, मैं स्पष्ट रूप से हर प्रकार के "सबको एक-सा बना देने" या भूमिकाओं को एक समान ठहराने का विरोध करता हूँ। यदि भिन्न भूमिकाएँ हैं, तो भी इससे पुरुष शासन करने वाला और अगुवाई करने वाला सिर नहीं बन जाता। यह भेद महत्वपूर्ण है। यदि यह न किया जाए, तो एक कल्पित सृष्टि की व्यवस्था (पुरुष स्त्री का सिर है) और पतन के परिणामों का – जहाँ लिखा है "वह प्रभुता करेगा" – एक पक्षपातपूर्ण घालमेल हो जाता है।

स्पष्ट है कि भिन्नताएँ होनी ही चाहिए। वरना हव्वा कोई प्रतिरूप, कोई उपयुक्त सामने खड़ी साथी न होती। जब आदम से एक बगल, पूरा आधा भाग, "ले लिया" जाता है, तो उसमें कुछ कमी हो जाती है, जिसे वह स्त्री में फिर से पाता है या वापस पाता है। दोनों मिलकर एक पूर्णता बनाते हैं।

फिर भी बाइबल पुरुष और स्त्री की भिन्नताओं की कोई पाठ्य-पुस्तक नहीं है। तब भी नहीं, जब इस ओर लगातार ध्यान दिलाया जाता है। इसमें यह अनदेखा किया जाता है कि अक्सर ये ऐसी भिन्नताएँ होती हैं, जो इतिहास से, संस्कृतियों और समाजों के विकास से उत्पन्न हुई हैं, और ठीक यही परमेश्वर की सृष्टिकर्ता-इच्छा की शुद्ध और पूर्ण अभिव्यक्ति नहीं हैं।

"सृष्टि का वृत्तान्त न तो एक पर दूसरे की प्रभुता का कोई संकेत देता है, और न लिंग के अनुसार कामों के बँटवारे का। मनुष्यों की संस्कृतियों में बाद में दिखने वाला कार्य-क्षेत्रों और ज़िम्मेदारियों का तीखा बँटवारा – पुरुष के लिए सार्वजनिक, संस्कृति-निर्माण करने वाला क्षेत्र और स्त्री के लिए प्रजनन का निजी क्षेत्र – सृष्टि से प्रमाणित नहीं किया जा सकता। जैविक परिस्थितियों के कारण यह स्वाभाविक लगता है, पर इसे बाइबल के कथनों से परमेश्वर की सृष्टिकर्ता-इच्छा के रूप में निकाला और माँगा नहीं जा सकता। बल्कि यहाँ परमेश्वर पुरुष और स्त्री को जैविक सीमाओं के भीतर ज़िम्मेदारियों के बँटवारे में बहुत बड़ी स्वतन्त्रता देता है।"[23]

मैं केवल संक्षेप में कुछ लिंग-विशिष्ट भिन्नताएँ बताता हूँ, जो – बिलकुल स्पष्ट भिन्नताओं के अतिरिक्त – शोध में भी कमोबेश पहचानी गई हैं। विषय जटिल है, और कुछ अपवादों को छोड़कर मैं केवल वही दोहरा सकता था, जो दूसरों ने इसके विषय में खोजा है। बाइबल स्वयं इस विषय की कोई विशेषज्ञ पुस्तक नहीं है।

पुरुष के शरीर की बनावट अधिक बलवान और उसका क़द अधिक बड़ा होता है। इसीलिए खेल-प्रतियोगिताओं में लिंगों को अलग रखा जाता है।

पुरुष कमोबेश स्थान-सम्बन्धी और अमूर्त सोच में अधिक प्रतिभाशाली होते हैं। स्त्रियों में संवाद की क्षमता अधिक होती है।

23. Schmalenbach, 72

स्त्रियों में बातचीत की आवश्यकता औसतन अधिक होती है। स्त्रियाँ अधिक व्यक्ति-केन्द्रित और पुरुष अधिक विषय-केन्द्रित होते हैं।

यौन अनुभव मूल रूप से भिन्न होता है।

यह बताने की आवश्यकता नहीं कि स्वाभाविक रूप से स्त्रियाँ बच्चे जनती हैं, पुरुष नहीं। पर इसमें एक बड़ा जैविक अन्तर है।

मैं वरदानों पर आधारित भूमिका-बँटवारे की वकालत करता हूँ, जो अतीत की सांस्कृतिक, सामाजिक या सामुदायिक मान्यताओं से दिशा न ले। जहाँ समान अधिकार संविधान का भाग हैं, वहाँ सबसे अच्छी योग्यताएँ लिंग से स्वतन्त्र होकर सबके लाभ के लिए काम में आनी चाहिए और उनका मान होना चाहिए। परमेश्वर के राज्य में और उसकी कलीसिया में पुरुषों को इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि ये सम्भावनाएँ स्त्रियों के लिए बिना किसी प्रतिबन्ध के खुली रहें। वहाँ बहुत कुछ सुधारा जा सकता है।

हमारे (उत्तर-आधुनिक) समय में सामाजिक परिवर्तन के साथ स्त्री और पुरुष की भूमिका भी कई प्रकार से बदल गई है। इसमें किसी कथित सृष्टि की व्यवस्था को बनाए रखना कठिन, बल्कि असम्भव है। सामाजिक परिस्थिति के अनुसार ढलना सांसारिकता नहीं, बल्कि जीवन सँभालने का भाग है। यह तब कोई समस्या नहीं, जब हम यह स्वीकार करें कि बाइबल भूमिकाओं की कोई निश्चित समझ निर्धारित नहीं करती। पुरुष होना और स्त्री होना बहुत-सी पुस्तकों का विषय है, सद्भावना से दी गई जीवन-सलाह के रूप में। बाइबल स्वयं लगभग सब निर्देश पुरुषों और स्त्रियों को समान रूप से देती है।

जब आज कोई पति घर सँभालता है और बच्चों की देखभाल करता है, और पत्नी आवश्यक आय कमाती है, तो यह भूमिका-बँटवारा अधिकाधिक जीवन की वास्तविकता बन रहा है। यह सबसे अच्छा है या नहीं, इसका निर्णय बाइबल की दृष्टि से नहीं किया जा सकता।



2.5 सृष्टि की व्यवस्था

यह शब्द अक्सर इस्तेमाल होता है। एक ठेठ जर्मन शब्द। हमें व्यवस्था प्रिय है। हम जानना चाहते हैं कि क्या लागू है और क्या नहीं। इसके लाभ हैं और यह उपयोगी हो सकता है। यह शब्द अक्सर तब काम में लाया जाता है, जब नए नियम के उन पाठों को आधार देना हो जिनमें स्त्री के पुरुष के अधीन रहने की बात है।

अच्छी सृष्टि का वर्णन उत्पत्ति के पहले दो अध्यायों में है। वह उस बात का नमूना और अभिव्यक्ति है जो परमेश्वर चाहता है। पतन से पहले!

बाइबल “सृष्टि की व्यवस्था” शब्द नहीं जानती। अपने आप में यह कोई समस्या नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे दूसरे धर्मवैज्ञानिक “सहायक शब्दों” के साथ। पर हम इन अध्यायों से कौन-सी व्यवस्थाएँ निकालना चाहते हैं, या उन्हें सब युगों के लिए बाध्यकारी आधार भी बनाना चाहते हैं? क्या वीगन जीवन-शैली, क्योंकि अदन की

वाटिका में मांस नहीं खाया जाता? उन दम्पतियों का क्या, जिनके बच्चे नहीं होते और जो फलवन्त नहीं हो सकते? अकेले रहनेवालों के घरों की उस बड़ी और बढ़ती संख्या का क्या? उनका क्या, जो दोनों लिंगों के साथ जन्म लेते हैं? क्या हमें नंगे घूमना चाहिए? बिलकुल नहीं। पर पतन से पहले यही सामान्य था। सृष्टि की व्यवस्था जैसे भारी शब्द का प्रयोग सोच-समझकर और भेद करते हुए करना होगा, यदि वह उपयोगी है भी।

सचमुच: उत्पत्ति 1 और 2 में पुरुष और स्त्री के विषय में जो बताया गया है, वह सब युगों के लिए वैसे ही लागू रहना चाहिए। जो कुछ वहाँ से अलग या बुरा है, वह पाप के द्वारा आया और परमेश्वर की योजना और इच्छा के अनुरूप नहीं है।

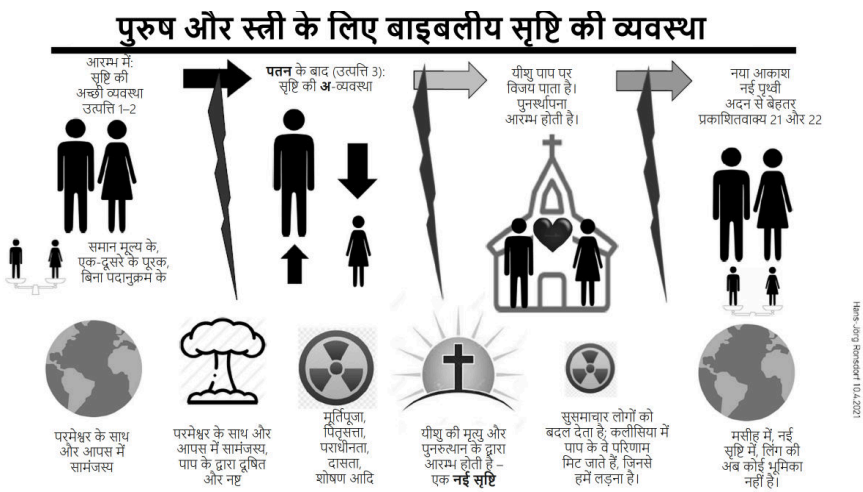
पुरुष और स्त्री समान मूल्य के हैं, समान गरिमा के, समान रूप से आज्ञा पाए हुए, समान दर्जे के, समान स्थान वाले। अध्याय 1 और 2 में कोई पदानुक्रम नहीं है। यह विविधता में एकता है। एक ही स्तर पर एक-दूसरे की पूर्ति। परस्पर पूर्ति, एकतरफ़ा नहीं। उत्पत्ति 2 में जिस सहायता का वर्णन है, वह अधीन पक्ष नहीं है। सहायक आदम के लिए एक पूर्ण, बराबर का साथी है। साथ मिलकर, बराबरी के स्तर पर, वे एक मज़बूत टीम हैं। अलग-अलग योग्यताओं और वरदानों के साथ वे एक-दूसरे की सहायता करते हैं। लिंगों का भेद इस पूरे का आवश्यक और अनिवार्य अंग है। यह भिन्नता एक ज़रूरत है, पर इसका अधीनता या अधिकार से कोई सम्बन्ध नहीं है। लिंगों का भेद परमेश्वर के स्वरूप को पूरा करता है और इस तरह सृष्टि की उस विशाल आज्ञा को पूरा करने के योग्य बनाता है।

पतन से पहले पुरुष और स्त्री का यह चित्र ही ईश्वरीय मानक है: ईश्वरीय सृष्टि की व्यवस्था। वह सदा के लिए लागू है। सार्वभौमिक और कालातीत। हर बात को इसी पर परखा जाना चाहिए। यह एक अनन्त मानक है, जो सब युगों तक बना रहता है।

हम देखते हैं कि यह मानक – या कहना चाहें तो यह व्यवस्था – पाप के कारण सन्तुलन खो देता है, उस पर आक्रमण होता है और कुछ अपवादों को छोड़ वह नष्ट हो जाता है। हज़ारों वर्ष बाद ही यह मानक मसीह में फिर से स्थापित होता है (गलातियों 3:28), ताकि सदा के लिए बना रहे और फिर कभी उस पर आक्रमण न हो।

सृष्टि की व्यवस्था शब्द अक्सर तब काम में लाया जाता है, जब स्त्री की अधीनता की ओर संकेत किया जाता है, और इस निषेध की ओर कि वह सार्वजनिक रूप से (पुरुषों के सामने) बोले, शिक्षा दे और उनकी अगुवाई करे। व्यवस्था पर अड़ने की एक जमी हुई प्रतिक्रिया। पर पतन के बाद सृष्टि की व्यवस्था की बात शायद ही की जा सकती है। बल्कि यह तो सृष्टि की अ-व्यवस्था है, जब अब पुरुष स्त्री पर प्रभुता करता है और लिंगों की भूमिकाएँ अब इसी से तय होती हैं। अपनी अधिक मज़बूत शारीरिक बनावट के कारण पुरुष ने अधिकार हथिया लिया है।

एक सार्वभौमिक सृष्टि की व्यवस्था मसीही नैतिकता का आधार है। उसमें पुरुष और स्त्री के बीच दर्जे का कोई भेद नहीं है। उसमें मनुष्य की वह गरिमा आती है, जो परमेश्वर के स्वरूप को धारण करनेवाले के रूप में उसकी है, और साथ ही वे मूल गुण भी, जिनकी जड़ परमेश्वर में है: धार्मिकता, प्रेम और सत्य। वे मनुष्यों के अच्छे आपसी जीवन को सम्भव बनाने के लिए हैं।



2.5.1 अदन की वाटिका से नए यरूशलेम तक

मसीही नई सृष्टि की ओर यात्रा पर हैं (2 पतरस 3:13)। एक नया और बेहतर अदन उनकी प्रतीक्षा कर रहा है। एक नई सृष्टि, जो किसी न किसी रूप में वर्तमान सृष्टि को आगे ले जाती है और साथ ही एक नई सृष्टि है। नई का वर्णन अब एक नगर के रूप में होता है, जिसमें अदन के तत्व फिर से मिलते हैं। तो बात पतन से पहले की स्थिति में लौटने की नहीं है। बात आगे की है, नए और अनन्त नगर की ओर।

नई सृष्टि में पुरुष और स्त्रियाँ भाई-बहनों की तरह, भाई और बहन की तरह, सहज रूप से एक-दूसरे से व्यवहार करेंगे। प्रेम और आदर में। बिना पदानुक्रम के। फलवन्त होने और बढ़ने की आज्ञा तब समाप्त हो चुकी होगी। फिर कोई यौन सम्बन्ध नहीं होगा। उससे जुड़ी हर बात तब इतिहास होगी। जो आज बड़ी भूमिका निभाता है, उसकी वहाँ कमी नहीं खलेगी। यद्यपि हम सदा वही व्यक्तिगत व्यक्तित्व बने रहेंगे जो परमेश्वर ने हमें बनने दिया, फिर भी मसीह में लिंग, पुरुष और स्त्री होना, अर्थहीन हो चुका है (गलातियों 3:28)। तब कितना "लिंग" बचा रहेगा, हम नहीं जानते।

हमारे पतित संसार में थोड़े-से लोग दोनों कम या अधिक विकसित लिंगों के साथ जन्म लेते हैं। उनके लिए यह एक कठिन स्थिति है। उनके लिए नया संसार एक छुटकारा है (जैसे हम सब के लिए)।

क्योंकि नई सृष्टि अभी से कलीसिया में आरम्भ हो चुकी है, इसलिए आपसी व्यवहार अभी से उससे ढल सकता है। मसीह की देह में लिंग की अब कोई भूमिका नहीं है। पर क्योंकि कलीसिया अभी पहली सृष्टि में ही यात्रा कर रही है, उसे तरह-तरह की सांस्कृतिक चुनौतियों का सामना करना पड़ता है। सुसमाचार के कारण वहाँ ऐसे समायोजन हो सकते हैं, जहाँ लिंग का अब भी ध्यान रखा जाता है। इस पर आगे और।

नई सृष्टि में कोई पदानुक्रम या अधीनता नहीं होगी, क्योंकि मसीह में हम सब एक जन हैं। आइए, हम नई सृष्टि का जीवन जिएँ!

2.6 वह तुझ पर प्रभुता करेगा – इतिहास

इस अध्याय में मैं इस दुखद प्रश्न की खोज करता हूँ कि उत्पत्ति 3:16 के दण्ड के वचन कैसे पूरे हुए। मैं यह केवल सीमित रूप में कर सकता हूँ। इस पूर्ति में दमन, शोषण, भेदभाव और वंचना का एक पूरा ब्रह्माण्ड समाया है। दुख और आँसुओं का एक समुद्र। 21वीं शताब्दी तक। संसार उन सब के लिए एक ख़तरनाक जगह था और है, जिनके पास कोई शक्ति नहीं, चाहे वह स्त्री हो, पुरुष हो या बच्चा।

यह बहुत-से इतिहासकारों, पुरातत्वविदों और धर्मवैज्ञानिकों के शोध-कार्य की देन है कि आज हमारे पास बहुत-से प्रमाण हैं कि स्त्री की स्थिति कैसी थी। इंटरनेट बहुत-सी जानकारी सरलता और शीघ्रता से उपलब्ध कराता है। आगे अलग-अलग युगों के उद्धरणों का एक संग्रह है, जो दिखाता है कि प्रभावशाली और प्रसिद्ध पुरुष स्त्रियों के बारे में कैसे सोचते थे। संक्षेप में इस विषय के साथ कभी न्याय नहीं किया जा सकता। फिर भी यह पहचानने के लिए पर्याप्त होना चाहिए कि कौन-सा बोझ केवल संसार में ही नहीं था, बल्कि वहाँ से कलीसिया में घसीट लाया गया, मसीही रंग में रंगा गया और पाला-पोसा गया।

यह अनदेखा नहीं किया जा सकता कि स्त्रियों का तिरस्कार करनेवाला एक मूल दृष्टिकोण महान यूनानी विचारकों के द्वारा यहूदी धर्म में कैसे जम गया। इसने आगे कलीसिया में अपने निशान छोड़े। इससे भी बढ़कर, कलीसियाई पिताओं ने इस प्रश्न में यूनानी विरासत को बाइबल के दृष्टिकोण से अधिक महत्व दिया। उनका प्रभाव वर्तमान तक स्पष्ट दिखता है। इसलिए यह आज भी इस बात के लिए प्रेरित करे कि इसे उजागर किया जाए और इसका विरोध किया जाए।

इस प्रश्न में केवल एक ही नारा लागू है: बाइबल की ओर लौटो! यीशु की ओर लौटो!

2.6.1 प्राचीन काल

प्राचीन काल[24] की स्त्रियाँ सुन्दरता का रूप थीं, पुरुष के अधीन थीं, पर शारीरिक बल में भी कमज़ोर थीं। यदि वे धनी होतीं, तो लम्बे रेशमी वस्त्र पहनतीं और उनके केश बड़े श्रम से सजाए जाते। यदि किसी पुरुष के साथ एक सुन्दर स्त्री होती, तो इससे उसे व्यापारिक और राजनीतिक लाभ भी मिल सकते थे। समाज में स्त्रियों के अधिकार सीमित थे या थे ही नहीं। व्यभिचार होने पर स्त्रियों पर मुक़दमा चलाया जा सकता था, उनकी सम्पत्ति छीनी जा सकती थी या उन्हें देश-निकाला भी दिया जा सकता था। सार्वजनिक पदों पर केवल पुरुष होते थे। स्त्री की भूमिका स्पष्ट रूप से तय थी। उनसे यथासम्भव पुत्र सन्तान की आशा की जाती थी। धनी लोगों के पास दास भी होते थे, जो घर-गृहस्थी सँभालते थे। दासियों के कोई अधिकार नहीं थे और उन्हें बहुत-सी सेवाएँ करनी पड़ती थीं। पर ऐसे अपवाद भी थे, जिनमें कोई-कोई सम्पन्न स्त्री ऊँचा स्थान पाती थी

24. प्राचीन काल (Antike) से यूनानी और रोमी संस्कृति का लगभग 600 ई. पू. से 400 ई. तक का समय अभिप्रेत है।

और निर्णयों को बहुत प्रभावित कर सकती थी। पुरुषों के प्रभुत्ववाले संसार में स्त्रियों का आकर्षण अक्सर एक अच्छा साधन था।

"प्राचीन काल में 'स्वतन्त्र पुरुष' या 'नागरिक' (पुरुष) को मनुष्य का पूर्ण आदर्श माना जाता था, जो 'स्वतन्त्र स्त्री' या 'नागरिका' (स्त्री) से भी स्पष्ट रूप से अलग था। स्त्री को उसकी कथित शारीरिक बनावट और हीनता के कारण पुरुष से निम्न माना जाता था। यह हीनता जन्मजात और अपरिवर्तनीय मानी जाती थी; इसी के आधार पर स्त्री की कानूनी अक्षमता और एक पुरुष संरक्षक की स्थायी आवश्यकता को उचित ठहराया जाता था। समाज में अपनी भूमिका के अनुसार स्त्री को निष्क्रिय माना जाता था, और यह (विषमलैंगिक, प्रवेशी) यौन सम्बन्ध तक फैला हुआ था। स्त्रियों की कोई सक्रिय भूमिका, जैसे घर-गृहस्थी में प्रभुत्व, सार्वजनिक जीवन में बहुत अधिक दिखाई देना या यौन सम्बन्ध में प्रभुत्व की स्थिति, लज्जाजनक मानी जाती थी और पूरे परिवार की प्रतिष्ठित स्थिति के लिए ख़तरा थी। इसके विपरीत, पुरुष के नागरिक अधिकार छीने जा सकते थे, यदि वह घर और घर के आश्रितों (स्त्रियों, बच्चों, दासियों) पर शासन न करता, अपनी ज़रूरतों (खाने, पीने, वासना, यौनता, नींद) को वश में न रखता, सार्वजनिक जीवन में बहुत कम समय बिताता, या यौन सम्बन्ध में निष्क्रिय भूमिका अपनाता।"[25]

एथेंस में स्त्रियाँ पुरुष के अधीन थीं, लगभग रोमी गणराज्य के समय की तरह, और उन्हें उसी के अनुसार चलना होता था। स्त्रियाँ सदा नाबालिग ही मानी जाती थीं, अर्थात् उन्हें किसी ऐसे व्यक्ति की ज़रूरत थी जो उन्हें चलाए और उनकी अगुवाई करे। लड़की और स्त्री के रूप में वे अपने संरक्षक और उसकी मनमानी के हवाले थीं।

2.6.2 अरस्तू

अरस्तू (Aristoteles), 384-322 ई. पू., सबसे महान यूनानी दार्शनिकों और सर्वविद्या-विशारदों में से एक, ने स्त्री की हीनता को एक सर्वमान्य तथ्य बना दिया। स्त्री के मूल्य के प्रश्न में उसकी सारी विद्वत्ता उसकी सहायता नहीं करती, और इसमें वह अपने युग की ही सन्तान बना रहता है। "मादाएँ अपंग नर हैं" उसकी विश्व-दृष्टि का एक दूरगामी परिणामोंवाला कथन है। क्योंकि आत्मा (बुद्धि) ही जन्म देती है, इसलिए स्त्रियाँ अब केवल "आत्महीन" सहायिकाएँ रह जाती हैं, जो "आत्मिक" पुरुष बीज के लिए अपनी देह/गर्भाशय को सेने के कक्ष के रूप में उपलब्ध कराती हैं। जब अरस्तू स्त्री की जैविक बनावट को हीन मानकर चलता है और इस तरह पुरुष के प्रति उसकी सामाजिक अधीनता को वैध ठहराता है, तो वह उसे किसी सम्भावित विफलता के लिए भी उत्तरदायी ठहराता है, क्योंकि गर्भधारण में स्त्री-अंश की अधिकता "... विकृत आकृतियों के जन्म के लिए उत्तरदायी है।"

इस सामाजिक व्यवस्था में स्त्रियों का कोई कानूनी या सामाजिक महत्व नहीं था। स्त्रियाँ राजनीति से बाहर थीं; आर्थिक रूप से और अन्य सब बातों में वे अपने पति, घर के स्वामी, पर निर्भर थीं, अर्थात् जीवन भर एक पुरुष के संरक्षण में नाबालिग। पुरुष सामान्यतः अपने से बहुत कम आयु की स्त्रियों से विवाह करते थे,

25. Voß, Heinz-Jürgen, Das differenzierte Geschlechterverständnis der Antike, Gender, 2/2009

जिससे उनका प्रभुत्व और भी कड़ा हो जाता था। "पत्नियों का मुख्य काम पुरुष उत्तराधिकारी देना और पति का घर चलाना था।"

बेटियों को जन्म के बाद पिता के निर्णय पर अक्सर बाहर छोड़ दिया जाता था। जो लड़कियाँ बच जातीं, उनसे विवाह से पहले और बाद में विवाह के भीतर पवित्रता की अपेक्षा की जाती थी। सम्मानित स्त्रियाँ अपने जीवन का अधिकतर भाग घर के भीतर बिताती थीं।

अरस्तू की विश्व-दृष्टि में पदानुक्रम "प्रकृति-प्रदत्त" हैं, और इसी तरह यह भी वस्तुओं के स्वभाव में है कि कुछ लोग शासन करें और उनके सारे अधिकार हों, और दूसरों पर शासन किया जाए और उनके कोई अधिकार न हों। उसकी विश्व-दृष्टि के अनुसार कुछ मनुष्य शासन करने के लिए जन्मे हैं और दूसरे शासित होने के लिए। उसके यहाँ पुरुषत्व स्त्रीत्व से अधिक मूल्यवान है, और इसलिए स्त्रीत्व इसीलिए है कि पुरुषत्व उस पर शासन करे।

"तो, जैसे मनुष्य-जाति सब पशुओं में सबसे पूर्ण है, वैसे ही मनुष्य-जाति के भीतर पुरुष स्त्री से अधिक पूर्ण है, और उसकी पूर्णता का कारण अधिक ऊष्मा है, क्योंकि ऊष्मा प्रकृति का सबसे महत्वपूर्ण औज़ार है।"

इस तरह अरस्तू ने इस विचार के लिए एक स्थायी दार्शनिक नींव डाली कि स्त्रियाँ पुरुषों से हीन हैं। उसने यौन भेदभाव की प्रथा को औपचारिक रूप दिया और एक विद्वत्तापूर्ण प्रभुत्व-भाव प्रस्तुत किया, जो लिंगों की असमानता में विश्वास करता था। सदियों बाद कलीसिया के अगुवों ने, जो स्वयं यूनानी संस्कृति और शिक्षा की उपज थे, पौलुस के लेखों की व्याख्या अरस्तू के दर्शन के दृष्टिकोण से की।

एथेंस के दार्शनिकों ने संसार के लिए स्त्रीत्व के विरुद्ध एक दोहरा अभियोग छोड़ा। शास्त्रीय काल से, विशेषकर अरस्तू की शिक्षाओं से, यह विश्वास आया कि स्त्रियाँ पुरुषों से हीन हैं। इसलिए स्त्रियों पर पुरुषों का हुक्म चलना चाहिए और उन्हें पुरुषों के आनन्द के लिए इस्तेमाल किया जाना चाहिए। फिर स्तोइकी दार्शनिकों से यह विश्वास आया कि स्त्रियाँ पुरुषों के लिए ध्यान भटकाने और परीक्षा का कारण हैं। इसलिए पुरुषों को स्त्रियों से दूर रहना चाहिए, ताकि वे उन गुणों को अपनाने के लिए स्वतन्त्र रहें जो पुरुषों को श्रेष्ठ बनाते हैं। स्त्रियों और विवाह के विषय में पौलुस के लेखों की पारम्परिक व्याख्याओं के मूल में ये दोनों दृष्टिकोण हैं। अर्थात् स्त्री की अधीनता और अविवाहित जीवन, जिसे धर्मसुधार के समय तक अक्सर आदर्श माना जाता रहा।

सुकरात (Sokrates) (470-399 ई. पू.) ही था, जिसने एथेंस के स्त्री-तिरस्कार को अमर बना दिया। स्त्रियों को अक्सर दुर्बल लिंग कहते हुए वह तर्क देता है कि स्त्री होना एक ईश्वरीय दण्ड है, क्योंकि स्त्री पुरुष और पशु के बीच की कोई चीज़ है।

एक अकेले पुरुष का जीवन हज़ार स्त्रियों के बराबर है, ऐसा यूनानी त्रासदी-कवि यूरिपिडीज़ (Euripides) (480-407 ई. पू.) कहता है।

ऐसे और भी बहुत-से, बल्कि इससे भी अधिक अपमानजनक उद्धरण हैं, जो केवल इसी की पुष्टि करते हैं कि सामान्यतः स्त्रियों के बारे में कैसे सोचा जाता था।

2.6.3 सम्पत्ति के रूप में स्त्री

स्त्रियों से अपने विषय में स्वयं निर्णय करने का अधिकार बहुत हद तक छीन लिया गया; कभी-कभी उनके साथ लगभग किसी सम्पत्ति जैसा व्यवहार होता था। पुत्रों को पिता की सम्पत्ति के उत्तराधिकारी और परिवार के मुखिया के रूप में बेटियों से अधिक मूल्यवान माना जाता था – बेटियाँ, जिन्हें एक मूल्यवान संसाधन की तरह दुल्हन-मूल्य लेकर दूसरे पुरुषों को बेचा जा सकता था।

जैसा प्राचीन काल का साहित्य प्रमाणित करता है, स्त्रियाँ हर समय और हर जगह अधिकारहीन तो नहीं थीं, पर पुरुषों के स्पष्ट रूप से अधीन थीं। अन्ततः पतियों ने अपने लाभों का उपयोग इस बात के लिए किया कि वे स्त्रियों की यौन उपलब्धता को जितना हो सके, सुरक्षित कर लें।

सार्वजनिक-राजनीतिक क्षेत्र में स्त्रियों का कोई प्रतिनिधित्व नहीं था, और सामान्यतः वे घर-गृहस्थी और सन्तान-उत्पत्ति के काम तक सीमित रहती थीं। स्त्रियाँ मूल रूप से किसी पुरुष (पति, पिता या भाई) के संरक्षण में और उस पर पूरी आर्थिक निर्भरता में रहती थीं।

विवाह के भीतर निर्णायक अधिकार पति का था। वह पत्नी और बच्चों का संरक्षक था और सम्पत्ति और परिवार से जुड़े सब प्रश्नों में अन्तिम और अधिकतर एकमात्र निर्णय का अधिकार उसी का था। पत्नियों की भूमिका लगभग पूरी तरह घर-गृहस्थी और बच्चों की देखभाल में ही समाप्त हो जाती थी।

उनकी सन्तान जनने की क्षमता पर विशेष ध्यान दिया जाता था, और विवाह के बाहर उनकी पवित्रता को विशेष सामाजिक मान्यता मिलती थी। इसके विपरीत, अविवाहित स्त्रियों (रखैलों, दासियों) से अपेक्षा की जाती थी कि वे उन स्वतन्त्र पुरुषों की यौन ज़रूरतों की पूर्ति करें, जिनकी सम्पत्ति पर वे काम करती थीं।

2.6.4 पितृसत्ता

बड़े धर्म और हिन्दू धर्म अपने नियमों और विधानों के साथ संसार भर में पितृसत्ता के उदय में सहभागी हैं।

भाषा की दृष्टि से यह शब्द यूनानी patér – “पिता” और arché – “मूल” और “शासन” से निकला है। पितृसत्ता, जिसे एंड्रोक्रेसी (Androkratie)[26] भी कहते हैं, पारम्परिक अर्थ में एक ऐसी व्यवस्था का वर्णन करती है, जो ऐतिहासिक रूप से यूनानी और रोमी विधि से निकली है। इसमें परिवार और घराने का पुरुष मुखिया अपने पर निर्भर स्त्री और पुरुष परिवार-सदस्यों पर कानूनी और आर्थिक शक्ति रखता था।

एक ही सामाजिक वर्ग के भीतर पुरुष उन स्त्रियों के ऊपर होते हैं जो बेटियों, बहनों या पत्नियों के रूप में उनसे सम्बन्ध रखती हैं। फिर भी बाइबल की पितृसत्ता को केवल पुरुषों का शासन समझना भूल होगी, क्योंकि ऊँचे वर्ग की स्त्रियों के पास अपने अधीन स्त्री और पुरुष दोनों प्रकार के लोगों पर शक्ति होती थी।

26. एंड्रोक्रेसी (Androkratie), यूनानी से अनूदित, का अर्थ है पुरुष का शासन। यह शब्द पितृसत्ता नामक अधिक प्रचलित शासन-रूप के पर्याय के रूप में कभी-कभार ही प्रयोग होता है।

पितृसत्ता घराने के सामाजिक जीवन का निर्णायक रूप है, जैसा कि पितरों (कुलपतियों) के समय में ही दिखाई देता है। यह इसी तरह विकसित हुई और सामान्य रही। यह परमेश्वर का माँगा हुआ कोई आदर्श नहीं, बल्कि अदन के बाहर के सांस्कृतिक इतिहास का एक अंग है। अपने सब लाभों और हानियों के साथ।

कुछ लोग मानते हैं कि पितृसत्ता परमेश्वर के पितृत्व को दर्शाती है और इस तरह एक ईश्वरीय आदर्श के अनुरूप है। पर परिवार के ढाँचे के लिए ऐसे विचार का इस रूप में समर्थन नहीं मिलता। भले ही वह परमेश्वर के "सामान्य अनुग्रह" के अधीन अच्छी तरह चल सकती है। परिवार का यह ढाँचा एक पतित संसार का अंग है और उसके इतिहास का एक विकास। वह किसी ईश्वरीय आदर्श या आज्ञा से उत्पन्न नहीं हुआ। वह एक ऐसे नमूने के रूप में छा गया, जिसने जीवित बने रहना सुनिश्चित किया और पृथ्वी की बहुत-सी जगहों पर आज भी करता है। ऐसी सामाजिक रचना के रूप में उसे पवित्रशास्त्र के प्रकाश में परखा जाना चाहिए।

2.6.5 यहूदी चिन्तन पर यूनानी प्रभाव

मैंने ऊपर अरस्तू का उद्धरण इसलिए दिया है, क्योंकि इस चिन्तन ने यहूदी धर्म को भी प्रभावित किया।

"जब हम नए नियम पर आते हैं, तो पाते हैं कि अधिकतर यहूदी पुरुष स्त्रियों को उस उच्च आदर से नहीं देखते थे, जो पुराने नियम में झलकता है। तीन कारणों ने यहूदियों को पुरुष और स्त्री के बीच परमेश्वर के ठहराए सम्बन्धों को विकृत करने की ओर ले गए।

1. पापपूर्ण व्यवहार। पाप समझ और सम्बन्धों को विकृत करता है।

2. बाइबल के पाठों की ग़लत व्याख्या।

3. हेलेनिस्टिक (यूनानी) विचारों का प्रभाव।

ईसा पूर्व तीसरी शताब्दी में हेलेनिस्टिक विचार यहूदी चिन्तन में घुसने लगे। यह घुसपैठ अन्तियोकुस एपिफ़ेनीज़ (Antiochus Epiphanes) के शासन में तेज़ हुई, जिसने 175 ई. पू. में अपना शासन आरम्भ किया। फिर अन्तियोकुस ने यहूदिया पर आक्रमण किया और बलपूर्वक उसे यूनानी रंग में रँगने का प्रयत्न किया। परिणाम यह हुआ कि यहूदी चिन्तन यूनानी दर्शन से प्रभावित हुआ। इसने स्त्रियों के प्रति यहूदी दृष्टिकोण को रंग दिया।"[27]

"कुल मिलाकर, धार्मिक विधि-व्यवस्था में स्त्रियों की स्थिति को इस बार-बार दोहराए जाने वाले सूत्र से सबसे अच्छी तरह व्यक्त किया जा सकता है: 'स्त्रियाँ, (ग़ैर-यहूदी) दास और बच्चे (नाबालिग)'। ग़ैर-यहूदी दास और नाबालिग बच्चे की तरह स्त्री के ऊपर भी एक पुरुष होता है जो उसका स्वामी है; यह आराधना में उसकी सहभागिता को भी उसी प्रकार सीमित करता है, क्योंकि धार्मिक दृष्टि से वह पुरुष से हीन है।

इन सब में यह भी जोड़ा जा सकता है कि स्त्रियों के विषय में भरपूर तिरस्कार भरी राय व्यक्त की जाती थी। यह देखकर चोट लगती है कि ऐसे विचार उच्च आदर की उन रायों पर भारी पड़ते हैं, जिनकी कमी बिलकुल नहीं थी। यह विशेष बात है कि लड़के के जन्म पर आनन्द होता था, जबकि बेटी के जन्म को अक्सर

27. WKG-Studienpapier (अध्ययन-पत्र), सितम्बर 2003

उदासीनता, बल्कि शोक के साथ भी लिया जाता था। इसलिए हमें यह आभास होता है कि यीशु के समय का यहूदी धर्म भी स्त्रियों के बारे में बहुत निम्न राय रखता था। ठीक वैसे, जैसे पूर्व में चलन है, जहाँ स्त्री को सबसे बढ़कर उसकी प्रजनन-क्षमता के कारण महत्व दिया जाता है, पर जहाँ तक हो सके, वह बाहरी संसार से अलग रखी जाती है। और अपने पिता या पति की शक्ति के वश में होती है, और जहाँ धार्मिक दृष्टि से वह पुरुषों की तुलना में हीन (अधीन) है।"[28]

2.6.6 कलीसियाई पिता

यहाँ भी केवल कुछ थोड़े-से उद्धरण दिए जा सकते हैं, जो आरम्भिक मसीही जगत में भी यूनानी दर्शन के निशान पहचानने देते हैं।

"स्त्री में तो अपने स्वभाव का बोध ही लज्जा उत्पन्न कर देना चाहिए।" सिकन्दरिया का क्लेमेंट (Clemens Alexandrinus), 150-215 ई., Der Erzieher (शिक्षक)

"एक प्रभावशाली उदाहरण कलीसियाई पिता ऑगस्टीन (Augustinus) (354-430 ई.) है, जिसने 'मसीही' स्त्री-छवि के विकास में विशेष योगदान दिया। अरस्तू के दर्शन से ढले होने के कारण उसके लिए यह मानना कठिन था कि स्त्री पूर्ण रूप से परमेश्वर के स्वरूप में है: 'स्त्री अपने पति के साथ मिलकर परमेश्वर का प्रतिरूप है, अर्थात् दोनों मिलकर एक पूरा प्रतिरूप हैं। पर सहायक के रूप में अपने कार्य में, जो केवल उसी का काम है, वह परमेश्वर का प्रतिरूप नहीं है। पर जहाँ तक पुरुष की बात है, वह अकेले भी उतनी ही पूर्णता और सम्पूर्णता से परमेश्वर का प्रतिरूप है, मानो वह स्त्री के साथ एक इकाई में जुड़ा हो'।"[29]

5वीं शताब्दी में पौलुस का उपयोग असमानता और पदानुक्रमिक अलगाव की उस छवि की पुष्टि के लिए किया गया, जिसे अरस्तू ने विकसित किया था। सुसमाचार की आरम्भिक स्वतन्त्रता को फिर पीछे हटना पड़ा। कलीसियाई ढाँचों के बढ़ते हुए दृढ़ होने के साथ मसीह के अंगों का समान दर्जा अधिकाधिक पीछे छूटता गया। इसका प्रमाण कलीसियाई पदों में स्त्रियों का घटना और उनसे बाहर किया जाना है।

"वर्ष 585 में फ़्रांस के मेकॉन (Mâcon) में 63 उपस्थित बिशपों और उनके प्रतिनिधियों की एक सभा में इस प्रश्न पर कि 'क्या स्त्रियाँ मानव प्राणी हैं?', 32 ने हाँ में और 31 ने ना में मत दिया। तो स्त्रियों को एक मत के बहुमत से मनुष्य घोषित किया गया!"[30]

मध्य युग का प्रभावशाली धर्मवैज्ञानिक थॉमस एक्विनास (Thomas von Aquin) अरस्तू के दृष्टिकोण की पुष्टि करता है (Prima Pars, Quaestio 92):[31]

"a) ऐसा लगता है कि सृष्टि के पहले कामों में स्त्री की उत्पत्ति का उल्लेख नहीं होना चाहिए था। क्योंकि:

28. Jeremias, Joachim, पृ. 359-375, Jerusalem zur Zeit Jesu, 1963
29. Schmalenbach, 196
30. Smith/Kern, Frauen und Männer im Dienst für Gott, Gießen, 2000, पृ. 114
31. विस्तृत खोज के लिए मैं कलीसियाई पिताओं का निःशुल्क उपलब्ध पुस्तकालय (Bibliothek der Kirchenväter) www.unifr.ch/bkv/ (जर्मन में) देखने की सलाह देता हूँ।

I. अरस्तू स्त्री को एक ऐसी मानव-रचना कहता है जो पुरुष से कम पूर्ण है। पर जो अपने आप में अपूर्ण और त्रुटिपूर्ण है, उसका उल्लेख वस्तुओं की पहली रचना के वर्णन में नहीं होना चाहिए था।

II. वश में किया जाना और हीनता पाप से आती है। क्योंकि स्त्री से कहा गया: 'तू पुरुष के अधिकार के अधीन रहेगी', और महान ग्रेगरी (Gregor der Große) लिखता है: 'जिस बात में हमने पाप नहीं किया, उसमें हम सब बराबर हैं।' पर स्त्री स्वभाव से पुरुष से कमज़ोर है, गरिमा में भी और बल में भी।

III. पाप के अवसरों से बचना चाहिए। पर परमेश्वर जानता था कि स्त्री आगे चलकर पुरुष के लिए पाप का अवसर बनेगी। इसलिए उसे उसको उत्पन्न नहीं करना चाहिए था। दूसरी ओर पवित्रशास्त्र का अधिकार है। (उत्पत्ति 2:18)

b) मैं उत्तर देता हूँ कि यह आवश्यक था कि स्त्री 'पुरुष की सहायता' के लिए बने। और किसी दूसरे काम में सहायता के लिए नहीं, जहाँ हर हाल में किसी दूसरे पुरुष ने पुरुष की अधिक अच्छी सहायता की होती; बल्कि सन्तान उत्पन्न करने के काम के लिए। यह सबसे अच्छी तरह तब दिखता है, जब हम सन्तान उत्पन्न करने की अलग-अलग अवस्थाओं पर विचार करते हैं। ... केवल व्यक्तिगत, विशेष मानव-स्वभाव के विचार से ही स्त्री कुछ त्रुटिपूर्ण और कमज़ोर है।"

उसने एक और स्थान पर लिखा कि स्त्री यौन इच्छा से चलाई जाएगी, पर पुरुष बुद्धि से। या: स्त्री प्रकृति की एक भूल है, शरीर और बुद्धि में हीन, एक तरह का अंग-भंग, चूका हुआ, असफल पुरुष।

यह लाल रेखा अरस्तू से पौलुस (ऐसा माना गया) के रास्ते, ऑगस्टीन और थॉमस से होकर धर्मसुधारकों के धर्मविज्ञान में भी पहुँची। यह दृष्टिकोण आज बहुत लोगों के द्वारा (विशेषकर धर्मसुधारवादी मसीहियों के द्वारा) परमेश्वर की सार्वभौमिक सृष्टि की व्यवस्था के रूप में समझा जाता है। यह सचमुच दर्शन से विषैली की गई एक मनुष्य-छवि है, जिसके जाल में सबसे बड़े विचारक और धर्मवैज्ञानिक भी फँस गए। हे परमेश्वर, यह कितने दुख की बात है।

2.6.7 धर्मसुधार

धर्मसुधार ने मध्ययुगीन, कैथोलिक कलीसिया से सम्बन्ध तोड़ दिया। इससे स्त्री को एक नई स्वतन्त्रता और एक नया आदर मिला। विवाह और परिवार में लूथर (Luther) ने स्त्री को जो ऊँचा स्थान दिया, उसका मूल्य जितना आँका जाए उतना कम है, जब हम सोचते हैं कि स्त्रियों के प्रति औसत, समाज में प्रचलित रवैया कम या अधिक कठोर तिरस्कार का ही था।

लूथर के लिए स्त्री की अधीनता एक प्रकृति-प्रदत्त, स्वयंसिद्ध बात थी। वह अपनी पत्नी कैथरीना फ़ॉन बोरा (Katharina von Bora) का आदर करता था, जो उसके लिए एक मज़बूत साथी थी और यह भी जानती थी कि कब अपने मार्टिन पर लगाम लगानी है या उसे रोक भी देना है। पर स्त्रियों के विषय में उसकी उक्तियाँ शायद 16वीं शताब्दी की भद्दी, अश्लील और गँवारू भाषा को ही दर्शाती हैं। "... संसार के आरम्भ से स्त्रियों के शासन ने कभी कुछ भला नहीं किया, जैसी कहावत है: स्त्रियों का शासन विरले ही अच्छे अन्त पर पहुँचता

है! जब परमेश्वर ने आदम को सब प्राणियों पर स्वामी ठहराया था, तब सब कुछ अच्छा और ठीक था, और सब पर सबसे अच्छी तरह शासन होता था; पर जब स्त्री आई और हर बात में अपना हाथ डालना और चतुर बनना चाहा, तब सब कुछ बिखर गया और एक उजाड़ अव्यवस्था बन गई। ... जब स्त्रियाँ वाक्पटु होती हैं, तो उनमें यह प्रशंसा की बात नहीं है; उन्हें यही अधिक शोभा देता है कि वे हकलाएँ और अच्छी तरह बोल न सकें। यह उन्हें कहीं अधिक सजता है।" या: "व्यवस्था अनुशासन और सम्मान की माँग करती है कि जब पुरुष बोलें, तो स्त्रियाँ चुप रहें।" या: "खरपतवार जल्दी बढ़ती है, इसलिए लड़कियाँ लड़कों से जल्दी बढ़ती हैं।" वह स्वयं इसे अक्षरशः, पूरी गम्भीरता से कहता था, जब उसने एक प्रवचन में निर्गमन 22:18 का उद्धरण दिया: "तू जादूगरनी (डायन) को जीवित न रहने देना।" इस सम्बन्ध में आरम्भिक और बाद के लूथर की क्या भूमिका है, यह मैं इस समय नहीं कह सकता। बात किसी को परखने या दोषी ठहराने की नहीं, बल्कि कारणों की खोज की है। स्पष्ट है कि इस प्रश्न को बार-बार स्पष्ट करना पड़ता है, हमारे समय में भी।

मेरा उद्देश्य यह संकेत करना है कि परमेश्वर के बड़े-बड़े जन भी इस बड़ी भूल के शिकार हो गए, और परमेश्वर ने इसे सहा और बर्दाश्त किया। जैसे वह आज भी अक्सर करता है। वह आशीष देता है और काम करता है, और इसके साथ उसे अपनी सन्तानों के ऐसे विचार, रीतियाँ और व्यवहार सहने पड़ते हैं, जो उसने कभी नहीं चाहे।

मठों के भंग होने के बाद स्त्री की सेवा और स्थान घरेलू क्षेत्र तक सीमित हो गए। कलीसियाई पद स्त्री के लिए खोले नहीं गए। मनुष्य और पत्नी के रूप में उसकी गरिमा ऊँची की गई, पर यीशु की कलीसिया में उसका स्थान नहीं।

सारांश में इतिहासकार आर्नोल्ड आंगेनेन्ट (Arnold Angenendt) लिखते हैं: "सब युगों और संस्कृतियों के अनगिनत लिखित दस्तावेज़ों में स्त्री-जाति तिरस्कार, बल्कि उपहास का विषय रही है"। यह मसीही धर्म पर भी उतना ही लागू होता है, और अक्सर आज तक।

"हम मसीही बेहतर मनुष्य होना चाहेंगे। पर हम हैं नहीं। अधिक से अधिक हम बेहतर स्थिति में हैं।"[32] मसीही आज भी सब के लिए एक अधिक न्यायपूर्ण संसार के प्रभावशाली अग्रदूत नहीं हैं। मैं उस स्त्री का खण्डन नहीं कर सकता जो कहती है: "कलीसिया के इतिहास में स्त्रियों का इतना तिरस्कार है कि एक स्त्री के रूप में साँस रुक जाती है।"

फिर भी, आंगेनेन्ट के अनुसार, आरम्भिक शताब्दियों में मसीही धर्म परमेश्वर की मूल सृष्टि की व्यवस्था की ओर लौटा: "इसलिए आश्चर्य नहीं कि विशेषकर स्त्रियाँ मसीही धर्म की ओर खिंचीं; पहली तीन शताब्दियों में वे कलीसियाओं में बहुसंख्यक थीं। इसके कारण आसानी से पहचाने जा सकते हैं। और कहाँ स्त्री को पुरुष के इतना बराबर रखा गया था?" सुसमाचार का यह प्रकाश दुर्भाग्य से फिर धुँधला पड़ने वाला था।

18वीं और 19वीं शताब्दी में बड़े जागृति-आन्दोलन हुए। उनमें अक्सर स्त्रियाँ ही थीं जो अगुवाई करती थीं और वचन का प्रचार करती थीं।[33] ऐसे जागृति के समयों में, जो कसकर संगठित नहीं थे, जहाँ ढाँचे नहीं थे, जहाँ परमेश्वर का आत्मा प्रचण्ड रूप से बहता था, वहाँ वह वरदानों को बिना बाधा के काम करने देने के लिए

32. Schmidt, 118, Endlich gleich, Holzgerlingen, 2019
33. Krüger, Hartmut, Frauen im Pietismus, Marburg, 2005

स्वतन्त्र था, क्योंकि लिंगों के भेद को पूरी तरह अनदेखा किया जा सकता था। जब इस भेद की कोई भूमिका नहीं होती, तो यह एक अच्छी शर्त है।

2.6.8 धर्मनिरपेक्ष स्त्री-अधिकार आन्दोलन

"नारीवाद" शब्द को रूढ़िवादी मसीही अक्सर तिरस्कार का विषय बनाते हैं। पर उन्हें ही यह जानना चाहिए कि साहसी स्त्रियों और पुरुषों ने भी वह हासिल किया, जिसके लिए उन्हें ही खड़ा होना चाहिए था। आज वे स्वयं और सबसे बढ़कर उनकी पत्नियाँ उस बात से लाभ उठाती हैं, जो इन आन्दोलनों ने हासिल किया। यह नारीवाद को सन्त घोषित करना नहीं है। यह उन तथ्यों को देखना और उनका सम्मान करना है, जो ठीक वैसे ही मज़दूर संघों की उपलब्धियों पर भी लागू होते हैं, जिनसे (रूढ़िवादी) मसीही (बिना कमाए) लाभ उठाते हैं। हम कभी यह नहीं कह सकते कि आधुनिक संस्कृति के ऐसे आन्दोलन अपने आप में बुरे हैं या बाइबल पर आक्रमण हैं, जब हम स्वयं किसी न किसी रूप में उनसे सकारात्मक लाभ उठाते हैं और इन उपलब्धियों को छोड़ना नहीं चाहेंगे।

"नारीवाद की जड़ें धर्मनिरपेक्ष स्त्री-आन्दोलन में हैं। 19वीं शताब्दी के अन्त और 20वीं शताब्दी के आरम्भ में उसकी पहली लहर राजनीतिक भागीदारी के समान अधिकार के संघर्ष में एक स्त्री-अधिकार आन्दोलन थी। सबसे बढ़कर मताधिकार और राजनीतिक पदों तक पहुँच के लिए, शिक्षा के अधिकार के लिए, विशेषकर लड़कियों की शिक्षा के लिए, व्यवसाय के स्वतन्त्र चुनाव और रोज़गार तक पहुँच के संघर्ष में। 1896 में पहली बार स्त्रियों को विश्वविद्यालयों में अतिथि श्रोताओं के रूप में प्रवेश मिला; नियमित रूप से पढ़ने की अनुमति उन्हें पहली बार बाडेन (Baden) में 1900 से मिली, दूसरे प्रदेशों में काफ़ी बाद में; 1918 में स्त्रियों का मताधिकार लागू हुआ, 1949 में (जर्मन) संविधान में स्त्रियों और पुरुषों के समान अधिकार को लिखा गया, 1954 में सार्वजनिक सेवा में विवाहित स्त्रियों के काम करने पर रोक हटाई गई, 1957 में पति का अन्तिम निर्णय का अधिकार, और अन्त में 1958 में तथाकथित 'शिक्षिका-ब्रह्मचर्य' (Lehrerinnenzölibat), जो शिक्षिकाओं को अविवाहित रहने और विवाह होने पर अपना पेशा छोड़ने के लिए बाध्य करता था।

20वीं शताब्दी के सातवें दशक में स्त्री-आन्दोलन की दूसरी लहर अपने को स्त्री-मुक्ति आन्दोलन समझती थी। क्योंकि यद्यपि कानूनी रूप से, कम से कम काग़ज़ पर, वे बहुत हद तक बराबर थीं, फिर भी स्त्रियाँ अपने को पहले की तरह भेदभाव की शिकार और अस्वतन्त्र अनुभव करती थीं: शिक्षा के असमान अवसरों से – उस समय भी लड़कियों से अधिक लड़के जिम्नेज़ियम (उच्च माध्यमिक विद्यालय) में जाते थे, स्त्रियों से स्पष्ट रूप से अधिक पुरुष विश्वविद्यालय में पढ़ते थे; श्रम-बाज़ार में कमज़ोर अवसरों से; भारी बेरोज़गारी के समय उन पर 'दोहरी कमाईवाली' होने का आरोप लगाया जाता था या उन्हें नौकरी पर रखा ही नहीं जाता था, गर्भावस्था के कारण सम्भावित अनुपस्थिति के कारण भी; एक ही काम के लिए कम वेतन से; और अन्त में परिवार, पेशे और सम्बन्धियों की देखभाल के दोहरे या कई गुना बोझ से। स्त्रियों के प्रति न्यायपूर्ण भाषा ध्यान के केन्द्र में आई, स्त्री-प्रतिनिधि चुनी गईं, स्त्रियों के प्रोत्साहन की योजनाएँ लिखी गईं।"[34]

34. विकिपीडिया (विभिन्न लेख)

यह सब उसका केवल एक छोटा-सा अंश है, जो यहाँ बताया जा सकता था। मैं आशा करता हूँ कि ये थोड़ी-सी पंक्तियाँ अदन के बाहर स्त्रियों के कठिन मार्ग को स्पष्ट करती हैं। संसार के चिन्तन ने कलीसिया के चिन्तन पर कितना गहरा प्रभाव डाला है, यह इसमें दिखता है कि आज भी "हल्का अरस्तू" ("Aristoteles light") पौलुस के शब्दों से उचित ठहराया जाता है। केवल अन्धकार की शक्तियाँ, जिनका सरदार वह पुराना साँप है, स्त्रियों के इस पथरीले मार्ग से प्रसन्न हो सकती हैं। यीशु के साथ हव्वा की बेटियों के प्रति भी परमेश्वर का रवैया अन्तिम रूप से प्रकट हो जाता है।

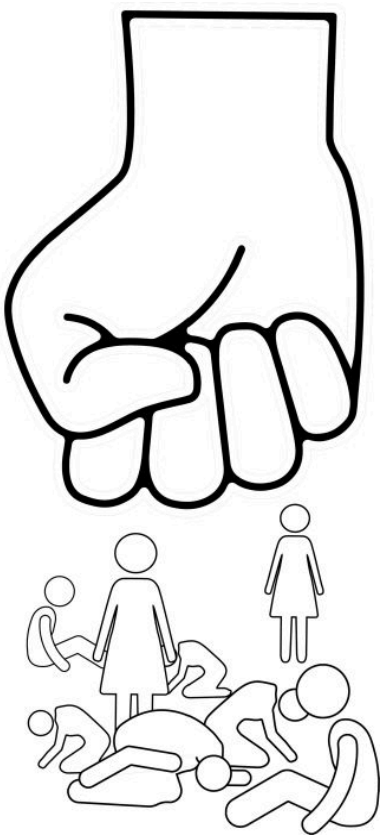
शायद आप सोचते हैं कि यह सब इतिहास है। बहुत पुरानी बात है और आज हर जगह सब कुछ बिलकुल अलग है। बिलकुल नहीं: वर्ल्ड विज़न (World Vision) (10 वर्ष पहले) ऐसे देशों के बारे में बताता है जिनकी कोई मसीही विरासत नहीं है: 45 करोड़ स्त्रियाँ बचपन में ख़राब पोषण के कारण शारीरिक विकलांगता से पीड़ित हैं। बहुत-से समाजों में लड़कियाँ और उनकी माताएँ तभी खाती हैं, जब पुरुष और लड़के भरपेट खा चुके हों। स्त्रियाँ संसार की आधी जनसंख्या हैं, फिर भी उनके पास सम्पत्ति का केवल एक प्रतिशत है। ग़रीबी में जीनेवाले 1.3 अरब लोगों में से 70% स्त्रियाँ हैं। किसी लड़की के लिए स्कूली शिक्षा न मिलने की सम्भावना लड़के की तुलना में दोगुनी है।

बीस लाख लड़कियाँ, अधिकतर अफ़्रीका और मध्य पूर्व में, ख़तने के द्वारा अंग-भंग की जाती हैं, ताकि उनकी यौन इच्छा को मार दिया जाए। यदि वे इस प्रक्रिया से बच जाती हैं, तो बड़ी होकर उन्हें पीड़ादायक यौन सम्बन्ध, सम्भावित बाँझपन और प्रसव में मरने की अधिक सम्भावना का सामना करना पड़ता है। नए आँकड़े दिखाते हैं कि वर्तमान पीढ़ी में सचमुच 10 करोड़ लड़कियाँ लापता हैं। उन्हें परिवारों ने उनके लिंग के कारण मार डाला। इनमें से कई करोड़ लड़कियाँ भारत और चीन में नहीं हैं, जहाँ माताएँ नियमित रूप से गर्भपात करा देती हैं, जब उन्हें पता चलता है कि उनके गर्भ में लड़की है। या, प्राचीन काल की तरह, उन्हें मरने के लिए छोड़ दिया जाता है। उन्हें चिकित्सा-सुविधा से वंचित रखा जाता है।

छिपकर कितने आँसू बहाए गए हैं? स्वर्ग भी रोता है, जब याहवे एलोहीम (Jahwe Elohim) देखता है कि हव्वा की बेटियों के साथ क्या होता है। कौन उनकी सहायता को आएगा? कौन उनके पक्ष में खड़ा होगा? इन वास्तविकताओं के सामने किसका हृदय अछूता रहता है?

पदानुक्रम पितृसत्ता का मूल है, और पितृसत्ता यौनता और शक्ति के दुरुपयोग का मूल है।

बेथ एलिसन बार (Beth Allison Barr)



3 यीशु, मसीहा, और स्त्रियाँ

हमारी कालगणना एक अद्वितीय आश्चर्यकर्म से आरम्भ होती है: परमेश्वर मनुष्य बनता है। सनातन, सृष्टिकर्ता, स्वयं आता है। हर मनुष्य की तरह शून्य से आरम्भ करता है, बचपन और जवानी जीता है, और नासरत और उसके आस-पास एक निर्माण-कारीगर के रूप में काम करता है। बाद में, जब उसकी सार्वजनिक सेवा आरम्भ होती है, उसका घर गलील के कफरनहूम में है। यह सब पहली शताब्दी के यहूदी धर्म के भीतर होता है।

स्त्रियों के लिए भी उसके साथ एक नई कालगणना आरम्भ होती है। यह वही है, जो उस समय दिन के ठण्डे समय में वाटिका में आदम और हव्वा से मिला था। याहवे एलोहीम (Jahwe Elohim) आदम के पुत्र के रूप में, मनुष्य के पुत्र के रूप में, वह स्त्री का वंश है। और उसका छुड़ानेवाला। स्त्रियों को समझनेवाला। अविवाहित होते हुए भी उसने अपनी माता और अपनी बहनों को निकट से जाना। वह प्रतिदिन अनुभव करता और देखता है कि पुरुष अपनी पत्नियों के प्रति और सामान्य रूप से स्त्रियों के प्रति कैसा व्यवहार करते हैं। शायद पहिलौठे के रूप में वह स्वयं परिवार के लिए उत्तरदायी है, यदि उसका पिता यूसुफ़ अब जीवित न रहा हो और उसे उसकी भूमिका सँभालनी पड़ी हो। उसकी बहनों ने उसे कैसे अनुभव किया होगा?

वह पर्दे के पीछे देखता है। कम से कम अपनी सार्वजनिक सेवा में वह दीवारें गिरा देता है और उस समय के यहूदी संसार को उलट-पुलट कर देता है। यदि कोई हमारा आदर्श है, तो वही, जिसने परमेश्वर को प्रकट किया। वह सारे विरोधाभास का अन्त है।

इस अध्याय में बात शिक्षा, धर्मसिद्धान्त या मतों की नहीं है। बात जीवन की वास्तविकता की है। कहानियाँ। मुलाक़ातें। रवैये। खोजें।

यहाँ बताई गई यीशु की स्त्रियों से सब मुलाक़ातों पर बहुत बार विचार किया गया है।[35] और वे निर्णायक रूप से महत्वपूर्ण हैं। बल्कि केन्द्रीय, क्योंकि इन पाठों में हम पाते हैं कि परमेश्वर की छुड़ानेवाली और पुनःस्थापित करनेवाली सामर्थ स्त्रियों के जीवन में कैसे वास्तविकता बनती है। कैसे वे उस स्थिति में लौटाई जाती हैं, जो स्त्री की अदन में थी। यही परमेश्वर का लक्ष्य है। शैतान के कामों को नष्ट करना, स्त्री पर पुरुष की नकारात्मक, अतिक्रमण करनेवाली और दबानेवाली प्रभुता को भी, उसके सब रूपों में।

स्त्रियों ने यीशु को कैसे अनुभव किया? वे वहाँ थीं, जब यीशु का जन्म हुआ, जब उसे क्रूस पर यातना दी गई और जब वह जी उठा था। डोरोथी एल. सेयर्स (Dorothy L. Sayers) का यह सशक्त और संसार भर में प्रसिद्ध उद्धरण पढ़िए:

“शायद कोई आश्चर्य नहीं कि स्त्रियाँ चरनी के पास सबसे पहले और क्रूस के पास सबसे अन्त तक थीं। उन्होंने ऐसा पुरुष पहले कभी नहीं देखा था – ऐसा फिर कभी हुआ भी नहीं। एक भविष्यद्वक्ता और शिक्षक,

35. स्थान और समय के कारण मैं पुराने नियम की उन साहसी स्त्रियों पर विचार नहीं करता, जिन्होंने अगुवाई की भूमिकाएँ निभाईं या भविष्यद्वाणी की, और इसी तरह इलीशिबा या मरियम पर भी नहीं। यीशु की माता एक अद्वितीय, हिम्मतवाली, आत्मनिर्भर, आत्मिक और साहसी स्त्री है, जिस पर मैं यहाँ आगे विचार नहीं करता।

जो बिना कुढ़े डाँटता था और बिना नीचा दिखाए प्रशंसा करता था; जो उनके प्रश्नों और तर्कों को गम्भीरता से लेता था; जिसने उन्हें कभी स्त्रियोचित बनने के लिए विवश नहीं किया और उनके स्त्रीत्व के कारण कभी उनका उपहास नहीं किया; जिसने उन्हें वैसे ही स्वीकार किया जैसी वे थीं, और उनके साथ पूरी सहजता से व्यवहार किया।"

यीशु स्त्रियों से बिना दोहरे मापदण्ड के, बिना बहिष्कार के, बिना नीचा दिखाए, बिना केवल सहन करने के मिलता है, बल्कि ध्यान और समझ के साथ, हाँ, दयालुता और प्रेम के साथ।

शायद बहुत अधिक घटनाएँ नहीं बताई गई हैं। पर इनमें बहुत कुछ है। और भी बहुत-सी हुई होंगी, जो हमें बताई नहीं गईं। पर शायद जब परमेश्वर का अनन्त राज्य आरम्भ होगा, तब हम एक दिन पीछे मुड़कर उन्हें देख सकेंगे।

आपने ये कहानियाँ सौ बार पढ़ी या सुनी हैं। फिर भी मैं उन पर दृष्टि डालूँगा और संक्षेप में उनकी विशेषताओं की ओर, सांस्कृतिक विशेषताओं की ओर भी, संकेत करूँगा। मैं पाठ पूरे देता हूँ, आपको बाइबल साथ लेने की ज़रूरत नहीं। और उन पर केवल कुछ विचार बाँटता हूँ। इन पवित्र क्षणों में आप स्वयं डूब जाइए!

3.1 सेवा करनेवाली शिष्याएँ

> [लूका 8:1-3, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और इसके बाद ऐसा हुआ कि वह एक के बाद एक नगर और गाँव में घूमता रहा, और प्रचार करता और परमेश्वर के राज्य का सुसमाचार सुनाता रहा। और वे बारह उसके साथ थे, और कुछ स्त्रियाँ, जो दुष्ट आत्माओं और बीमारियों से चंगी की गई थीं: मरियम, जो मगदलीनी कहलाती थी, जिसमें से सात दुष्टात्माएँ निकली थीं, और हेरोदेस के भण्डारी खोज़ा की पत्नी योअन्ना, और सूसन्नाह, और बहुत-सी और स्त्रियाँ, जो अपनी सम्पत्ति से उसकी सेवा करती थीं।

केवल यीशु ही नहीं, उस समय के दूसरे रब्बी भी अपने चेलों से घिरे रहते थे। पर: रब्बियों की शिष्याएँ नहीं होती थीं, और वे किसी स्त्री को शिष्या बनाना भी नहीं चाहते थे। किसी रब्बी से सीखना पुरुषों का ही विशेषाधिकार था। जब हम यीशु के चेलों की बात करते हैं, तो हम सदा बारहों के बारे में सोचते हैं। लूका उन स्त्रियों की बात करता है जिनके नाम वह बता सकता है, और बहुत-सी बेनाम स्त्रियों की भी। हम जानते हैं कि बारह पुरुषों से अधिक चेले थे। लूका ने सत्तर की बात की (लूका 10:1, 17)। पर शायद उनमें स्त्रियाँ भी पहले से सम्मिलित थीं। जो भी हो, जिस तरह लूका चेलों की भीड़ का वर्णन करता है, वह हमें पुरुषों और स्त्रियों की एक मिली-जुली टोली दिखाई देती है। कुछ स्त्रियों ने इस रब्बी के द्वारा उद्धार का अनुभव किया था और तब से उसके पीछे चल रही थीं। और अपनी सम्पत्ति लगा दी थी। वे उसकी, अपने गुरु की, सेवा करती थीं, और शायद उन सब की भी जो यीशु के साथ यात्रा करते थे। इसका अर्थ खाना बनाना और कपड़े धोना नहीं है – शायद वह भी: वे अपनी सम्पत्ति से सेवा करती थीं। वे, या कम से कम उनमें से कुछ, यीशु और उसके अनुयायियों के मिशन का ख़र्च उठाती थीं।

यह एक अभूतपूर्व वर्जना-भंग है: यीशु स्त्रियों को अपने चेलों के घेरे में ले लेता है। यीशु चाहता है कि वे सीखें। क्योंकि वह जानता है कि परमेश्वर के राज्य और उसकी कलीसिया के लिए स्त्रियाँ भविष्य में कितनी बड़ी भूमिका निभानेवाली थीं – वे स्त्रियाँ, जिन पर वह पुरुषों से अधिक भरोसा कर सकता था। लूका उनका उल्लेख सकारात्मक रूप में करता है, पुरुष चेलों की तुलना में किसी विशेष भेद का उल्लेख किए बिना।

3.2 स्त्रियों को सीखना चाहिए

> [लूका 10:38-42, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] जब वे आगे बढ़े, तो वह एक गाँव में आया; और मार्था नाम की एक स्त्री ने उसे अपने घर में स्वागत किया। और उसकी एक बहन थी, जो मरियम कहलाती थी; वह भी यीशु के पाँवों के पास बैठ गई और उसका वचन सुनती रही। पर मार्था बहुत सेवा करने में व्यस्त थी; वह पास आई और बोली: प्रभु, क्या तुझे चिन्ता नहीं कि मेरी बहन ने सेवा करने के लिए मुझे अकेला छोड़ दिया है? तो उससे कह कि वह मेरी सहायता करे। पर यीशु ने उसे उत्तर दिया और कहा: मार्था, मार्था! तू बहुत-सी बातों के लिए चिन्तित और व्याकुल है; पर एक बात आवश्यक है। क्योंकि मरियम ने उस उत्तम भाग को चुन लिया है, जो उससे छीना नहीं जाएगा।

यीशु इन तीनों भाई-बहनों से प्रेम करता था। उसे इस घर में रहना अच्छा लगता था। उसका स्वागत होता था। जिन घड़ियों में वह शिक्षा देता था, वे मानो किसी और लोक में उठा लिए जाने जैसी थीं। जीवन के वचन, सामर्थ से भरे वचन उसके मुँह से निकलते थे। और मरियम को यह चेलों की भीड़ की देखभाल करने से अधिक रोचक लगा। समझ में आता है कि बहनों में खटपट हो गई। पर यीशु, जिससे मार्था उलाहने के स्वर में बात करती दिखती है, मरियम को और इस तरह सब स्त्रियों को शिष्य और सीखनेवाली होने का विशेषाधिकार देता है। चेले और चेली में कोई भेद नहीं। यीशु के चरणों में सब भेद मिट जाते हैं। वहाँ सब बराबर हैं! आज भी। स्त्रियों के लिए भी उतना ही महत्वपूर्ण है कि उन्हें सत्य की शिक्षा मिले और वे विश्वास में दृढ़ता से नींव पर खड़ी हों। वे भी पुरुषों की तरह ही बातचीत और प्रश्नों में भाग लेती हैं।

3.3 सब बराबर

> [मरकुस 3:33-35, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और उसने उन्हें उत्तर दिया और कहता है: मेरी माता और मेरे भाई कौन हैं? और उसने उन पर, जो उसके चारों ओर घेरे में बैठे थे, दृष्टि डाली और कहता है: देखो, मेरी माता और मेरे भाई; क्योंकि जो कोई परमेश्वर की इच्छा पर चले, वही मेरा भाई और मेरी बहन और मेरी माता है।

यीशु का परिवार सोचता था कि यीशु अब पूरी तरह बेक़ाबू हो गया है। यहाँ यीशु पारिवारिक व्यक्ति के रूप में सामने नहीं आता। उसके लिए परमेश्वर के राज्य और नई सृष्टि का नया परिवार अधिक महत्व रखता है। जैसा पिछले बिन्दु में दिखा, यीशु के साथ सम्बन्ध में, शिष्यता में, लिंग मिट नहीं जाता, पर उसका अब कोई महत्व

नहीं रहता। पदानुक्रम का महत्व तो बिलकुल नहीं, मानो स्त्रियाँ पुरुषों के अधीन हों। पुरुष और स्त्री की भूमिका को समझने के लिए यह निर्णायक है कि यीशु ने कभी किसी पदानुक्रम की बात नहीं की और न उसकी शिक्षा दी। बिना शब्दों के, अपने कामों से ही यीशु ने अपने समय की सांस्कृतिक और "धार्मिक" परम्पराओं को तोड़ दिया। जो उसकी आज्ञा मानते हैं, उन्हें वह भाई और बहन कहता है!

3.4 मासिक धर्म अब अशुद्धता नहीं

[मरकुस 5:32-34, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और उसने चारों ओर दृष्टि डाली, ताकि उसे देखे जिसने यह किया था। पर वह स्त्री, भय और काँपते हुए, क्योंकि वह जानती थी कि उसके साथ क्या हुआ है, आई और उसके सामने गिर पड़ी और उसे सारी सच्चाई बता दी। पर उसने उससे कहा: बेटी, तेरे विश्वास ने तुझे चंगा किया है; कुशल से जा और अपनी पीड़ा से बची रह।

मासिक धर्म अपने आप में स्त्री के लिए आशीष नहीं, बल्कि एक बोझ है। हम पुरुष इसकी कल्पना नहीं कर सकते। इस्राएल में स्त्रियाँ अपने मासिक रक्तस्राव के समय धार्मिक-अनुष्ठान की दृष्टि से अशुद्ध होती थीं। ऐसी बात के लिए अशुद्ध, जिसमें उनका कोई दोष नहीं था। भाग्य? इससे भी बुरा तब था, जब रक्तस्राव रुकता ही नहीं था। यह बीमारी आज भी होती है। इसके कारण स्त्री लगातार अशुद्ध रहती थी। एक कोढ़ी की तरह वह सामाजिक जीवन में मुश्किल से और धार्मिक जीवन में बिलकुल भाग नहीं ले सकती थी। यीशु के पास चंगाई को थाम लेने का उसका साहस सुसमाचारों की मर्मस्पर्शी कहानियों में से एक है। यीशु इस बीमारी को पीड़ा कहता है। वही उसका अन्त करता है। वह स्त्री को जीवन में लौटा लाता है। कुछ वैसे ही, जैसे वह उसके तुरन्त बाद याईर की बेटी को जिलाता है। वह वहीं जा रहा था। वह उसे मर्मस्पर्शी ढंग से बेटी कहता है। एक पिता के रूप में वह उसमें स्वीकृति, अपनापन और आदर का वह अनुभव जगाता है, जिसकी कमी उसने 12 वर्ष तक महसूस की थी। जैसे कोई बेटी अपने पिता की परवाह भरी निकटता का अनुभव करती है। सब लोगों के सामने, गली खचाखच भरी थी, वह इस "अशुद्ध" से ऐसे बात करता है और वह करता है जो केवल उसी ने किया: सबके सामने एक स्त्री से बात करना और सबके सामने उसे उसका जीवन और उसकी गरिमा लौटा देना। पुरुषों ने क्या सोचा होगा? और स्त्रियों ने तो क्या ही!

3.5 निकाली गई और पाई गई

[यूहन्ना 4:6-9, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] वहाँ याक़ूब का एक सोता था। तो यीशु, यात्रा से थका हुआ, उस सोते के पास वैसे ही बैठ गया। यह छठे घण्टे के आस-पास था। तब सामरिया की एक स्त्री पानी भरने आती है। यीशु उससे कहता है: मुझे पानी पिला! (क्योंकि उसके चेले भोजन मोल लेने नगर में गए थे।) तब वह सामरी स्त्री उससे कहती है: तू यहूदी होकर मुझ सामरी स्त्री से पानी क्यों माँगता है? (क्योंकि यहूदी सामरियों से व्यवहार नहीं रखते।)

[यूहन्ना 4:27-30, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] इतने में उसके चेले आ गए और अचम्भा करने लगे कि वह एक स्त्री से बातें कर रहा है। फिर भी किसी ने नहीं कहा: तू क्या चाहता है?, या: तू उससे क्यों बातें करता है? तब वह स्त्री अपना घड़ा छोड़कर नगर में चली गई और लोगों से कहने लगी: आओ, एक मनुष्य को देखो, जिसने मुझे सब कुछ बता दिया जो मैंने किया है! कहीं यही तो मसीह नहीं? वे नगर से निकलकर उसके पास आने लगे।

अपनी जवानी में मैंने यूहन्ना के सुसमाचार के अध्याय 4 के वचन कितनी बार सुने। अधिकतर यह कि पिता ऐसे ही भक्तों को ढूँढ़ता है, जो आत्मा और सच्चाई से आराधना करें। मेरी जवानी के "सत्य" में यह भी था कि स्त्रियाँ ऐसा नहीं करतीं। वे सभाओं में चुप रहती हैं।

तो फिर यीशु ने ये गहरी और महत्वपूर्ण सच्चाइयाँ एक स्त्री से क्यों कहीं? वह भी एक सामरी स्त्री से? कई बार तलाक़ पाई हुई स्त्री से? ऐसी स्त्री से, जिसने अभी-अभी मसीहा को जाना था?

वह स्वतन्त्र था। वह याहवे एलोहीम था, जिसने पुरुष और स्त्री को बराबर बनाया। वह स्त्रियों से वैसे मिल सकता था, जैसा होना चाहिए। चेले अचम्भा करते थे कि वह एक स्त्री से बात कर रहा है। उन दिनों स्त्री के प्रति दृष्टिकोण कितना बिगड़ चुका था। यीशु ने यह थकाऊ मार्ग इसलिए चुना, ताकि इस स्त्री के, जिसे कई बार छोड़ दिया गया था, दुखद जीवन-इतिहास को उद्धार का इतिहास बना दे। नहीं, यह कोई पुरुष नहीं था जिससे यीशु ने ऐसे वचन कहे; यह एक स्त्री थी, जिसका सारा आत्म-सम्मान खो चुका था और जिसे जीवित रहने के लिए एक और पुरुष के भरोसे रहना पड़ा था। सूखार के कुएँ पर यह पुरुष अलग था। जैसा हर पुरुष को होना चाहिए। वह मसीहा था।

वह पहली मिशनरी बनती है। उसका पूरा गाँव विश्वास में आता है, क्योंकि वह अपनी कहानी सुनाती है और अपने डर पर जय पाती है। यह सचमुच एक साँस रोक देनेवाली कहानी है, जो मेरी आँखों में आँसू ला देती है। ऐसे बहुत लोग नहीं थे, जिन पर यीशु ने सीधे प्रकट किया कि वह मसीहा है। पर इस स्त्री के लिए वह स्वर्ग खोल देता है।

यह प्रश्न पूछना ही होगा: पौलुस के बोलने के निषेध को इस तरह कैसे समझा जा सकता है और सब युगों में कलीसिया की सब स्त्रियों पर कैसे फैलाया जा सकता है, जब यहाँ यीशु एक स्त्री को आराधना के स्वरूप की शिक्षा देता है? उस आराधना की, जो कलीसिया का एक मूल लक्षण है!?

3.6 व्यभिचार में दो लोग होते हैं

[यूहन्ना 8:1-11, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] पर यीशु जैतून पहाड़ पर गया। और भोर को वह फिर मन्दिर में आया, और सब लोग उसके पास आए; और वह बैठकर उन्हें शिक्षा देने लगा। तब शास्त्री और फ़रीसी एक स्त्री को उसके पास लाते हैं, जो व्यभिचार में पकड़ी गई थी, और उसे बीच में खड़ा करके उससे कहते हैं: हे गुरु, यह स्त्री व्यभिचार करते हुए, ठीक काम करते समय, पकड़ी गई है। व्यवस्था में मूसा ने हमें आज्ञा दी है कि ऐसी स्त्रियों को पत्थरवाह करें; तो तू क्या कहता है? यह उन्होंने

> उसे परखने के लिए कहा, ताकि उनके पास उस पर दोष लगाने के लिए कुछ हो। पर यीशु झुककर उँगली से भूमि पर लिखने लगा। जब वे उससे पूछते ही रहे, तो वह सीधा हुआ और उनसे कहा: तुम में जो निष्पाप हो, वही पहले उस पर पत्थर मारे। और वह फिर झुककर भूमि पर लिखने लगा। पर जब उन्होंने यह सुना, तो बड़ों से लेकर छोटों तक एक-एक करके निकल गए; और यीशु अकेला रह गया, और वह स्त्री बीच में। जब यीशु ने सीधे होकर स्त्री को छोड़ और किसी को न देखा, तो उससे कहा: हे नारी, वे कहाँ हैं, तेरे दोष लगानेवाले? क्या किसी ने तुझे दण्ड नहीं दिया? उसने कहा: किसी ने नहीं, प्रभु। तब यीशु ने उससे कहा: मैं भी तुझे दण्ड नहीं देता; जा, और फिर पाप न करना!

अलग-अलग बाइबलों में इसका शीर्षक है: यीशु और व्यभिचारिणी। पर: व्यभिचारी कहाँ था? कलीसियाई पिता मानते थे, और कुछ लोग आज भी ऐसा सोचते हैं, कि स्त्रियाँ यौन पाप के लिए प्रलोभन हैं। स्त्री के विषय में यहूदी धारणा उसे यौन प्रलोभन के लिए उत्तरदायी ठहराती थी। इसके विपरीत यीशु उत्तरदायित्व पुरुष पर डालता है (मत्ती 5:28)। जब वह किसी स्त्री को देखे, तो उसे अपनी यौन इच्छा पर ध्यान देना और उसे दबाना है। दूसरे शब्दों में: यदि तू अपनी लालसा को वश में नहीं रख सकता, तो बहुत देर तक मत देख। मुझे सन्देह है कि बहकानेवाली स्त्री ही होती है। पुरुष, जो स्त्रियों से जल्दी उत्तेजित होते हैं, किसी स्त्री को जल्दी अपने वश में करने के लिए सब कुछ करते हैं। यहाँ कैसा हुआ, हम नहीं जानते। प्रेमी ने कायरता से उसे छोड़ दिया था, या उसके पुरुष साथियों ने उसे बचा लिया था।

"यीशु ने केवल थोड़े-से शब्द कहे, पर वे बहुत कुछ कह गए। पाप पाप था – चाहे पुरुष ने किया हो या स्त्री ने। हम में से हर एक परमेश्वर के न्यायासन के सामने खड़ा होगा। कोई छिप नहीं सकेगा या बच नहीं सकेगा। कोई किसी दूसरे की ओर उँगली नहीं उठा सकेगा। स्त्री का पाप पुरुष के पाप से बुरा नहीं था – पर अच्छा भी नहीं। जब बराबरी मानक होती है, तो शायद ही कोई पत्थर फेंका जाता है।"[36]

3.7 सीधी और पूरे कद में खड़ी होना

> [लूका 13:10-17, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] सब्त के दिन वह एक आराधनालय में शिक्षा दे रहा था। और देखो, वहाँ एक स्त्री थी, जिसे अठारह वर्ष से दुर्बलता की एक आत्मा थी; और वह कुबड़ी थी और किसी रीति से सीधी नहीं हो सकती थी। जब यीशु ने उसे देखा, तो उसे अपने पास बुलाया और उससे कहा: हे नारी, तू अपनी दुर्बलता से छूट गई है! और उसने उस पर हाथ रखे, और वह तुरन्त सीधी हो गई और परमेश्वर की महिमा करने लगी। ... और यह, जो अब्राहम की बेटी है, जिसे शैतान ने, देखो, अठारह वर्ष से बाँध रखा था, क्या उसे सब्त के दिन इस बन्धन से छुड़ाया न जाना चाहिए था? और जब उसने ये बातें कहीं, तो उसके सब विरोधी लज्जित हुए; और सारी भीड़ उन सब महिमापूर्ण कामों से, जो उसके द्वारा हो रहे थे, आनन्दित हुई।

आराधनालय पुरुषों का स्थान था। वे आगे रहते थे। वही बोलते थे। पर यीशु इस स्त्री को देखता है और उसे आगे बुलाता है। बीच में। एक स्त्री। वह भी ऐसी, जिसे देखना भयानक था। महान चिकित्सक उसे अपनी

36. Hamilton, David

उपस्थिति में बुला लेता है। पुरुषों ने परम्परा के इस भंग का स्वागत नहीं किया होगा। केवल इस तथ्य ने कि सब्त का दिन था, उन्हें यीशु पर आक्रमण करने का एक खोखला कारण दे दिया। "अब्राहम की बेटी" शब्द अद्वितीय है। इस तरह झुकी हुई स्त्री सीधी हो जाती है। करुणा के साथ और उस बेचारी स्त्री की ओर मुड़कर वह उस पर हाथ रखता है। फिर वह वहाँ खड़ी है, जहाँ और समय केवल पुरुष होते हैं। सीधी। याहवे एलोहीम उसे केवल स्वास्थ्य ही नहीं, बल्कि गरिमा भी लौटाता है: वह उसे अब्राहम की बेटी कहता है। जहाँ और समय केवल पुरुषों की आवाज़ सुनाई देती है, वहाँ वह परमेश्वर की महिमा के लिए अपनी आवाज़ उठाती है। हाँ, मानो वह आराधनालय में परमेश्वर की स्तुति आरम्भ करती है। कितना पवित्र क्षण!

यहूदी आराधनालय, जहाँ स्त्रियाँ पीछे मानो छिपी रहती थीं और केवल पुरुष बोलते थे, कभी इस बात का आदर्श नहीं है कि यीशु मसीह की कलीसिया कैसे चलती है।

3.8 कोई दोहरा मापदण्ड नहीं

> [मत्ती 19:8-9 (5:31-32)] उसने उनसे कहा: मूसा ने तुम्हारे मन की कठोरता के कारण तुम्हें अपनी पत्नियों को छोड़ देने की अनुमति दी; पर आरम्भ से ऐसा नहीं था। और मैं तुम से कहता हूँ: जो कोई व्यभिचार को छोड़ और किसी कारण से अपनी पत्नी को छोड़कर दूसरी से विवाह करे, वह व्यभिचार करता है; और जो उस छोड़ी हुई से विवाह करे, वह भी व्यभिचार करता है।

यहूदी पति अपेक्षाकृत आसानी से अपनी पत्नियों को छोड़ सकते थे। कोई न कोई कारण सदा मिल जाता था। इस तरह छोड़ी हुई, या कहें त्यागी हुई, स्त्री लगभग समाज से बाहर कर दी जाती थी और मुश्किल से जीवित रह पाती थी। यीशु ही है, जो फ़रीसियों और शास्त्रियों की पोल खोलता है और उन्हें आरम्भ की ओर लौटा ले जाता है। पुरुष और स्त्री परमेश्वर के स्वरूप में बराबर बनाए गए हैं और विवाह में एक किए गए हैं। यही सृष्टि की व्यवस्था थी।

पुरुषों और स्त्रियों दोनों को एक ही नियमों का पालन करना है। परमेश्वर का धन्यवाद हो कि आज हमारे यहाँ वैसा नहीं है, जैसा उस समय यहूदियों में था। पर तलाक़ फिर भी ऐसी बात है, जो गहराई तक घायल करती है और परमेश्वर का हृदय भी तोड़ देती है। सृष्टि के वृत्तान्त का हवाला देते हुए यीशु स्त्री की रक्षा करता है और पुरुषों से अपील करता है कि वे व्यभिचार को छोड़, अनुचित कारणों से अपनी पत्नियों को यों ही न छोड़ें। वह स्त्रियों के पक्ष में खड़ा होता है। वह उनके लिए अपनी आवाज़ उठाता है और मन की उस कठोरता को डाँटता है, जिसे वह इन त्यागपत्रों का कारण मानता है।

3.9 बेहिसाब अनुग्रह

> [मरकुस 14:3-9, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] और जब वह बैतनिय्याह में शमौन कोढ़ी के घर में था, और भोजन करने बैठा था, तो एक स्त्री आई, जिसके पास शुद्ध और बहुत मूल्यवान जटामांसी

के इत्र से भरी संगमरमर की एक शीशी थी। उसने संगमरमर की शीशी तोड़ी और इत्र उसके सिर पर उण्डेल दिया। पर कुछ लोग अपने मन में क्रोधित हुए और कहने लगे: इत्र का यह व्यर्थ नाश किस लिए किया गया? क्योंकि यह इत्र तीन सौ दीनार से अधिक में बेचकर कंगालों को दिया जा सकता था। और वे उस पर झुँझलाए। पर यीशु ने कहा: उसे रहने दो; तुम उसे क्यों सताते हो? उसने मेरे साथ भलाई की है; क्योंकि कंगाल तो तुम्हारे साथ सदा रहते हैं, और जब चाहो, तुम उनकी भलाई कर सकते हो; पर मैं तुम्हारे साथ सदा नहीं रहूँगा। जो वह कर सकी, उसने किया; उसने गाड़े जाने के लिए पहले से मेरी देह पर इत्र मला है। पर मैं तुम से सच कहता हूँ: सारे संसार में जहाँ कहीं सुसमाचार का प्रचार किया जाएगा, वहाँ उसके इस काम की चर्चा भी उसकी स्मृति में की जाएगी।

यह एक अविश्वसनीय, बल्कि लगभग शर्मिन्दा कर देनेवाली स्थिति है। यह स्त्री पहले ही यीशु से मिल चुकी थी, और उसने उसके जीवन को नया बना दिया था। वह साहस जुटाती है कि पुरुषों के इस समाज में घुस जाए और सबकी आँखों के सामने आ जाए। ताकि फिर वह करे, जो वह कर सकती थी। यीशु जानता था, इससे अधिक वह कर नहीं सकती थी। एक वर्ष की बचाई हुई कमाई, जो कुछ उसके पास था, यीशु को अर्पित करना उसे उचित लगा। इससे पहले कभी इतनी मूल्यवान वस्तु नासरत के इस पुरुष के सिर पर नहीं उण्डेली गई थी। उससे कभी ऐसी सुगन्ध नहीं आई थी। और यीशु इस स्त्री को सबके सामने ऊँचा उठाता है और उसे इतिहास में एक ऐसा स्थान देता है, जो उसने किसी पुरुष को नहीं दिया। उसने इसे बहुत बढ़कर सराहा – कोई नहीं समझा कि उसका मिशन अन्ततः गुलगुता पर अपनी सबसे गहरी और सबसे ऊँची घड़ी तक पहुँचनेवाला था।

“वह क्षमा पाई हुई एक पापिन से बढ़कर है। यीशु की सेवा करते समय उसके आनन्द के बहुत-से आँसू पतरस के आँसुओं के विपरीत हैं, जो सेवा छोड़ देने और यीशु का इन्कार करने के बाद फूट-फूटकर रोता है (लूका 22:62)। उसके लगातार चुम्बन यहूदा के विश्वासघाती चुम्बन के विपरीत हैं (लूका 22:47)। यीशु के चरणों के पास उसका स्थान एक सेवक का है, वही स्थान, जो यीशु स्वयं लेता है (लूका 22:26-27)। संगमरमर की शीशी तोड़ने और उसकी मूल्यवान सामग्री उण्डेलने का उसका प्रेमपूर्ण काम मसीह का एक प्रतीकात्मक अनुकरण है, जो अपनी देह को तोड़े जाने और अपना मूल्यवान लहू अपने सब प्रियजनों के लिए बहाए जाने देता है (लूका 22:20)। वह मसीह की एक प्रतिमा (छवि) है!”[37]

वे सब पुरुष, जो स्त्रियों पर चुप रहने का आदेश थोपते हैं और प्रचार करने से रोकते हैं: आपने अपने सन्देशों और सुसमाचार के प्रचार में कितनी बार इस स्त्री का उल्लेख किया है?

3.10 क्रूस: पुरुष कहाँ हैं?

[मत्ती 27:55-56] वहाँ बहुत-सी स्त्रियाँ थीं, जो दूर से देख रही थीं; ये गलील से यीशु के पीछे-पीछे आई थीं और उसकी सेवा करती थीं। उनमें मरियम मगदलीनी, और याक़ूब और योसेस की माता मरियम, और ज़ब्दी के पुत्रों की माता थीं।

37. Reid, Barbara E., पृ. 76, Wisdom's Feast, 2016

[मरकुस 15:40-41] कई स्त्रियाँ भी दूर से देख रही थीं, उनमें मरियम मगदलीनी, और छोटे याक़ूब और योसेस की माता मरियम, और सलोमी थीं; जब वह गलील में था, तब ये उसके पीछे हो लेती थीं और उसकी सेवा करती थीं; और भी बहुत-सी स्त्रियाँ थीं, जो उसके साथ यरूशलेम आई थीं।

[लूका 23:55-56] और उन स्त्रियों ने, जो उसके साथ गलील से आई थीं, पीछे-पीछे जाकर उस क़ब्र को देखा, और यह भी कि उसकी देह किस रीति से रखी गई। और लौटकर उन्होंने सुगन्धित वस्तुएँ और इत्र तैयार किए; और सब्त के दिन उन्होंने आज्ञा के अनुसार विश्राम किया।

[मत्ती 28:9-10] जब वे उसके चेलों को समाचार देने जा रही थीं, तो देखो, यीशु उन्हें मिला और कहा: सलाम! उन्होंने पास आकर उसके पाँव पकड़े और उसको दण्डवत् किया। तब यीशु ने उनसे कहा: मत डरो; जाओ, मेरे भाइयों से कह दो कि गलील को चले जाएँ, वहाँ वे मुझे देखेंगे।

क्या यह उल्लेखनीय नहीं कि सुसमाचारों के पुरुष लेखक यहाँ इन स्त्रियों के बारे में कैसे लिखते हैं? वे उन्हें अनदेखा नहीं करते। उन्हें भूलते नहीं। उन्होंने तो स्त्रियों को सह-चेलियों के रूप में अनुभव किया था, जो बारहों के साथ मिलकर यीशु के पीछे चलती थीं। ये लेखक भी स्त्री के विषय में यहूदी और तलमुदी दृष्टिकोण के साथ बड़े हुए थे। पर यीशु ने उनका स्त्री-दृष्टिकोण भी नया बना दिया। इसमें कुछ वर्ष लगे, पर इस विषय में वे यीशु के पदचिह्नों पर चलते हैं।

इसके अतिरिक्त, पुरुषों के रूप में उनके लिए यह लिखना काफ़ी शर्मिन्दगी की बात थी कि स्त्रियाँ क्रूस पर चढ़ाए जाने के समय कम से कम दूर से देखती रहीं, जबकि वे स्वयं – यूहन्ना को छोड़ – भाग गए थे।

स्त्रियों के प्रति यीशु के व्यवहार ने उन्हें मज़बूत और साहसी बना दिया था। उसने उन्हें आगे बढ़ाया। उनकी सेवाओं को सराहा। जो हम यहाँ पढ़ते हैं, वह उस आदर की गूँज है, जो यीशु उनके प्रति रखता था। परम्परा और रीति-रिवाजों के विपरीत उसने उन्हें शिष्याओं और शिष्यों के घेरे में ले लिया था। बहुत कुछ हम नहीं जानते, पर बताए गए तथ्य एक बात स्पष्ट करते हैं: वह उनका बराबर आदर करता था, चेलों का भी और चेलियों का भी। भले ही सबसे भीतरी घेरे में कोई स्त्री नहीं थी।

3.11 मरियम, प्रेरिता

[यूहन्ना 20:15-18, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] यीशु उससे कहता है: हे नारी, तू क्यों रोती है? किसको ढूँढ़ती है? उसने यह समझकर कि वह माली है, उससे कहा: हे स्वामी, यदि तू उसे उठा ले गया है, तो मुझे बता कि उसे कहाँ रखा है, और मैं उसे ले जाऊँगी। यीशु उससे कहता है: मरियम! वह मुड़कर उससे इब्रानी में कहती है: रब्बूनी! – अर्थात् हे गुरु। यीशु उससे कहता है: मुझे मत छू, क्योंकि मैं अब तक अपने पिता के पास ऊपर नहीं गया। पर मेरे भाइयों के पास जाकर उनसे कह: मैं अपने पिता और तुम्हारे पिता, और अपने परमेश्वर और तुम्हारे परमेश्वर के पास ऊपर जाता हूँ। मरियम मगदलीनी आती है और चेलों को बताती है कि उसने प्रभु को देखा है और उसने उससे ये बातें कहीं।

किसी न्यायिक मुक़दमे में स्त्रियाँ गवाह नहीं होती थीं। वे गवाह होने योग्य नहीं मानी जाती थीं। बात यहाँ तक पहुँच गई थी। यह कि यीशु ने सब युगों के सबसे महत्वपूर्ण सन्देश का भार स्त्रियों को सौंपा और उन्हें इसकी आज्ञा दी – इसका मूल्य, स्वयं चेलों के लिए भी, जितना आँका जाए उतना कम है। क्रूस पर चढ़ाए जाने के तुरन्त बाद इससे अधिक महत्वपूर्ण और बड़ा सन्देश कभी नहीं सुनाया गया। मरियम ही अकेली थी, जो वहाँ थी जहाँ यह सन्देश सुना जा सकता था। उसे यह सत्य उन चेलों को सुनाने की आज्ञा मिलती है, जो डरकर छिप गए थे। इस आज्ञा को देखते हुए यह प्रश्न कि क्या स्त्रियाँ प्रचार कर सकती हैं, थोड़ी ही समझदारी दिखाता है।

इस अनोखे भेजे जाने के कारण मैं मरियम को प्रेरिता कहता हूँ, एक ऐसी स्त्री, जिसे जी उठे हुए प्रभु ने भेजा। एक वाटिका में हव्वा बहकावे में आई। इस वाटिका में कोई पुरुष दिखाई नहीं देता। केवल एक स्त्री, जिसे अपने प्रभु और छुड़ानेवाले की कमी खलती है और जो उसे ढूँढ़ रही है। जीवित को नहीं, बल्कि मरे हुए यीशु को। उसने अपना पूरा अस्तित्व उसी से बाँध दिया था। वही उसका सब कुछ था। इस निष्ठा और प्रेम को प्रभु यीशु सराहता है और सम्मान देता है।

क्योंकि मरियम मगदलीनी का नाम सबसे पहले आता है, जो जी उठे हुए से मिली और जिसे उसने अपने चेलों को अपने जी उठने का सन्देश सुनाने के लिए नियुक्त किया (यूहन्ना 20:11-18), इसलिए प्राचीन कलीसिया में ही उसे "प्रेरितों के समान" मानकर उसका आदर किया जाता था। तीसरी शताब्दी में रोम के हिप्पोलिटस (Hippolyt von Rom) ने सम्मानजनक उपाधि apostola apostolorum की नींव डाली, जिसका अर्थ है प्रेरितों की प्रेरिता; इसे धर्मवैज्ञानिक हराबानुस माउरुस (Hrabanus Maurus) ने और यहाँ तक कि थॉमस एक्विनास (Thomas von Aquin) ने भी अपनाया, जिसकी स्त्री-छवि की ओर मैं पहले ही संकेत कर चुका हूँ।

"यीशु ने कोई स्त्री-आन्दोलन नहीं, बल्कि मनुष्यों के लिए एक आन्दोलन स्थापित किया। फिर भी आश्चर्य नहीं कि स्त्रियाँ उसके विचारों के प्रति विशेष रूप से ग्रहणशील थीं। कभी-कभी शत्रुतापूर्ण परिवार के अकेलेपन में बन्दी स्त्रियाँ जानती थीं कि संसार कितना असुरक्षित, अन्यायपूर्ण और अकेला था।"[38]

यीशु में मुझे स्त्री की पदानुक्रमिक अधीनता का, या कलीसिया में किसी सार्वजनिक सेवा या अगुवाई की सेवा से उसके बहिष्कार का कोई भी संकेत नहीं मिलता। स्त्रियों के प्रति उसके व्यवहार में स्पष्ट हो जाता है कि रब्बियों की स्त्री-छवि सृष्टिकर्ता की योजना से कितनी दूर चली गई थी।

मसीहा ने हव्वा की बेटियों को अपनाया। वही, जिसने परमेश्वर को उसके सबसे गहरे स्वरूप में पूरी तरह प्रकट किया।

तू सदा भला है और मेरे साथ इतनी भलाई करता है! हे यहोवा, अपनी इच्छा पहचानने में मेरी सहायता कर!

भजन संहिता 119:68 (Gute Nachricht, जर्मन बाइबल अनुवाद)

38. Boulding, Elsie, 358, A View of Woman through Time, 1976



हे प्रभु, तेरा वचन सदा-सर्वदा बना रहता है, वह आकाश के समान अटल है।

भजन संहिता 119:89 (Neue Genfer Übersetzung NGÜ, जर्मन बाइबल अनुवाद)

4 पौलुस, स्त्रियों का मित्र

मैंने कई बार सुना है, और कभी-कभी स्वयं भी सोचा है, कि यीशु और पौलुस एक ही बात नहीं समझते और नहीं कहते। मानो उन्होंने एक-दूसरे का खण्डन किया हो। यदि कोई इसे ऐसे ही देखना चाहे, तो वह कारण गढ़ सकेगा। मेरा मानना है कि पौलुस यीशु के पदचिह्नों पर चल रहा है, स्त्रियों के विषय में भी। उनकी गरिमा, उनकी भक्ति और उनकी निष्ठा के विषय में। सचमुच पौलुस ही है, जो अपनी पत्रियों के द्वारा कलीसिया में स्त्री की छवि को यीशु से भी अधिक ढालता है। पर जो उसे ग़लत समझता है, वह उसे यीशु के विरोध में खड़ा कर देगा।

पौलुस स्वयं अपनी पत्रियों के कुछ अंशों में इसका कारण देता है कि बहुत-से लोगों के लिए वह इतिहास में स्त्रियों के शत्रु के रूप में दर्ज हो गया। पर यह धारणा बदल रही है। और इसका कारण यह है कि शायद हम उन अंशों को अलग ढंग से समझ सकते हैं और हमें समझना भी चाहिए। इस पर आगे और।

यद्यपि वह फ़रीसी परम्परा से आया था, जिसकी स्त्री-छवि यूनानी चिन्तन के प्रभाव में बहुत आदरपूर्ण नहीं थी, फिर भी वह उससे पूरी तरह स्वतन्त्र हो गया।[39] इस पुस्तक में एक और स्थान पर मैं यह अनुमान प्रकट करता हूँ कि दमिश्क के मार्ग पर मसीह से मिलने के तुरन्त बाद अरब में बिताए तीन वर्ष एक कठिन पाठशाला थे, ताकि वह फ़रीसी संस्कारों के इस सारे बोझ से छुटकारा पा सके। क्योंकि तलमुदी स्त्री-छवियाँ, जिन्हें यीशु पहले ही तोड़ चुका था, परमेश्वर के राज्य में कोई स्थान नहीं रखतीं।

अथक सेवक पौलुस का काम बहुत-सी स्त्रियों से घिरा और उनसे जुड़ा हुआ था। वे उसके मिशन में सम्मिलित थीं और एक ज़ंजीर की कड़ियों की तरह अनिवार्य सहकर्मी थीं। मुझे डर है कि कुछ पुरुषों ने यह नहीं पहचाना कि परमेश्वर ने अपने राज्य में स्त्रियों के द्वारा कितने बड़े काम और फल उत्पन्न किए हैं। सब शताब्दियों में, विशेषकर 18वीं और 19वीं शताब्दी में। जहाँ परमेश्वर के लिए मानो बिलकुल एक-सा था कि स्त्रियों को सार्वजनिक रूप से शिक्षा देने और अगुवाई करने की अनुमति है या नहीं। आप इसे जैसे चाहें घुमा-फिराकर देख लें: समस्याएँ तब हुईं, जब "सृष्टि के स्वामियों" ने पवित्रशास्त्र की अपनी पुरुष-प्रधान व्याख्या पर ज़ोर दिया और स्त्रियों की सेवा के लिए परमेश्वर की युक्ति को मानो निष्फल कर दिया (लूका 7:30)।

इस अध्याय में मैं कुछ उदाहरण देता हूँ कि अविवाहित पौलुस अपनी पत्रियों में स्त्रियों का नाम लेकर कैसे उल्लेख करता है। अभी बात पुरुष और स्त्री होने के मूल सिद्धान्तों या धर्मसिद्धान्त की नहीं है; उस पर मैं बाद में आऊँगा। बात उन वास्तविक स्त्रियों की है, जिनसे पौलुस का वास्ता था। "यदि हम उन स्त्रियों की संख्या को देखें, जो पौलुस के साथ साझी सेवा में जुड़ी थीं, तो ऐसा लगता है कि स्त्रियों के लिए सुसमाचार के प्रचार में और नई कलीसियाओं में होनेवाली सेवाओं में सक्रिय रूप से लगे रहना सामान्य बात थी। मूल रूप से पौलुस स्त्री और पुरुष सहकर्मियों का वर्णन करने के लिए एक ही भाषा का प्रयोग करता है"।[40]

39. यह धारणा भी है कि शिक्षक गमलीएल (Gamaliel) की स्त्री-छवि उसके सहकर्मियों की तुलना में अधिक सकारात्मक थी और वह वैसी ही शिक्षा देता था, और पौलुस ने भी इसे अपनाया।
40. Tucker, Liefeld, 436, Kuen, Alfred, Die Frau in der Gemeinde, 1998 में उद्धृत

इस सम्बन्ध में रोमियों की पत्री के 16वें अध्याय की नमस्कार-सूची प्रसिद्ध है, जहाँ स्त्रियों का उल्लेख केवल नाम से ही नहीं, बल्कि उनकी सेवा के गुणों के साथ होता है। जो लोग स्त्रियों को सार्वजनिक अगुवाई के पदों से बाहर रखने का समर्थन करते हैं, वे इन पाठों को मुझसे अलग ढंग से पढ़ते हैं। आप स्वयं निर्णय कीजिए कि इसका अर्थ क्या हो सकता है। सृष्टि के वृत्तान्त से आरम्भ करके, और इस पुस्तक के आगे के अध्यायों में विस्तार से समझाया गया, कलीसिया की सार्वजनिक सेवा में भी लिंगों की समानता का मेरा पठन न केवल सम्भव है, बल्कि कुछ मामलों में स्पष्ट है।

4.1 लुदिया

पहली यूरोपीय मसीही एक स्त्री है: रोमी उपनिवेश फिलिप्पी में बैंजनी कपड़े बेचनेवाली लुदिया। वह अपना घर पौलुस, उसके साथियों और यूरोप की पहली मसीही कलीसिया के लिए उपलब्ध कराती है। वह पौलुस की शिक्षाओं को केवल ग्रहण करनेवाली नहीं, बल्कि पौलुस के साथ बातचीत करनेवाली भी है। वह घर की अकेली स्वामिनी है। वह पौलुस और उसके साथी सीलास से आग्रह करती है कि वे उसके यहाँ ठहरें:

> [प्रेरितों के काम 16:14-15] और लुदिया नाम की एक स्त्री, जो थुआतीरा नगर की बैंजनी कपड़े बेचनेवाली और परमेश्वर की भक्त थी, सुन रही थी; प्रभु ने उसका मन खोला, कि वह पौलुस की बातों पर चित्त लगाए। जब उसने और उसके घराने ने बपतिस्मा लिया, तो उसने विनती की और कहा: यदि तुम मुझे प्रभु की विश्वासिनी समझते हो, तो मेरे घर में आकर रहो। और वह हमें मनाकर ले गई।
>
> [प्रेरितों के काम 16:40, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] जब वे बन्दीगृह से निकले, तो लुदिया के यहाँ गए; और जब उन्होंने भाइयों को (या: उन भाई-बहनों को, जो लुदिया के यहाँ इकट्ठे थे) देखा, तो उन्हें प्रोत्साहित किया और चले गए।

“इससे संकेत मिलता है कि उसका घर फिर जल्दी ही एक घरेलू कलीसिया का केन्द्र बन गया। कलीसियाएँ घरों में इकट्ठी होती थीं। और केवल लुदिया ही नहीं, बल्कि दूसरी स्त्रियाँ भी ऐसी दिखाई देती हैं, जिन्होंने कलीसियाओं के लिए अपने घर उपलब्ध कराए। और इसमें इन लोगों की एक स्वाभाविक अगुवाई की भूमिका भी निहित है – कलीसिया में मेज़बान स्त्रियों और मेज़बान पुरुषों के रूप में अगुवाई की भूमिका, जिन्होंने फिर सम्भवतः उन कलीसियाओं की अगुवाई भी की हो, और आराधना-सभाओं की अध्यक्षता भी की हो।”[41]

4.2 फीबे

> [रोमियों 16:1-2, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] मैं तुम से फीबे की, जो हमारी बहन है, सिफ़ारिश करता हूँ, जो किंख्रिया की सभा की सेवा करनेवाली भी है, ताकि तुम उसे प्रभु में, जैसा पवित्र

41. Sabine Bieberstein, आइषश्टेट (Eichstätt) में नए नियम की विद्वान, डॉयचलैंडफ़ुंक (Deutschlandfunk) पर साक्षात्कार, 2013

> लोगों को उचित है, ग्रहण करो, और जिस किसी बात में उसे तुम्हारी आवश्यकता हो, उसकी सहायता करो; क्योंकि वह भी बहुतों की सहारा देनेवाली (यूनानी: prostatis) रही है, और मेरी भी।

नमस्कार का यह वचन, जो फीबे से आरम्भ होता है, उसे उस व्यक्ति के रूप में दिखाता है जो रोमियों के नाम पत्री को कुरिन्थुस से रोमी साम्राज्य की राजधानी तक ले गई। वहाँ उसने सम्भवतः उसे कलीसिया में (या घरेलू कलीसियाओं में) पढ़कर सुनाया और प्रश्नों के उत्तर में उसे समझाया। वह कुरिन्थुस के एक बन्दरगाही उपनगर, किंख्रिया, की कलीसिया की सेविका (डीकन) है। पौलुस से उसे एक अत्यन्त उत्तरदायित्वपूर्ण काम मिलता है, जो डाकिये की सेवा से कहीं बढ़कर है।

“मैं इस पर ज़ोर देना चाहता हूँ कि रोमियों की पत्री में यह अवलोकन सेवा में स्त्रियों के विषय में चर्चा का अन्त नहीं है और न हो सकता है। दूसरे पाठ, सन्दर्भ और व्याख्याएँ हैं, जिन पर हमें विचार करना होगा। पर मैं इस ओर ध्यान दिलाता हूँ कि पौलुस को स्पष्टतः इसमें कोई समस्या नहीं दिखती थी कि कलीसियाओं में स्त्रियाँ एक तरह की वक्ता की भूमिका निभाएँ। यदि उसे सचमुच आपत्ति होती, तो फीबे को रोम भेजना सचमुच बहुत, बहुत विचित्र होता। मेरा निष्कर्ष यह है कि सेविका (डीकन) फीबे के लिए पौलुस की प्रशंसा, उसके उपकारकर्ता (कलीसिया की संरक्षिका) के रूप में उसका स्थान, और पत्री ले जानेवाली और रोम की कलीसियाओं में उसकी प्रतिनिधि के रूप में उसकी भूमिका इस ओर संकेत करते हैं कि स्त्रियाँ कलीसिया के शिक्षा-जीवन का अंग थीं, और पौलुस ने उन्हें स्पष्ट रूप से प्रोत्साहित किया”।[42]

“यह माना जा सकता है कि फीबे बस किंख्रिया की घरेलू कलीसिया की केन्द्रीय स्त्री थी, जिसने सम्भवतः अपना घर उपलब्ध कराया, जिसने प्रभु-भोज के उत्सव, प्रभु भोज, का ख़र्च उठाया। यह कि फीबे इन सब के लिए उत्तरदायी थी, क्योंकि वह इस कलीसिया की वकील या संरक्षिका के रूप में भी काम करती थी – यह सब रोमियों 16 के आधार पर कहा जा सकता है।”[43]

पौलुस उसे prostatis कहता है, जिसका अनुवाद एल्बरफेल्डर (Elberfelder, जर्मन बाइबल अनुवाद) में “सहारा देनेवाली” (Beistand) किया गया है। पर यह शब्द, जो नए नियम में केवल एक बार इसी स्थान पर आता है, अध्यक्षता करना (vorstehen) का अर्थ भी देता है। “हम उचित रूप से मान सकते हैं कि पौलुस, एक हेलेनिस्टिक यहूदी, जो प्रवास (डायस्पोरा) में बड़ा हुआ, prostates की यूनानी अवधारणा से भली-भाँति परिचित था – नगर के प्रथम व्यक्ति, स्वामी, रक्षक या अध्यक्षता करनेवाले पदाधिकारी के रूप में। इसका अर्थ यह होगा कि जब रोम में मसीही अगुवों ने फीबे का स्वागत किया, तो वे जानते थे कि वह जहाँ से आई थी, वहाँ एक मसीही अगुवा थी।”

रोमियों 12:8 के अनुसार अध्यक्षता करना मसीह की देह में अनुग्रह का एक वरदान है, और इसलिए निश्चित रूप से केवल पुरुषों का विषय नहीं है। स्त्रियों के पास यह वरदान ठीक पुरुषों जैसा ही है। अध्यक्षता करना प्राचीन के काम का अंग है (1 थिस्सलुनीकियों 5:12; 1 तीमुथियुस 5:17/3:4, 5, 12)। पौलुस के इन वचनों को देखते हुए यह भी विचित्र नहीं लगना चाहिए कि स्त्रियाँ प्राचीना या अध्यक्षा हों। कलीसिया की अध्यक्षता और उसकी देखभाल की सेवा, और उसके साथ जुड़े वचन और शिक्षा में परिश्रम (1 तीमुथियुस

42. Bird, 37
43. Heininger, Bernhard, वुर्ज़बुर्ग (Würzburg), वही

5:17), कोई कभी लगन से नहीं कर सकेगा, यदि उसे सभा में चुप रहना पड़े या उसे सार्वजनिक रूप से बोलने या अगुवाई करने की अनुमति न हो।

“वह एक prostatis है, एक अध्यक्षा; उसे diakonos भी कहा गया है, और यहीं से बात शुरू होती है: क्या वह एक सेवा करनेवाली है, क्या वह कलीसिया की एक सहायिका है, इसका अनुवाद कैसे किया जाए?” इस पर व्याख्या-विशेषज्ञ आज तक विवाद करते हैं। नए नियम का आइनहाइट्स-अनुवाद (Einheitsübersetzung, जर्मन बाइबल अनुवाद) सीधे “किंख्रिया की कलीसिया की सेवा करनेवाली” कहता है। “... इस शब्द की व्याख्या या इसके प्रभाव का इतिहास ऐसा रहा है कि जब पौलुस जैसा कोई पुरुष अपने को diakonos कहता है, तो वह वचन का सेवक है, अर्थात् एक प्रेरित, एक सीधा, स्वतन्त्र पुरुष, जो बस वचन की सेवा करता है। पर जब किसी स्त्री को ऐसा कहा जाता है, तो वह कलीसिया की सहायिका है, इस अर्थ में कि: वह बस सहायता करती है।”[44] फीबे उस बड़े घेरे की सदस्य है, जो पौलुस के साथ मिलकर मसीह के सन्देश को फैलाने में काम करते हैं। पौलुस उसे बहन कहता है, जो उसके व्यक्तिगत आदर और दोनों के सम्बन्ध को दर्शाता है। पत्री ले जानेवाली के रूप में फीबे रोम की कलीसिया के प्रश्नों के लिए पहली सम्पर्क-व्यक्ति थी। वह पौलुस के विचारों से परिचित थी, और इसलिए उसे इस पाठ की पहली व्याख्याकार माना जा सकता है।

पौलुस ने फीबे को, एक स्त्री को, मसीही धर्म का शायद सबसे महत्वपूर्ण दस्तावेज़ सौंपा। यह केवल एक संकेत नहीं, यह इसका प्रमाण है कि परमेश्वर के राज्य में सेवा और भूमिका के विषय में वह लिंगों के बीच कोई भेद नहीं करता था।

4.3 प्रिस्का

> [रोमियों 16:3-5, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] प्रिस्का और अक्विला को नमस्कार कहो, जो मसीह यीशु में मेरे सहकर्मी हैं (जिन्होंने मेरे प्राण के लिए अपनी गर्दन दाँव पर लगा दी, और जिनका धन्यवाद केवल मैं ही नहीं, बल्कि अन्यजातियों की सारी सभाएँ भी करती हैं), और उस सभा को भी, जो उनके घर में है।

सबसे अधिक बार उल्लिखित दम्पति प्रिस्का और अक्विला शायद अपने मिशन-कार्य में पौलुस के सबसे लम्बे समय के और सबसे घनिष्ठ सहकर्मी हैं। वे यहूदी मसीही थे। यद्यपि दम्पतियों में सदा पति का नाम पहले लिया जाता था, फिर भी नया नियम प्रिस्का, पत्नी, का नाम चार बार (छः उल्लेखों में से) पहले लेता है। क्यों? क्योंकि वह सेवा में आगे चलती और अगुवाई करती थी। शायद इसलिए कि वह अपने पति से अधिक वरदान-सम्पन्न थी। फिर भी दोनों टीम के साथियों के रूप में समान मूल्य और समान दर्जे के साथ एकता में मिलकर काम करते थे। हर एक दूसरे की शक्तियाँ और कमज़ोरियाँ जानता था। एक स्त्री के रूप में प्रिस्का रणनीतिक रूप से भी महत्वपूर्ण थी, क्योंकि स्त्रियों तक सुसमाचार अधिकतर स्त्रियों के द्वारा पहुँचता था, पुरुषों के द्वारा नहीं। दोनों ने, प्रिस्का आगे रहकर, अपुल्लोस को शिक्षा दी। स्वयं पौलुस से शिक्षा पाकर, साथ

44. Sutter Rehmann, Luzia, बाज़ल (Basel)

मिलकर तम्बू बनाते हुए अनेक घण्टों में प्रश्नों और उत्तरों के द्वारा प्रशिक्षित होकर, दोनों दूसरों को सिखाने के लिए तैयार थे। यहाँ विशेष रूप से प्रिस्का, एक स्त्री, का उल्लेख करना ज़रूरी है। उसका पति उसके पीछे खड़ा था, दूसरी पंक्ति में, पर इसके कारण कोई पदानुक्रम नहीं था।

4.4 यूनिया

> [रोमियों 16:7, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] अन्द्रुनीकुस (Andronikus) और यूनिया (Junia) को नमस्कार कहो, जो मेरे कुटुम्बी हैं और मेरे साथ बन्दी रहे, जो प्रेरितों में विशिष्ट हैं, और जो मुझसे पहले मसीह में थे।

पौलुस एक और मिशनरी दम्पति को सम्मान देता है। नए नियम के सबसे आरम्भिक व्याख्याकार, कलीसियाई पिता, यूनिया की चर्चा बड़े आदर से करते हैं। यूहन्ना क्रिसोस्तम (Johannes Chrysostomos) (344-407 ई.) यूनिया के बारे में लिखता है: "प्रेरित होना एक बड़ी बात है। पर प्रेरितों में प्रसिद्ध होना – सोचिए, यह कितनी बड़ी प्रशंसा है। इस स्त्री की बुद्धि कितनी बड़ी रही होगी कि वह प्रेरित की उपाधि के योग्य समझी गई।"

पर कुछ अनुवादों में आज तक यूनिया के स्थान पर एक दूसरा नाम पढ़ने को मिलता है: यूनियास (Junias) – एक पुरुष। पर यूनियास नाम प्रमाणित रूप से पहली बार 13वीं शताब्दी में दिखाई देता है – रोम के एजिडियस (Ägidius von Rom) के यहाँ, जो एक ऑगस्टिनी संन्यासी और कलीसिया के शिक्षक थॉमस एक्विनास (Thomas von Aquin) का शिष्य था। तो यूनिया यूनियास क्यों बन गई? क्योंकि बहुत-से मसीहियों की विश्व-दृष्टि में कोई प्रेरिता हो ही नहीं सकती, या होनी ही नहीं चाहिए।

शोध में अब यह मत स्थापित हो चुका है कि यूनिया, अर्थात् स्त्रीलिंग रूप, ही मूल रूप से पौलुस का लिखा हुआ होना चाहिए। "पिछली शताब्दी के मध्य में यह पाया गया कि प्राचीन काल में पुरुष-नाम यूनियास लगभग है ही नहीं, अर्थात् प्रमाणित नहीं है, जबकि स्त्री-नाम यूनिया बहुत बार प्रमाणित है। यूनिया को यूनियास बना देनेवाली बात को शायद केवल पद की एक ग़लत समझ के आधार पर ही समझाया जा सकता है। रोमियों 16:7 में अन्द्रुनीकुस और यूनिया को प्रेरितों में उत्कृष्ट कहा गया है, और यूनिया को प्रेरितों में गिनना एक कठिनाई रही है या एक कठिनाई है।"[45]

एक प्रेरिता यूनिया के पक्ष और विपक्ष में तर्क और प्रकाशन अनगिनत हैं। यदि वह प्रेरिता थी, तो बारहों के या किसी पौलुस के अर्थ में नहीं, बल्कि एक रणनीतिक और प्रभावशाली मिशनरी के रूप में। और यदि वह प्रेरिता न भी रही हो, तब भी उसका सम्मान बहुत बड़ा रहा होगा। प्राचीन संस्कृति में यह सामान्य नहीं था। यह दिखाता है कि सुसमाचार का चंगा करनेवाला प्रभाव लिंगों के प्रश्न पर भी कैसे फैल गया। पर यह भी, कि पुरुष-प्रधान कलीसियाई जगत को इस विषय में कितनी कठिनाई होती है।

45. Heininger, Bernhard, वही

"यह सम्भव है कि अन्द्रुनीकुस और यूनिया, शायद एक दम्पति, उस अर्थ में प्रेरित थे जिसमें कोई कलीसिया किसी को मिशनरी की तरह भेजती है, जैसे फिलिप्पियों 2:25 में इपफ्रुदीतुस और 2 कुरिन्थियों 8:23 में तीतुस। पर ऐसे लोगों को सामान्यतः वह कलीसिया, जहाँ से वे आते हैं, 'कलीसियाओं के प्रेरित' या 'तुम्हारा प्रेरित' कहती है, या फीबे की तरह 'किंख्रिया की कलीसिया की सेवक (सेविका/डीकन)' भी। दूसरी ओर, अन्द्रुनीकुस और यूनिया इस अर्थ में प्रेरित रहे हो सकते हैं कि वे यीशु के जी उठने के गवाह थे, और उसी समय उस सेवा के लिए नियुक्त किए गए जो वे अब फ़िलिस्तीन के बाहर कर रहे थे (1 कुरिन्थियों 15:6-7)। इसका समर्थन इस तथ्य से होता है कि पौलुस कहता है कि वे 'मुझसे पहले मसीह में थे', अर्थात् वे लगभग 30-32 ई. में फ़िलिस्तीन में मसीह में आए। रोमियों की पत्री में 'प्रेरित' शब्द के बाकी उल्लेख केवल पौलुस की अन्यजातियों के पास जाने की बुलाहट का वर्णन करते हैं (रोमियों 1:1; 11:13)। एल्डन एप (Eldon Epp) ने हाल ही में कहा है: 'यह एक तथ्य बना रहता है कि मसीही धर्म की सबसे पहली पीढ़ी में एक प्रेरिता थी, जिसे स्पष्ट रूप से यही कहा गया, और आज के मसीहियों को – साधारण विश्वासियों और पादरियों दोनों को – इसका सामना करना होगा (और अन्ततः वे करेंगे भी)।'"[46]

4.5 मरियम, त्रूफैना और त्रूफोसा, पिरसिस

[रोमियों 16:6] मरियम को नमस्कार कहो, जिसने तुम्हारे लिए बहुत परिश्रम किया।

[रोमियों 16:12] त्रूफैना और त्रूफोसा को नमस्कार कहो, जो प्रभु में परिश्रम करती हैं। प्रिय पिरसिस को नमस्कार कहो, जिसने प्रभु में बहुत परिश्रम किया।

जब पौलुस परिश्रम और सेवा की बात करता है, तो मन में क्या आता है? पौलुस अपनी पूरी सेवा को, जो कुछ उसने किया, परिश्रम कहकर समेटता है (जैसे 1 कुरिन्थियों 15:10; 16:10; गलातियों 4:11; 1 थिस्सलुनीकियों 3:5; 5:12); सुसमाचार सुनाना, शिक्षा देना, समझाना; सब ऐसी सेवाएँ, जो अक्सर सार्वजनिक रूप से होती थीं और वचन की सेवाएँ थीं। हमारे पास क्या कारण है कि हम इन स्त्रियों की सेवा को पौलुस की सेवा से अलग समझें? वे साहसी स्त्रियाँ थीं, जिन्होंने अपने परिवेश में, अपनी व्यक्तिगत परिस्थिति में मसीह की सेवा की। केवल चूल्हे के पास या घर में नहीं, बल्कि घरेलू कलीसिया में भी। कलीसिया-भवन तब थे ही नहीं। पर निजी घर में या खुले आकाश के नीचे। मसीही सार्वजनिक स्थानों पर, कार्यशालाओं में या सरायों में भी इकट्ठे होते थे। या जैसे लुदिया के साथ नदी के किनारे, बपतिस्मों के समय भी, ऐसी स्त्रियाँ दृढ़ता से खड़ी रहती थीं, ठीक प्रभु में अपने भाइयों की तरह। पौलुस जिसकी प्रशंसा करता है, वह परमेश्वर के राज्य के लिए सार्वजनिक रूप से दिखाई और सुनाई देनेवाला परिश्रम है।

कुल मिलाकर पौलुस रोमियों 16 में 10 स्त्रियों का उल्लेख करता है, यदि हम किंख्रिया की फीबे को भी गिनें। यदि हम पौलुस की दूसरी पत्रियों की स्त्रियों को भी सम्मिलित करें, तो जिन स्त्रियों का वह उल्लेख करता है, उनकी संख्या 18 हो जाती है। पौलुस स्त्रियों की सेवा को महत्व देता था, और उनमें से बहुतों को वह सेवा की साथिनें मानता था। उसने उन्हें कभी पास्टर या प्राचीना नहीं कहा, पर उसने अपने पुरुष सेवा-साथियों को भी

46. Bird, Michael, वही

कभी पास्टर या प्राचीन नहीं कहा। पौलुस ने अपने सहकर्मियों के लिए कभी ऐसे शब्दों का प्रयोग नहीं किया जो शक्ति, अधिकार या प्रतिष्ठा का संकेत देते हों। वह समझता था कि वे उसके भाई और बहनें थे, और कि वे, ठीक उसी की तरह, यीशु मसीह के भेजे हुए थे। सेवा और सहकार्य की उसकी यही समझ थी।

4.6 यूओदिया और सुन्तुखे

> [फिलिप्पियों 4:2-3] मैं यूओदिया को समझाता हूँ, और सुन्तुखे को समझाता हूँ, कि वे प्रभु में एक मन रहें। हाँ, हे सच्चे सहकर्मी, मैं तुझ से भी विनती करता हूँ कि तू उनकी सहायता कर, क्योंकि उन्होंने सुसमाचार में मेरे साथ परिश्रम (संघर्ष) किया है।

सुसमाचार में साथ मिलकर संघर्ष करने का इसके सिवा कोई अर्थ नहीं हो सकता कि उन्होंने उसका प्रचार भी किया। और वह भी इस तरह कि उन्हें सार्वजनिक रूप से विरोध का भी सामना करना पड़ा।

इन दोनों स्त्रियों में मतभेद थे। इसका सीधा प्रभाव संगति पर पड़ा। यह कोई गौण मोर्चा नहीं था, बल्कि इसने कलीसिया के हृदय को छुआ। इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उनके पास अगुवाई या संचालन के कुछ काम थे। पौलुस उनका नाम क्लेमेंस और दूसरे सहकर्मियों के साथ एक ही साँस में लेता है। एक टीम की तरह, जिसमें दो अलग-अलग खिलाड़ियों को समझाना पड़ा कि वे टीम-भावना न छोड़ें।

शायद वे उन अध्यक्षों (episkopos) और सेवकों (diakonos) में से थीं, जिन्हें पौलुस फिलिप्पियों के नाम पत्री के आरम्भ में नमस्कार कहता और सम्बोधित करता है। यह पठन कोई समस्या नहीं है, यदि किसी का दृढ़ विश्वास है कि पुरुष के प्रति स्त्री की कोई पदानुक्रमिक अधीनता नहीं है, और कि कलीसिया में स्त्रियाँ और पुरुष समान दर्जे पर मिलकर काम करते हैं।

4.7 खलोए

> [1 कुरिन्थियों 1:11] क्योंकि हे मेरे भाइयो, खलोए के घराने के लोगों ने मुझे तुम्हारे विषय में बताया है कि तुम में झगड़े हो रहे हैं।

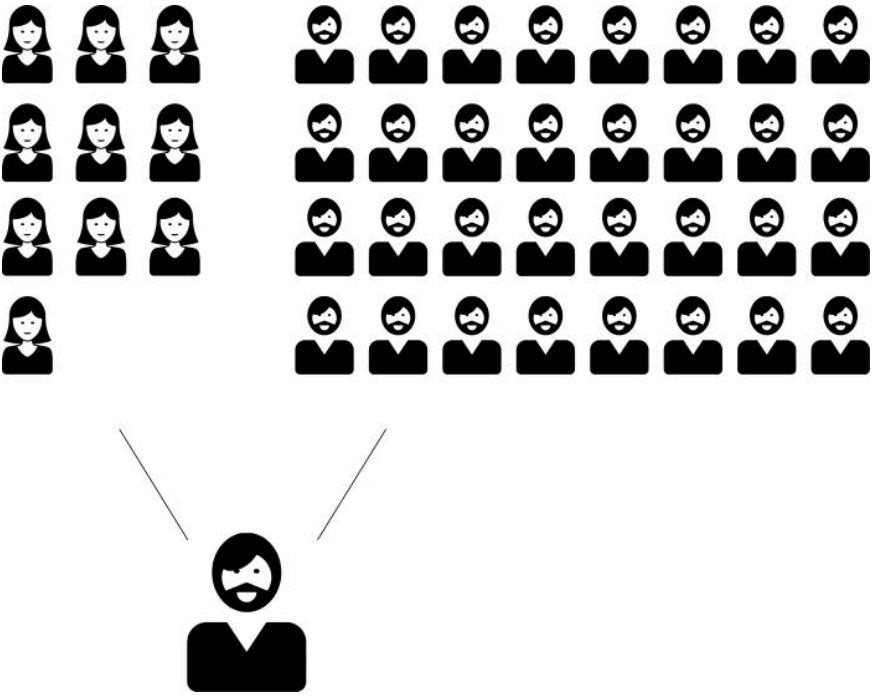
शायद यह कहा जा सकता है कि पौलुस कुरिन्थियों की पहली पत्री के आरम्भ में ही स्पष्ट रूप से लिखता है: उसने खलोए के लोगों से सुना है कि कुरिन्थुस में कैसी स्थिति है। क्योंकि इसका अर्थ है: यह खलोए कलीसिया में एक महत्वपूर्ण भूमिका, एक सार्वजनिक भूमिका, निभाती है। यह पूरी तरह सम्भव है कि वह एक अगुवा थी और उसी ने पौलुस के पास प्रतिनिधि-मण्डल भेजा था।

जो भी हो, वह एक ऐसी स्त्री थी, जो पौलुस की केवल एक अच्छी परिचित ही नहीं थी, बल्कि जिसका वह इसलिए उल्लेख करता है कि कुरिन्थियों के बीच उसका विशेष महत्व था। पौलुस के यहाँ ऐसा महत्व धन से, लिंग से या अच्छे सम्पर्कों से नहीं, बल्कि विश्वासियों की सेवा से मिलता है।

4.8 नुमफा

> [कुलुस्सियों 4:15, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] लौदीकिया के भाइयों को, और नुमफा (Nympha) को, और उस सभा को जो उसके घर में है, नमस्कार कहो।

यह स्वाभाविक है कि किसी ऐसे घर की मेज़बान स्त्रियाँ, जिसमें एक घरेलू कलीसिया समा सकती थी, अगुवाई के काम भी करती थीं। यह अनिवार्य नहीं, पर बहुत सम्भव है। कुल मिलाकर यह उल्लेखनीय है कि एक स्त्री विश्वास के भाई-बहनों को आमन्त्रित करती थी। मेज़बान के रूप में वह विधवा रही हो सकती है। यदि वह विवाहित थी और उसका पति भी विश्वासी था, तो यह और भी ध्यान देने योग्य है कि उसका, न कि पति का, नाम मेज़बान के रूप में लिया गया है। कुछ वैसे ही, जैसे प्रिस्का और अक्विला के क्रम में। प्राचीन काल के पारिवारिक घर में अक्सर स्त्री ही प्रबन्धक होती थी, जो यद्यपि अपने पति के अधीन थी, पर वहाँ बड़ी स्वतन्त्रता से काम करती थी। उल्लेखनीय है कि कुलुस्सियों में तथाकथित घर-परिवार के नियम (Haustafel), मानो पितृसत्तात्मक परिवार की घरेलू व्यवस्था, का भी उल्लेख है: [कुलुस्सियों 3:18] “हे पत्नियो, जैसा प्रभु में उचित है, वैसा ही अपने-अपने पति के अधीन रहो।” फिर भी नुमफा ही वह है, जो आमन्त्रित करती है।



नए नियम में पौलुस 39 लोगों का नाम लेकर उन्हें अपने सहकर्मी बताता है। इनमें से 10 स्त्रियाँ हैं। वह सब के बारे में एक ही ढंग से बात करता है, बिना कोई भेद किए। प्रसिद्ध धर्मवैज्ञानिक एफ़. एफ़. ब्रूस (F. F. Bruce), ब्रदरन आंदोलन (ओपन ब्रदरन) से आए, संसार भर में आदरणीय धर्मवैज्ञानिक, कहते हैं: "(पौलुस) अपने सहकर्मियों में पुरुषों और स्त्रियों के बीच कोई भेद करता नहीं दिखता। पुरुष और स्त्रियाँ दोनों सुसमाचार की सेवा में सहकार्य के लिए प्रशंसा पाते हैं, बिना इस संकेत के कि स्थिति या कार्य के विषय में एक और दूसरे के बीच कोई छिपा हुआ भेद है।" शायद और भी स्त्रियों का उल्लेख किया जा सकता था, और उनके नामों और गुणों की अधिक विस्तार से जाँच की जा सकती थी। पर अब यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि पौलुस अपने समय के लिए स्त्रियों का एक क्रान्तिकारी मित्र था, जिसने पदानुक्रम की दीवारें गिरा दीं। ऐसा व्यक्ति, जिसने यीशु की पाठशाला में शिक्षा पाई थी, यद्यपि उसने पार्थिव यीशु को व्यक्तिगत रूप से नहीं देखा था। पर उसने उसके बारे में जितना हो सके उतना जानने के बहुत-से अवसरों का उपयोग किया। पतरस से और अपने सहकर्मी लूका से उसने यीशु के बारे में बहुत कुछ जाना होगा। इसमें स्त्रियों के प्रति उसका व्यवहार भी सम्मिलित था। यदि उसकी यात्रा-टीम में, जहाँ तक हम जानते हैं, केवल पुरुष सहकर्मी थे, तो भी, जैसा ये पाठ दिखाते हैं, उसने ऐसे भेद नहीं किए जो स्त्रियों को दूसरी पंक्ति में खड़ा कर देते। उसके लिए निर्णायक यह था कि वे कितनी विश्वासयोग्य, कितनी वरदान-सम्पन्न और सेवा के लिए कितनी तत्पर थीं। उसके लिए लिंग का कोई महत्व नहीं था!

4.9 पौलुस, दूध पिलानेवाली माता

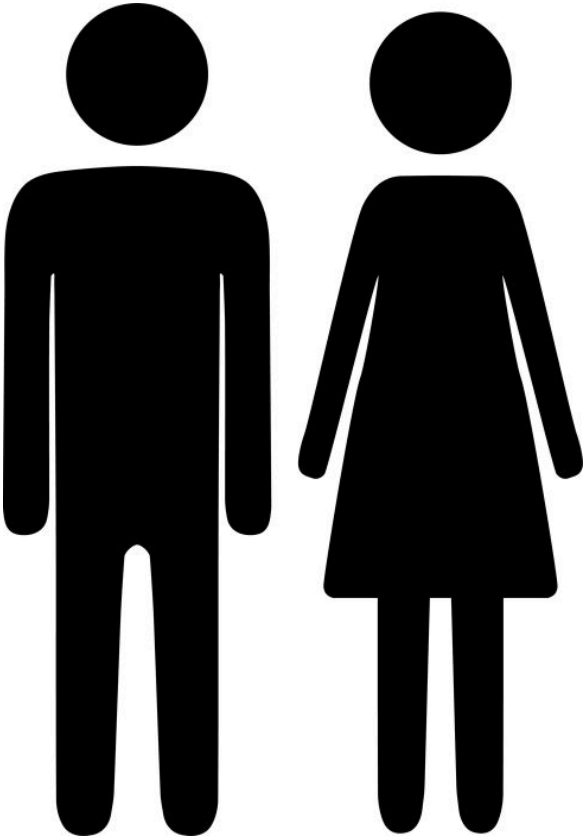
पौलुस एक चलन-निर्माता था। अपने समय के चलन के विरुद्ध। यूनानी-रोमी पुरुषत्व का आदर्श, जो बड़ी लगन से समाज की पदानुक्रमिक व्यवस्था को सुरक्षित रखता, उसकी रक्षा करता और उसे जीता है, पौलुस के यहाँ कोई सकारात्मक गूँज नहीं पाता। कलीसिया के लिए यह पितृसत्तात्मक और शक्ति-केन्द्रित व्यवहार, जो कमज़ोरों को कमज़ोर ही रहने देना चाहता है और अपनी शक्ति की स्थिति को दृढ़ करता है, एक बड़ा ख़तरा है। यह व्यवहार कुरिन्थुस के लगभग सब तनावों और फूटों के पीछे छिपा था। शक्ति के प्रश्न आज भी पुरुषों के बीच अपनी भूमिका निभाते हैं, और अक्सर वे विषयवस्तु से ऊपर रखे जाते हैं। यहाँ केवल स्त्रियों की उपस्थिति ही, जैसे अगुवाई करनेवाले भाइयों या प्राचीनों की पत्नियों की, एक चंगा करनेवाला प्रभाव डाल सकती है।

पौलुस कई बार अपने को ऐसे व्यक्ति के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसका अनुकरण किया जाए, जैसे वह स्वयं मसीह का अनुकरण करनेवाला है (1 कुरिन्थियों 4:16; 11:1; फिलिप्पियों 3:17; 1 थिस्सलुनीकियों 1:6)। वह एक ऐसा पुरुष है, जो अच्छा बोल नहीं सकता, मसीह के लिए मूर्ख, एक स्त्री जो बच्चे को दूध पिलाती है, एक पिता जो अपने बच्चों पर लज्जा लाता है, और एक अविवाहित ब्रह्मचारी पुरुष (1 कुरिन्थियों 1-7)। ऐसा पुरुष उस समय के समाज में अनिवार्य रूप से एक निचला स्थान पाता, और परिणामस्वरूप उन संस्थाओं और पदों से बाहर रखा जाता, जो पुरुषों के लिए आरक्षित थे।

"पौलुस की दृष्टि में पितृसत्ता की संस्थाएँ वर्तमान युग के दमनकारी ढाँचे हैं और उस ढंग का प्रतिनिधित्व नहीं करतीं, जिसमें परमेश्वर के लोगों को जीना है। ... पुरुषों को मूर्ख होना है, प्रभुत्व जमानेवाले वक्ता नहीं; रोमी न्यायालयों में अपनी प्रतिष्ठा का लाभ नहीं उठाना, बल्कि झगड़े सुलझाने के लिए निचली प्रतिष्ठा के पुरुषों को नियुक्त करना; अपनी देह को अपनी पत्नियों के प्रति समर्पित करना, और कमज़ोरों के खान-पान की आदतों के अनुसार अपने को ढालना। ऐसी रीतियों का उद्देश्य उस दलबन्दी को रोकना है, जो कुरिन्थियों को टुकड़े-टुकड़े करने का ख़तरा बनी हुई थी, और यह उन व्यवहारों का अन्त करके होता है, जो उस प्रतिस्पर्धा और शक्ति और प्रतिष्ठा की उस होड़ को जन्म देते हैं, जो रोमी कुरिन्थुस में फैली हुई थी। पौलुस एक विशिष्ट, मसीह-समान पुरुष-पहचान रचता है, जिसके बारे में वह जानता है कि वह प्रतिष्ठा और शक्ति के उन खेलों की जड़ खोद देगी, जो नगरीय रोमी परिवेश में सामान्य थे। पौलुस का लक्ष्य विश्वासियों के समुदाय की एकता है। इस एकता तक पहुँचने के लिए पौलुस सीधे उन पदानुक्रमिक व्यवस्थाओं पर प्रश्न उठाता है, जो समुदाय के कुछ सदस्यों को दूसरों से ऊपर रखती हैं; वह समुदाय के उन सदस्यों को, जो ऐसी व्यवस्थाओं से लाभ उठा सकते थे, बुलाता है कि वे जान-बूझकर ऐसी पहचानें धारण करें जो उन्हें समुदाय के निचली प्रतिष्ठावाले सदस्यों के साथ एक कर दें। शक्ति और पुरुषत्व के सर्वव्यापी गठजोड़ के कारण पौलुस के लिए आवश्यक था कि वह उस प्रकार के पुरुषत्व को सम्बोधित करे, जिसके पीछे कुरिन्थुस के पुरुष भागते थे।"[47]

प्राचीन समाज में पुरुष की भूमिका के प्रश्न पर प्रसिद्ध ब्रिटिश लेखक टॉम हॉलैंड (Tom Holland) ये अवलोकन करते हैं: "(प्राचीन संसार की) यौन अर्थव्यवस्था स्वतन्त्र रोमी पुरुषों के इस निरपेक्ष अधिकार पर टिकी है कि वे जिसके साथ चाहें और जैसे चाहें, यौन सम्बन्ध बनाएँ।" आगे वे सत्ता में बैठे पुरुषों के सामान्य व्यवहार के विषय में कहते हैं: "लगभग हर दृष्टि से यह एक ऐसा संसार है, जो हमारी सोच के लिए अकथनीय रूप से क्रूर है"। हॉलैंड की दृष्टि में इसी संसार में पौलुस की पत्रियाँ और उसका चिन्तन बड़े प्रभाव के साथ आते हैं और विशेषकर पुरुषों के प्रभुत्ववाले संसार में खलबली मचा देते हैं।

47. Being Subordinate Men: Paul's Rhetoric of Gender and Power in 1 Corinthians, Brian J. Robinson, Lanham, 2019, 214



5 विवाह में पुरुष और स्त्री

सृष्टि के वृत्तान्त से मैंने यह निष्कर्ष निकाला है कि पुरुष के प्रति स्त्री की कोई पदानुक्रमिक अधीनता नहीं है। पुराने नियम में इसकी माँग नहीं की गई है। पर जब हम प्रेरितों की पत्रियाँ पढ़ते हैं, तो एक से अधिक बार कहा गया है कि स्त्री पुरुष के अधीन रहे। इससे – चाहे यह कुछ हज़ार वर्ष बाद ही क्यों न हो – फिर भी एक पदानुक्रम पहचाना जा सकता है, जिसे अब विवाह में जिया जाना है। इन निर्देशों को कैसे समझा जाए? इसके लिए पहली शताब्दी के वैवाहिक और पारिवारिक जीवन पर एक दृष्टि डालना आवश्यक है। पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध के विषय में इतिहास से जो कुछ मैंने पहले बताया और उद्धृत किया है, उसमें से बहुत कुछ यहाँ फिर से जीवन्त रूप से याद दिलाया जाएगा।

5.1 प्राचीन घराना और उसके नियम

Oikos (यूनानी: οἶκος) प्राचीन यूनान और रोम में घर और आर्थिक जीवन का वह समुदाय था, जो जीवन का केन्द्र होता था। ओइकोस में परिवार के साथ-साथ नौकर-चाकर और दास, भूमि, इमारतें और सारी चल सम्पत्ति शामिल थी – रोमी विला के समान। परिवार का मुखिया स्वामी होता था, अर्थात् Kyrios (कुरियोस)। वह पितृसत्तात्मक ढंग से अपनी पत्नी और बच्चों पर शासन करता था, और अक्सर ओइकोस में रहने वाले वयस्क पुत्रों और उनकी पत्नियों पर भी।

घर जीवन का स्थान था और उस चीज़ का प्राचीन रूप, जिसे हम परिवार कहते हैं। एक या दो बच्चों वाले एकल परिवार के रूप में नहीं, बल्कि संयुक्त परिवार के रूप में, जिसमें माता-पिता या सास-ससुर और अविवाहित परिजन भी होते थे। स्वाभाविक है कि किसी घराने का आकार उसकी आर्थिक क्षमता पर निर्भर करता था। अधिकांश लोग ग़रीब थे और जीविका की न्यूनतम सीमा पर या उससे नीचे जीते थे। तब भी उनकी सामाजिक पारिवारिक संरचना प्राचीन घराने वाली ही थी, चाहे वे मिट्टी की झोंपड़ियों में रहते हों।

प्राचीन घराना प्राचीन समाज की रीढ़ था। घराने की अध्यक्षता करना और उसे चलाना घर के स्वामी का काम था, अर्थात् paterfamilias का। घर (domus) – जिसे प्राचीन लेखकों ने समाज का बीज-कोश और छोटे रूप में नगर कहा – साथ ही आरम्भिक मसीही कलीसियाओं के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण रूपकों में से एक बन गया। उदाहरण के लिए, जब कलीसिया या मण्डली को एक घर या घराना कहा जाता है, जिसका अध्यक्ष गृहस्वामी के रूप में परमेश्वर है (देखिए तीमुथियुस की पत्रियाँ और तीतुस की पत्री)।

इस प्रकार घर प्राचीन परिवार का सार-रूप है – एक वास्तविक घर, और साथ ही परमेश्वर के घर का, अर्थात् कलीसिया का, चित्र। इन्हीं घरों में मसीहियों की सभाएँ होती थीं।

प्रेरितों के काम और पौलुस अक्सर घर की बात करते हैं। घर क्या है, इसकी अपनी धारणा को हमें पौलुस के समय के सांस्कृतिक परिवेश में समझना होगा, अपने समय के चश्मे से नहीं।

ऐसी स्त्रियाँ भी थीं जो अपने घराने की अध्यक्षता करती थीं; उनमें बहुत-सी विधवाएँ थीं। वे घर की कलीसियाओं की मेज़बान बनीं और इस रूप में उनके पास अगुवाई के दायित्व भी थे।

प्राचीन घर एक पवित्र स्थान था। उसमें एक घरेलू वेदी होती थी, जहाँ प्रतिदिन देवताओं को बलि चढ़ाई जाती थी। घर के मानवीय समुदाय की कुशलता देवताओं के साथ सम्बन्ध की देखभाल (cultus) पर निर्भर थी, जिससे देवताओं के साथ शान्ति बनी रहनी थी। घर स्त्री का क्षेत्र था, जो पुरोहितिन के रूप में ये धार्मिक कर्मकाण्ड करती थी। कल्पना कीजिए, जब कोई स्त्री मसीही बन जाती थी, पर उसका पति नहीं, तो कितनी कठिन परिस्थितियाँ पैदा होती होंगी।

ये ऐतिहासिक तथ्य इस विषय के लिए क्यों महत्त्वपूर्ण हैं? क्योंकि प्रेरित अपने निर्देश इन्हीं प्राचीन सम्बन्ध-संरचनाओं में बोलते हैं, जिन्हें हम अन्तिम विवरण तक नहीं जानते और जिनमें आज हम जीते भी नहीं।

घर, अर्थात् (संयुक्त) परिवार, को नया नियम एक दी हुई वास्तविकता के रूप में वर्णित करता है। उसे न अच्छा ठहराया जाता है, न बुरा। वह एक अति प्राचीन "संस्कृति की उपज" है। वह हज़ारों वर्षों में इसी तरह विकसित हुआ, बहुत-सी खूबियों और कमियों के साथ। इसी में सुसमाचार आ पहुँचता है।

5.1.1 नए नियम में घर-परिवार के नियम

"नए नियम में 'घर-परिवार के नियम' (Haustafel) से तात्पर्य किसी प्राचीन मसीही घर के सदस्यों के आपसी सम्बन्ध के लिए पद, कार्य या भूमिका से जुड़े निर्देश से है। मार्टिन लूथर (Martin Luther) द्वारा गढ़ा गया यह शब्द (लघु प्रश्नोत्तरी 1529 का दूसरा परिशिष्ट) लूथर बाइबल (Lutherbibel, जर्मन बाइबल अनुवाद) के संस्करणों में 'Die christliche Haustafel' (मसीही घर-परिवार के नियम) के रूप में इफिसियों 5:21-6:9 और कुलुस्सियों 3:18-4:1 के लिए उप-शीर्षक का काम करता है। यह शब्द नए नियम के उन नैतिक स्वरूप वाले पाठों के लिए प्रयोग होता है जो घर के, और कभी-कभी कलीसिया के ('परमेश्वर के घर' के रूप में, 1 तीमुथियुस 3:15), व्यक्ति-समूहों से सम्बन्धित हैं, पर सामाजिक-राजनीतिक क्षेत्र से नहीं।"[48]

वे अंश जो बताते हैं कि पति और पत्नी विवाह में कैसा व्यवहार करें या एक-दूसरे के सम्बन्ध में अपनी भूमिकाओं को कैसे समझें, तथाकथित घर-परिवार के नियमों या गृह-संहिताओं में आते हैं। विवाह के विषय में नए नियम की शिक्षा इस प्रश्न से जुड़ी है कि पूरे घराने अपनी नई स्थितियों को एक-दूसरे के सम्बन्ध में कैसे देखें, अब जब उनमें से कुछ या सब मसीही हैं। इसके लिए नए नियम में और आरम्भिक मसीही लेखों में बहुत-से उदाहरण हैं:

इफिसियों 5:21-6:9; कुलुस्सियों 3:18-19; 1 तीमुथियुस 2:8-15 (पुरुष-स्त्रियाँ)

1 तीमुथियुस 6:1-2 (दास-स्वामी)

तीतुस 2:1-10 (बूढ़े पुरुष, बूढ़ी स्त्रियाँ, जवान पुरुष, दास)

48. WiBiLex, Das wissenschaftliche Bibellexikon im Internet

1 पतरस 2:18-3:7 (दास, पत्नियाँ, पति)

बाद के मसीही लेखों में, जिनमें दिदाखे (Didache) भी शामिल है, इन्हें दूसरी दिशाओं में आगे विकसित किया गया: दिदाखे 4:9-11 (पिता, बच्चे, स्वामी, दास); बरनबास 19:5-7 (पिता, बच्चे, दास, स्वामी); 1 क्लेमेंट 1:3 (अगुवे, युवा, स्त्रियाँ), 21:6-9 (अगुवे, बुज़ुर्ग/वयस्क, युवा, पत्नियाँ, बच्चे); इग्नेशियस का पोलीकार्प को पत्र 4:1-6:2 और पोलीकार्प का फ़िलिप्पियों को पत्र 4:2-6:1 (पत्नियाँ, विधवाएँ, सेवक (डीकन), जवान पुरुष, कुँवारियाँ, प्राचीन)।

सामाजिक समूहों के लिए ऐसे मूलभूत उपदेश ग़ैर-मसीही पाठों में भी मिलते हैं, शायद सबसे स्पष्ट रूप से अरस्तू (Aristoteles) की "पॉलिटिक्स" में, और फिर एरियस डिडिमस (Arius Didymus) के यहाँ तथा सड़क के दार्शनिकों (छद्म-कैरोंडस [Ps.-Charondas], छद्म-ज़ालेउकोस [Ps.-Zaleukos]) के यहाँ।

"मैकनाइट (McKnight) टिप्पणी करते हैं कि घर-परिवार के ये नियम अलग-अलग पाठकों से अलग-अलग बात कहते हैं। कुछ के लिए वे निःसन्देह पितृसत्तात्मक संरचनाओं का समर्थन करते हैं; वे इस पदानुक्रमिक धारणा की पुष्टि करते हैं कि पिता और पति घराने का मुखिया है, जिससे उनका स्पष्ट अर्थ यह है कि उसकी देखरेख में रहने वाले सब लोगों पर उसका अधिकार है। दूसरों को वे कुछ और दिखाते हैं। 'जहाँ कुछ लोग इन अंशों में पितृसत्तावाद की स्थापना देखते हैं, वहीं दूसरे देखते हैं कि ठीक यही संरचना सिंहासन से उतारी जा रही है, या कम-से-कम उसके उतारे जाने का अवसर है। तो ऐसा लगता है, जैसा बाइबल में अक्सर होता है, कि घर-परिवार के ये नियम हमें लेखकों के पुराने दृष्टिकोणों के बारे में कुछ बताते हैं, और जब हम उन्हें पढ़ते हैं, तो हमारे अपने बारे में भी कुछ! ... हम सबको इस बात पर सहमत होना चाहिए कि घर-परिवार के नियमों की व्याख्या में हमारी अपनी सामाजिक धारणाएँ साथ चली आती हैं।'"[49]

उस समय एक मसीही पत्नी के लिए यह सुनना कोई नई बात नहीं थी कि उससे अधीनता की अपेक्षा की जाती है। परन्तु मैं कल्पना करता हूँ कि पतियों को दिया गया निर्देश, जो इसलिए पढ़कर सुनाया जाता था कि सब उसे सुन सकें, अर्थात् पूरी घरेलू कलीसिया, पूरे घराने में भारी हलचल मचा देता होगा। अब वह और उसके आसपास के लोग जानते थे कि यही व्यवहार उससे भी, अर्थात् paterfamilias से भी, अपेक्षित है। यहीं मसीही क्रान्ति घटती है।

5.1.2 मसीही घर-परिवार के नियमों का प्रभाव

"स्कॉट मैकनाइट (Scot McKnight) बताते हैं कि मसीही घर-परिवार के नियमों का एक ठोस उद्देश्य था। वे 'इस प्रकार रचे गए थे कि वे सामाजिक रूप से सम्मानजनक आचरण को सामाजिक सुरक्षा, मसीही विश्वास के बचाव (अपोलोजेटिक्स) और सुसमाचार-प्रचार के मंच के रूप में बढ़ावा दें' (1 पतरस 2:13-3:7, विशेषकर 2:12,14; 3:2)।

49. Peppiatt, Lucy, पृ. 87-88, Rediscovering Scripture's Vision for Women: Fresh Perspectives on Disputed Texts, 2020, IVP Academic, Downers Grove, Illinois

मसीहियों को 'स्वतन्त्र लोगों की तरह जीना है, पर अपनी स्वतन्त्रता को बुराई करने के लिए प्रयोग नहीं करना है; परमेश्वर के दासों की तरह जियो' (1 पतरस 2:16)। मसीहियों पर सन्देह किया जाता था कि वे व्यवस्था को भीतर से उलटने वाला सन्देश सुनाते हैं, इसलिए उन्हें कसौटी पर कसा गया; और क्योंकि यूनानी-रोमी नैतिक दर्शन में घराने को 'सभ्यता की मूलभूत इकाई' समझा जाता था, इसलिए परिवार पर सन्दिग्ध धर्मों के प्रभाव पर बारीकी से नज़र रखी जाती थी।

घर-परिवार के नियमों में पत्रियाँ ऐसे तत्व रखती हैं जो उस समय की श्रेणी-व्यवस्था की समझ से हटकर और उसे उलटकर उसमें भीतर से सेंध लगाते हैं। अधीनस्थ लोगों को पत्रियों में सीधे सम्बोधित किया जाता है। यह एक विशेष रूप से मसीही नवीनता है, जो प्राचीन परिवेश में स्पष्टतः अनोखी है। नए नियम के घर-परिवार के नियम स्त्रियों, दासों और बच्चों को उनके पतियों, स्वामियों और पिताओं के साथ-साथ सीधे सम्बोधित करते हैं। यह इस बात का संकेत है कि लेखक उनकी कार्य-क्षमता और उनकी गरिमा, दोनों को स्वीकार करता है।

हर्टाडो (Hurtado) लिखते हैं: "हमें जल्दबाज़ी में इस बात की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए कि इस प्राचीन परिवेश में गरिमा की इतनी मामूली स्वीकृति भी उन लोगों के लिए क्या अर्थ रखती थी, जो अन्यथा अपनी स्थिति बदलने में असमर्थ थे। आधुनिक पाठक को जो स्पष्ट नहीं दिखता, वह यह है कि मसीही घर-परिवार के नियम अधीनस्थ समूहों को नैतिक कर्ता मानते हैं, 'जो अपने प्रति दी गई चेतावनियों का उत्तर देने में सक्षम और उत्तरदायी हैं'। याद रखिए कि पूरे-पूरे घराने मिलकर आराधना करते थे और पत्रियाँ एकत्रित कलीसिया के सामने पढ़कर सुनाई जाती थीं। निचले वर्ग अपने से ऊपर वालों को दिए गए निर्देश सुनते थे, और ऊपर वाले उनके। यही वास्तव में इस बात की कुंजी है कि मसीही घर-परिवार के नियम व्यवस्था को भीतर से क्यों उलटने वाले थे; उनमें प्रचलित श्रेणियों का उलटाव निहित है, जो पुरुषों, स्त्रियों, दासों और बच्चों को दी गई थीं, और उन अपेक्षाओं का भी, जो उनसे रखी जाती थीं।"[50]

5.1.3 इफिसियों 5 में घर-परिवार के नियम

प्राचीन गृह-व्यवस्था या घर-परिवार के नियमों के शीर्षक के अन्तर्गत मैं दो प्रसिद्ध बाइबल-व्याख्याकारों को उद्धृत करता हूँ। वे इन पुरानी संरचनाओं के लिए सुसमाचार की उलट-पुलट कर देने वाली और क्रान्तिकारी शक्ति को सुन्दर ढंग से सार रूप में कहते हैं।

माइकल बर्ड (Michael Bird) ने लिन कोहिक (Lynn Cohick) से प्रसिद्ध NICNT शृंखला में इफिसियों पर उनकी नई टीका के विषय में बातचीत की और अन्य बातों के साथ उनसे यह प्रश्न पूछा:[51] आज हम घर-परिवार के नियमों के साथ क्या करें? क्या हमें उनका अक्षरशः पालन करने का प्रयास करना चाहिए, या हम उन्हें अन्यजातीय सामाजिक नैतिकता को मसीही बनाने का प्रयास कहकर उनकी लीपापोती कर देते हैं?

50. Peppiatt, Lucy, पृ. 87-88, Rediscovering Scripture's Vision for Women: Fresh Perspectives on Disputed Texts, 2020, IVP Academic, Downers Grove, Illinois
51. www.patheos.com/blogs/euangelion/2020/07/lynn-cohick-on-ephesians/#disqus_thread

“हमें पवित्रशास्त्र की आज्ञा माननी चाहिए – निश्चय ही! प्रश्न यह है कि पौलुस क्या माँग रहा है। यहीं ‘शब्दशः’ शब्द सामने आता है। हम पवित्रशास्त्र की, जिसमें दासता के नियम हैं, शब्दशः आज्ञा नहीं मान सकते, क्योंकि दासता प्रतिबंधित है (यद्यपि मैं जानती हूँ कि दासता आज भी होती है, जैसे स्त्रियों की तस्करी में)। हम बिना कहे यह स्वीकार करते हैं कि पौलुस इस बात पर ज़ोर नहीं देता कि समाजों में दासता होनी ही चाहिए; बल्कि वह एक आवश्यकता को सम्बोधित करता है: कलीसिया अपने उन सदस्यों से कैसा व्यवहार करे, जो दास और दासों के स्वामी हैं। हमें यह पता लगाना है कि मानवीय सम्बन्ध और चरित्र / सद्गुण के विषय में वह क्या चाहता है, और फिर इसे अपने सन्दर्भ में लागू करना है। दासता वाले अंश से मैं यह निकालती हूँ कि पौलुस का यह कथन – परमेश्वर किसी का पक्षपात नहीं करता – प्रभुत्व और दुर्व्यवहार वाले सम्बन्धों की जड़ पर चोट करता है। दासता प्रभुत्व, बल-प्रयोग और डराने-धमकाने पर खड़ी की गई थी। यह सब परमेश्वर को स्वीकार्य नहीं, क्योंकि वह सबको समान मूल्य का मानता है।

अन्यजातीय सामाजिक नैतिकता पदानुक्रमिक थी। उसमें सामाजिक रूप से श्रेष्ठ, धनी और प्रभावशाली लोगों के लिए प्रभुत्व की व्यवस्था थी और ग़रीबों के लिए सामाजिक प्रतिष्ठा / सम्मान का अभाव। दासों की स्वामिनी स्त्री का अपने पुरुष दास पर अधिकार होता था। इस स्थिति में स्वामित्व लिंग से बढ़कर था। रोमी संसार की बहुस्तरीय, जटिल सामाजिक पदानुक्रम-व्यवस्था के कारण हर किसी को किसी दूसरे के अधीन रहना पड़ता था, और इसकी कुंजी यह थी कि इसे सही ढंग से किया जाए। आज हम ‘समर्पण’ को एक नकारात्मक शब्द समझते हैं, पर प्राचीन काल में ऐसा नहीं था। जब पौलुस निवेदन करता है कि सब विश्वासी ‘एक दूसरे के अधीन रहें’ (इफिसियों 5:21), तो वह चाहता है कि वे एक-दूसरे का संगी विश्वासियों के रूप में आदर करें, और वह भी उस सामाजिक मूल्य के आधार पर नहीं, जो समाज ने संयोग से किसी विश्वासी को दे दिया हो। एक पति जो अपनी पत्नी से आत्म-बलिदानी प्रेम करता है, जैसे मसीह ने अपनी कलीसिया के लिए किया, ग़ैर-यहूदी संसार के लिए क्रान्तिकारी था। पौलुस विवाह में पारस्परिकता, साथ-साथ चलना और आपसी लेन-देन लाता है, क्योंकि पति पत्नी को ऐसे देखता है मानो वह उसकी अपनी देह हो। यहाँ यह निहित है कि पत्नी भी अपने पति को ऐसे देखती है मानो वह उसकी अपनी देह हो। पौलुस यह 1 कुरिन्थियों 7:1-4 में लिखता है, जहाँ वह कहता है कि पति को अपनी देह पर अधिकार नहीं, बल्कि उसकी पत्नी को है। जब हम एक बार पहचान लेते हैं कि किस प्रकार का पारस्परिक, आत्म-बलिदानी प्रेम विवाह की पहचान होना चाहिए, और यह भी पहचान लेते हैं कि उस समय हर कोई उस समय की संस्कृति के भाग के रूप में दूसरों का आदर करने के लिए किसी के प्रति समर्पण करता था, तो हम उस विवादित स्थान को नई दृष्टि से देख सकते हैं, जहाँ शब्दशः लिखा है: ‘पत्नियाँ अपने पतियों के, जैसे प्रभु के’ (5:22)। ध्यान देने वाला पाठक देखेगा कि मैं क्रिया भूल गई हूँ, पर वास्तव में पौलुस ही क्रिया छोड़ देता है। या ठीक-ठीक कहें तो, वह क्रिया को पिछले पद से लेता है, जिसमें माँग की गई है कि सब विश्वासी मसीह के प्रति आदर / श्रद्धा के कारण एक दूसरे के अधीन रहें।”

5.1.4 पारस्परिक समर्पण का कारण

प्रसिद्ध धर्मविज्ञानी और व्याख्या-विशेषज्ञ क्रेग कीनर (Craig Keener) इफिसियों 5 के घर-परिवार के नियमों के विषय में आरम्भ में थोड़े व्यंग्य के साथ लिखते हैं[52]: "कभी-कभी पौलुस बदनाम हो जाता है। दासों के आत्म-वृत्तान्त ऐसे पूर्व दासों की भावनाओं से भरे हैं, जो यीशु से प्रेम करते थे, पर पौलुस से घृणा करते थे, क्योंकि दासों के स्वामी नियमित रूप से इफिसियों 6:5 उद्धृत करते थे: 'हे दासो, अपने स्वामियों की आज्ञा मानो'। दासों के स्वामी जो उद्धृत नहीं करते थे, वह अंश का शेष भाग था, जिसमें आगे लिखा है: 'हे स्वामियो, तुम भी उनके साथ वैसा ही करो' (6:9)। इसका अर्थ है: यदि दासों को अपने स्वामियों की आज्ञा माननी है, तो स्वामियों को भी अपने दासों की आज्ञा माननी है!

क्या पहली शताब्दी में किसी ने इस बात में पौलुस को शब्दशः लिया? शायद नहीं। पर इससे यह तथ्य नहीं बदलता कि उसने जो वास्तव में कहा, वह उसके समय की दासता के विरुद्ध सबसे क्रान्तिकारी विचारों में से एक को व्यक्त करता था। वह इस संस्था को बलपूर्वक उखाड़ फेंकने की बात नहीं कर रहा था; उसके समय के असफल दास-विद्रोहों ने भी ऐसा करने का कभी प्रयास नहीं किया था। पर वह एक ऐसी नैतिकता की बात कर रहा था, जो कोरे सिद्धान्त से आगे जाती थी।

कुछ आरम्भिक स्टोइक दार्शनिकों ने मनुष्यों की समानता का समर्थन किया था, पर स्टोइक इससे पीछे हट गए थे, और उनमें से जो इसका ख़र्च उठा सकते थे, उनके पास दास थे। पौलुस सिद्धान्त रूप में स्टोइकों से सहमत था: उसने पुष्टि की कि दासों और दासों के स्वामियों का स्वर्ग में एक ही प्रभु है (इफिसियों 6:9)। पर उसका यह निर्देश, 'उनके साथ वैसा ही करो', सिद्धान्त से आगे बढ़कर व्यवहार में जाता है।

यह कोई संयोग नहीं है, न पौलुस की ज़बान फिसली है, न उसके लिपिक की क़लम। पौलुस घर-परिवार के नियमों वाले अपने पूरे खण्ड को पारस्परिक समर्पण के ढाँचे में रखता है। आप पूछते हैं, घर-परिवार के नियम क्या हैं?

राज्य-शासन पर अपने ग्रन्थ में यूनानी विचारक अरस्तू ने परिवार की भूमिका पर एक बड़ा खण्ड लिखा था। उसमें उसने घराने के पुरुष मुखिया को निर्देश दिया कि वह अपनी पत्नी, अपने बच्चों और अपने दासों पर शासन करे। बाद के विचारकों ने यही ढाँचा अपनाया, अक्सर इसी क्रम में। क्योंकि रोम को सन्देह रहता था कि धार्मिक अल्पसंख्यक समूह इन पारम्परिक मूल्यों को खोखला कर रहे हैं, इसलिए ऐसे समूह अक्सर रोमी मूल्यों में अपने विश्वास की पुष्टि करने का प्रयास करते थे।

पौलुस घर-परिवार के नियमों की एक शृंखला उसी क्रम में प्रस्तुत करता है जिसमें अरस्तू ने: घराने के पुरुष मुखिया का पत्नियों, बच्चों और दासों से सम्बन्ध। सम्भव है कि पौलुस किसी धार्मिक अल्पसंख्यक समूह के

52. www.cbeinternational.org/resource/article/mutuality-blog-magazine/case-mutual-submission-ephesians-5. वेबसाइट www.cbeinternational.org कलीसिया में पुरुष और स्त्री की भूमिका के विषय पर अच्छे संसाधन देती है। इस वेबसाइट का आदर्श-वाक्य है: स्त्रियाँ और पुरुष मिलकर अगुवाई करते हैं, समान होकर सेवा करते हैं।

सदस्य की तरह सोच रहा हो – आख़िरकार वह रोमी बन्दीगृह से लिख रहा है और सम्भवतः रोम में है (इफिसियों 3:1; 4:1; 6:20)।

फिर भी पौलुस मानक सूत्र को बदल देता है। केवल उन पुरुषों को सम्बोधित करने के बजाय, जो दास रखते हैं, वह उन स्त्रियों, बच्चों और दासों को भी सम्बोधित करता है, जो कलीसिया का बड़ा भाग थे। (पौलुस की नगरीय कलीसियाओं में दास घरेलू दास रहे होंगे, जिनके पास अधिक स्वतन्त्रता थी और जिन्हें दूसरे दासों की तुलना में मुक्त किए जाने का अवसर अधिक बार मिलता था। फिर भी वे दास ही थे।)

इसके अतिरिक्त वह घर के पुरुष स्वामी को कभी शासन करने का निर्देश नहीं देता। इसके बजाय उसे अपनी पत्नी से प्रेम करना है और उसके लिए अपना जीवन बलिदान करके उसकी सेवा करनी है (5:25)। उसे अपने बच्चों को चिढ़ाना नहीं है (6:4) और दासों से परमेश्वर के संगी सेवकों जैसा व्यवहार करना है (6:9)।

सबसे महत्त्वपूर्ण बात यह है कि पौलुस निर्देशों की अपनी पूरी सूची (5:21-6:9) को पारस्परिक समर्पण के आह्वान से घेरता है: एक दूसरे के प्रति समर्पण करना (5:21), यहाँ तक कि दासों के प्रति भी (6:9)। यह अधीनता को एक नए सन्दर्भ में रखता है: हमारे प्रभु का उदाहरण और उसकी शिक्षा, जिसने हम सबको एक दूसरे की सेवा करने के लिए बुलाया है (मरकुस 10:42-45; तुलना कीजिए यूहन्ना 13:14-17,34-35; गलातियों 5:13-14)।

आज कुछ पुरुष इफिसियों 5:22 ('हे पत्नियो, अपने पतियों के प्रति समर्पण करो') को सन्दर्भ से अलग करके उद्धृत करना पसन्द करते हैं, वैसे ही जैसे दासों के स्वामी इफिसियों 6:5 उद्धृत करते थे।

पर यूनानी में 5:22 में कोई क्रिया नहीं है। वह बस इतना कहता है: 'हे पत्नियो, अपने पतियों के'। निश्चय ही वह यह नहीं कहता: 'पत्नियो, अपने पतियों के साथ जो चाहो करो।' यूनानी व्याकरण यह मानकर चलता है कि हम क्रिया पिछले पद से लें, और वह क्रिया है 'समर्पण करना'। पर क्योंकि क्रिया 5:21 से ली गई है, इसलिए उसका अर्थ 5:21 से भिन्न नहीं हो सकता। पत्नी का समर्पण केवल पारस्परिक समर्पण का एक उदाहरण है; वैसे ही जैसे पति अपनी पत्नी के लिए अपना जीवन बलिदान करता है।

कुछ लोग आपत्ति करते हैं: 'पर समर्पण तो स्पष्ट रूप से केवल पत्नी के लिए है!' आह, पर प्रेम करने की आज्ञा भी स्पष्ट रूप से केवल पति के लिए है (5:25)। फिर भी हम समझते हैं कि सब मसीहियों को एक दूसरे से प्रेम करना चाहिए (5:2) और सब मसीहियों को एक दूसरे के अधीन रहना चाहिए (5:21)। चाहे पौलुस सब परिस्थितियों को समेटने का प्रयास नहीं करता, फिर भी वह हमें एक सामान्य सिद्धान्त देता है कि हमें एक साथ कैसे जीना चाहिए: दूसरे के हितों का ध्यान रखना, एक दूसरे की सुनना, और दूसरों से अपने से अधिक प्रेम करना।"

5.1.5 मसीही जीवन के लिए निर्देश – आज

इसलिए तथाकथित घर-परिवार के नियम जीवन की हर परिस्थिति को नहीं समेट सकते और उसके लिए ठोस निर्देश नहीं दे सकते। फिर भी ऐसे निर्देश हैं जो सदा और सर्वत्र लागू होते हैं। "हम घर-परिवार के इन

नियमों पर इस रूप में विचार करते हैं कि बाइबल समाज में मसीहियों के रूप में जीने के लिए कैसे एक ढाँचा देती है। पर हो सकता है कि बहुतों के लिए वे बस अप्रासंगिक हों, क्योंकि उनकी अपनी जीवन-परिस्थिति से उनका कोई मेल नहीं। यदि कोई व्यक्ति अकेला रहता है, अकेले बच्चों को पालता है, या मित्रों के एक समुदाय के साथ रहता है, जैसा पश्चिम में अक्सर होता है, तो घर-परिवार के नियम उसके सामुदायिक जीवन में कुछ नहीं जोड़ेंगे। इसके अतिरिक्त हम यह मानकर चलते हैं कि मसीहियों के पास दास नहीं होंगे। तो कोई दास नहीं होंगे, और शायद कोई पति, कोई पत्नी और कोई बच्चे भी नहीं। घर में केवल पुरुष या केवल स्त्रियाँ हो सकती हैं, जैसा सदियों से मठवासी समुदायों में होता आया है। इन सन्दर्भों में मसीही जीवन गृह-व्यवस्था से नहीं, बल्कि 'एक दूसरे' वाले व्यवहारों की बहुतायत से आकार पाएगा। नए नियम में ऐसे 59 पद हैं, जिनमें सब मसीहियों को सबसे पहले 'एक दूसरे से प्रेम करने' के लिए बुलाया जाता है, और क्षमा करने, प्रोत्साहित करने, शान्ति से रहने, एक दूसरे की सहने, एक दूसरे के प्रति समर्पण करने, एक दूसरे के लिए प्रार्थना करने, जो कुछ उनके पास है वह सब आपस में बाँटने के लिए, और एक दूसरे से घृणा न करने, निन्दा न करने, झूठ न बोलने, न काटने और न निगलने के लिए। विवाहित मसीही और मसीही माता-पिता भी इन 'एक दूसरे' वाले पदों से बँधे हैं, और उन्हें सबसे पहले 'पारस्परिक प्रेम' की चेतावनी से आकार पाना चाहिए।"[53]

5.1.6 प्राचीन घराने में स्त्री

प्राचीन घराने की जीवन-वास्तविकता को ठोस रूप से समझाने के लिए स्त्रियों का, विशेषकर दासियों का, निम्नलिखित वर्णन मन को झकझोर देता है: "यह बताना भी महत्त्वपूर्ण है कि घर की कलीसियाओं में स्त्रियों के जीवन की जाँच करते हुए हमें सामुदायिक जीवन के सब स्तरों पर स्त्रियों की अगुवाई, सहभागिता और भागीदारी के प्रमाण भी मिले हैं, और स्त्रियों की असहायता और पीड़ा के भी। आरम्भिक मसीही स्त्रियाँ उन बहुत-सी भयानक नियतियों और परिस्थितियों से बच नहीं पाईं, जिनका सामना उस युग में स्त्रियों को करना पड़ता था। हमारा ध्यान विशेष रूप से इस व्यवस्था की सबसे असहाय स्त्रियों की दुर्दशा पर गया है, चाहे वे यहूदी हों, मसीही हों या अन्य: दासियाँ। समाज दासता पर खड़ा था और उसके बिना अस्तित्व में नहीं रह सकता था। अधिकांश घराने, चाहे वे कितने भी साधारण हों, आंशिक रूप से दासों के श्रम पर टिके थे। दासों का अपने स्वामियों के लिए, और उन सबके लिए जिन्हें उनके स्वामी उन्हें उपलब्ध कराते थे, यौन रूप से उपलब्ध होना एक स्वाभाविक बात थी। सन्तान उत्पन्न करने की आयु वाली मसीही दासियाँ अक्सर लगभग असम्भव परिस्थितियों में रही होंगी, क्योंकि उन्हें एक मसीही नैतिक संहिता के अनुसार जीने की शिक्षा दी जाती थी, और उनके लिए अक्सर ऐसा करना असम्भव था। उदाहरण के लिए, हम इस सम्भावना को नकार नहीं सकते कि उनमें से कुछ के लिए पवित्रता और अपने बच्चों तथा अपने बच्चों के पिता के प्रति विश्वासयोग्यता असम्भव थी; और कि कुछ हताश दासियों के लिए, जो कलीसियाई समूहों की सदस्य थीं, और विशेषकर जब वे ग़ैर-मसीहियों की सम्पत्ति थीं, किसी शिशु को खुले में छोड़ देने का कार्य जीवित रहने की आवश्यकता जैसा प्रतीत होता होगा। हम आशा करेंगे कि किसी विश्वासी घराने में जीवन भिन्न होता, पर इसके कोई ठोस प्रमाण नहीं हैं कि ऐसा था, और इसके भरपूर प्रमाण हैं कि पूरे-पूरे घराने अक्सर एक साथ

53. Peppiatt, 88, वही

नए विश्वास में नहीं आए। सम्भवतः अधिकतर ग़ैर-मसीही घरानों में बहुत-से मसीही दास थे, जिनका विश्वास-जीवन सचमुच कठोर था"।[54]

यीशु मसीह के प्रति और उसके हर शिष्य के प्रति बिना दबाव के, स्वेच्छा से अधीनता या समर्पण यह दिखाता है कि यीशु कैसा है। परमेश्वर का अपना स्वभाव तब प्रकट होता है, जब दासों का स्वामी दास के प्रति समर्पण करता है और पति पत्नी के प्रति – और इसका उलटा भी। पर पारस्परिक अधीनता में इसका कारण कोई पदानुक्रम का अन्तर नहीं हो सकता। पदानुक्रम (उस समय के) संसार में मानदंड और अनिवार्य आचरण है। परमेश्वर के राज्य में ऐसा नहीं। इसलिए पत्नी की अपने पति के प्रति अधीनता का किसी पदानुक्रमिक सम्बन्ध से कोई लेना-देना नहीं। अधीनता की विशेषता यह है कि समानता के बावजूद अधीनता का भाव अपनाया जाए, न कि इसलिए कि कोई पदानुक्रम वैसे भी इसकी माँग करता है।

मैं इस बात के साथ समाप्त करता हूँ कि यह प्राचीन काल न केवल ऐतिहासिक रूप से अनन्त दूरी पर लगता है, बल्कि हम पश्चिम में, जर्मनी में, एक इतने भिन्न, अधिक स्वतन्त्र, अधिक सरल, अधिक सुरक्षित, हाँ, अनेक प्रकार से आशीषित समय में जीते हैं। हम घर-परिवार के नियमों को अपने लिए कैसे पढ़ें? क्या आज उनका शब्दशः पालन किया जा सकता है? हम उन्हें कैसे लागू करें?

5.2 सिर और अधीनता: इफिसियों 5

जब पौलुस एशिया माइनर, यूनान और इटली गया, तो वह ऐसी संस्कृतियों के सम्पर्क में आया जो स्त्रियों को एक ऐसे ढंग से देखती थीं, जो आज पश्चिम में हमारे परिचित ढंग से बिलकुल भिन्न है। इसलिए हमें प्रयास करना होगा कि विवाह, परिवार और स्त्रियों की भूमिका के विषय में पौलुस के कथनों को उस समय की उनकी परिस्थिति और उनके साथ होने वाले व्यवहार के प्रकाश में देखें।

पुरुष के सिर होने के लिए क्लासिक पाठ इफिसियों 5 है। पौलुस स्पष्ट और निःसन्देह शब्दों में कहता है कि पति अपनी पत्नी का सिर है और पत्नी को उसके प्रति समर्पण करना है:

> [इफिसियों 5:22-33, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] हे पत्नियो, अपने-अपने पति के अधीन रहो, जैसे प्रभु के। क्योंकि पति पत्नी का सिर है, जैसे मसीह भी सभा का सिर है; वह देह का उद्धारकर्ता है। परन्तु जैसे सभा मसीह के वश में है, वैसे ही पत्नियाँ भी सब बातों में पतियों के वश में।
>
> हे पतियो, अपनी पत्नियों से प्रेम करो, जैसे मसीह ने भी सभा से प्रेम किया और अपने आप को उसके लिए दे दिया, ताकि वह उसे पवित्र करे, उसे वचन के द्वारा जल के स्नान से शुद्ध करके, ताकि वह सभा को अपने लिए महिमामय रूप में प्रस्तुत करे, जिसमें न कलंक हो, न झुर्री, न ऐसी कोई और बात, बल्कि वह पवित्र और निर्दोष हो। इसी प्रकार पति भी इसके ऋणी हैं कि अपनी पत्नियों से अपनी देह के समान प्रेम करें। जो अपनी पत्नी से प्रेम करता है, वह अपने आप से प्रेम करता है। क्योंकि किसी ने कभी अपने शरीर से घृणा नहीं की, बल्कि वह उसका पालन-पोषण करता और उसकी देखभाल करता है, जैसे

54. Osiek, Carolyn, 2006, A Woman's Place: House Churches in Earliest Christianity, 127

> मसीह भी सभा की। क्योंकि हम उसकी देह के अंग हैं, उसके मांस में से और उसकी हड्डियों में से। "इस कारण मनुष्य पिता और माता को छोड़ देगा और अपनी पत्नी से जुड़ा रहेगा, और वे दोनों एक तन होंगे।" यह भेद बड़ा है; पर मैं यह मसीह और सभा के सम्बन्ध में कहता हूँ। फिर भी तुम भी, तुम में से हर एक अपनी पत्नी से अपने समान प्रेम करे; पर पत्नी, कि वह अपने पति का भय माने।

कुलुस्सियों को पौलुस लिखता है:

> [कुलुस्सियों 3:18-19] हे पत्नियो, जैसा प्रभु में उचित है, वैसे ही अपने-अपने पति के अधीन रहो। हे पतियो, अपनी-अपनी पत्नी से प्रेम रखो, और उनके प्रति कड़वाहट न रखो।

5.2.1 सिर

इफिसियों 5 में मनुष्य का सिर (यूनानी: kephale) लाक्षणिक, रूपक के अर्थ में नेतृत्व करने वाला अंग है। इस अंश में, और पत्री में दूसरे स्थानों पर भी, सिर श्रेष्ठता, ऊँचाई और प्रभुता का प्रतीक है।

ध्यान देने योग्य बात यह है कि सिर के इस कार्य – शासन करने, अगुवाई करने और निर्णय लेने – का एक भी शब्द में न उल्लेख है, न उसकी माँग। जब हम पुरुषों को दिए गए ठोस निर्देशों को अलग करके देखते हैं, तो समझ जाते हैं कि कौन-से कार्य सिर होने को परिभाषित करते हैं और कौन-से नहीं:

1. फिर भी तुम भी, तुम में से हर एक अपनी पत्नी से अपने समान प्रेम करे।
2. वह देह का उद्धारकर्ता (बचाने वाला) है, मसीह के समान।
3. हे पतियो, अपनी पत्नियों से प्रेम करो, जैसे मसीह ने भी सभा से प्रेम किया और अपने आप को उसके लिए दे दिया।
4. इसी प्रकार पति भी इसके ऋणी हैं कि अपनी पत्नियों से अपनी देह के समान प्रेम करें।

इस अंश के अधिकांश पदों में बात पुरुषों की है, केवल 3 में स्त्रियों की। पौलुस सिर के अधिकार का वर्णन क्यों नहीं करता या उसकी माँग क्यों नहीं करता, इसके पीछे कोई उद्देश्य होगा। वह इसे यों ही भूल नहीं गया। इस पर आगे और।

5.2.2 प्राचीन काल में परिवार

इस अध्याय 5 में और अध्याय 6 के आरम्भ में बात पति-पत्नी की है। फिर पिताओं और बच्चों की, और दासों और स्वामियों की। ये लोग – इनमें दादा-दादी या सास-ससुर, अविवाहित भाई-बहन और चाचियाँ-मौसियाँ और चाचा-मामा भी जोड़े जा सकते हैं – मिलकर घर बनाते हैं, अर्थात् संयुक्त परिवार (देखें अध्याय 5.1)। समाज आज की तरह एकल परिवारों से नहीं बना था। एक छत के नीचे पूरा घराना रहता था। पितृसत्ता के रूप में। पिता, जो हर हाल में पुरुष होता था, घर में सर्वोच्च स्थान रखता था। केवल अपनी पत्नी पर ही नहीं।

(संयुक्त) परिवार का यह सामाजिक ढाँचा पौलुस का कोई प्रकाशन नहीं, बल्कि उसके समय की सामान्य बात है। वह परिवार का कोई नया या बेहतर ढाँचा नहीं गढ़ता, बल्कि एक नया "व्यवहार का ढाँचा"।

यहाँ वर्णित पदानुक्रमिक श्रेणी-व्यवस्था आदर्श ढाँचा नहीं है – चाहे वह उसकी तुलना मसीह और कलीसिया से करता है –, बल्कि पतन का परिणाम है। पितृसत्ता स्त्री को कहे गए दंड के वचनों की पूर्ति का भाग है, कि पुरुष स्त्री पर प्रभुता करेगा।

मसीह और कलीसिया की तुलना पति और पत्नी से करना एक शिक्षा-चित्र है, एक उपमा। एक ऐसा चित्र जो पुरुष पर दायित्व डालता है, जब उसकी तुलना सिर से, मसीह से, की जाती है। और एक ऐसा चित्र जो, जब मसीह और कलीसिया के और पत्नी और पति के सम्बन्ध की बात आती है, पदानुक्रम को पहले स्थान पर नहीं रखता। इस चित्र में बात एकता, सहभागिता, देखभाल और सबसे बढ़कर प्रेम की है।

शायद इस उपमा के दो तल हैं, जो लिखे जाने के समय आज की अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण या अधिक उपयुक्त थे। एक ओर यह चित्र उस समय के भूमिका-विभाजन को अपनाता है, परन्तु उसी समय उसे नए सिरे से परिभाषित करने के लिए।

5.2.3 शब्दशः लें?

क्या हम सिर और देह के पदानुक्रमिक चित्र को अक्षरशः आज पर लागू कर सकते हैं? क्या पौलुस यहाँ वैवाहिक और पारिवारिक जीवन के मानदंड का वर्णन कर रहा है? मैं तुलना करता हूँ कि वह घराने के सन्दर्भ में बच्चों और दासों का वर्णन कैसे करता है। वह कहता है:

> [इफिसियों 6:1-4, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] हे बच्चो, प्रभु में अपने माता-पिता की आज्ञा मानो, क्योंकि यह उचित है। "अपने पिता और अपनी माता का आदर कर", यह पहली आज्ञा है जिसके साथ प्रतिज्ञा है, "ताकि तेरा भला हो और तू पृथ्वी पर बहुत दिन जीवित रहे।"
>
> और हे पिताओ, अपने बच्चों को क्रोध न दिलाओ, बल्कि प्रभु के अनुशासन और चेतावनी में उनका पालन-पोषण करो।

इन शब्दों में आज हमारे लिए महत्त्वपूर्ण बातें हैं। पर यह प्रश्न पूछना उचित है कि उस समय और आज बच्चे किस आयु तक माता-पिता के अधिकार के अधीन रहते हैं। पिता का अपने बच्चों पर आज की तुलना में कहीं बड़ा अधिकार था। आज बच्चों को आत्मनिर्भर बनने के लिए पाला जाता है। ध्यान देने योग्य बात यह है कि इस सम्बन्ध के लिए भी प्रेम की बात नहीं की गई। न माता-पिता की ओर से, न बच्चों की ओर से।

दासों के विषय में भी, परमेश्वर का धन्यवाद हो, स्थिति पूरी तरह बदल चुकी है, पर यह बात इस पाठ में व्यक्त नहीं होती:

> [इफिसियों 6:5-9, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] हे सेवको, जो शरीर के अनुसार तुम्हारे स्वामी हैं, उनकी आज्ञा भय और काँपते हुए, अपने मन की सीधाई से मानो, जैसे मसीह की; दिखावे की

> सेवा से नहीं, मनुष्यों को प्रसन्न करने वालों की तरह नहीं, बल्कि मसीह के सेवकों की तरह, परमेश्वर की इच्छा मन से पूरी करते हुए, और सद्भाव से सेवा करते हुए, जैसे प्रभु की, मनुष्यों की नहीं; क्योंकि तुम जानते हो कि जो कोई जो भी भलाई करता है, वह उसे प्रभु से पाएगा, चाहे वह दास हो या स्वतन्त्र। और हे स्वामियो, तुम भी उनके साथ वैसा ही करो और धमकाना छोड़ दो, क्योंकि तुम जानते हो कि उनका और तुम्हारा भी प्रभु स्वर्ग में है और उसके यहाँ किसी का पक्षपात नहीं।

इन शब्दों को कौन शब्दशः जी सकता है? उन्हें कालातीत मानकर आज के नियोक्ता-कर्मचारी सम्बन्ध पर लागू करने का प्रयास असफल होगा। यह सम्भव नहीं! प्राचीन काल जैसी दासता अब नहीं रही। यहाँ भी पौलुस दासता के अन्याय के विरुद्ध कदम नहीं उठाता, बल्कि उन लोगों के व्यवहार पर ध्यान देता है जो इसमें सहभागी हैं और सुसमाचार के द्वारा नए मनुष्य बन गए हैं। मसीही अपने काम-काज के सम्बन्ध को केवल इन्हीं निर्देशों के अनुसार नहीं ढालते। वे आज के लिए मापदंड के रूप में यीशु के और वचन और परमेश्वर के और वचन भी साथ लेंगे।

हमारी सरकारों के प्रति हमारे व्यवहार पर भी कुछ ऐसी ही बात लागू होती है। पौलुस और पतरस इन अधिकारियों के अधीन रहने की माँग करते हैं। चाहे शासन के ये रूप और उनके शासक आदर्श से कोसों दूर हों। उतने ही आदर्श से दूर, जितनी पितृसत्ता, जितनी दासता, और जितना वह ढंग जिससे प्राचीन काल में बच्चों से व्यवहार किया जाता था।

जब पौलुस ऐसे निर्देश देता है जो परिवार और काम जैसी सामाजिक संरचनाओं में लागू होते हैं, तो वह केवल उसी से आरम्भ कर सकता है जिसे वह जानता था और जो उसके समय में सामान्य था। वह 21वीं शताब्दी के मसीहियों को नहीं लिख रहा था! फिर भी यह परमेश्वर का वचन है, जो हमारे लिए ईश्वरीय मानदंड है।

ये पाठ इस विषय में चुप हैं कि स्थिति आदर्श नहीं है। आज की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण बातों को छुआ नहीं गया। हमें उन्हें आज की स्थिति पर लागू करना होगा। सब बाइबल-पाठक और बाइबल के प्रति निष्ठावान लोग अनजाने में इसे हमारे समय में ले आते हैं, वे भी जो समझते हैं कि वे सब कुछ शब्दशः लेते हैं।

आइए, पतियों को दिए गए निर्देशों और पत्नियों के व्यवहार पर लौटें। यहाँ भी, स्वामियों और दासों की तरह ही, इसे अक्षरशः आज पर लागू करना सम्भव नहीं।

जो इन निर्देशों का पालन करना चाहता है, उसे प्राचीन काल की परिस्थितियों को फिर से जीवित करना होगा। रूढ़िवादी, बाइबल के प्रति निष्ठावान मसीहियों की भी विवाह की आज की समझ प्राचीन काल से इतनी दूर है कि यह दावा करना लगभग ख़तरनाक है कि यह ज्यों-का-त्यों आज पर लागू होता है। क्योंकि कौन-सी पत्नी अपने पति के “सब बातों में वश में” है? कौन-सी पत्नी अपने पति का भय मानती है? यहाँ केवल आदर से अधिक कुछ अभिप्रेत है। हम कुछ शब्दों को हल्का करके या उन्हें मीठा बनाकर और किसी तरह 21वीं शताब्दी के लिए उपयुक्त बनाकर बच नहीं सकते। यदि कोई इसे शब्दशः लागू करना चाहता है, तो पूरी तरह, जैसा लिखा है। शायद प्रबल पितृसत्तात्मक संस्कृतियों में यह सम्भव और आवश्यक हो, चाहे यह कभी परमेश्वर के आदर्श के अनुरूप न हो। वहाँ बहुत-सी स्त्रियाँ परम्परा से चली आ रही पारिवारिक

रीतियों में बँधी हुई हैं। वे अक्सर अपने मूल अधिकारों का उपयोग नहीं कर पातीं, और उनके बच्चे पितृसत्ता के हवाले होते हैं।

यदि इस पाठ की व्याख्या अक्षरशः या बाइबल-शब्दवादी ढंग से की जाए, तो इससे पति के प्रति पत्नी की पदानुक्रमिक अधीनता निकलती है। यह पूरे बाइबलीय चित्र के साथ भी न्याय नहीं करता, और आज की जीवन-परिस्थितियों पर उसके प्रयोग के साथ भी नहीं।

5.2.4 सन्दर्भीकरण

रूढ़िवादी मसीही इस शब्द को सन्देह की दृष्टि से देखते हैं। पर इसका अर्थ इसके सिवा कुछ नहीं कि उस विचार-परिश्रम का वर्णन किया जाए, जिससे हम आज अपने बिलकुल भिन्न समय में परमेश्वर के विचारों को जी सकें। इसे बाइबल के प्रति निष्ठा भी कहा जा सकता है।

जब सब बातों में पत्नी के समर्पण की बात आती है, तो पौलुस यह विस्तार से नहीं बताता कि इसका अर्थ क्या है। न कोई अलग घटना बताई जाती है, न कोई उदाहरण। हम इसे कैसे समझें? क्या पत्नी को घरेलू हिंसा स्वीकार करनी होगी? क्या उसे हर समय यौन-सम्बन्ध के लिए तैयार रहना होगा? क्या पति सब कुछ तय करता है? हम सहमत होंगे कि सीमाएँ हैं, और कि "सब बातों में" का अर्थ उस समय भी और आज भी सब कुछ नहीं हो सकता। तथ्य यह है कि प्राचीन काल में जो पत्नी अपने पति के अधीन नहीं रहती थी (इसका विस्तार में जो भी अर्थ रहा हो), वह सुसमाचार के लिए बुरी गवाही थी।

पौलुस पुरुषों से साफ़ बात कहता है। ऐसे शब्द, जो पहले कभी नहीं सुने गए थे: पत्नी के प्रति बिना शर्त प्रेम-भरा लगाव, उसका पालन-पोषण और देखभाल अपने समान। जब इसका पालन किया गया, तो पितृसत्ता से एक "प्रेम की पितृसत्ता" विकसित हो सकती थी। वैवाहिक जीवन के व्यवहार में प्रेम अधीनता का अन्त है। क्योंकि प्रेम कुछ भी बलपूर्वक नहीं करवाता, बल्कि आपसी सहमति में जीता है। एक प्रेम करने वाला पति अपनी पत्नी की इच्छा को ठुकराकर आगे नहीं बढ़ेगा। अन्ततः वे पुरुष भी ऐसा ही व्यवहार करेंगे, जो पत्नी की पदानुक्रमिक अधीनता में विश्वास करते हैं। पारस्परिक प्रेम और आदर अधीनता या समर्पण से बढ़कर है! इस पाठ में पौलुस पितृसत्ता से बाहर की ओर पहला बड़ा कदम उठाता है। जैसे दासता का अन्त अभी बहुत समय तक नहीं होना था, वैसे ही यह बात विवाह पर भी लागू होती है, जिसे अभी बहुत समय तक समान अधिकारों के साथ नहीं जिया गया।

सन्दर्भीकरण सदा आवश्यक है। बाइबल ऐसी परिस्थितियों के लिए निर्देश देती है जो आज नहीं रहीं। वह उन परिस्थितियों के लिए निर्देश नहीं देती और नहीं दे सकती, जो केवल हमारे (उत्तर-)आधुनिक समय में ही हैं। उस समय न वृद्धाश्रम थे, न आज जैसे लोकतन्त्र, न इंटरनेट, न अत्यन्त विकसित और जीवन को लम्बा करने वाली चिकित्सा, इत्यादि। इन क्षेत्रों में हम कैसा व्यवहार करें? हम पवित्रशास्त्र से, यीशु से, पड़ोसी से प्रेम की आज्ञा से दिशा लेने का प्रयास करते हैं।

5.2.5 एक बार फिर: सिर

सिर एक रूपक है, एक तुलना, जिसे पौलुस वैवाहिक सहभागिता के सम्बन्ध पर लागू करता है। सिर शब्द का अर्थ स्रोत, उद्गम या नदी का मुहाना हो सकता है। अधिकतर इसका अर्थ शाब्दिक सिर होता है। पर साथ ही प्रधानता और ऊँचे पद पर होना भी।

इफिसियों की पत्री में पौलुस बताता है कि सिर का क्या अर्थ है। 1:22 में जी उठा और सिंहासन पर ऊँचा उठाया गया मसीह ब्रह्माण्ड की सब शक्तियों और प्राणियों के ऊपर सिर है:

[इफिसियों 1:22-23, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] परमेश्वर ने सब कुछ उसके पाँवों के वश में कर दिया और उसे सब वस्तुओं के ऊपर सिर ठहराकर सभा को दे दिया, जो उसकी देह है, उसकी परिपूर्णता, जो सब में सब कुछ परिपूर्ण करता है।

सब वस्तुओं के ऊपर सिर के रूप में मसीह के पास सबसे ऊँचा सम्मान का स्थान है, जो हो सकता है। इसी सिर को कलीसिया देह के रूप में दी गई है। ऐसा नहीं कि वह सिर के रूप में कलीसिया पर प्रभुता करता है, नहीं, बल्कि कलीसिया सब वस्तुओं के ऊपर उसके स्थान में उसके साथ सहभागी है। सिर और देह की एकता में वह (पूरा) "मसीह" है। जैसे हव्वा आदम में से ली गई, और आदम उसके साथ, एक तन होकर, तभी पूर्ण हुआ, ताकि फिर दोनों मिलकर सृष्टि का आदेश पूरा करें।

4:15-16 में देह सिर की ओर बढ़ती है और सिर में से आत्मिक पोषण और उन्नति पाती है (उसमें से, अर्थात् सिर में से; देखिए कुलुस्सियों 2:19 भी):

[इफिसियों 4:15-16, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] आइए, हम सब बातों में उसकी ओर बढ़ते जाएँ, जो सिर है, अर्थात् मसीह, जिसमें से सारी देह, भली-भाँति जुड़ी हुई और आपूर्ति करने वाले हर एक जोड़ के द्वारा गठी हुई, ... अपने लिए देह की बढ़ोतरी करती है, ताकि प्रेम में उसकी अपनी उन्नति हो।

यह रूपक सिर के द्वारा देह की देखभाल पर ज़ोर देता है। सिर का चित्र मसीह और कलीसिया के सम्बन्ध में पदानुक्रमिक अधीनता पर ज़ोर नहीं देता, और पति और पत्नी के सम्बन्ध में भी नहीं। यह पुरुष के लिए एक आदर्श है कि वह वही बने जो मसीह कलीसिया के लिए है: उसकी देखभाल करने वाला, न कि उस पर प्रभुता करने वाला।

वैसे, पानी से स्त्री को शुद्ध करना दासों का काम था। पौलुस भूमिकाओं को उलटने में बहुत आगे तक जाता है: अब सिर तो एक दास जैसा है, जब वह जल के स्नान से धुलाई करता है (5:26)।

पहली शताब्दी की जीवन-वास्तविकता पर लौटें: उस समय स्त्रियाँ पुरुषों से बहुत छोटी होती थीं। कुछ का विवाह 12 वर्ष की आयु में ही कर दिया जाता था। आयु के कारण पुरुष स्वाभाविक रूप से अधिक सशक्त भूमिका में था। जब इस सांस्कृतिक और सामाजिक परिवेश में अधीनता की अपेक्षा की जाती थी, तो यह

सामान्यतः स्त्रियों के लिए कोई नई बात नहीं थी। और आयु का बड़ा अन्तर होने पर पुरुष अपने-आप सिर बन जाते थे, लगभग उनके स्वामी।

आज हमारे यहाँ यह भिन्न है। जब पति-पत्नी पारस्परिक प्रेम और अधीनता में मिलकर जीवन को सँभालते हैं और परिवार बसाते हैं, तो पत्नी की एकतरफ़ा अधीनता की आवश्यकता नहीं रहती। मैंने कई बार दम्पतियों से यह प्रश्न पूछा है। वे इस प्रश्न का उत्तर नहीं दे सके कि यह अधीनता, जैसी पौलुस इफिसियों 5 में उसका वर्णन करता है, आज या उनके विवाह में ठीक-ठीक क्या अर्थ रख सकती है। इसे उन दूरगामी निर्णयों तक सीमित कर देना बहुत आसान होगा, जो अन्ततः पति लेता है और जिनकी ज़िम्मेदारी भी वह उठाता है। नहीं, जिन दम्पतियों से मैंने पूछा, वे निर्णय, विशेषकर दूरगामी निर्णय, मिलकर प्रभु के सामने लेते हैं। कभी एक दूसरे के पीछे चलता है, और कभी दूसरा पहले के। यह भाव और यह कार्य-पद्धति सिर और देह के चित्र को ठेस नहीं पहुँचाते।

निःस्वार्थ और आत्म-बलिदानी प्रेम, जैसा मसीह ने कलीसिया से प्रेम किया, सुसमाचार का नया मापदंड है। यही वह अन्तर है जिसे, एक बीज की तरह, धीरे-धीरे पर अटल रूप से मसीही विवाहों में पितृसत्ता के कंक्रीट को तोड़ देना चाहिए था। यह नया है। यह एक पतित संसार में स्वर्ग का प्रवेश है। इसमें पौलुस अपने निर्देशों में पितृसत्ता को बना रहने देता है और स्पष्ट रूप से उसकी आलोचना नहीं करता। इस प्रकार उस समय के लिए अधिकार के रूप में सिर का चित्र पारिवारिक घर और विवाह की परिस्थिति में ठीक बैठता है। तब भी, जब वह सृष्टि के अनुसार आदर्श नहीं है, जैसा उत्पत्ति 1 और 2 में उसका वर्णन है।

सिर के रूप में, पति के रूप में जीने का अर्थ है अगुवाई करना, ज़िम्मेदारी उठाना, अपनी पत्नी के पक्ष में खड़े होना, उसके लिए उपस्थित रहना। सब कुछ उसके साथ बाँटना। यह पदानुक्रम नहीं है! यह एक जोड़ी है, एक टीम। सिर होना पदानुक्रम के बिना न केवल सम्भव है, बल्कि यही अवधारणा है और व्यावहारिक रूप से साकार करने का मार्ग है।

“सिर की भूमिका”, सिर होना, मसीह के आदर्श के अनुसार “सिरत्व” प्रेम, देखभाल, सुरक्षा है – आगे-आगे चलना। यह ऐसी शक्ति है जिस पर भरोसा किया जा सकता है, और ऐसा साथ-साथ चलना है जो निष्क्रियता की ओर नहीं, बल्कि सक्रियता की ओर और उसी प्रकार पारस्परिक आत्म-बलिदान की ओर ले जाता है।

सिर और देह का एक कठोर, एकतरफ़ा चित्र वैसे भी हर विवाह पर एक-सा लागू नहीं किया जा सकता, क्योंकि लोग बहुत भिन्न होते हैं। सिर और देह का रूपक सबसे पहले एकता की, साझेपन की, और कम महत्त्व से नहीं, प्रेम की बात करता है।

5.2.6 निष्कर्ष

एक ओर पौलुस बिना आलोचना के विवाह और परिवार के पितृसत्तात्मक चित्र को दर्शाता है। दूसरी ओर वह उसमें क्रान्ति ला देता है। पितृसत्ता में वास्तविक (डी-फ़ैक्टो) अधिकार प्रेम की आज्ञा में बदल दिया जाता है, जिससे पुराना मार्ग छोड़ दिया जाता है। जब पति वैसे प्रेम करता है जैसा पौलुस कहता है, तो पत्नी का

एकतरफ़ा समर्पण कोई विषय ही नहीं रहेगा। क्योंकि मसीह का प्रेम पुरुष से भी माँग करता है कि वह अधीन रहे और अपनी पत्नी के प्रति आदर का जीवन जिए।

वह इस खण्ड का आरम्भ करता है, या इसे पिछले भाग से जोड़ता है, सबसे यह कहकर: एक दूसरे के अधीन रहो (मसीह की देह में)! ऐसा पहले कभी नहीं सुना गया था। इन शब्दों पर जितना भी ज़ोर दिया जाए, कम है।

फिर पौलुस सिर की भूमिका का वर्णन शासक, अगुवाई या अधिकार के रूप में नहीं करता। इस चित्र को, जैसा पहली दृष्टि में अक्सर ऊँचे पद के रूप में समझाया जाता है, वह कोई स्थान नहीं देता। सिर शासन नहीं करता। वह बिना शर्त और आत्म-बलिदान के साथ प्रेम करता है।

पौलुस यहाँ सब युगों के लिए विवाह और परिवार के किसी आदर्श चित्र का वर्णन नहीं करता। वह एक विद्यमान संस्कृति में कुछ बिलकुल नया ले आता है। सुसमाचार एक बीज है, जो नया उत्पन्न करता है। पतन के परिणामों से मुक्ति। मुक्ति देने वाले परिवर्तन जल्दी नहीं होते। उन्हें लम्बे समय तक दबाया जा सकता है या फिर से नष्ट किया जा सकता है। यह कदम-दर-कदम होता है। सबसे अच्छी स्थिति में एक-एक कदम करके कुछ नया और बेहतर बढ़ता है। समान अधिकारों के साथ स्वतन्त्रता को जीना सीखना पड़ता है। हज़ारों वर्ष पुरानी सामाजिक संरचनाएँ एक दशक में चंगी नहीं होतीं।

इसलिए आश्चर्य नहीं होना चाहिए कि हम पौलुस और पतरस से सुनते हैं कि स्त्रियाँ अधीन रहें। उनके समय में यह वैसे भी सामान्य था। पति स्वामी था। निर्णय करने वाला। एक संस्था। यदि विश्वासी बनी स्त्रियाँ इस प्रचलित भाव को छोड़ देतीं, तो यह ठोकर का कारण होता। सुसमाचार बदनाम हो जाता। इसे रोकना आवश्यक था।

आज हम कृतज्ञ हैं कि हम अपनी सरकार को लोकतान्त्रिक ढंग से चुन सकते हैं। यह भी कि अब दासता नहीं है। कि कर्मचारियों की सुरक्षा है। कि पुरुष और स्त्री के समान अधिकार हैं। कि शारीरिक दंड प्रतिबंधित है और बच्चे सुरक्षित हैं। ये अन्ततः सुसमाचार के परिणाम हैं, वह फल जिसके बीज यीशु, बारहों और पौलुस ने 2000 वर्ष पहले बोए थे।

सौ वर्ष पहले कैथरीन बुशनेल (Katharine Bushnell), जो चीन में एक डॉक्टर और मिशनरी थीं और बाइबल की प्राचीन भाषाओं में भी निपुण थीं, ने लिखा: “हम साहस रख सकते हैं। हाल के समय तक दासों के एक वर्ग का अस्तित्व एक आवश्यकता और दासता को वैध माना जाता था। कहा जाता था कि कुछ पुरुष दास के रूप में जन्म लेते हैं, दूसरे उनके स्वामी के रूप में, और संसार इन दो वर्गों के बिना आगे नहीं चल सकता। यह भ्रम टूट चुका है, और संसार बिलकुल सामान्य रूप से आगे चल रहा है। जब तक दासता थी, लोग सोचते थे कि उन्हें परमेश्वर के वचन में उसका औचित्य मिल गया है। पर ऐसा सोचने वालों की संख्या घटती चली गई। उन लोगों की संख्या भी लगातार घट रही है, जो मानते हैं कि उन्हें परमेश्वर के वचन में स्त्री पर पुरुष की प्रभुता का औचित्य मिलता है।”

उनकी आवाज़ जल्द ही सुनाई देनी बन्द हो गई। इसलिए यह और भी आनन्द की बात है कि उनकी पुस्तक जर्मन भाषा में इसी पुस्तक के साथ-साथ प्रकाशित हुई है (Reformatorischer Verlag H. C.

Beese, Hamburg; देखिए पुस्तक का अन्तिम भाग)।

जिस अधीनता की माँग की जाती है और जिसे स्त्रियाँ पूरा करती हैं, वह उन्हें ऐसी ज़िम्मेदारी छोड़ देने के लिए प्रेरित करती है, जिसे वे उठा सकती हैं और उठाना चाहती हैं। अधीनता के सिद्धान्त के नीचे स्त्रियाँ निराश और निष्क्रिय मनुष्य बन सकती हैं, जिनकी योग्यताएँ और बुलाहटें पूरी नहीं हो पातीं। पर उनके लिए भी यह आह्वान है कि वे बलवन्त और "पुरुषार्थी" बनें, साहस और सक्रियता से विश्वास में जिएँ: परिवार में, काम-काज में, कलीसिया में और परमेश्वर के राज्य में (1 कुरिन्थियों 16:13)।

अधीनता की शिक्षा के एक दुःखद दुष्प्रभाव के रूप में, दुर्भाग्य से, घरेलू हिंसा और यौन हिंसा का कम-से-कम उल्लेख तो करना ही होगा। यह शिक्षा उन पतियों के लिए हिंसा का बहाना या आड़ बन सकती है, जिन्होंने यह नहीं समझा कि पत्नी के लिए सिर के रूप में उनकी भूमिका का सार क्या होना चाहिए।

रूढ़िवादी मसीही विवाहों में भी, परमेश्वर से इसकी दुहाई है, घरेलू हिंसा और यौन बलात्कार होते हैं। यहाँ समान मूल्य और समान दर्जे का बाइबलीय दृष्टिकोण चंगाई ला सकता है। यह स्त्रियों को उनकी अक्सर छिपाई गई यातना से बाहर निकाल सकता है।

5.3 समर्पणशील होना

क्योंकि समर्पणशील होने की ओर बार-बार ध्यान दिलाया जाता है, इसलिए इस पर एक अलग अध्याय और होना चाहिए।

पत्नियों को दिए गए निर्देश स्पष्ट हैं और कई बार दोहराए गए हैं: वे अपने पतियों के प्रति समर्पण करें! hypotassō शब्द का अर्थ है समर्पण करना, अधीन रहना, झुक जाना, वश में होना, आज्ञा मानना।[55] ठीक इसलिए कि यह निर्देश एक ही शब्दों में बार-बार आता है, मैं इस पर एक बार फिर विचार करता हूँ, चाहे अपने निष्कर्षों में मैं स्वयं को दोहराऊँ। स्त्री का ठहराया हुआ स्थान केवल विवाह का विषय नहीं है, बल्कि वह आराधना-सभा तक पहुँचता है। स्पष्ट है कि चुप रहना और अधीनता साथ-साथ चलते हैं (1 कुरिन्थियों 14:34), वैसे ही शिक्षा देने पर प्रतिबंध भी, इस निर्देश के साथ कि स्त्री अधीनता में सीखे (1 तीमुथियुस 2:11)। इस पर बाद में और।

एक शब्द-अध्ययन दिखाता कि यह शब्द किन-किन सन्दर्भों में आता है: व्यवहार के लिए आह्वान के रूप में, परिणाम के रूप में, और बलपूर्वक लाई गई स्थिति के रूप में भी। सब शक्तियाँ मसीह के वश में कर दी गईं। हम कभी मृत्यु के भय के वश में थे। मसीहियों को उनके प्रति समर्पण करना है, जो दूसरों के लिए और उनके अपने लिए परमेश्वर के राज्य में परिश्रम करते हैं। मसीहियों को अधिकारियों के अधीन रहना है। मसीही दासियों और दासों को अपने स्वामियों (या स्वामिनियों) के प्रति समर्पण करना है, जवानों को भी बड़ों के प्रति, और अन्ततः हर एक को बहन और भाई के प्रति। इसका प्रयोग-क्षेत्र विस्तृत है, पर मानवीय सह-जीवन में मूल विचार यही रहता है: किसी दूसरे व्यक्ति को अधिक आदर देना और स्वयं को उसके अधीन करना।

55. Bergmeier, R., "ὑποτάσσω", H. Balz – G. Schneider (edd.) में: Exegetisches Wörterbuch zum Neuen Testament, Verlag W. Kohlhammer, Stuttgart 2011, 976.

इससे स्पष्ट होता है कि अधीनता मसीही स्त्रियों और पुरुषों के लिए कोई पराई बात नहीं, बल्कि एक अभ्यास किया हुआ और साथ ही संघर्ष से घिरा हुआ सद्गुण है, जिसे आत्मा का फल कहा जा सकता है (चाहे उसे सीधे इस रूप में गिनाया नहीं गया)। अन्ततः मानवीय सह-जीवन केवल अधीनता से ही चलता है। यह दीनता के बिना और पवित्र आत्मा की सहायता के बिना सम्भव नहीं। दीनता से हमें दूसरे को अपने से अच्छा समझना है (फ़िलिप्पियों 2:3)। सबसे बड़ा आदर्श यीशु है। साथ ही मैं अधिकार का विरोध नहीं करता, जिसके बिना समाज भी उसी तरह नहीं चल सकता। सरकारों, नियोक्ताओं, शिक्षकों, माता-पिता के पास अपने पद या अपनी भूमिका के कारण अधिकार है। क्या यही बात पुरुष और स्त्री के सम्बन्ध पर भी लागू होती है, सामान्य रूप से और विवाह में? मसीही स्त्रियों के विषय में ये शब्द सामने हैं:

> [1 कुरिन्थियों 14:34] स्त्रियाँ सभाओं में चुप रहें, क्योंकि उन्हें बोलने की अनुमति नहीं है, परन्तु वे अधीन रहें, जैसा व्यवस्था भी कहती है।
>
> [इफिसियों 5:22] हे पत्नियो, अपने-अपने पति के अधीन रहो, जैसे प्रभु के।
>
> [कुलुस्सियों 3:18] हे पत्नियो, जैसा प्रभु में उचित है, वैसे ही अपने-अपने पति के अधीन रहो।
>
> [तीतुस 2:5] संयमी, पवित्र, घर के काम-काज में लगी रहने वाली, भली, और अपने-अपने पति के अधीन रहने वाली, ताकि परमेश्वर के वचन की निन्दा न हो।
>
> [1 पतरस 3:1] वैसे ही हे पत्नियो, तुम भी अपने-अपने पति के अधीन रहो, ताकि यदि उनमें से कुछ वचन की आज्ञा न मानते हों, तो भी वे पत्नियों के चालचलन के द्वारा बिना वचन के जीत लिए जाएँ,
>
> [1 पतरस 3:5] क्योंकि पूर्वकाल में पवित्र स्त्रियाँ भी, जो परमेश्वर पर आशा रखती थीं, अपने आप को इसी रीति से सँवारती थीं और अपने-अपने पति के अधीन रहती थीं:

यह ध्यान देने योग्य है कि इस प्रकार की चेतावनी पुराने नियम में इस रूप में नहीं आती। यीशु के यहाँ भी नहीं। आरम्भिक मसीही समुदाय में यह कोई महत्त्वपूर्ण बात रही होगी। क्या उस समय स्त्रियाँ इतनी विद्रोही, उपद्रवी या सत्ता की भूखी थीं? क्या वे अपने अवसर की प्रतीक्षा कर रही थीं? नहीं, प्राचीन इतिहास का शोध इसकी पुष्टि नहीं कर सकता। इसके अतिरिक्त, प्राचीन काल में स्त्रियाँ वैसे भी वशीभूत भूमिका में थीं। जो बात वैसे भी सामान्य थी, जिसने मसीही स्त्रियों को न चौंकाया, न उन्हें किसी ऐसी बात के लिए विवश किया जो उनके लिए पराई हो, उस पर इस ज़ोर का उद्देश्य क्या है?

पूछा जा सकता है कि यह अधीनता किस बात में थी? घर-गृहस्थी में पति के निर्देशों में? उसमें तो स्त्रियाँ अपेक्षाकृत स्वतन्त्र रूप से काम करती थीं; घर उनका क्षेत्र था, जबकि पुरुष सार्वजनिक जीवन में था। इसीलिए तीतुस 2:5 में घर के काम-काज की ओर संकेत है। 1 तीमुथियुस 5:14 में पौलुस लिखता है कि जवान विधवाएँ घर-गृहस्थी चलाएँ, और वह “oikodespoteo” शब्द का प्रयोग करता है, जिसका अर्थ इसके सिवा कुछ नहीं कि घर का स्वामी होना। क्या इसका अर्थ कहीं यौन-जीवन में समर्पण है, कि वह हर समय उपलब्ध रहे? जब आज यह माँग की जाती है कि इन निर्देशों का शब्दशः, अर्थात् उनके मूल अर्थ के अनुसार, पालन किया जाए, तो मैं वही प्रश्न पूछता हूँ: आज किसी विवाह में यह अधीनता किस बात में है?

सम्बन्ध के इस ढंग का वर्णन कैसे किया जा सकता है, और 21वीं शताब्दी में पश्चिमी संसार में इसे कैसे जिया जा सकता है? मैं दोहराता हूँ: उतनी ही स्पष्टता के साथ, जितनी स्पष्टता से इसकी माँग की जाती है, बिना हल्का किए या ढाले।

अपनी विचित्र शीर्षक वाली पुस्तक "Befreit durch Unterordnung" (अधीनता के द्वारा मुक्त)[56] में बनी विल्सन (Bunny Wilson), जैसा शीर्षक से अनुमान होता है, पति के प्रति पत्नी की अधीनता के पक्ष में एक जोशीली पैरवी करती हैं। उनके लिए पति के अधीन रहना, स्पष्ट रूप से ग़लत निर्णयों में भी, परमेश्वर के अनुसार मार्ग है, जिसे विश्वास और प्रार्थना के द्वारा सुधारा जा सकता है। बहुत-से उदाहरणों में वे बताती हैं कि व्यवहार में यह कैसा दिखता है। वे अपने विवाह के अनुभव भी बाँटती हैं, और यह भी कि परमेश्वर ने उनसे कैसे बात की और उन्हें दिखाया कि इस कठिन और विवादित भाव में क्या सही है और क्या नहीं। बाइबल की समझ और अनुभव अक्सर एक-दूसरे में घुल-मिल जाते हैं। हम सब बाइबल पढ़ते समय अपने अनुभव और अपनी घटनाएँ साथ लाते हैं। मेरी पूरी पुस्तक भी मेरे जीवन-अनुभव और मेरी "स्त्री-छवि" के बिना नहीं बनी, और इसलिए वह तटस्थ या पवित्रशास्त्र की शुद्ध शिक्षा नहीं है। जो भी इस विषय पर बोलता है, वह अपने व्यक्तित्व का रंग साथ लाता है। पर मेरे लिए निर्णायक प्रश्न यह है कि अधीनता का आधार क्या बताया जाता है। मैं विल्सन को उद्धृत करता हूँ: "कभी-कभी, जब मेरी पत्नी और मेरी राय अलग होती है, तो वह मुझसे कहती है: 'मुझे लगता है कि तुम्हें मेरे अधीन रहना चाहिए, क्योंकि पिछली बार मैं तुम्हारे अधीन रही थी। बाइबल इफिसियों 5:21 में कहती है: "परमेश्वर के भय में एक दूसरे के अधीन रहो।"' मैं इसका क्या उत्तर दूँ?

मुझे राहत है कि मैं अकेली स्त्री नहीं हूँ, जिसने इफिसियों 5:21 का उपयोग अपनी बात मनवाने के लिए करने का प्रयास किया है। मुझे वह पहली बार याद है, जब मैंने अपने पति के सामने इस बाइबल-स्थान का उपयोग किया; तब उन्होंने इसके उत्तर के लिए बाइबल में खोजा। आइए, उस पवित्रशास्त्र-स्थान को देखें जिसका उल्लेख आपकी पत्नी करती हैं, और उसके बाद वाले पद को भी: 'परमेश्वर के भय में एक दूसरे के अधीन रहो! हे पत्नियो, अपने-अपने पति के अधीन रहो, जैसे प्रभु के' (इफिसियों 5:21-22)।

विवाह में अधीनता ठीक उसी तरह काम नहीं करती, जैसे मसीह की देह में पारस्परिक अधीनता। मसीह की देह में हम पवित्रशास्त्र के सिद्धान्तों का पालन करके एक दूसरे के अधीन रहते हैं। विवाह में हम अपने पति के अधीन एक अधिकार-प्राप्त व्यक्ति के रूप में रहते हैं।

इफिसियों 5:21 में परमेश्वर ही एकमात्र अधिकार है। इफिसियों 5:22 में पत्नी अपने पति के अधीन है। परमेश्वर पति को पत्नी पर अधिकार देता है, और वह उससे लेखा भी लेता है।" (पृ. 77)

परन्तु "अधीन रहना" की यह भेद करने वाली समझ पाठ से नहीं निकाली जा सकती। वे पुरुष को सृष्टि के अनुसार स्त्री के ऊपर एक अधिकार मानती हैं। इसके अतिरिक्त, उनके लिए हव्वा को कहा गया दंड का वचन, तेरी लालसा उसकी ओर होगी, परन्तु वह तुझ पर प्रभुता करेगा, परमेश्वर की इच्छा के अनुसार भूमिकाओं का बँटवारा है। स्त्री स्वभाव से प्रभुता करना चाहती है, पर उसे अपने पति की प्रभुता के आगे

56. Wilson, Bunny, तीसरा संस्करण 2020 ("Befreit durch Unterordnung"), CLV, Bielefeld

झुकना है। पुरुष ने वाटिका में पाप को रोकने के लिए प्रभुता करने में चूक की, और क्योंकि उसका स्वभाव प्रभुता न करने की ओर झुकता है, इसलिए उसे ऐसा करने का आदेश मिलता है।

इस व्याख्या पर मेरा पहला प्रश्न यह होगा: क्या तब यहाँ सृष्टिकर्ता की बनावट में कोई दोष है, जिसे सुधारना पड़ता है? या उतना ही घातक: क्या पतन से पहले ही पापी झुकाव थे?

सृष्टि-वृत्तान्त की यह समझ, जैसा मैं पहले दिखा चुका हूँ, पूरी बाइबल में भूमिकाओं की मूलभूत समझ की दिशा तय कर देती है। जो आदम को सिर और अगुवा मानता है, वह दंड के वचन को भी आशीष का वचन समझेगा और हर जगह भूमिका की इसी समझ को पढ़ डालेगा। जो इस मार्ग पर पूरी संगति से चलना चाहता है, उसे बहुत भिन्न-भिन्न प्रकार के लोगों वाले विवाहों की जीवन-वास्तविकता का सामना करना होगा। यदि पत्नी सशक्त और पति दुर्बल है, तो अधीनता विनाश की ओर ले जा सकती है। मैं इस बात का समर्थन करता हूँ कि पारस्परिक अधीनता को जिया जाए, और विवाह में भिन्न-भिन्न स्वभावों के पापी झुकावों को खुलकर नाम दिया जाए और परमेश्वर के आत्मा के द्वारा मिलकर उनसे लड़ा जाए।

अदन में मैंने एक मानव-जोड़ा पाया है, जो एक-दूसरे को पूरा करता है, समान मूल्य और समान दर्जे वाला, बिना पदानुक्रम के अन्तर के। पुरुष के किसी बड़े अधिकार के बिना।

पर क्या प्रेरितों के ये निर्देश सचमुच एक पदानुक्रम की नींव नहीं डालते?

मुझे विश्वास है कि पदानुक्रम का अन्तर पतन का परिणाम है। इसमें लीपापोती करने को कुछ नहीं, और इसे मसीही भी नहीं बनाया जा सकता। सुसमाचार ने सब विश्वासियों को परमेश्वर के पुत्र बना दिया है। स्त्रियों को भी। और इस प्रकार उन्हें पतित सृष्टि-संस्कृति से मुक्त कर दिया है। यह बात सबसे पहले और सबसे बढ़कर विश्वासी पतियों को पहचाननी चाहिए। इसीलिए उन्हें, न कि स्त्रियों को, निःस्वार्थ प्रेम के लिए बुलाया गया है, और प्रभुता करने के लिए नहीं। इससे अलग बात यह है कि यहाँ प्रभुता करने को नकारात्मक नहीं, बल्कि सकारात्मक अर्थ में समझा जाना चाहिए, जैसा सृष्टि के आदेश में भी समझा जाना है। वास्तव में पति के लिए प्रभुता करने, अगुवाई करने या आगे-आगे चलने का एक भी सकारात्मक आदेश नहीं है।

प्राचीन संस्कृति में यह महत्त्वपूर्ण था कि मसीहा पर नया विश्वास स्त्रियों में ऐसा व्यवहार न लाए, कि वे अब अपनी स्वतन्त्रता और समानता को पहचानकर सम्मान-और-लज्जा की संस्कृति पर प्रश्न उठाएँ। स्त्रियों को विवाह, घर और परिवार की व्यवस्था की सामान्य संस्कृति के विरुद्ध कोई प्रति-संस्कृति नहीं बनानी थी। यह व्यवस्था समाज की नींव के रूप में पवित्र मानी जाती थी और उस पर आक्रमण नहीं किया जा सकता था। सुसमाचार दाँव पर था!

मैं इसकी तुलना पौलुस से करता हूँ, जो सुसमाचार के लिए, लोगों को मसीह के लिए जीतने के लिए, यहूदियों के लिए यहूदी जैसा और यूनानी के लिए यूनानी जैसा बना। लोगों को जीतने और उन्हें विश्वास दिलाने के लिए उसने अपनी कुछ हानि सही, मसीह में अपनी स्वतन्त्रता को सीमित करके। यहाँ भी ऐसा ही है, जब स्त्रियों की अधीनता की बात आती है। वैसे, पतरस के यहाँ बात ठीक यही है: समर्पण के द्वारा अविश्वासी पति को जीतना।

सम्मान-और-लज्जा की संस्कृति में ऐसे व्यवहार से पूरी तरह बचना था, जो पति के लिए उसके परिवेश में अपमान ला सकता था। सम्मान-और-लज्जा की संस्कृतियों में लोग सब पदानुक्रमों का आदर करते हुए सौहार्दपूर्ण सम्बन्धों को बहुत महत्त्व देते हैं। इसमें यह भी आता होगा कि जो पत्नी सबके सामने अपने पति का विरोध करती या उसे सुधारती थी, वह सम्मान के इस सिद्धान्त को ठेस पहुँचाती थी।

स्त्रियों को समर्पण करने के निर्देश का आधार पुरुष और स्त्री के बीच कोई पदानुक्रमिक अन्तर नहीं है, क्योंकि ऐसा अन्तर सृष्टि में है ही नहीं। बात स्वेच्छा से अधीन रहने की है। प्राचीन काल की मसीही स्त्रियों के लिए समर्पण का आदेश सुसमाचार के काम में सहभागिता था। प्रेम करने वाला पति अधीनता को वैसे भी अनावश्यक बना देता है। पर बाहर की ओर, प्राचीन समाज में, ये निर्देश और उनका पालन भेदभाव और सताव से सुरक्षा थे। यह एक ऐसा भाव था, जिसे परिवार को नष्ट करने के हर सन्देह को आरम्भ से ही समाप्त कर देना था।

हम 21वीं शताब्दी के लोगों के लिए, जो सम्मान-और-लज्जा की संस्कृति में नहीं जीते, इस निर्देश का शब्दशः पालन सम्भव नहीं। पश्चिमी संसार में लोग एक क़ानूनी और व्यवस्थागत प्रणाली से दिशा लेते हैं। विवाह के लिए प्रेम की आज्ञा लागू होती है – एक-दूसरे के लिए जीना, एक-दूसरे के साथ जीना, और प्रभु में एक दूसरे के अधीन रहना। आलोचना प्रेम में और सही समय पर खुलकर कही जाती है, और इसमें हर प्रयास किया जाता है कि किसी को ठेस न पहुँचे।

समान अधिकारों के पक्ष में मेरे तर्कों पर मैं अक्सर इस तरह के प्रश्न सुनता हूँ:

“यह तर्क कि पुरुषों को स्त्रियों पर प्रधानता प्राप्त है, नए नियम में इतना सरल और स्पष्ट लगता है। पर आपका [विपरीत] मत बहुत जटिल लगता है, यूनानी भाषा के और सब टीकाओं के हवालों के साथ, और इसी तरह की बातों के साथ। क्या प्रभुत्व वाले मत की सरलता इस बात का पक्का प्रमाण नहीं कि वही सही मत है?”

उत्तर: बिलकुल नहीं। पवित्रशास्त्र की सबसे सरल व्याख्याएँ कभी-कभी सही होती हैं, पर कभी-कभी बहुत ग़लत। आख़िरकार यह दिखाना भी बिलकुल आसान है कि नया नियम हमें बार-बार, स्पष्ट और निःसन्देह शब्दों में आज्ञा देता है कि हम पवित्र चुम्बन से एक दूसरे को नमस्कार करें।

पवित्र चुम्बन से एक दूसरे को नमस्कार करो। (रोमियों 16:16) पवित्र चुम्बन से एक दूसरे को नमस्कार करो। (1 कुरिन्थियों 16:20) पवित्र चुम्बन से एक दूसरे को नमस्कार करो। (2 कुरिन्थियों 13:12) सब भाइयों को पवित्र चुम्बन से नमस्कार करो। (1 थिस्सलुनीकियों 5:26) प्रेम के चुम्बन से एक दूसरे को नमस्कार करो। (1 पतरस 5:14)

ये सब सीधी आज्ञाएँ हैं। आज्ञाएँ स्पष्ट हैं। हम उनका प्रचार नहीं करते, उन्हें नहीं सिखाते, उनका पालन नहीं करते, चाहे इस प्रथा को अपनाने का तर्क सरल है। इसमें समझने को क्या कठिन है?

हम पवित्र चुम्बन से (और वैसे, गुँथे हुए बालों और सोने के गहनों के निषेध से, या ओढ़नी ओढ़ने के नियम से भी) क्यों नहीं जूझते, इसका कारण यह है कि ऐसी आज्ञाएँ हमारी आज की संस्कृति के विपरीत जाती हैं और

आज अपने मूल उद्देश्य को पूरा नहीं करेंगी। हम स्त्री की भूमिका से इसलिए जूझते हैं, क्योंकि हमारी संस्कृति ने कुछ समय पहले तक स्त्रियों को पुरुषों के समान अवसर और समान मान्यता देने से इनकार किया। हमारे बड़े भाई-बहन इसी संस्कृति में बड़े हुए हैं, और बहुतों ने (स्त्रियों सहित) स्त्रियों के लिए असमान अधिकारों को उचित माना और स्वीकार किया। इसीलिए उन्हें परम्परावादी तर्क सुविधाजनक लगते हैं – और इसलिए "सरल"। [57]

इसका एक और उदाहरण कि बाइबल के प्रति कितने भी निष्ठावान लोग हों, उनमें से बहुत ही कम वह सब करते हैं जो बाइबल मसीहियों से कहती है। इसमें मेरे लिए प्रश्न यह नहीं कि हम कितने आज्ञाकारी हैं, क्योंकि हम सब अक्सर ठोकर खाते हैं। बात यह है कि क्या हम कुछ आज्ञाओं या प्रथाओं पर ध्यान भी देते हैं और उन्हें करने पर विचार भी करते हैं। पौलुस 1 कुरिन्थियों 7:5 में पति-पत्नी के बीच एक सहमति का वर्णन करता है, कि वे प्रार्थना में लगने के लिए यौन-सम्बन्ध से दूर रहें। जो पवित्रशास्त्र के शब्दशः पालन पर ज़ोर देता है, उससे पूछा जाए कि उसने अपने जीवनसाथी के साथ यह समझौता कब और कितनी बार खुलकर किया है?

अन्त में यीशु के सीधे शब्दों की ओर संकेत, जिसने अपने शिष्यों के पाँव धोते समय कहा: "यदि मैंने, प्रभु और गुरु होकर, तुम्हारे पाँव धोए, तो तुम्हें भी एक दूसरे के पाँव धोने चाहिए। क्योंकि मैंने तुम्हें एक उदाहरण दिया है, कि जैसा मैंने तुम्हारे साथ किया है, तुम भी वैसा ही करो।" (यूहन्ना 13:14-15)

पश्चिमी संसार और संस्कृति में यह एक ऐसी प्रथा है, जिसका वे मसीही भी, जो बाइबल को गम्भीरता से और शब्दशः लेते हैं, स्वयं सन्दर्भीकरण करते हैं और जिसका पालन नहीं करते।

5.3.1 निष्कर्ष

मार्गरिट मॉचको (Margaret Mowczko) लिखती हैं: वर्षों के दौरान कुछ समय यह देखने में लगाने के बाद कि क्रिया hypotassō ("समर्पण करना") आरम्भिक मसीही और ग़ैर-मसीही, दोनों प्रकार के दस्तावेज़ों में क्या अर्थ रखती है, मैं निम्नलिखित परिभाषा पर पहुँची हूँ।

"मसीही" अधीनता (अर्थात् संगी विश्वासियों के बीच अधीनता, जिसमें विश्वासी पति और पत्नियाँ भी शामिल हैं) है "दीन, निष्ठावान और प्रेमपूर्ण आदर, सहयोग और सहारा।"

दीनता और नम्रता की तरह अधीनता भी एक सामान्य मसीही चारित्रिक गुण होना चाहिए। और आदर्श रूप में वह पारस्परिक होनी चाहिए।

कैथरीन बुशनेल (Katharine Bushnell) 100 वर्ष पहले अपनी युग-प्रवर्तक पुस्तक "God's Word to Women" में लिखती हैं (देखिए इस पुस्तक के अन्त में पुस्तक-सुझाव):

"इस शब्द का सच्चा अर्थ उस मसीही अनुग्रह-वरदान या सद्गुण का वर्णन करता है, जिसमें, जहाँ किसी सिद्धान्त का प्रश्न न हो, व्यक्ति अपने अधिकारों पर अड़ने के बजाय दूसरे को आगे जाने देता है। श्लॉयस्नर

57. Guin, Jay, पृ. 157, Buried Talents, In Search for a New Consensus, 2014, Alabama

(Schleusner) का सेप्टुआजिंट का यूनानी-लैटिन शब्दकोश बताता है कि यह क्रिया सदा 'दासों जैसे समर्पण का विचार' नहीं देती। यीशु बालक के रूप में 'अपने माता-पिता के वश में रहा', फिर भी हम जानते हैं कि जब उसे 'उसमें होना था जो मेरे पिता का है', तब उसने उनसे पूछा तक नहीं (लूका 2:49,51)।

दो लोग लम्बे समय तक साझेदारी में व्यापार नहीं चला सकते, जब तक कि वे एक दूसरे के 'अधीन रहने' के लिए तैयार न हों। उन्हें अपनी पसन्द छोड़नी पड़ती है; उन्हें 'आदर करने में एक दूसरे से आगे बढ़ना' पड़ता है; उन्हें अपने विचारों का आपस में तालमेल बिठाना पड़ता है, नहीं तो वे जल्द ही अलग होने के लिए विवश हो जाएँगे। जब कोई प्रश्न उठता है, तो उनकी स्थिति इससे नहीं सुधरती कि एक को दूसरे को आदेश देने का अधिकार हो। ऐसे आदेशों का पालन करना 'अधीनता' नहीं, बल्कि दासों जैसी दीनता है, और मनुष्य दासों जैसा दीन बनने से इनकार करता है, क्योंकि यह उसके चरित्र को नीचा करने वाला होगा।

इफिसियों 5:21 में प्रेरित सब विश्वासियों को, लिंग का विचार किए बिना, चेतावनी देता है: 'मसीह के भय में एक दूसरे के अधीन रहो'। पतरस सब विश्वासियों से, लिंग का विचार किए बिना, कहता है: 'पर तुम सब एक दूसरे के साथ व्यवहार में दीनता का वस्त्र पहन लो!' (1 पतरस 5:5)। ये स्थान स्पष्ट रूप से पुरुषों के लिए 'समर्पण' ठहराते हैं, फिर भी सब सहज रूप से अनुभव करते हैं कि इनका अर्थ यह नहीं हो सकता कि मसीही बनने पर पुरुष एक दूसरे की मनमानी प्रभुता के नीचे आ सकते हैं।

पर जब हम उन तीन बाइबल-स्थानों पर आते हैं, जिनमें प्रेरित पत्नियों को चेतावनी देता है कि वे अपने-अपने पति के अधीन रहें, तो यदि कोई प्रश्न उठाए कि क्या 'पत्नियों' को दी गई इस चेतावनी का अर्थ पूर्ण आज्ञाकारिता है, तो उसे लगभग विधर्मी माना जाता है। 'समर्पण' शब्द का, जैसा मैंने दिखाया है, आज्ञाकारिता के रूप में अर्थ नहीं लगाया गया है, जहाँ वह पुरुष के पुरुष से सम्बन्ध की बात करता है, और वहाँ भी नहीं, जहाँ उसका अर्थ किसी स्त्री के प्रति पुरुषों का 'समर्पण' हो सकता है, जैसे 1 कुरिन्थियों 16:16 में। इसके अतिरिक्त, हर बार जब पत्नियों का अपने पतियों से, बच्चों का अपने माता-पिता से, और सेवकों का अपने स्वामियों से सम्बन्ध वर्णित होता है, तो शब्दों के प्रयोग में सावधानी से भेद किया जाता है। 'आज्ञाकारिता' शब्द सामान्यतः सेवकों के लिए और सदा बच्चों के लिए प्रयोग होता है, पर 'समर्पण' शब्द सदा पत्नियों के लिए। यदि अर्थ एक ही है, तो भिन्न-भिन्न शब्दों के चुनाव में यह सावधानी क्यों? पत्नियों के कर्तव्य के लिए देखिए इफिसियों 5:22; कुलुस्सियों 3:18; तीतुस 2:5। बच्चों के कर्तव्य के लिए इफिसियों 6:1; कुलुस्सियों 3:20। सेवकों के विषय में देखिए इफिसियों 6:5; कुलुस्सियों 3:22।

यह खोजना बहुत अर्थपूर्ण और शिक्षाप्रद है कि पुराने नियम में 'वश में होना' शब्द कभी-कभी किस अर्थ में प्रयोग होता है। भजन संहिता 62:1 में लिखा है: 'केवल परमेश्वर की ओर मेरा प्राण चुपचाप बाट जोहता है, उसी से मेरा उद्धार होता है' (Schlachter, जर्मन बाइबल अनुवाद)। उसी भजन के पद 5 में हम पढ़ते हैं: 'केवल परमेश्वर की ओर मेरा प्राण चुपचाप बाट जोहता है।' भजन संहिता 37:7 में ये शब्द मिलते हैं: 'यहोवा के सामने चुपचाप रह और उसकी बाट जोह।' पहले स्थानों में 'बाट जोहना' शब्द और अन्तिम स्थान में 'चुपचाप रहना' शब्द – तीनों – यूनानी अनुवाद में एक ही शब्द hypotassō, 'वश में होना', से व्यक्त किए गए हैं, जबकि मूल इब्रानी शब्द का शाब्दिक अर्थ '... के प्रति चुप रह' है। इसकी तुलना 1 पतरस 3:1,2 से कीजिए, जहाँ स्त्रियों से कहा गया है कि वे अविश्वासी पतियों को 'समर्पण' के द्वारा जीतें। निश्चय ही पतरस

यहाँ पत्नियों से यह नहीं कह रहा कि वे आँख मूँदकर अविश्वासियों की आज्ञा मानें, क्योंकि अन्यजातियों के मामले में वे उन्हें तुरन्त मूर्तिपूजा में लौटने के लिए विवश करते, और यहूदियों के मामले में यहूदी धर्म में। बल्कि मसीही स्त्रियों को उन्हें अपने 'चालचलन' से, 'बिना वचन के', झूठे विश्वास से हटाकर मसीही विश्वास के लिए जीतना है – काम तो शब्दों से अधिक ऊँचा बोलते ही हैं। 'भय के साथ' – परमेश्वर का ऐसा भय, जो दैनिक जीवन में इतनी कोमल, शान्त और धीरजवन्त इन स्त्रियों को परमेश्वर के प्रति अपनी विश्वासयोग्यता में चट्टान जैसा दृढ़ बना देता; और उनकी शान्त सिद्धान्त-निष्ठा से, और साथ ही, जहाँ कोई सिद्धान्त ख़तरे में न हो, वहाँ अपने पतियों की बात मान लेने की तत्परता से, अविश्वासी पति इतने अभिभूत हो जाते कि वे अपनी पत्नियों को उनके विवेक के विरुद्ध काम करने के लिए विवश करने का साहस न करते, और इस प्रकार वे स्वयं धीरे-धीरे मसीही विश्वास में ले आए जाते।"

"समर्पणशीलता कोई लैंगिक भूमिका नहीं है। यह भूमिका भी नहीं है। यह मसीह में सब भाइयों और बहनों के लिए एक भाव और एक व्यवहार है, जिसमें पारस्परिक अधीनता आदर्श है। पहली और आरम्भिक दूसरी शताब्दी की कलीसिया में पारस्परिक समर्पण कोई अनजानी अवधारणा नहीं था, और आज कलीसिया में यही मानदंड होना चाहिए।"

आर्मिन वुंडरली (Armin Wunderli)

यदि हम वह जीते जो बाइबल में लिखा है, तो हमें किसी नारी-मुक्ति की आवश्यकता न होती, क्योंकि तब पुरुषों और स्त्रियों के समान अधिकार होते। डैनी सिल्क (Danny Silk)

यदि हम उसे चाहेंगे नहीं, तो वह हमें मिलेगी भी नहीं – बिना शर्त समान अधिकार।

वेरोनिका श्मिट (Veronika Schmidt)

6 कलीसिया में पुरुष और स्त्री

विश्वव्यापी कलीसिया सबसे अच्छी छाप नहीं छोड़ती। इसका सम्बन्ध भक्ति, प्रार्थना और आज्ञाकारिता के साथ-साथ ग़लत धारणाओं से भी है, जिनके दूरगामी परिणाम होते हैं। इसलिए बहुत-से लोग कम आँकते हैं कि लिंग के प्रश्न की ग़लत समझ कितनी हानि पहुँचाती है। बहुत-से प्रभावित लोगों के जीवन में, सामान्य रूप से कलीसिया में, और उसके बाहरी प्रभाव में, अर्थात् उसकी मिशनरी गवाही की शक्ति में।



यदि कोई पुरुष और स्त्री के विषय में किसी पदानुक्रमिक सिद्धान्त का अनुसरण करता है, तो वह केवल विवाह पर लागू नहीं होता। तब वह अपने-आप कलीसिया की भूमिकाओं पर भी लागू होता है। केवल आराधना-सभाओं में ही नहीं, बल्कि पूरे कलीसियाई जीवन में। परमेश्वर के घर में, जो कलीसिया है, हम तो सदा रहते हैं!

अध्याय 6 में, जहाँ स्त्रियों की उस भागीदारी की बात होनी है, जो सुनाई देने से लेकर अगुवाई करने तक जाती है, विवाह और कलीसिया के क्षेत्र एक-दूसरे पर छा जाते हैं। यदि वहाँ बात सृष्टि की व्यवस्था की होती, तो इन क्षेत्रों या दायरों में भेद नहीं किया जाता। दोनों क्षेत्र दृश्य सृष्टि में ही हैं।

इस अध्याय में 1 कुरिन्थियों 11 और 14 तथा 1 तीमुथियुस 2 के विवादित पाठों की बात है। अर्थात् स्त्रियों के सिर ढाँकने, चुप रहने और शिक्षा देने की।

इस पुस्तक का ठोस कारण कलीसिया में स्त्रियों की भूमिका थी। क्योंकि इसे बार-बार सृष्टि की व्यवस्था से जोड़ा जाता है, इसलिए अब इस क्षेत्र तक पहुँचने के लिए विस्तृत पूर्व-कार्य आवश्यक था।

ये पाठ और उनकी व्याख्या कलीसियाओं में पुरुषों और स्त्रियों की भूमिकाओं को इतना निर्धारित करते हैं, जितना कोई और पाठ नहीं। जब कोई इन पाठों का अध्ययन करता है, तो एक बात देखता है: वे कठिन हैं, परस्पर-विरोधी प्रतीत होते हैं। जब कोई ऐसी टीकाएँ पढ़ता है, जो यूनानी पाठ से जूझती हैं और उस समय के लिए और आज के लिए उसका अर्थ निकालने का प्रयास करती हैं, तो यह पुष्टि होती है कि अर्थ स्पष्ट नहीं है। या बेहतर कहें, व्याख्या की भिन्न-भिन्न सम्भावनाएँ हैं।

ये पाठ स्पष्ट कर देते हैं कि हम पाठ पर अधिकार नहीं जमा सकते, यह समझकर कि हम काले-सफ़ेद ढंग से जानते हैं कि उसका अर्थ क्या है और क्या नहीं। यह बाइबल-शब्दवादी, एक-आयामी और यहाँ तक कि घमण्ड भरा होगा। मैं भी केवल सम्भावित व्याख्याएँ प्रस्तुत करता हूँ, एक से अधिक।

पर एक बात मेरे लिए महत्त्वपूर्ण है: जो व्याख्या स्त्री के उस चित्र के विपरीत है, जो मैंने उत्पत्ति 1 और 2 में पाया है और जैसा मैंने यीशु को स्त्रियों के साथ व्यवहार करते देखा है, उसे मैं अस्वीकार करता हूँ। ऐसे पाठों की व्याख्या स्त्रियों के विरुद्ध करना, व्यवस्थावादी अर्थ में, कुछ ग़लत कर बैठने के डर से भरकर, पवित्रशास्त्र की आत्मा और सुसमाचार के अनुरूप नहीं। पौलुस कभी उसके सिवा कुछ और नहीं कहेगा, जो पवित्रशास्त्र, इब्रानी बाइबल, पुराना नियम कहता है।

हमें सीखना होगा कि पवित्रशास्त्र हमारे लिए हर जगह स्पष्ट नहीं है। सीधे, प्रत्यक्ष पाने वालों के लिए, पहली शताब्दी में, वह अवश्य स्पष्ट था। उनकी जीवन-परिस्थितियों और सांस्कृतिक परिवेश में।

आज हम सीखने वाले हैं, जो पवित्र आत्मा की अगुवाई में चल रहे हैं और जीवन भर अपने विचार, अपनी अन्तर्दृष्टियाँ, अपनी राय और अपने दृढ़ विश्वास बदल सकते हैं। हम थोड़ा-थोड़ा करके जानते हैं। कभी-कभी हम चूक जाते हैं और हमें स्वयं को सुधारना पड़ता है।

दृष्टिकोण का बदलना जीवन का एक भाग है। जो समझता है कि उसने इन पाठों का अर्थ सदा के लिए समझ लिया है, अर्थात् समझता है कि वह स्थिर है, वह चौकस रहे कि कहीं गिर न पड़े।

मुझे हमेशा कुछ डर लगता है, जब इन पाठों की व्याख्या लगभग गणित की तरह की जाती है, और उनका अर्थ बड़े दृढ़ विश्वास के साथ, मानो किसी ने एकमात्र मान्य सत्य पहचान लिया हो, प्रस्तुत किया जाता है और कलीसियाई जीवन के लिए एक स्पष्ट नियम के रूप में उसकी माँग की जाती है।

आगे के अध्यायों में मैं भिन्न-भिन्न व्याख्याएँ प्रस्तुत करूँगा। इसका मनमानी से कोई लेना-देना नहीं। न ही इससे – जैसा विशेषकर “बाइबल के प्रति निष्ठावान” मसीही लगातार आरोप लगाते हैं – कि परमेश्वर के वचन का अर्थ बदलकर उसे अपनी इच्छाओं के अनुसार ढाल लिया जाए।

मेरे लिए बाइबल के प्रति निष्ठावान होने का अर्थ है स्पष्ट बुद्धि से वचन के अर्थ की खोज करना। पाठ से प्रश्न पूछना उचित है और आगे बढ़ने में सहायता करता है। साथ ही दीनता से इस वचन के अधीन होना, इस मूल भरोसे के साथ कि हमारे सामने परमेश्वर का विश्वसनीय वचन है। अपनी व्याख्या को सत्य घोषित न करना,

बाइबल के वचनों की व्याख्या अलग-थलग करके नहीं, बल्कि पत्री के, नए नियम के और पूरी बाइबल के सन्दर्भ में करना। मैं यह मानकर चलता हूँ कि विरोधाभास नहीं हैं। यदि वे हैं, या ऐसा दिखता है, तो उनके लिए व्याख्याएँ हैं (या कोई नहीं भी)।

6.1 1 कुरिन्थियों 11 – सिर, बाल और ओढ़नी

यह (आधा) अध्याय, 1 कुरिन्थियों 11:1-16, उन मुख्य पाठों में से है जिन्हें पुरुष और स्त्री की सृष्टि की व्यवस्था के प्रमाण में प्रस्तुत किया जाता है। कहा जाता है कि यहाँ स्पष्ट रूप से पुरुष की अगुवाई की भूमिका की बात है, जो स्त्री के सिर ढकने में भी दिखाई देती है।

रूढ़िवादी, बाइबल के प्रति निष्ठावान खेमे से मैं सुनता हूँ कि यह पाठ कितना स्पष्ट और साफ़ है। वह केवल उन्हीं के लिए कठिन है जो वचन के स्पष्ट निर्देशों का विरोध करना चाहते हैं। इस प्रकार कि वे उसे उस समय की संस्कृति से बँधा हुआ और आज के लिए अमान्य मानते हैं।

दूसरी ओर वे बहनें हैं जो सिर ढकने और बाल काटने के किसी भी नियम का पालन नहीं करतीं, पर फिर उनके विवेक पर बोझ रहता है। उनके विपरीत वे हैं जो अक्षरशः उनका पालन करती हैं, या ऐसा करने का विश्वास करती हैं।

बाइबल के प्रति सारी निष्ठा के बावजूद, मूल में बात, जैसा अक्सर होता है, व्याख्या के प्रश्नों (व्याख्या-शास्त्र, हर्मेनयूटिक्स) की है। 40 से अधिक वर्षों से मैं इस जटिल पाठ को समझने का प्रयास कर रहा हूँ। इस पर मैंने बहुत कुछ पढ़ा है। मुझे समझ में आने वाले से लेकर रोंगटे खड़े कर देने वाले स्पष्टीकरण और व्यवहार के ढर्रे मिले हैं।

इस खंड की विस्तृत व्याख्या यहाँ संभव नहीं है, यद्यपि यह अध्याय पुस्तक का सबसे लंबा अध्याय है। इस पर बहुत सी व्याख्याएँ हैं, जो एक-दूसरे को पूरा करती हैं, पर एक-दूसरे का खंडन भी करती हैं। मेरे विचार भी केवल एक संभावना हैं। शायद यह संभावना पाठक की सहायता करे कि वह इस कठिन पाठ से पहले से अधिक पा सके। कोई भी यह विश्वास नहीं कर सकता, और न उसे करना चाहिए, कि उसके पास सच्ची व्याख्या है, और फिर उससे व्यवहार के नियम और बाहरी बातें निकाले।

अगले चरणों में मैं कैसे आगे बढ़ूँगा?

(1) पहले मैं कुछ पहलू गिनाऊँगा, जो पाठ पढ़ते समय सहायक हो सकते हैं।

(2) फिर मैं पाठ के लागू होने का क्षेत्र निर्धारित करने का प्रयास करूँगा।

(3) उसके बाद विस्तार से सिर शब्द के अर्थ की बात होगी।

(4) कुरिन्थुस में सिर ढकने के विषय में अधिक पृष्ठभूमि लानी होगी।

(5) सिर पर अधिकार का चिह्न एक कुंजी-पद है, पर उसका अर्थ वह नहीं है जो बहुत से लोग मानते हैं।

(6) पाठ का व्याख्यात्मक भावानुवाद, जैसे मैं इसे संक्षेप में समझाऊँगा।

(7) 21वीं शताब्दी के लिए वर्तमान प्रासंगिकता स्पष्ट करनी है।

6.1.1 पाठ की व्याख्या के लिए मार्गदर्शक सिद्धान्त और संकेत

बहुत से लोग पौलुस का यह पाठ पहली बार नहीं पढ़ रहे। आगे कुछ पहलू दिए गए हैं जो एक नया मार्ग खोल सकते हैं। वे इस पाठ के साथ मेरे काम का और बहुत से अध्ययनों का परिणाम हैं। वे सहायता कर सकते हैं कि हम उस अभ्यस्त पठन में न पड़ जाएँ, जो पाठ को स्त्री (स्त्रियों) की पदानुक्रमिक अधीनता के चश्मे से समझता है।[58]

यह पाठ सबसे बढ़कर इस बात पर बल देता है कि सब कुछ परमेश्वर की महिमा के लिए कैसे हो, न कि पुरुषों की या स्त्रियों की महिमा के लिए।

बात आराधना में परमेश्वर की महिमा को उभारने की है, इस प्रकार कि पुरुष और स्त्रियाँ ऐसा व्यवहार करें और ऐसे वस्त्र पहनें कि ध्यान उन पर न जाए।

(कुछ) पुरुष पौलुस की इस शिक्षा का कारण थे, क्योंकि वे माँग करते थे कि स्त्रियाँ अपनी ओढ़नी उतार दें।

सांस्कृतिक और सामाजिक रीति-रिवाजों की बात की गई है। इसलिए लज्जा और अनादर को धर्मवैज्ञानिक रूप से, परमेश्वर की दृष्टि में, नहीं, बल्कि समाज की भावना के अनुसार समझना है।

इसलिए बात पौलुस की सर्वकालिक, सार्वभौमिक आज्ञाओं की नहीं है, भले ही वह सृष्टि के वृत्तांत का उल्लेख करता है।

मसीह में स्वतंत्रता और इस बात के बीच तनाव है कि सीमाएँ स्वीकार करके अपने परिवेश के लिए ठोकर का कारण न बनें।

बात बालों को ढकने की है (केवल सिर की नहीं), और न ही पूरे शरीर को परदे में ढकने की।

बात उस पदानुक्रमिक सृष्टि की व्यवस्था की नहीं है जिसमें पुरुष स्त्री के ऊपर है। बात पुरुष के अधीन स्त्री की अधीनता की नहीं है। दोनों प्रार्थना करते हैं और भविष्यद्वाणी करते हैं, समान दर्जे के और समान स्थान वाले; दोनों को लिंग के अनुसार बाहरी व्यवहार के नियमों का ध्यान रखना है।

पौलुस अंततः सब स्त्रियों और पुरुषों के बारे में बोलता है, केवल विवाहितों के बारे में नहीं, यद्यपि सिर-देह का रूपक केवल उन्हीं पर लागू होता है। प्रार्थना और भविष्यद्वाणी सब करते हैं – विवाहित, दासियाँ और विधवाएँ।

वस्त्र या केश-सज्जा जैसी बाहरी बातें सुसमाचार कभी निर्धारित नहीं करता। पुरानी वाचा की उपासना-विधि में वे निर्धारित हैं, पर नई वाचा में नहीं, जिसे कुरिन्थी प्रभु-भोज में मनाते थे।

58. इस विवेचन का एक विस्तृत रूप होमपेज पर मिलता है: www.hans-joerg-ronsdorf.de

एक अन्यजातीय परिवेश में पौलुस ऐसा मार्ग खोजता है जिससे लोगों की अपनी-अपनी संस्कृति में उनके लिए ठोकर बने बिना सुसमाचार फैलाने वाला जीवन जीना संभव हो।

बात 21वीं शताब्दी में पुरुषों और स्त्रियों के व्यवहार के नियमों की नहीं है।

यहाँ आगे बढ़ने से पहले अब आप यहाँ बताई गई मान्यताओं को ध्यान में रखते हुए पाठ पढ़िए। चाहे आप अब तक इसे अलग ढंग से देखते हों, फिर भी इसे एक बार विचार की एक संभावना के रूप में आने दीजिए, ताकि आप एक दूसरा दृष्टिकोण अपना सकें, जिससे तुरंत सहमत होना आवश्यक नहीं।

6.1.2 पाठ का लागू होने का क्षेत्र

यह पाठ किस स्थान या किस परिवेश के लिए है? पद 4 और 5 में पौलुस उन पुरुषों और स्त्रियों के बारे में लिखता है जो प्रार्थना करते हैं और भविष्यद्वाणी करते हैं। क्या यह इकट्ठा होने पर, अर्थात् आराधना सभा पर, लागू होता है? आराधना में "स्त्रियों के चुप रहने" के समर्थक इसे अस्वीकार करते हैं। उनकी दृष्टि में अनुवादकों और व्याख्याकारों का अधिकतर भाग भूल करता है, जो इसे सभा से जोड़ता है (इस खंड के शीर्षकों में ही)। विचित्र बात यह है कि ठीक वही लोग सभा के लिए सिर ढकने के निर्देशों की "सिफ़ारिश" करते हैं, यद्यपि उनके अनुसार यह पाठ उसके लिए लागू नहीं होता।

इस पाठ को इकट्ठा होने से न जोड़ने के पीछे दो मान्यताएँ हैं:

1. आगे के पाठ में, पद 17 से, विषय बदलता है और तब से स्पष्ट रूप से कलीसिया के इकट्ठा होने से संबंधित है। इकट्ठा होने का शब्द पद 17 से कई बार आता है। पद 18, 20, 33, 34 में, परन्तु 11:1-16 के खंड से पहले या उसमें नहीं।
2. आगे कुरिन्थियों की पत्री में, 14:34-36 में, स्त्रियों को सभा में चुप रहना है। कहा जाता है कि मौन की यह निरपेक्ष आज्ञा (इस पर विस्तार से अध्याय 6.2 में) 11:5 में पौलुस के कथन को हर संभव अवसर की ओर भेज देती है, पर ऐसे सब अवसरों की ओर जो सभा के बाहर हैं।

दोनों तर्क उतने विश्वसनीय नहीं हैं जितने लगते हैं:

- तब क्या सिर ढकना (यदि आज उसकी माँग है) सभा के लिए पूरी तरह अप्रासंगिक होगा?
- क्या यह कथन कि पुरुष स्त्री का सिर है, सभा के लिए लागू नहीं होता? मौन की आज्ञा का आधार तो अधीनता ही बताया जाता है (14:34)।
- तब अध्याय 11 आख़िर किन अवसरों के लिए मान्य है? उन बहुत सी संभावनाओं की ओर संकेत किया जाता है जो सभा के बाहर बहनों के लिए हैं। निश्चय ही वे हैं, पर इस पत्री में कहीं भी उनकी बात नहीं है। 1 कुरिन्थियों में पौलुस के यहाँ प्रार्थना (एक अपवाद के साथ) और भविष्यद्वाणी (अध्याय 14) केवल सभा में ही होती हैं।

- क्या प्रभु की मेज़ (अध्याय 10) के सिद्धांत रोटी तोड़ने के लिए इकट्ठा होने पर इसलिए लागू नहीं होते कि 11:17 से पहले इकट्ठा होने की क्रिया का उल्लेख नहीं है?
- सप्ताह के पहले दिन का चंदा इकट्ठा होने के समय ही होता था, भले ही इसका स्पष्ट उल्लेख न हो (1 कुरिन्थियों 16:1-4)।

दूसरे उपस्थित लोगों के लिए दिखाई देने वाले चिह्न के रूप में सिर ढकना या न ढकना ऐसे निर्देश के लिए एक सभा को पूर्व-शर्त बना देता है। वरना दिखाई देने वाले चिह्न व्यर्थ हैं। 1 कुरिन्थियों में लोगों का, या विश्वासियों का, एक जगह जमा होना हमेशा सभा के लिए इकट्ठा होना ही है।

6.1.3 एक सिर वाले तीन जोड़े

पौलुस तीन जोड़ों से आरंभ करता है, जिनमें से हर एक का एक सिर है। पहले: हर पुरुष का सिर मसीह है। फिर: स्त्री का सिर पुरुष है। अंत में: पर मसीह का सिर परमेश्वर है। यहाँ मैंने लंबे समय तक सार्वभौमिक पदानुक्रम की सीढ़ियाँ देखीं, इस क्रम में:

परमेश्वर

मसीह

पुरुष

स्त्री

यदि मैं सिर शब्द को सीधे ऊपर के अधिकार के रूप में समझूँ, तो यही पदानुक्रम या दर्जों का क्रम बनता है। प्रश्न यह है कि क्या पौलुस का यही उद्देश्य है। क्या यहाँ सिर का अर्थ अधिकार है?

इस क्रम में स्त्री सबसे नीचे है। इस मॉडल में उसका मसीह से कोई संबंध नहीं। उसका पति (या सामान्य रूप से पुरुष) एक प्रकार का मध्यस्थ लगता है। पर हर पाठक इसकी पुष्टि करेगा कि पुरुष स्त्री और मसीह के बीच खड़ा नहीं हो सकता। दर्जों का यह क्रम पाठ के क्रम से मेल नहीं खाता, इसलिए वह इस रूप में न अभिप्रेत है और न उपयोगी।

यदि स्त्रियों के ऊपर अधिकार का एक चिह्न होना चाहिए (पद 10), तो पुरुष में, जिसके ऊपर भी एक अधिकार है, यह किससे पहचाना जाए? मसीह में किस बाहरी चिह्न से यह पहचाना जाता है कि वह परमेश्वर के वश में है? शायद उसके लंबे बाल थे, किसी नाज़ीर की तरह, जिसे इस पाठ में लज्जा कहा गया है।

हर जोड़ा अपने आप में अलग है। इसमें एक समझाने वाली, स्पष्ट करने वाली या सुधारने वाली तुलना देखनी है। ये जोड़े समझाने के उदाहरणों के रूप में एक-दूसरे के बगल में खड़े हैं। आदेश की श्रृंखला के रूप में नहीं। यह क्रम अन्य बातों के साथ इस ओर भी संकेत कर सकता है कि पौलुस पहले उन पुरुषों को संबोधित करता है जो माँग करते थे कि स्त्रियाँ अपनी ओढ़नी उतार दें।



यह आरेख दर्जों के क्रम से मुक्त हो जाता है। पदानुक्रमिक व्यवस्था इस अध्याय की कुंजी नहीं है।

6.1.4 सिर का क्या अर्थ है?

यह प्रश्न उतना सरल नहीं है जितना कभी-कभी कहा जाता है। बल्कि विशेषज्ञों के बीच इस पर गरम बहस होती है।

लाक्षणिक अर्थ में, चित्रात्मक या रूपक के रूप में, Haupt (सिर) शब्द हमारी भाषा (जर्मन) में जल्दी ही अधिकार से जोड़ दिया जाता है। हमारे भाषा-प्रयोग में: Hauptmann (कप्तान, शाब्दिक रूप से "सिर-पुरुष"), Hauptzollamt (मुख्य सीमा-शुल्क कार्यालय), Hauptstraße (मुख्य सड़क) या इसी प्रकार के शब्द। जर्मन में इन सब शब्दों में "सिर" (Haupt) है। भाषा से प्रभावित होकर हम सहज रूप से इससे अधिकार, प्रभुत्व, अगुवाई, ऊपर होना, किसी ज़िम्मेदार व्यक्ति को जोड़ते हैं।

उस समय सिर का अर्थ क्या था? उसका अर्थ सामान्य रूप से अधिकार नहीं था। तब भी नहीं, जब दूसरे संदर्भों में उसका यह अर्थ था। यदि पौलुस अधिकार व्यक्त करना चाहता है, तो भी अधिकतर समझाने के लिए। क्योंकि पुरुषों को स्पष्ट किया जाता है कि स्त्री पर अपने अधिकार के बारे में सोचने से पहले उन्हें मसीह के अधीन अपनी अधीनता का ध्यान रखना होगा। यही स्त्रियों के साथ उनके संबंध और उनके प्रति उनके दृष्टिकोण को निर्धारित करे। अंत में, पूर्ण रूप के रूप में, परमेश्वर का मसीह से संबंध भी आदर्श होना चाहिए। यह संबंध अधिकार के प्रश्न से अधिक एकता और समानता से निर्धारित होगा।

एकहार्ड जे. श्नाबेल (Eckhard J. Schnabel) लिखते हैं: "पौलुस का उद्देश्य स्त्री की व्यवस्था और पुरुष के 'अधिकार' का आधार देना नहीं है, बल्कि यह दिखाना है कि सब का – हर पुरुष का, हर स्त्री का और मसीह का भी – एक 'सिर' है, अर्थात् वे एक प्रमुख स्थान वाले व्यक्ति से जुड़े हैं और उस व्यक्ति के प्रति

निष्ठा के ऋणी हैं।"[59] निष्ठा का अर्थ विश्वासयोग्यता है, जिसकी नींव किसी पदानुक्रम या अधीनस्थता में नहीं, बल्कि सबसे बढ़कर एक संबंध और जुड़ाव में है।

सिर (यूनानी: kephale) का अर्थ उद्गम भी है। आगे चार कारण दिए गए हैं कि 1 कुरिन्थियों 11 में इस शब्द का अर्थ (केवल) अधिकार या अगुवा क्यों नहीं है:[60]

पुराने नियम के यूनानी अनुवाद (सेप्टुआजिंट) में सिर का अनुवाद kephale से किया गया है। इब्रानी में, जर्मन की तरह, (rosh) का अर्थ "सिर", "अगुवा" या "शासक" हो सकता है। जिन स्थानों पर rosh का अर्थ अगुवाई करने वाला व्यक्ति था, वहाँ अनुवादकों ने अधिकतर kephale का प्रयोग नहीं किया। उसके स्थान पर उन्होंने सामान्यतः यूनानी archôn का प्रयोग किया, जिसका अर्थ लगभग "अगुवा" या "शासक" है। इब्रानी शब्द का अर्थ आरंभ या उद्गम भी हो सकता है।

एक और संकेत दिखाता है कि प्राचीन यूनानी में kephale का सामान्य अर्थ "अगुवा" नहीं था। Liddell-Scott-Jones Greek-English Lexicon में kephale की ऐसी कोई परिभाषा नहीं है जो "अगुवा" के निकट आए या भावार्थ में "अधिकार" के। आर. सर्विन (R. Cervin) बताते हैं कि अलग-अलग अन्यजातीय, प्राचीन यूनानी लेखकों – जैसे ज़ेनोफ़ोन (Xenophon), हेरोडोटस (Herodot), प्लेटो (Platon), थ्यूसीडाइडीज़ (Thukydides), सोफ़ोक्लीज़ (Sophokles), ऐस्किलस (Aischylos), पॉलीबियस (Polybius), डायोडोरस सिकुलस (Diodorus Siculus) और अन्य – की रचनाओं के शब्दकोशों में kephale की ऐसी कोई परिभाषा नहीं है जिसका अर्थ लगभग "अगुवा" हो। "सिर", जिसका अर्थ लगभग "अगुवा" हो, ईसवी चौथी शताब्दी तक अन्यजातीय यूनानी साहित्य में व्यावहारिक रूप से प्रमाणित नहीं है। इसके विपरीत मसीही शब्दकोश इस शब्द को अधिकार के रूप में देते हैं। यद्यपि नए नियम के शब्दकोश kephale के लिए "अगुवा" की परिभाषा देते हैं, यह ध्यान देना महत्वपूर्ण है कि इस शब्द के साथ केवल परमेश्वर (1 कुरिन्थियों 11:3), यीशु मसीह (1 कुरिन्थियों 11:3; इफिसियों 1:22-23; 4:15-16; 5:23; कुलुस्सियों 1:18-19; 2:9-10; 2:18-19), पुरुषों (1 कुरिन्थियों 11:3) और पतियों (इफिसियों 5:23) का उल्लेख होता है। केवल पौलुस के द्वारा। यदि वह kephale को अगुवे या सर्वोच्च के अर्थ में प्रयोग करता है, तो वह अपनी पत्रियों में कहीं और अगुवाई के पदों पर या शासन में बैठे लोगों के लिए इस शब्द का प्रयोग क्यों नहीं करता?

आरंभिक कलीसिया के कई यूनानी-भाषी कलीसियाई पिताओं ने 1 कुरिन्थियों 11:3 में kephale का अर्थ "उद्गम" या "आरंभ" या "स्रोत" माना, यद्यपि उनमें से कुछ ने ऐसे समय में लिखा जब kephale का अर्थ कभी-कभी "अगुवा" या "अधिकार रखने वाला व्यक्ति" हो सकता था। इसके अतिरिक्त ये कलीसियाई पिता वैसे भी यह विश्वास करते थे कि पुरुषों के पास स्त्रियों से अधिक अधिकार था और पुरुष स्त्रियों से श्रेष्ठ हैं। फिर भी उन्होंने इस दृष्टिकोण के समर्थन में 1 कुरिन्थियों 11:3 का प्रयोग नहीं किया। ये पुरुष और दूसरे लोग चिंतित थे कि यदि 1 कुरिन्थियों 11:3 में kephale को "शासक" या "अधिकार" के रूप में समझा जाए, तो इससे एक विकृत मसीह-विज्ञान (क्रिस्टोलॉजी) उत्पन्न होगा। इसके स्थान पर उन्होंने kephale को "आरंभ" या "स्रोत" के अर्थ में समझा।

59. Schnabel, E. J., Der erste Brief des Paulus an die Korinther, Witten; Gießen 2018, 597.
60. मार्गरिट मोव्च्को (Margaret Mowczko), सिडनी, द्वारा संकलित: www.margmowczko.com

यूनानी-रोमी समाज पितृसत्तात्मक था। हमारे पास बहुत सी रचनाएँ हैं जिनमें यूनानी लेखकों ने पुरुषों और पतियों के प्रभुत्व के बारे में लिखा। पर पौलुस और उसके बाद आने वाले मसीही लेखकों के सिवा किसी दूसरे लेखक ने "सिर" शब्द का प्रयोग नहीं किया, जब वे किसी पति के उसकी पत्नी के साथ संबंध के बारे में, या सामान्य रूप से पुरुषों और स्त्रियों के बारे में लिखते थे। मसीही साहित्य के बाहर प्राचीन यूनानी में kephale का प्रयोग कभी भी पुरुष-स्त्री के संदर्भ में नहीं होता।

मेरा सुझाव है कि 1 कुरिन्थियों 11:3 में kephale को "उद्गम" या "आरंभ" या, जैसा कुछ लोग कहते हैं, "स्रोत" के अर्थ में पढ़ा जाए। विस्तार से स्पष्टीकरण इस प्रकार है:

"हर मनुष्य का उद्गम मसीह है", अर्थात् मसीह सृष्टि में परमेश्वर का प्रतिनिधि है। 1 कुरिन्थियों 8:6 में पौलुस बल देता है कि यीशु मसीह वही है "जिसके द्वारा सब वस्तुएँ हैं"।

"स्त्री का उद्गम पुरुष है" (अर्थात् उत्पत्ति 2:21-23)। स्त्री [ishah] "पुरुष [ish] में से निकाली गई" है।

"मसीह का उद्गम परमेश्वर है" (अर्थात् मसीह "मसीहा" है और मसीहा का उद्गम परमेश्वर है)। बाद की शताब्दियों की भाषा में कहा जाता है: "पुत्र पिता से निकलता है"। मसीह परमेश्वर से आता है।

1 कुरिन्थियों 11:2-16 में उत्पत्ति 2 के सृष्टि-वृत्तांत की ओर और पुरुष और स्त्री के उद्गम की ओर कई संकेत मिलते हैं (11:8-9; 11-12)। इसलिए संदर्भ में यह विश्वसनीय है कि 1 कुरिन्थियों 11:3 सृष्टि और उद्गम की ओर संकेत करता है।

हम निश्चित रूप से नहीं कह सकते कि सिर का पूरा अर्थ क्या है। क्या यह बहुअर्थी है, या हर "जोड़े" पर सब कुछ ठीक एक जैसा लागू होता है? स्त्री के सिर के रूप में पुरुष की भूमिका किस हद तक मसीह के सिर के रूप में परमेश्वर के स्थान के समान है? इसलिए संयम आवश्यक है, और यह तौलना है कि यह पद 3 पूरे आगे के अनुच्छेद के लिए किस प्रकार एक मार्गदर्शक विचार या शीर्षक हो सकता है।

पुरुष का सिर होना अधिकार से अधिक है, यदि कोई इस शब्द को अनिवार्य रूप से इसी प्रकार समझना चाहे। इसका अर्थ समान रूप से उद्गम और स्रोत भी है। मैं स्वयं इससे यह निकालूँगा, जैसा मैंने अध्याय 5.2 में पहले ही दिखाया है, कि यह एकता और जुड़े होने पर भी बल देता है। और देह के लिए सिर के पोषण और सुरक्षा के कार्य पर भी, सँभालने और सहारा देने पर भी।

शायद यहूदी प्रभाव भी थे, जिनका पौलुस विरोध करता है। उत्पत्ति के वृत्तांत के प्रकाश में, न कि इसके उलट, पौलुस यहाँ गलत समझी गई, अर्थात् यहूदी ढंग से समझाई गई सृष्टि-कथा को सुधारता हुआ लगता है। उसी से सामान्य रूप से यहूदीवादियों ने, और विशेष रूप से कुरिन्थुस में, स्त्री की अधीनता का आधार बनाया था और उससे सिर ढकने और लंबे बालों जैसी बाहरी बातें जोड़ दी थीं।

पौलुस सृष्टि के वृत्तांत के अर्थ में इसका खंडन करता है: स्त्री पुरुष (पति) के बिना कुछ नहीं है। और ठीक वैसे ही पुरुष स्त्री (पत्नी) के बिना कुछ नहीं है। वे एक-दूसरे को पूरा करते हैं। और यह कैसे हुआ? स्त्री पुरुष में से आई। और फिर आगे क्या हुआ? हर पुरुष एक स्त्री से जन्म लेता है। सृष्टि के वृत्तांत को इससे बेहतर ढंग से सार में कैसे कहा जा सकता है? और उनके समान मूल्य और समान दर्जे को इतने विश्वसनीय ढंग से

कैसे व्यक्त किया जा सकता है? दोनों, पुरुष और स्त्री, परमेश्वर के हाथ से गढ़े हुए आते हैं, एक-दूसरे के पूर्ण पूरक और आमने-सामने के साथी के रूप में। एक ओर अलग-अलग, पर जीवन की वास्तविकता में अक्सर अदल-बदल सकने वाली भूमिकाओं के साथ, जो लिंग से निर्धारित नहीं होतीं।

पुरुष और स्त्री के इस समान दर्जे के पूरक के रूप में अध्याय 7:3-5 में पौलुस की पहले की शिक्षा भी है:

"पति पत्नी के प्रति अपना वैवाहिक कर्तव्य पूरा करे, और वैसे ही पत्नी भी पति के प्रति। पत्नी को अपनी देह पर अधिकार नहीं, बल्कि पति को है; वैसे ही पति को भी अपनी देह पर अधिकार नहीं, बल्कि पत्नी को है। एक-दूसरे से अलग न रहो, सिवाय इसके कि आपसी सहमति से कुछ समय के लिए, ताकि प्रार्थना के लिए अवकाश मिले; और फिर एक साथ रहो, ताकि शैतान तुम्हारे असंयम के कारण तुम्हें परीक्षा में न डाले।"

इस कथन से पौलुस यौन जीवन के विषय में प्राचीन धारणाओं और विचारों को उलट-पुलट कर देता है। जब भी पुरुष चाहे और यौन तृप्ति खोजे, तब स्त्री को एकतरफ़ा रूप से उसकी सेवा में हाज़िर नहीं रहना है। स्त्री पुरुष की संपत्ति नहीं है। वे एक-दूसरे के हैं। यौन जीवन में वे एक-दूसरे का आदर करते हैं। यौन जीवन एकतरफ़ा रास्ता नहीं है। वह एक कर्तव्य है, क्योंकि पुरुष और स्त्री की यौन आवश्यकताएँ हैं, जिन्हें परमेश्वर ने स्वयं उनमें पूरा होने के लिए रखा है। यौन संबंध आपसी सहमति का कार्य है, जो दोनों साथियों की तृप्ति के लिए है। यहाँ भी पौलुस दोनों लिंगों की बराबरी पर स्पष्ट बल देता है। वरना वह यह न कहता कि पत्नी को अपने पति की देह पर अधिकार है। क्योंकि संभोग एक शारीरिक बात है, इसलिए देह पर बल दिया गया है, पर अंततः देह पूरे व्यक्ति का प्रतिनिधित्व करती है। यह बात कि पत्नी को पति पर अधिकार (सत्ता, प्रभुता) है, अक्सर अनदेखी कर दी जाती है, क्योंकि यह मान लिया जाता है कि स्त्री को पुरुष पर प्रभुता नहीं करनी है, बल्कि अधीन रहना है। विवाह में स्वस्थ यौन जीवन के लिए यह एक महत्वपूर्ण पाठ है। उस समय यह समय के अनुरूप नहीं था। पर यही सृष्टि की व्यवस्था है।

6.1.5 कुरिन्थुस में सिर ढाँकना

यदि हम सिर ढकने और/या घूँघट करने की प्रथा की खोजबीन न करें, तो यह ख़तरा है कि हम पौलुस के इस पाठ को 1:1 आज पर लागू कर दें। और वह भी एक एक-आयामी, श्वेत-श्याम व्याख्या-पद्धति में, जो अंत में एक संकीर्ण व्यवस्थावाद को उचित ठहराने का साधन बन जाती है, जैसा मैंने स्वयं अनुभव किया है।

एम. ऑरबैक (M. Auerback) घूँघट के पक्ष के तर्क को इस प्रकार सार में कहती हैं: "प्रतीकों, कथनों का अर्थ केवल उसी संस्कृति में होता है जो जानती है कि उनका अर्थ क्या है।" "पर पारंपरिक बाइबल-विद्वत्ता में अधिकांश लोगों ने यह मान लिया है कि 1 कुरिन्थियों 11:3-16 में घूँघट का अर्थ 'अधीनता' है, बिना उन अर्थों को समझने का प्रयास किए जो प्राचीन पूर्वी भूमध्यसागरीय संस्कृति में स्त्रियों के लिए घूँघट के थे या अनेक आधुनिक संस्कृतियों में उसके अब भी व्यापक प्रयोग में।" [61]

61. Westfall, पृ. 26 Westfall, Cynthia Long. Paul and Gender: Reclaiming the Apostle's Vision for Men and Women in Christ. Baker Publishing Group, 2015

ब्रूस विंटर (Bruce Winter) कहते हैं कि रोमी साम्राज्य के समय "निश्चित रूप से यह माना जा सकता है कि ढका हुआ सिर उस शालीनता और पवित्रता का प्रतीक था जिसकी अपेक्षा एक विवाहित स्त्री से की जाती थी।" [62]

"पर अब हमारे पास उन संस्कृतियों की स्त्रियों के वृत्तांत उपलब्ध हैं जहाँ स्त्रियाँ घूँघट करती हैं, और वे एक अलग कहानी कहते हैं। हम पाते हैं कि इस्लाम और यहूदी धर्म में धर्मपरायण, कट्टरपंथी स्त्रियों की एक प्रबल धारा है, जो ऐसे कारणों से घूँघट करती हैं जो 1 कुरिन्थियों 11:3-16 में पौलुस के तर्क से बहुत मिलते-जुलते लगते हैं। फिर भी हम पूरी तरह बाद की मानवशास्त्रीय समानताओं पर निर्भर नहीं हैं, जिनमें कालदोष का ख़तरा रहता है। घूँघट उतारने से इनकार करने वाली स्त्रियों का इतिहास और घूँघट पहनने के कारण अश्शूरी संस्कृति तक पीछे खोजे जा सकते हैं।" [63]

"पौलुस की चिंता कलीसिया की उन सभी स्त्रियों तक फैली हुई लगती है जो भविष्यद्वाणी करती हैं और प्रार्थना करती हैं – दासियों, मुक्त की गई स्त्रियों, अविवाहितों और विधवाओं सहित। रोमी मात्रोना (Matrona)[64] का पहनावा उसके पद को और साथ ही 'रोमी समाज में यौन रूप से परिपक्व स्त्री के रूप में उसकी स्थिति और भूमिका' को प्रकट करता था। दूसरी ओर, बिना ढका सिर यौन उपलब्धता का अर्थ रखता था, इसलिए किसी दासी या मुक्त की गई स्त्री के लिए घूँघट करना वर्जित था।" [65]

"घूँघट के नियम बनाना पुरुषों का विशेषाधिकार था; वही सबसे स्वाभाविक रूप से कोई दिशा-निर्देश तय करने की आवश्यकता देखते। रोमी प्रथा में पुरुष और स्त्रियाँ दोनों प्रार्थना करने के लिए अपना सिर ढकते थे। स्पष्ट है कि पौलुस कलीसियाओं में पुरुषों को रोमी प्रथा के विपरीत खुले सिर प्रार्थना करना सिखाता था (1 कुरिन्थियों 11:4), इसलिए पुरुषों ने शायद सोचा कि जो हंस के लिए अच्छा है, वह हंसिनी के लिए भी अच्छा है। पर जबकि पुरुष का खुला सिर परमेश्वर के सामने उसकी नम्रता का चिह्न था, स्त्री का खुला सिर परमेश्वर के सामने स्त्री की नम्रता का चिह्न नहीं था; बल्कि वह उसकी यौन उपलब्धता के बारे में एक संकेत भेजता था, जो प्रलोभन के समान हो सकता था। पर जो उचित था, उसके बारे में सांस्कृतिक आदर्शों को कोई व्यक्ति ऊपरी तौर पर धर्मवैज्ञानिक प्राथमिकताओं के पक्ष में छोड़ भी सकता था।" [66]

"सामान्यतः बिना प्रश्न किए यह मान लिया जाता है कि पौलुस कुरिन्थी स्त्रियों को सुधार रहा था। पर यह खंड अधिक सुसंगत बैठता है यदि यह माना जाए कि कुरिन्थी स्त्रियाँ अपनी ओढ़नी या घूँघट उतारने से इनकार कर रही थीं, पर अधिकार रखने वाले लोग, घरेलू कलीसिया के पुरुष, या शायद उनके अपने पति भी, उन पर घूँघट उतारने के लिए दबाव डाल रहे थे या उन्हें प्रोत्साहित कर रहे थे। यह उस प्रकार की स्थिति है जो घूँघट करने वाली संस्कृतियों में बार-बार घटती है।" [67]

62. पृ. 27
63. पृ. 29
64. मात्रोना (Matrona) रोमी साम्राज्य के समाज में उस स्त्री को कहा जाता था जो किसी रोमी नागरिक से विवाहित हो। उसका स्थान अधिकतर घर में था, परिवार और गृहस्थी की देखभाल में। वह घर के स्वामी, अर्थात् पिता या पति, के संरक्षण और अभिभावकत्व में रहती थी। Wikipedia
65. पृ. 29
66. पृ. 31
67. पृ. 32

"इससे न केवल यह संकेत मिलता था कि ऐसी स्त्रियाँ यौन रूप से उपलब्ध हैं, बल्कि सामाजिक व्यवस्था और वर्गों के बीच का भेद भी बना रहता था। ... सब स्त्रियों के घूँघट करने का पौलुस का समर्थन कलीसिया में सामाजिक संबंधों को बराबर कर देता था; जहाँ तक यह घूँघट उसके हाथ में था, उसने कलीसिया की उन स्त्रियों के लिए सम्मान, आदर और यौन पवित्रता सुनिश्चित की, जिन्हें संस्कृति में यह दर्जा नहीं दिया जाता था।" [68] घूँघट ऊपर और नीचे के सामाजिक अंतरों को, अर्थात् उस वर्ग-भेद को, प्रकट करता था, जो 1800 वर्षों तक, आधुनिक युग तक, देखा जा सकता है।

"निकट पूर्व की संस्कृति में उच्च वर्ग की स्त्री अपनी निष्ठा और विनम्रता का संकेत देने के लिए अपना सिर ढकती थी। उसका ढका हुआ सिर सीधे उसके अपने सम्मान और उसके परिवार के सम्मान का भी संकेत देता था – विशेष रूप से उसके paterfamilias (प्राचीन घराने के परिवार-प्रमुख) के सम्मान का, जो उसकी पहचान का स्रोत था। पौलुस सृष्टि के वृत्तांत के आधार पर घूँघट के पक्ष में एक धर्मवैज्ञानिक तर्क प्रस्तुत करने के लिए इस प्रतीक के जटिल अर्थ का सहारा लेता है।" [69]

ई. श्नाबेल (E. Schnabel) लिखते हैं: "रोमी-यूनानी सांस्कृतिक क्षेत्र में स्त्रियों का सिर ढकना (केवल धार्मिक संदर्भों में ही नहीं) स्वाभाविक रूप से विश्वसनीय बात थी। रोमी मूर्तियाँ, विशेष रूप से सम्राट के परिवार की स्त्रियों के चित्र-शिल्प और कब्रों की उभरी नक्काशियाँ, विवाहित स्त्रियों को सिर पर खींची हुई स्टोला (palla) के साथ या vitta, अर्थात् ऊन की सिर-पट्टी या बाल-पट्टी, के साथ दिखाती हैं, जिन्हें शालीनता और पवित्रता का प्रतीक माना जाता था। सार्वजनिक स्थान पर स्त्रियों के लिए स्टोला पहनना अनिवार्य नहीं था। पर स्टोला पहनना उनकी पवित्रता का प्रतीक था। औगुस्तुस (Augustus) के विवाह-क़ानूनों ने यह तय किया कि वेश्याओं को शालीन पत्नी, मात्रोना, की स्टोला पहनने की मनाही है।"[70]

सिर ढकना आम बात थी। थोड़े से प्रयास से रोमी स्त्रियाँ अपना ऊपरी वस्त्र या ओढ़ना, पाल्ला (Palla), पीछे से सिर पर खींच सकती थीं, जिससे उनके बाल भी लगभग ढक जाते थे। अनगिनत प्राचीन चित्रों में यह दिखाई देता है।

"यह बाइबल-विद्वत्ता में प्रचलित इस धारणा का खंडन करता है कि घूँघट स्त्री के अपने पति के अधीन होने का प्रतीक था। घूँघट पहनना कोई निजी प्रतीक नहीं, बल्कि एक सार्वजनिक प्रथा थी, जिसे क़ानून और रिवाज नियंत्रित करते थे, और पुरुषों और स्त्रियों दोनों से अपेक्षा की जाती थी कि वे इस रिवाज के अधीन रहें। संक्षेप में, घूँघट स्त्री के सम्मान, दर्जे और सुरक्षा का प्रतिनिधित्व करता था।" [71]

"यह आम बात थी (और है) कि स्त्रियाँ अपना घूँघट उतारने से इनकार करती हैं, क्योंकि वह सम्मान और सुरक्षा का प्रतीक है। अधिक संभावना यह है कि जिन स्त्रियों को सार्वजनिक स्थान पर घूँघट करने की अनुमति नहीं थी, वे सभा में घूँघट पहनना चाहती थीं, यह दर्शाने के लिए कि वे मसीह के द्वारा धर्मी ठहराई गई हैं। सब स्त्रियों को घूँघट करने का पौलुस का निर्देश संस्कृति-विरोधी था और स्त्रियों के प्रति सद्भावपूर्ण

68. पृ. 33
69. पृ. 37
70. Schnabel, E. J., 602–603.
71. पृ. 42

था। सब स्त्रियों के घूँघट पहनने की प्रथा ने मसीही कलीसिया में सामाजिक संबंधों को बराबर कर दिया।" [72]

इतने विस्तार से यह दिखाने का उद्देश्य था कि ये बाहरी चिह्न उस समय की संस्कृति और समाज में गहराई से जड़ पकड़े हुए थे। मसीह की गवाही और सुसमाचार को ख़तरे में न डालने के लिए मसीह में स्वतंत्रता और सामाजिक मानदंडों के अनुरूप ढलने के बीच एक मार्ग खोजना आवश्यक था। इसका अर्थ एक ओर अनुरूप ढलना था (स्त्रियाँ सिर ढकती हैं)। पर संस्कृति के विपरीत सब स्त्रियों का सिर ढकना भी, ताकि मसीह में समानता दिखाई जाए। उसी प्रकार पुरुषों के लिए सिर ढकने का अस्वीकार भी, क्योंकि उसका अर्थ मूर्तिपूजक उपासनाओं के अनुरूप ढलना हो सकता था। इस सिद्धांत को आज भी बनाए रखना है। प्राचीन सामाजिक मानदंडों को अपनाना 21वीं शताब्दी में हमारी सहायता नहीं करता। बल्कि ऐसी बाहरी बातें उलझन पैदा करेंगी, जैसा दुर्भाग्य से हो भी रहा है।

6.1.6 सिर पर अधिकार का चिह्न रखना?

पद 10: इसलिए स्वर्गदूतों के कारण स्त्री को सिर पर एक अधिकार रखना चाहिए।

बहुत से अनुवादों ने यहाँ "अधिकार या सत्ता का चिह्न" जोड़ दिया है! पर वहाँ केवल अधिकार, सामर्थ्य या सत्ता लिखा है। यह जोड़ आश्चर्य की बात नहीं, क्योंकि, जैसा आरंभ में कहा गया, पौलुस के इस पाठ को स्त्री के ऊपर पुरुष के पदानुक्रम की पुष्टि के रूप में समझा गया। इसने (लगभग केवल पुरुष) अनुवादकों को प्रभावित किया। दूसरे शब्दों में: यह जोड़ एक व्याख्या है।

इसके बजाय इस पद का अनुवाद इस प्रकार होना चाहिए:

इसलिए स्वर्गदूतों के कारण स्त्री को अपने सिर पर अधिकार होना चाहिए।

(ऐसा ही श्नाबेल (Schnabel), वेस्टफ़ॉल (Westfall), बुशनेल (Bushnell), कीनर (Keener), शिरमाखर (Schirrmacher) आदि)

पौलुस ध्यान दिलाता है कि मसीही संगति में घूँघट करना स्त्री का अधिकार है, और यह प्रतीक को रूपांतरित कर देता है। इस प्रकार यह स्पष्ट रूप से अधीनता या पदानुक्रमिक अधीनस्थता का चिह्न नहीं है। इसका अर्थ यह हो सकता है कि स्त्री को स्त्रियों के पहनावे के विषय में अपना निर्णय स्वयं लेने में सक्षम होना चाहिए, क्योंकि उसे संसार और स्वर्गदूतों का न्याय करने के लिए ठहराया गया है, जैसा वह 1 कुरिन्थियों 6:2-3 में पहले ही कह चुका था। "परंपरागत ओढ़नी पहनकर पत्नी अपने सिर पर अपना नियंत्रण प्रदर्शित करती है, इस प्रकार कि वह अपने पति के प्रति अपनी विश्वासयोग्यता और अपनी व्यक्तिगत सामाजिक स्थिति को स्वीकार करती है। कलीसिया की सभा के सार्वजनिक वातावरण में सिर खोलने से स्त्रियाँ जो कामुक संकेत भेजती हैं, उनसे बचा जाता है। पुरुष और स्त्री का जुड़ाव बना रहता है, और प्रार्थना और भविष्यद्वाणी में स्त्री के द्वारा परमेश्वर की वास्तविकता की अभिव्यक्ति प्रामाणिक बनी रहती है"।[73]

72. पृ. 44
73. Schnabel, E. J., 610–611

"परिणामस्वरूप, पौलुस के उद्गमों के धर्मविज्ञान में पुरुष और स्त्री स्पष्ट रूप से एक-दूसरे पर निर्भर हैं। 1 कुरिन्थियों 11:3-16 के संदर्भ में पौलुस बड़ी कूटनीति से स्त्रियों की उस किसी भी अनुचित स्वतंत्रता को नरम कर देता है जो घूँघट करने की उनकी इच्छा के प्रति उसके समर्थन से उत्पन्न होती है।"[74]

6.1.7 आज की प्रासंगिकता

परमेश्वर का वचन सर्वकालिक है। कोई वचन नहीं टलेगा। पर कुछ बातें ऐसी हैं जो एक विशेष युग से संबंधित हैं और उसी युग में संबोधित की जाती हैं।

सिर ढककर स्त्रियों को अपनी ओर ध्यान नहीं खींचना था, अपने बालों की शोभा नहीं दिखानी थी और पुरुषों को (शायद कुछ स्त्रियों को भी) विचलित नहीं करना था। परमेश्वर की महिमा का गुणगान और स्तुति होनी थी। परमेश्वर की महिमा, उसकी उपस्थिति, इकट्ठा होने का केंद्र थी। आज भी आराधना में कोई बात मनुष्य को ऊँचा न करे, कोई अपनी ओर ध्यान या सम्मान न खींचे।

स्त्रियाँ अपने रूप से, अपनी उभारी हुई या सजी-धजी सुंदरता से परमेश्वर के सम्मान में से कुछ न छीनें। यह पाठ का नैतिक सिद्धांत है, जो आज तक लागू है। कोई वक्ता, प्रचारक, कोई भी जो जीवन की गवाही या मिशन का विवरण देता है, कोई गायक, कोई वादक, कोई भी मनुष्य, ठीक उस समय की तरह, अपने वस्त्रों से अपनी ओर ध्यान न खींचे।

"जहाँ तक सिर ढकने की प्रथा का प्रश्न है, पश्चिमी समाजों में बहुत समय से यह आम नहीं रहा कि स्त्रियाँ सिर ढककर विश्वासयोग्य पत्नियों के रूप में अपनी स्थिति का संकेत दें। इस्लामी देशों में, और इसलिए इस्लामी क्षेत्रों की कलीसियाओं में, यह अलग है! यदि ऐसी स्थिति में मसीही पत्नियाँ बिना सिर ढके कलीसिया में सक्रिय हैं, तो ठीक इसलिए कि वे जिस नगर में रहती हैं, वहाँ सार्वजनिक स्थानों पर भी बिना सिर ढके आती-जाती हैं। सिर का न ढका होना कोई संकेत नहीं भेजता। जब कुछ मसीही यह माँग करते हैं कि पत्नियाँ 'पवित्रशास्त्र की आज्ञाकारिता' के कारण आज भी सिर ढकें, तो प्रेरित पौलुस के निर्देशों को ठीक 'आज्ञाकारिता' से नहीं समझा और लागू किया जाता: पौलुस की चिंता सिर ढकने की नहीं, बल्कि उन पारंपरिक रीतियों की जानबूझकर अवहेलना और उपहास की है जो पूरे समाज के लिए महत्वपूर्ण और मूलभूत हैं।

यदि पश्चिमी यूरोप की कलीसियाओं में स्त्रियाँ सिर ढकती हैं, तो यह पौलुस द्वारा माँगी गई उस रीति के प्रति अनुरूपता नहीं है जो पत्नी की पवित्रता और निष्ठा का प्रतीक है, बल्कि ऐसा व्यवहार है जो ठीक अनुरूप नहीं है। पश्चिम में वैवाहिक निष्ठा और शालीनता को अब मुश्किल से ही किसी विशेष प्रकार के पहनावे से दर्शाया जाता है। यह अधिकतर शब्दों में होता है, अर्थात् विवाह और जीवनसाथी के मूल्य के बारे में ठोस कथनों के द्वारा।"[75] और निस्संदेह विवाह की अँगूठी के द्वारा, जो स्पष्ट रूप से दिखाती है कि उसे पहनने वाला एक स्थायी (वैवाहिक) संबंध में है और न तो किसी नए संबंध के लिए उपलब्ध है, न ही यौन रोमांच की तलाश में है। विवाह की अँगूठी इससे केवल कुछ हद तक ही बचाती है; बात चिह्न की है।

74. पृ. 73
75. Schnabel, E. J., 624

जो कोई फिर भी यह मानता है कि आज स्त्रियों के लिए सिर ढकना निर्धारित करे (या स्त्रियाँ स्वयं अपने लिए करें), उसने सुसमाचार की उस स्वतंत्रता को, जिसके लिए हम बुलाए गए हैं, अभी तक पकड़ा नहीं है।

6.1.8 व्याख्यात्मक भावानुवाद

आगे मेरे अपने शब्दों में पाठ की प्रस्तुति है। इसी प्रकार मैं इस जटिल पाठ को संक्षेप में और सटीक रूप से समझाऊँगा। यह यूनानी पाठ का अनुवाद नहीं है, बल्कि एक भावानुवाद है, जैसा मैं इसे समझता हूँ और समझाऊँगा, लेखक पौलुस की दृष्टि से:

मेरे लिए यह महत्वपूर्ण है कि तुम कुरिन्थी इस बात को ध्यान में रखो कि हर पुरुष का उद्गम, अर्थात् उसका सिर, मसीह है, मसीहा। उसी के द्वारा तुम पुरुष रचे गए। और पुरुषों के रूप में तुम उसी के साथ जोड़े गए हो। यह सभा में दिखाई देता है। तुम्हारा उल्लेख मैं पहले करता हूँ, क्योंकि तुम स्त्रियों से माँग करते हो कि जब वे प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करें, तो सिर न ढकें।

स्त्री का सिर पुरुष है। उसकी बगल (पसली) से वह रची गई, ताकि उसके साथ एक हो जाए। पुरुष सिर, स्त्री देह। पुरुष उसका उद्गम है और वह भी उसके साथ जोड़ी गई है, जो सभा में दिखाई देता है।

यही संबंध हम मसीह में भी देखते हैं। उसका सिर परमेश्वर है। उसने उसे अनंतकाल में और मनुष्य के रूप में उत्पन्न किया, अपने पुत्र को, जो उसके समान है।

यदि कुरिन्थुस में कोई पुरुष सभा में ऊँचे स्वर से मसीह या परमेश्वर से प्रार्थना करता है, या यदि वह भविष्यद्वाणी करता है और उसका सिर ढका हुआ है, तो यह लज्जा की बात है। वह मसीह को नहीं, अपने आप को सम्मान देता है। क्योंकि मूर्तिपूजक मूर्तियों को बलि चढ़ाते समय अपना सिर ढकते हैं। खुले सिर से पुरुष नम्रता दिखाता है और परमप्रधान को, अदृश्य मसीह को, सम्मान देता है।

स्त्रियों के साथ ठीक इसका उलटा है। जो स्त्रियाँ सभा में प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करती हैं और सिर नहीं ढकतीं, वे अपने सिर पर लज्जा लाती हैं। वे अपना और अपने पति का, अर्थात् अपने सिर का, अनादर करती हैं। क्योंकि वे परमेश्वर और मसीह के बजाय अपनी ओर ध्यान खींचती हैं।

यदि कोई यह माँग करता है कि स्त्रियों को पुरुषों की तरह सिर ढकने की आवश्यकता नहीं, तो वह इस बात को अंत तक नहीं सोचता। क्योंकि तुम तो जानते हो कि कुरिन्थुस में बिना ओढ़नी की स्त्री मुँड़ी हुई जैसी मानी जाती है और उस स्त्री के समान है जो वेश्यावृत्ति करती है या यौन मेल-मिलाप की तलाश में है। यदि वह घूँघट नहीं करती या सिर नहीं ढकती, तो तर्क के अनुसार उसे अपने बाल भी कटवा लेने चाहिए या पूरी तरह मुँड़वा लेने चाहिए।

मैं जानता हूँ, अपनी माँग से तुम यह नहीं चाहते! पर जिस समाज में तुम रहते हो, उसमें यही परिणाम होगा! इसलिए उन लोगों के लिए ठोकर बनने का जोखिम मत उठाओ जो तुम्हारे पास आते हैं और देखते हैं कि सार्वजनिक जीवन में स्त्रियों के सिर ढकने की प्रचलित रीति को ठुकराया जा रहा है।

पुरुष सभा में, परमेश्वर की उपस्थिति में, अपने आप को न ढकें। क्योंकि पुरुष परमेश्वर का स्वरूप और उसकी महिमा की प्रतिच्छवि है।

स्त्री भी परमेश्वर का स्वरूप है, पर इसके अतिरिक्त वह पुरुष की महिमा की प्रतिच्छवि भी है। उसकी सुंदरता उसके पति की सुंदरता है, जिसके साथ वह एक है।

वह उसकी महिमा कैसे बन सकी? निश्चय ही इसलिए नहीं कि वह उसमें से रचा गया, बल्कि इसलिए कि वह उसमें से, उसकी बगल से, गढ़ी गई।

और वह पुरुष की महिमा इसलिए नहीं है कि पुरुष उसके लिए रचा गया, बल्कि इसके उलट। वह उसके कारण रची गई, क्योंकि वह अकेला था और उसे सहायता की आवश्यकता थी। और स्त्री के रूप में वह उसके लिए मनभावनी रूप से सुंदर थी।

इसीलिए, क्योंकि स्त्री का इतना मूल्य है और वह पुरुष के लिए इतनी बड़ी लाभदायक है, इसलिए वह अपने सिर के बारे में स्वयं निर्णय करे कि उसे ढके या नहीं। कोई उसके लिए यह निर्धारित नहीं कर सकता। न उसका पति और न कलीसिया के अगुवे उसके लिए यह निर्धारित कर सकते हैं कि वह सिर न ढके (या ढके)।

पर स्त्री अपनी स्वतंत्रता और निर्णय की आज़ादी में यह ध्यान रखे कि वह पुरुष से अलग या स्वतंत्र नहीं है। कलीसिया में वह पुरुष के बिना अस्तित्व में नहीं है और पुरुष भी स्त्री के बिना अस्तित्व में नहीं है। परमेश्वर का विचार हमेशा पुरुष और स्त्री का साथ-साथ और एक साथ रहना था। सिर और देह की एकता में वे एक साथ कार्य करते हैं, एकमत होकर, आपस में सलाह करके, शांति से, एक-दूसरे के अधीन रहकर, एक-दूसरे को पूरा करते हुए।

एक का दूसरे के बिना अस्तित्व में न होना – इसका क्या अर्थ है? मनुष्य-जोड़े की सृष्टि को एक बार फिर याद करो। आरंभ में स्त्री पुरुष में से आई। उसकी बगल से। उसके साथ जोड़ी गई, ताकि फिर उसके साथ एक तन हो। पर आगे सोचो: तब से हर पुरुष एक स्त्री से आता है। पुरुष के बिना कोई स्त्री न होती और स्त्री के बिना कोई पुरुष न होता। दोनों समान गरिमा वाले, समान मूल्य वाले और समान स्थान वाले हैं, अपनी भिन्नता में पूर्ण पूरक। यह सब परमेश्वर का विचार था। वही वह सिर है जिससे यह सब निकला है।

इसे देखते हुए मैं तुमसे पूछता हूँ: क्या यह शोभा देता है कि कोई स्त्री सार्वजनिक रूप से, पर बिना घूँघट और बिना सिर ढके परमेश्वर से प्रार्थना करे? नहीं, तुम सहमत होगे, कुरिन्थुस और रोमी साम्राज्य की रीतियों को देखते हुए ऐसा नहीं है।

कुछ रीतियाँ और प्रथाएँ ऐसी हैं जो लोगों के लिए प्रकृति के नियमों जैसी होती हैं। यदि कोई पुरुष रीतियों और प्रथाओं के विपरीत लंबे बाल रखे, तो इसे लज्जा माना जाता है। इसमें भी स्त्रियों के साथ ठीक इसका उलटा है। स्त्रियों के लंबे बाल उनकी शोभा हैं, उनका स्वाभाविक श्रृंगार, जिसे लोग ऐसा ही अनुभव भी करते हैं। लंबे बाल उसे एक सजाने वाले घूँघट या ओढ़ने के समान दिए गए हैं, ताकि वह पुरुष की महिमा हो।

यह श्रृंगार, जो पुरुषों को इतना मनभावना लगता है, उसे वह सभा में ढके। यह इस महिमा के साथ सामने आने की जगह नहीं है, ठीक वैसे ही जैसे पुरुष को खुले सिर के द्वारा अपनी नम्रता दिखानी चाहिए। क्योंकि

बात परमेश्वर और मसीह के सम्मान और महिमा की है। वही है जो हमें राजाओं के राजा के दरबार में आमंत्रित करता है।

यदि कुरिन्थुस में कोई इस पर बहस करना चाहे और सिर ढकने की इस रीति पर प्रश्न उठाए, तो उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि ऐसा कहीं नहीं होता। जैसे तुम स्त्रियों के लिए यह निर्धारित करना चाहते हो कि वे सिर न ढकें। कोई कलीसिया ऐसा नहीं करती, इसलिए उसी का पालन करो जो सिर ढकने के विषय में सामान्य रूप से माना जाता है, जो आदरयोग्य है और किसी के लिए ठोकर का कारण नहीं बनता।

6.1.9 समापन और सारांश

खंड की भाषा और पौलुस का निष्कर्ष यह संकेत देते हैं कि कोई कुरिन्थुस की घरेलू कलीसियाओं में घूँघट को या तो सीमित करना या उस पर रोक लगाना चाहता था, पर सब स्त्रियाँ, कुछ स्त्रियाँ या कोई एक स्त्री घूँघट करना चाहती थी। पहले पौलुस सृष्टि के वृत्तांत का संक्षिप्त सार देता है और समझाता है कि पुरुष में से और पुरुष के लिए स्त्री की रचना ही वह कारण है जिससे स्त्री पुरुष की महिमा है। पुरुष उसका सिर है, क्योंकि वह उसमें से रची गई, और इसलिए उसका सिर उसकी महिमा को प्रतिबिंबित करता है या किसी न किसी रूप में उसे व्यक्त करता है। उत्पत्ति की पुस्तक के वृत्तांत में वह उसकी महिमा भी थी, क्योंकि वह विशेष रूप से उसे आकर्षित करने के लिए रची गई थी, सब पशुओं के विपरीत (उत्पत्ति 2:18-23)।[76]

पौलुस के लेखों में लिंगों (जेंडर) का एक धर्मविज्ञान है, जो इस बात में साकार होता है कि पौलुस सृष्टि के वृत्तांत को यूनानी-रोमी संस्कृति की अवधारणाओं और प्रतीकों और यूनानी भाषा के मुहावरों से कैसे समझाता है। “सिर” के रूपक को आदम पर लागू करके पौलुस संकेत देता है कि हव्वा की कई पहचानें हैं। स्त्रियाँ परमेश्वर का स्वरूप हैं, आदम का स्वरूप हैं और “पुरुष की महिमा” भी हैं। पौलुस का स्त्री को “पुरुष की महिमा” कहना किसी अधीनता या कम महिमा की ओर संकेत नहीं करता, बल्कि एक अतिरिक्त महिमा की ओर संकेत करता है: पुरुषों पर उसकी सुंदरता की शक्ति। उसी प्रकार हम पुरुष की प्रधानता को 1 तीमुथियुस 2:13-14 के पौलुस के संक्षिप्त वर्णन में भी नहीं डाल सकते, जिसमें कहा गया है कि आदम पहले रचा गया (पद 13)। बल्कि पौलुस सृष्टि के वृत्तांत से पारस्परिकता सिखाता है, क्योंकि पौलुस पुरुष को लाभ पाने वाले के रूप में प्रस्तुत करता है, जिसे स्त्री की सहायता की आवश्यकता है। वह इसे ऐसी अवधारणाओं में बताता है जिन्हें संस्कृति समझ सकती थी। स्त्री पुरुष में से गढ़ी गई, इसलिए सृष्टि के वृत्तांत में पुरुष यूनानी भाषा-प्रयोग में स्त्री के सिर (उसके जीवन के उद्गम) के रूप में कार्य करता है; पर बाद में हर पुरुष स्त्री से आता है, इसलिए स्त्री भी जीवन का उद्गम है, जो उत्पत्ति 3:20 में “हव्वा” नाम का अर्थ है।

इसलिए परमेश्वर की योजना के अनुसार स्त्री और पुरुष एक-दूसरे से स्वतंत्र नहीं हैं। पौलुस की इस प्रकार व्याख्या करने का कोई बाध्यकारी कारण नहीं है कि वह उत्पत्ति 1:27-28 के सृष्टि-वृत्तांत में, या “सिर” के यूनानी मुहावरे के अपने प्रयोग में, स्त्री के अधिकार का खंडन करता है, उसकी नई व्याख्या करता है या उसे सापेक्ष बना देता है। पुरुष और स्त्री दोनों परमेश्वर के स्वरूप में रचे गए और दोनों प्रभुता करने के लिए रचे

76. पृ. 98

गए, जिसका प्रयोग पौलुस के अनुसार उपयुक्त सांस्कृतिक सीमाओं के भीतर साझेदारी और पारस्परिकता के भाव से किया जाता है।[77]

6.1.10 1 कुरिन्थियों 11 का एक और पाठ-दृष्टिकोण

लगभग 25 वर्ष पहले मैंने पहली बार सुना कि इस पाठ में पौलुस अपने विचार नहीं, बल्कि कुरिन्थुस के पुरुषों के विचार प्रस्तुत करता या उद्धृत करता है और उनका खंडन करता है। इसे उद्धरण-सिद्धांत या उद्धरण-मत कहा जाता है। जर्मन भाषा में इसे थोमस शिरमाखर (Thomas Schirrmacher) ने विस्तार से विकसित किया है। मैं लंबे समय तक संशय में रहा। क्योंकि परिणाम में वही निकलता है जो उस पुस्तक का शीर्षक है: Paulus im Kampf gegen den Schleier ("घूँघट के विरुद्ध संघर्ष में पौलुस", जर्मन में)।[78] अर्थात् सिर ढकने के पक्ष में कोई दलील नहीं, बल्कि इन बाहरी बातों का अस्वीकार। यह अर्थ का 180° का मोड़ है। एक "गेमचेंजर", जैसा इसे कहा भी जाता है। यह मत इस पाठ पर एक बिलकुल अलग दृष्टिकोण है।

अंग्रेज़ी-भाषी धर्मविज्ञानियों के द्वारा, जो थ. शिरमाखर से स्वतंत्र रूप से यही मत रखते हैं, मैं उनकी व्याख्या पर लौट आया। इस मत को मैं निश्चय ही सुसंगत मानता हूँ। इसके विरुद्ध उठाई गई अनेक प्रकार की आलोचना को जानते हुए भी। शिरमाखर स्वयं अपनी पुस्तक के 5वें संस्करण में आलोचना पर विचार करते हैं। यह व्याख्या सिद्ध नहीं है, पर कौन सी व्याख्या सिद्ध है?

यह ऐतिहासिक-आलोचनात्मक पद्धति से नहीं निकली, क्योंकि यह उस पद्धति के प्रकट होने से पहले भी मौजूद थी। बात बाइबल-आलोचना की नहीं, बल्कि विचार के क्रम को समझने की है। पाठ का अवमूल्यन करने के लिए नहीं, बल्कि उसे यीशु की, प्रेरितों की और बाइबल की शिक्षा में उचित स्थान देने के लिए।

उद्धरणों के उदाहरण

इस संभावना तक पहुँचने के लिए कि 1 कुरिन्थियों 11 में पौलुस कुछ कुरिन्थी पुरुषों की उलझन में डालने वाली माँगों को विस्तार से उद्धृत करता है, मैं 1 कुरिन्थियों की पत्री से मिलते-जुलते उदाहरण प्रस्तुत करता हूँ। वह कई बार कुरिन्थुस के विचारों, मतों और घटनाओं का हवाला देता है। अध्याय 1-4 में बात दलबंदी की है, जिसमें एक दल उसकी अनुपस्थिति में उसे अपना अगुवा घोषित कर देता है, जिससे वह यह प्रश्न पूछता है कि क्या वह उनके लिए क्रूस पर चढ़ाया गया। अध्याय 5-6 में बात कलीसियाई अनुशासन की है, अध्याय 6-7 में वैवाहिक प्रेम की, अध्याय 8-10 में मूर्तियों के आगे बलि किए गए मांस की, 12-14 में आत्मिक वरदानों

77. पृ. 105
78. Paulus im Kampf gegen den Schleier, Thomas Schirrmacher, Eine alternative Auslegung von 1. Korinther 11,2-16, 5वाँ परिवर्धित संस्करण, VTR, Nürnberg, 2002 (पहला संस्करण 1993), हांस-गेओर्ग वुन्श (Hans-Georg Wünch) की प्रस्तावना के साथ, जो Theologisches Seminar Rheinland में अध्ययन-निदेशक और पुराने नियम के व्याख्याता हैं और इस उद्धरण-पठन का समर्थन करते हैं।

की और 15 में पुनरुत्थान की। वह बहुत से विवादित विषयों, गलत विचारों और गलत निष्कर्षों पर विचार करता है। इसमें कोई न कोई व्यंग्यपूर्ण कथन भी दिखाई देता है।

दूसरी पत्रियों से अधिक पौलुस यहाँ गलत विचारों का उल्लेख करता है, ताकि उन्हें सुधारे। उनमें से अधिकतर के बारे में उसे शायद कुरिन्थियों के उस उत्तर-पत्र से पता चला था, जो उन्होंने उसकी पहली पत्री (5:9) के उत्तर में लिखा था और जो अब हमारे पास नहीं है, और साथ ही कुरिन्थुस से आए एक प्रतिनिधि-मंडल से। किसी बात को उद्धृत करना या स्वतंत्र रूप से दोहराना, ताकि फिर उस पर टिप्पणी की जाए या उसका खंडन किया जाए, बिलकुल सामान्य प्रक्रिया है।

उद्धरण का एक उदाहरण 1 कुरिन्थियों 7:1 है: मनुष्य के लिए अच्छा है कि वह स्त्री को न छुए। बहुत से लोगों ने इसे पौलुस का मत बताया है। कम से कम तीन कारणों से यह संदिग्ध है: वाक्य स्पष्ट रूप से इस बात से आरंभ होता है कि कुरिन्थियों ने पौलुस को क्या लिखा था। फिर बात छूने की है, जिसका अर्थ यौन संबंध है, जैसा यूनानी भाषा में व्यक्त किया जाता था। पौलुस संभोग के विरुद्ध नहीं है, जैसा कुरिन्थी, या उनमें से कुछ, मानते थे। वह इसे पुरुष और स्त्री के विवाह में एक आपसी कर्तव्य मानता है।

10:23 में कहा गया है: सब कुछ उचित है। यहाँ पौलुस मसीही स्वतंत्रता का वर्णन नहीं करता, बल्कि कुरिन्थियों के मत का, जो गलत है। सब कुछ कभी भी उचित नहीं होता। यह उद्धरण भी, भले ही बहुत छोटा है, उद्धरण के रूप में चिह्नित नहीं किया गया। संदर्भ इसे स्पष्ट कर देता है।

यह सामान्य रूप से माना जाता है कि 1 कुरिन्थियों में पौलुस या तो स्वतंत्र रूप से या किसी पत्र से उद्धरण देता है: 6:12,13; 7:1; 8:1,4; 10:23; 15:12। हर उद्धरण को हमेशा उद्धरण के रूप में चिह्नित नहीं किया जाता, बल्कि संदर्भ से विश्वसनीय रूप से निकाला जाता है। आख़िरकार कुरिन्थी ठीक-ठीक जानते थे कि बात किसकी है – जो आज हमारे लिए पता लगाना अधिक कठिन है।

उद्धरण-सिद्धांत के विरुद्ध दो मुख्य तर्क ये हैं कि पौलुस इन्हें निस्संदेह उद्धरण के रूप में चिह्नित नहीं करता, और कि अध्याय 11 और 14 में ये दूसरे उद्धरणों की तुलना में बहुत लंबे हैं। कोई उद्धरण लंबा है या नहीं – अध्याय 8-10 में मूर्तियों के आगे बलि की गई वस्तुओं पर लंबे विचार-क्रम पर ध्यान दीजिए – यह विषय की जटिलता पर निर्भर है। ग़लतफ़हमी के जोखिम के बिना उसे इससे छोटा प्रस्तुत नहीं किया जा सकता था।

यह आपत्ति कि एक लंबा उद्धरण परमेश्वर का वचन नहीं हो सकता, एक भ्रम है। बाइबल में बहुत सी बातें दोहराई गई हैं, जो सत्य नहीं हैं, यहाँ तक कि शैतान के शब्द भी, जो निस्संदेह गलत हैं। महत्वपूर्ण बात हमेशा विश्वसनीय रूप से आगे पहुँचाना है।

इन आरंभिक विचारों का उद्देश्य यह दिखाना था कि 1 कुरिन्थियों 11 को इस प्रकार पढ़ना मूल रूप से संभव है।

6.1.11 1 कुरिन्थियों 11:2-16 का वैकल्पिक अनुवाद

पहले इस पाठ को किसी जाने-माने अनुवाद में पढ़िए, जिसका आप सबसे अधिक प्रयोग करते हैं। फिर यह वैकल्पिक अनुवाद पढ़िए, जैसा शिरमाखर (Schirrmacher) इसे प्रस्तावित करते हैं, और दोनों की वाक्य-दर-वाक्य तुलना कीजिए।

(2) मैं तुम्हारी प्रशंसा करता हूँ कि तुम सब बातों में मुझे स्मरण करते हो और जैसे मैंने परंपराएँ तुम्हें सौंपीं, वैसे ही उन्हें थामे रहते हो।

(3) पर मैं चाहता हूँ कि तुम जान लो कि हर पुरुष का सिर मसीह है, पर स्त्री का सिर पुरुष है, और मसीह का सिर परमेश्वर है।

अब पद 4 से 9 तक, शायद पद 10 तक भी, यहूदीवादियों का गलत दृष्टिकोण आता है, जिसे पौलुस उद्धृत करता है या स्वतंत्र रूप से दोहराता है:

(4) हर पुरुष जो प्रार्थना या भविष्यद्वाणी करता है और जिसके सिर से कुछ लटकता है, वह अपने सिर का अपमान करता है।

(5) पर हर स्त्री जो खुले सिर प्रार्थना या भविष्यद्वाणी करती है, वह अपने सिर का अपमान करती है; क्योंकि वह मुँड़ी हुई स्त्री के बिलकुल समान है।

(6) क्योंकि यदि स्त्री इस प्रकार अपना सिर नहीं ढकती, तो उसके बाल भी काट दिए जाएँ।

पर क्योंकि स्त्री के लिए बाल कटवाना या मुँड़वाना लज्जा की बात है, इसलिए वह अपना सिर ढके।

(7) क्योंकि पुरुष को तो अपना सिर नहीं ढकना चाहिए, क्योंकि वह परमेश्वर का स्वरूप और महिमा है; पर स्त्री पुरुष की महिमा है।

(8) क्योंकि पुरुष स्त्री से नहीं, परन्तु स्त्री पुरुष से है;

(9) और पुरुष स्त्री के लिए नहीं रचा गया, परन्तु स्त्री पुरुष के लिए।

अब पौलुस इन माँगों का खंडन करता है, उनका स्पष्ट विरोध करता है और एक प्रकार से उन्हें बेतुका सिद्ध कर देता है:

(10) इसलिए स्वर्गदूतों के कारण स्त्री को अपने सिर पर अधिकार होना चाहिए।

(11) क्योंकि आख़िरकार प्रभु में न स्त्री पुरुष के बिना है और न पुरुष स्त्री के बिना। (12) क्योंकि जैसे स्त्री पुरुष से है, वैसे ही पुरुष भी स्त्री के द्वारा है; पर सब कुछ परमेश्वर से है।

(13) तुम स्वयं अपने बीच विचार करो! यह शोभा देता है कि स्त्री खुले सिर परमेश्वर से प्रार्थना करे!

(14) प्रकृति तुम्हें यह नहीं सिखाती कि यदि पुरुष के [लंबे] बाल हों, तो यह उसके लिए लज्जा की बात है, (15) पर यदि स्त्री के [लंबे] बाल हों, तो यह उसके लिए सम्मान की बात है! क्योंकि बाल घूँघट के स्थान पर दिए गए हैं।

(16) पर यदि कोई विवाद करना ही ठीक समझे, [तो वह इस बात पर विचार करे:] हमारी ऐसी कोई रीति नहीं है, और न परमेश्वर की कलीसियाओं की [है]।

वैकल्पिक रूप से पद 10 को भी भीतर खिसकाए गए पाठ के साथ जोड़ा जा सकता है और फिर उद्धरण के रूप में अनुवाद किया जा सकता है:

(10) इसलिए स्वर्गदूतों के कारण स्त्री को सिर पर एक अधिकार रखना चाहिए।

लूसी पेपियाट (Lucy Peppiatt) पद 6 को भी पौलुस का वचन मानती हैं, जिसमें वह सिर ढकने की माँग को अंत तक सोचता है और यहूदीवादियों के बेतुके विरोधाभासों की ओर ध्यान दिलाता है, ताकि फिर उद्धरण को आगे बढ़ाए।

यह पठन पाठ की कई कठिनाइयों को सुलझा देता है। मैं जानता हूँ कि 2000 वर्षों के कलीसिया-इतिहास की तुलना में यह पठन अधिक से अधिक 200 वर्ष पुराना है, या तब से इस पर विचार किया गया है। क्या इसलिए यह गलत है?

उदाहरण के लिए, जो लोग क्लेश से पहले कलीसिया के उठा लिए जाने (रैप्चर) में विश्वास करते हैं, उन पर ठीक यही बात लागू होती है, क्योंकि यह मत भी इससे पुराना नहीं है। यदि हम और अनगिनत मसीही प्रतिदिन बाइबल का अध्ययन करते हैं, तो यह कोई आश्चर्य की बात नहीं होनी चाहिए कि नई समझ मिल सकती है, जो हमें आगे बढ़ाए या पुरानी पहेलियाँ सुलझा सके।

6.1.12 निष्कर्ष

जिन्होंने 1 कुरिन्थियों 11:1-16 को इस प्रकार कभी नहीं पढ़ा, उनके लिए यह पठन एक राहत है। इससे मुक्त करने वाली समझ मिलती है: आज स्त्री को सार्वजनिक रूप से प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करते समय सिर ढकने या घूँघट करने की आवश्यकता नहीं है। वह अपने बाल जैसे चाहे वैसे कटवा सकती है, क्योंकि वह स्वयं इसका निर्णय कर सकती है। पुरुष यदि चाहे तो लंबे बाल रख सकता है। स्वयं पौलुस के बहुत संभवतः कुछ समय तक लंबे बाल थे (प्रेरितों के काम 21:24)। प्रकृति, उसका अर्थ जो भी हो, कभी वह शिक्षक नहीं है जो हमें दिखाए कि हम परमेश्वर को कैसे प्रसन्न कर सकते हैं।

इससे भी गहरी बात यह है कि इस पाठ से न तो कोई दर्जों का क्रम निकलता है और न कोई पद-व्यवस्था, जो पुरुष को स्त्री के ऊपर या स्त्री को पुरुष के नीचे रखे। न सामान्य रूप से हर स्त्री और हर पुरुष, और न ही यहाँ किसी विश्वासी दंपति को अधिकार के अंतर के साथ प्रस्तुत किया गया है।

इस प्रकार विवेक के प्रश्नों का और कलीसिया के अगुवों या "अगुवे भाइयों" की माँगों का स्पष्ट उत्तर दिया जा सकता है, और ज़िम्मेदारी का या किसी मानवीय व्यवस्था का बोझ बहनों से हटाया जा सकता है।

ऐसे ऐतिहासिक स्पष्टीकरण हैं जो इस स्पष्ट परिणाम पर पहुँचते हैं कि आज सिर ढकने का कोई महत्व नहीं रहा। इस परिणाम तक उद्धरण-सिद्धांत के बिना भी पहुँचा जा सकता है, जैसा मैंने ऊपर दिखाया है। रीतियों और प्रथाओं के अनुसार (प्राचीन काल में या 18वीं या यहाँ तक कि 19वीं शताब्दी तक) वे स्त्रियाँ ठोकर का कारण बनती थीं जो, उदाहरण के लिए, बिना सिर ढके और सार्वजनिक रूप से बोलती थीं।

वास्तव में बात ठोकर का कारण न बनने की है। इसमें बात किसी ऐसी चीज़ की नहीं है जो सुसमाचार का केंद्र हो। ऐसे अनुकूलन हैं, जैसे पौलुस अन्यजाति के लिए अन्यजाति और यहूदी के लिए यहूदी बनता है (9:19-23), ताकि उन्हें जीत ले। वह स्वतंत्रता छोड़कर एक मूल्य चुकाता है, ताकि लोगों को यीशु के लिए जीत ले। इस प्रकार हो सकता है कि इन कारणों से उन रीतियों का एक स्वैच्छिक (धर्मवैज्ञानिक नहीं!) अनुकूलन या पालन हो, जिनमें संबंधित लोग रहते हैं और जिनमें उनकी जड़ें हैं। ये रीतियाँ और बाहरी बातें, जो भूमिकाओं की गलत समझ पर आधारित हो सकती हैं, एक प्रकार से स्वीकार की और सहन की जाती हैं। और सुसमाचार की स्वतंत्रता के कारण वे बदल सकती हैं और मिट सकती हैं। जर्मनी में और अधिकतर पश्चिमी लोकतांत्रिक देशों में यह स्थिति नहीं है। वहाँ "धार्मिक रीतियाँ", वस्त्रों के नियम और बाहरी बातें सांसारिक संस्कृति का भाग नहीं हैं, बल्कि एक मसीही संस्कृति का भाग हैं, जो लंबे अतीत से वर्तमान तक चली आई है और अपने ही परिवेश में धार्मिक आधार पर जारी रखी जाती है। बिना किसी सांसारिक प्रभाव या दबाव के। जब ऐसे मसीही गैर-मसीहियों से मिलते हैं, तो इससे अनावश्यक उलझन पैदा हो सकती है।

रूढ़िवादी विचारधारा के एक भाई बल देते हैं कि, उदाहरण के लिए, सुसमाचार-प्रचार की सभाओं में बाहरी बातों का पालन न करना ही बेहतर है, ताकि "उनके लिए समझ से बाहर रूप और व्यवहार से कोई बाधा न बनें"।[79] मेरा उत्तर: जो कुछ सुसमाचार के लिए बाधा है, उससे बचना ही होगा। कितनी विरोधाभासी दुविधा है, यदि बाइबल (कथित रूप से) ऐसे नियम देती है जो साथ ही परमेश्वर के सुसमाचार के लिए बाधा हो सकते हैं।

केवल एक ही चीज़ बाधा या ठोकर का पत्थर हो सकती है: यीशु मसीह का क्रूस! उसी पर लोग बँट जाते हैं। बाहरी बातों पर नहीं, बोलने, पहनावे और बैठने के नियमों पर नहीं।

एक बड़ी बाधा यह होगी, यदि स्त्रियों को आराधना में बोलने और भाग लेने से मना किया जाए। इस पर अगले अध्याय में।

"यह तथ्य कि जिन्हें हमने पौलुस के शब्द समझा (जो वास्तव में उसके नहीं हैं), उनका हमने गलती से कलीसिया में स्त्रियों को चुप कराने के लिए प्रयोग किया, इतिहास की सबसे बड़ी त्रासदियों में से एक माना जाना चाहिए।"

डैनी सिल्क (Danny Silk)

हाँ, वास्तव में ये दो बाइबल-पाठ हैं जो पीढ़ियों से स्त्री के होने या न होने का निर्णय करते आए हैं।

79. Herbert Briem, Die Kopfbedeckung der Frau, 2018

वेरोनिका श्मिट (Veronika Schmidt)



6.2 बोलना नहीं, बल्कि चुप रहना

स्वतंत्र कलीसियाओं (फ़्री चर्च) के मसीहियों में केवल थोड़ी सी कलीसियाएँ हैं जिनमें स्त्रियाँ आराधना में चुप रहती हैं। क्योंकि मैं कलीसियाओं के इसी संसार में बड़ा हुआ, यह बात आज तक मुझे व्यस्त रखती है, अक्सर भावनात्मक रूप से।

मैंने कभी नहीं समझा कि परमेश्वर का यह विचार क्या हो सकता है कि स्त्रियाँ आराधना सभाओं में चुप रहें, सिवाय गाने के और मिलकर “आमीन” कहने के। फिर भी, क्योंकि परमेश्वर का वचन ऐसा कहता है, लोग ऐसा ही करते हैं। पुरुष के रूप में मैं केवल अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित हूँ। मैं इस पर कुछ कह ही नहीं सकता कि यह कैसा लगता है, जब जीवन भर आराधना में कुछ कहने की अनुमति न हो।

आज मेरी धारणा यह है कि पुरुष के रूप में मैं इससे केवल अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित नहीं हूँ। मैं दोहरे रूप से और सीधे प्रभावित हूँ। एक ओर मैं इसके लिए सह-ज़िम्मेदार हूँ कि जब मैं बाइबल की व्याख्या करता हूँ, शिक्षा देता हूँ और प्रचार करता हूँ, तो मेरे पास क्या उत्तर और क्या आधार है। और मसीह की आधी देह को कलीसिया की विश्वव्यापी सबसे महत्वपूर्ण घटना में, अर्थात् उसके इकट्ठा होने में, चुप रखने के लिए एक बहुत अच्छा कारण होना चाहिए। मैं प्रभावित हूँ, क्योंकि इकट्ठा होने पर आधे वरदान मेरे लिए लाभदायक नहीं हो सकते। आशीष खो जाती है।

यदि यह समझ एक भूल है, यदि परमेश्वर वहाँ स्त्रियों की आवाज़ भी उतनी ही सुनना चाहता है जितनी पुरुषों की, तो यह एक वास्तविक समस्या है और कोई छोटी बात नहीं। मसीह के न्यायासन को ध्यान में रखते हुए इसकी ज़िम्मेदारी उठाने पर भली-भाँति विचार करना चाहिए।

मैंने स्वयं दशकों ऐसी सभाओं में बिताए हैं। मैंने इसे आत्मसात किया, सही माना, इसका बचाव किया और दूसरों से इसकी माँग की। एक बार, मेरी युवावस्था में, एक सम्मेलन में एक बहन ने ऊँचे स्वर से प्रार्थना की, जो इस परंपरा को नहीं जानती थी। मैं और दूसरे लोग गहरे सदमे में थे। इतने डरे हुए, मानो अभी आकाश से बिजली हम पर गिरेगी। बाद में इस बहन को "समझा दिया गया"।

मैं पहले ही स्पष्ट कर चुका हूँ कि चुप रहने वाली स्त्रियाँ कभी परमेश्वर की इच्छा नहीं हैं। मेरा उद्देश्य हठपूर्वक और चतुराई से इस असुविधाजनक कथन से बचकर निकलना नहीं है, बजाय इसके कि सरलता और नम्रता से उसका पालन करूँ। दुर्भाग्य से मौन के समर्थकों का यही लगातार और एकरस आरोप है। नहीं, बात इतनी सरल नहीं है। इसके अच्छे और पर्याप्त कारण हैं कि मसीह में बहनों को चुप नहीं रहना चाहिए।

बात इस पाठ की है:

> [1 कुरिन्थियों 14:34-36] स्त्रियाँ सभाओं में चुप रहें, क्योंकि उन्हें बोलने की अनुमति नहीं है, परन्तु वे अधीन रहें, जैसा व्यवस्था भी कहती है। परन्तु यदि वे कुछ सीखना चाहें, तो घर पर अपने-अपने पति से पूछें; क्योंकि स्त्री का सभा में बोलना लज्जा की बात है। या क्या परमेश्वर का वचन तुम में से निकला है? या क्या वह केवल तुम्हीं तक पहुँचा है?

6.2.1 प्रश्न

हमें इस पाठ पर एक बार फिर नए सिरे से विचार करना चाहिए। बहुत कुछ दाँव पर है। कृपया बस विचार में मेरे साथ चलिए और एक बार इसे सह लीजिए, भले ही आप इसे बिलकुल अलग ढंग से देखते हों। यदि 1 कुरिन्थियों 14 के ये अंतिम पद न होते, तो क्या आप कभी विचार में मौन की किसी आज्ञा के निकट भी पहुँचते? क्या पूरे पवित्रशास्त्र में कहीं ऐसा कोई निर्देश है? यह कोई "नारीवादी उकसाने वाला प्रश्न" नहीं है। यह सोचने की बात होनी चाहिए कि इतने दूरगामी निर्देश का कहीं और कम से कम एक बार भी उल्लेख नहीं होता, या संकेत तक नहीं मिलता। बात 1 तीमुथियुस 2:12 के शिक्षा देने और शिक्षा देने पर प्रतिबंध की नहीं है। ये कथन मेरे प्रश्न के संदर्भ में नहीं आते (यद्यपि यह पाठ अक्सर तुरंत तर्क के रूप में सामने रख दिया

जाता है)। बात स्त्रियों की सुनाई देने वाली सहभागिता की है। एक प्रार्थना की, एक अनुभव-वृत्तांत की, एक गीत की, भविष्यद्वाणी के एक वचन की, बाइबल-पाठ या प्रचार की।

पत्री के निकट संदर्भ में ठीक विपरीत कथन हैं। सबसे स्पष्ट, और पिछले अध्याय में पहले ही उल्लिखित, पौलुस का यह कथन है कि स्त्रियाँ "प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करती हैं" (11:5)। मैंने इसकी ओर ध्यान दिलाया था और इसे दोहराता हूँ कि "प्रार्थना और भविष्यद्वाणी" सभा के लिए इकट्ठा होने की विशेषता हैं, जैसा अध्याय 14 में विस्तार से वर्णित है। अध्याय 11 में माँगा गया घूँघट या सिर का ढकना केवल इकट्ठा होने पर, पुरुषों की उपस्थिति में, अर्थ रखता है। इस पाठ में बात भोजन से पहले की प्रार्थना की नहीं, न स्त्रियों की मंडलियों या बच्चों की कक्षाओं की। बाद वाली तो शायद तब थीं ही नहीं।

पौलुस के लिए यह बिलकुल स्वाभाविक है कि स्त्रियाँ भाग लें। अध्याय 14 में वह कई बार इसी प्रकार व्यक्त करता है। इसी प्रश्न को ध्यान में रखते हुए पूरा अध्याय पढ़ जाइए।

पुरुषों और स्त्रियों के लिए, भाइयों और बहनों के लिए यह लागू होता है:

> पद 5: मैं चाहता हूँ कि तुम सब अन्य भाषाओं में बोलो, पर इससे भी अधिक यह कि तुम भविष्यद्वाणी करो!
>
> पद 12: ऐसा प्रयत्न करो कि तुम (सब) सभा की उन्नति के लिए भरपूर होते जाओ।
>
> पद 23: इसलिए यदि सारी सभा एक जगह इकट्ठी हो और सब अन्य भाषाओं में बोलें ...
>
> पद 26: तो भाइयो, क्या करना चाहिए? जब तुम इकट्ठे होते हो, तो तुम में से हर एक के पास कोई भजन होता है, कोई शिक्षा होती है, कोई प्रकाशन होता है, कोई अन्य भाषा होती है, कोई अर्थ बताना होता है; सब कुछ उन्नति के लिए हो।
>
> पद 31: क्योंकि तुम सब एक-एक करके भविष्यद्वाणी कर सकते हो, ताकि सब सीखें और सब को शान्ति मिले।

भाइयों के रूप में संबोधन का अर्थ सब हैं: भाई और बहनें। बिना किसी ग़लतफ़हमी के बेहतर होता कि इसका अनुवाद Geschwister (जर्मन शब्द, जो भाइयों और बहनों दोनों को एक साथ कहता है; हिन्दी में "भाई-बहन") किया जाए। 1 कुरिन्थियों की पत्री बहुत से अनुच्छेद भाइयो (adelphoi) शब्द से आरंभ करती है, जो निस्संदेह भाइयों और बहनों को संबोधित है। केवल पुरुषों को नहीं। सामान्यतः पुल्लिंग बहुवचन में स्त्रियाँ सम्मिलित होती थीं। इसी प्रकार आज भी जर्मन में "सामान्य (जेनेरिक) पुल्लिंग" का प्रयोग होता है। उदाहरण के लिए Kontoinhaber (खाताधारक, जर्मन में एक पुल्लिंग बहुवचन) पुरुष भी हैं और स्त्रियाँ भी। सगी बहनों के लिए adelphai शब्द था। यहाँ विषय से भटके बिना मैं यीशु के उस वचन की ओर ध्यान दिलाता हूँ, जिसमें सब शिष्याओं और शिष्यों को एक साथ ठीक इसी शब्द से संबोधित किया गया और समेटा गया है: "पर तुम सब भाई हो!" (मत्ती 23:8ख)। इसके साथ यह भी है कि सब स्त्रियाँ अब "परमेश्वर के पुत्र" भी हैं (गलातियों 3:26)। यदि संदर्भ निस्संदेह केवल पुरुषों की बात नहीं करता, तो सब बहनें सम्मिलित हैं। भाईचारे का प्रेम निश्चय ही बहनों को भी सम्मिलित करता होगा।

इन स्पष्ट कथनों के साथ यह भी है कि योग्यताएँ, अर्थात् आत्मा के वरदान (देखें अध्याय 12), अनुग्रह के वरदान सब अंगों को बाँटे जाते हैं – लिंग के आधार पर नहीं। इस विषय के किसी भी पाठ में कोई ऐसा अंतर नहीं है जो संकेत दे कि पुरुष या स्त्री होने की इस कसौटी का वरदानों के बाँटे जाने या योग्यता में कोई महत्व है। पिन्तेकुस्त के दिन योएल भविष्यद्वक्ता की प्रतिज्ञा के अनुसार आत्मा सब प्राणियों पर, बेटों और बेटियों पर समान रूप से उंडेला गया (प्रेरितों के काम 2:17)।

6.2.2 अध्याय के अन्त में उलझन

11:5 में पौलुस उन स्त्रियों की बात कर चुका है जो सार्वजनिक रूप से प्रार्थना और भविष्यद्वाणी करती हैं। अध्याय 14 में यहाँ तक उसने स्त्रियों का अलग से उल्लेख नहीं किया, न उन्हें अलग रखा, बल्कि सम्मिलित किया है। और अब एक उलझन में डालने वाला कथन आता है। स्त्रियाँ चुप रहें। इन दो पदों में यह तीन बार दोहराया गया है। इसलिए पहले कही गई कोई भी बात उन पर लागू नहीं होती। क्या पौलुस लिखते समय इसे भूल गया था और अब नीचे जोड़ देता है? या क्या यह उसकी शिक्षा के अंत का चरम बिंदु है? नहीं, पौलुस एक प्रतिभाशाली और वरदान-प्राप्त लेखक था। हर शब्द सही स्थान पर था और सोचा-समझा था।

वे, अर्थात् स्त्रियाँ, पाठ के अनुसार चुप रहें और अधीन रहें, जैसा व्यवस्था भी कहती है (14:34)। व्यवस्था के उल्लेख पर, जिसमें मौन और अधीनता के दोनों निर्देश होने और उनका आधार होने की बात कही गई है, पाठक चौंक जाएगा। क्या यह पौलुस के बोलने का ढंग है?

मूसा की तोराह में ऐसी कोई व्यवस्था नहीं है। न अधीनता के बारे में और न मौन के बारे में। पुराने नियम की कोई व्यवस्था नए नियम के इकट्ठा होने के लिए इतना ठोस निर्देश कैसे हो सकती है? इस अध्याय के पद 21 में दिखाई देता है कि पौलुस व्यवस्था का हवाला कैसे देता है: एक उद्धरण के साथ, जिसे हर कोई यशायाह 28:11-12 में पढ़ सकता है। यहाँ क्यों नहीं? क्योंकि यह मूसा की व्यवस्था नहीं है।

यह तर्क दिया जाता है कि पूरी मूसा की व्यवस्था को या पूरे पुराने नियम को, भले ही ठोस रूप से या शब्दशः नहीं, इसी दिशा में समझना चाहिए। इसका भी कोई आधार नहीं दिया जा सकता। स्त्रियों पर इतने दूरगामी प्रतिबंध के लिए यह बस बहुत कमज़ोर है। जो कोई इस प्रकार तर्क करता है, वह अपने विरुद्ध ऐसा कोई निर्णय स्वीकार नहीं करेगा जिसका आधार इतना सामान्य या इतना कमज़ोर हो।

कुछ लोग तो यह भी मानते हैं कि यहाँ पौलुस का अर्थ उत्पत्ति 3:16 के दंड-वचन से है, जहाँ कहा गया है कि पुरुष स्त्री पर प्रभुता करेगा। यह जितना असंगत है, यदि वास्तव में ऐसा होता, तो मौन की आज्ञा पतन का सीधा दंड होती। अर्थात् एक ऐसा दंड, जिसका अर्थ है कि पहले ऐसा नहीं था। नई वाचा की कलीसिया में (!) तो यह दंड हटाया जा सकता था, बल्कि हटाया जाना ही चाहिए।

6.2.3 उद्धरण के रूप में पढ़ना

यहाँ शायद एक उद्धरण की बात है। तब 1 कुरिन्थियों 14:33-36 इस प्रकार पढ़ा जाता है:

> "क्योंकि परमेश्वर अव्यवस्था का [परमेश्वर] नहीं, परन्तु शान्ति का [परमेश्वर] है, जैसा पवित्र लोगों की सब कलीसियाओं में [होता है]।

इसके बाद वह आता है जिसे यहूदीवादी लागू करना और प्रचलित करना चाहते हैं। पौलुस उद्धृत करता है या स्वयं शब्दों में रखता है कि वे क्या माँगते हैं:

> तुम्हारी स्त्रियाँ कलीसियाओं में चुप रहें, क्योंकि [तुम्हारी ओर से] उन्हें बोलने की अनुमति नहीं दी जाती, परन्तु वे अधीन रहें, जैसा व्यवस्था भी कहती है। परन्तु यदि वे कुछ सीखना चाहें, तो घर पर अपने-अपने पति से पूछें, क्योंकि स्त्री का कलीसिया में बोलना लज्जा की बात है।

इसका पौलुस अब स्पष्ट रूप से और व्यंग्य के साथ खंडन करता है:

> या क्या परमेश्वर का वचन तुम [पुरुषों या कुरिन्थियों] में से निकला है, या केवल तुम्हीं तक पहुँचा है?"

यह पौलुस का विचार नहीं है कि स्त्रियों को चुप रहना है। वह स्वयं अपना खंडन करता। क्या हम पुरुष ऐसे विरोधाभास को जानबूझकर अनदेखा कर सकते हैं और फिर उसे स्त्रियों के विरुद्ध लागू कर सकते हैं? क्या हम अपने दैनिक जीवन में ऐसा कुछ सहन करते?

शायद ये यहूदी पुरुष हैं, जो कुरिन्थुस की कलीसिया की स्त्रियों को घूँघट करने के लिए और यहाँ तो चुप रहने के लिए भी बाध्य करना चाहते थे।

इस पर शिरमाखर (Schirrmacher): "रॉबर्ट डब्ल्यू. एलिसन (Robert W. Allison) ने इसके अतिरिक्त 1 कुरिन्थियों 14:34 में व्यवस्था का सहारा लेने के प्रश्न पर विचार किया है। वे इस परिणाम पर पहुँचते हैं कि पुराने नियम की व्यवस्था में स्त्रियों के लिए चुप रहने का कोई आदेश नहीं है। परन्तु 1 कुरिन्थियों 14:34 का निष्कर्ष पूरी तरह उत्पत्ति 3:16 की रब्बी व्याख्या के अनुरूप है, जिसे हम आरंभ में तलमुद के आधार पर पहले ही जान चुके हैं और जो 1 कुरिन्थियों 11:2-16 में भी प्रतिबिंबित हुई है, परन्तु उस शिक्षा का खंडन करती है जो यीशु और पौलुस ने पुराने नियम से प्राप्त की।

जॉयस हार्पर (Joyce Harper) और जॉन ए. एंडरसन (John A. Anderson) यह मानकर चलते हैं कि व्यवस्था का सहारा तलमुद में स्त्री के बोलने पर पूर्ण प्रतिबंध के अनुरूप है, और यहाँ पौलुस व्यवस्था का सहारा नहीं लेता, बल्कि यहूदी शिक्षक अनुचित रूप से व्यवस्था की अपनी व्याख्या का सहारा लेते हैं।[80] वे तलमुद को इन शब्दों में उद्धृत करते हैं: 'स्त्री के लिए यह लज्जा की बात है कि वह पुरुषों के बीच अपनी आवाज़ सुनाए।'[81]

80. Joyce Harper. Women and the Gospel. C. B. R. F. Occasional Paper 5. Christian Brethren Research Fellowship: Pinner (GB), 1974. पृ. 14-15; John A. Anderson. Women's Warfare and Ministry: What Saith the Scriptures? David Waldie: Stonehaven (GB), 1933. पृ. 20-26।
81. Joyce Harper. Women and the Gospel. पूर्वोक्त, पृ. 14 (मेगिल्ला (Megilla), तलमुद की एक पुस्तक)।

एस. आलेन (S. Aalen) ने इसी मत का आधार इस संकेत से देना चाहा कि 'इसकी अनुमति नहीं है' वाक्यांश एक रब्बी सूत्र है[82], जिससे रब्बी चीज़ों की अनुमति देते और उन्हें मना करते थे।"[83]

और भी संकेत हैं कि ये शब्द यहूदी सोच से आते हैं। उदाहरण के लिए प्रसिद्ध इतिहासकार जोसीफ़स (Josephus): "व्यवस्था कहती है, स्त्री हर बात में पुरुष से हीन है। इसलिए वह उसी के अनुसार समर्पणशील रहे, अपने अपमान के लिए नहीं, बल्कि इसलिए कि उसका मार्गदर्शन हो, क्योंकि अधिकार परमेश्वर ने पुरुष को दिया है।" (Apion 2.201)

"कुल मिलाकर, धार्मिक विधि-व्यवस्था में स्त्रियों की स्थिति को इस बार-बार दोहराए जाने वाले सूत्र से सबसे अच्छी तरह व्यक्त किया जा सकता है: 'स्त्रियाँ, (ग़ैर-यहूदी) दास और बच्चे (नाबालिग)'। ग़ैर-यहूदी दास और नाबालिग बच्चे की तरह स्त्री के ऊपर भी एक पुरुष होता है जो उसका स्वामी है; यह आराधना में उसकी सहभागिता को भी उसी प्रकार सीमित करता है, क्योंकि धार्मिक दृष्टि से वह पुरुष से हीन है।

इसलिए हमें यह आभास होता है कि यीशु के समय का यहूदी धर्म भी स्त्रियों के बारे में बहुत निम्न राय रखता था, जैसा पूर्व में चलन है, जहाँ स्त्री को सबसे बढ़कर उसकी प्रजनन-क्षमता के कारण महत्व दिया जाता है, पर जहाँ तक हो सके, वह बाहरी संसार से अलग रखी जाती है, अपने पिता या पति की शक्ति के वश में होती है, और जहाँ धार्मिक दृष्टि से वह पुरुषों की तुलना में हीन (अधीन) है।"[84]

कुछ और कथन, जिनकी आत्मा उन शब्दों में फिर से मिलती है जिन्हें पौलुस उद्धृत करता है:

स्त्री की आवाज़ वर्जित है, क्योंकि वह यौन रूप से उत्तेजित करती है। तलमुद, बेराखोत (Berachot) 24a

स्त्री की आवाज़ गंदी नग्नता है। तलमुद, बेराखोत (Berachot)

"स्त्री को तोराह की शिक्षा देने की आवश्यकता नहीं, वह गवाही देने के योग्य नहीं, उसकी बातें कम विश्वसनीय हैं, वह इधर-उधर घूमने की प्रवृत्ति रखती है, अतिथियों से ईर्ष्या करती है।" (Strack-Billerbeck, Kommentar zum Neuen Testament aus Talmud und Midrasch. IV, 1226)

यीशु और आरंभिक कलीसिया के समय यहूदी धर्म में और पूर्व के देशों में स्त्री की दशा कैसी थी, इसके बारे में और भी बहुत कुछ प्रस्तुत किया जा सकता है। पुराने नियम में स्त्री के प्रति जो आदर था, वह भी बना नहीं रहा। यह अन्य बातों के साथ यूनानीकरण का परिणाम है, जो स्त्री के स्वभाव के बारे में यूनानी विचारों को यहूदी सोच में ले आया।

क्या पौलुस इन स्त्री-विरोधी विचारों का उल्लेख किए बिना रह सकता था? शायद वे उसके लिए इतने बेतुके थे, शायद कुरिन्थुस में इतने प्रभावशाली रूप से फैले भी नहीं थे, कि वह उन पर केवल थोड़ा ध्यान देता है, पर सावधानी के लिए उसे उनका उल्लेख करना ही पड़ा होगा। स्पष्ट रूप से, लगभग व्यंग्य के साथ, पौलुस

82. S. Aalen. "A Rabbinic Formula in I Cor 14,34". पृ. 513-525, में: F. L. Cross (सं.)। Studia Evangelica II. Texte und Untersuchungen zur Geschichte der altchristlichen Literatur 87. Akademie-Verlag: (Ost-)Berlin, 1964।
83. थोमस शिरमाखर (Thomas Schirrmacher) का उद्धरण, पृष्ठ 110
84. Jerusalem in the Time of Jesus (Jerusalem zur Zeit Jesu) – Joachim Jeremias, पृ. 375।

इन यहूदीवादियों का सामना करता है। क्या वे ही वे लोग हैं जिनसे परमेश्वर का वचन निकलता है? क्या वे ही आराधना का रूप निर्धारित करते हैं? जो निश्चय ही बिलकुल नहीं हो सकता। ध्यान देने की बात तो यह है कि यह कथन अपने पुल्लिंग रूप में पुरुषों को संबोधित है, स्त्रियों को नहीं, जिन्हें वास्तव में संबोधित होना चाहिए था। इसका अनुवाद यह भी हो सकता है:

> या क्या वह केवल तुम पुरुषों तक ही पहुँचा है?

जो आज स्त्रियों को चुप रहने के लिए बाध्य करता है, उस पर पौलुस के यही शब्द लागू होते हैं: क्या तुम्हें इस विषय में कोई ईश्वरीय प्रकाशन मिला है? क्या कोई बस प्रेरित के निर्देशों का विरोध कर सकता है?

आरंभिक मसीहियत में किसी भी सभा में स्त्रियाँ चुप नहीं रहती थीं। सभा आराधनालय का विस्तार या नया रूप नहीं थी, जहाँ स्त्रियाँ (कुछ अपवादों को छोड़कर) चुप रहती थीं और उनके बैठने की अलग व्यवस्था थी। आराधनालय सभा के लिए केवल सीमित रूप से आदर्श था। वहाँ अधिकतर पुरुष-प्रधान पदानुक्रमिक व्यवस्था चलती थी। गलातियों 3:28 को देखते हुए (मसीह में सब भेद महत्वहीन हो गए हैं) इसे कलीसिया में कभी प्रवेश नहीं करना था। इसी के लिए पौलुस संघर्ष करता है।

6.2.4 एक रोमी कानून?

इतिहासकार बेथ एलिसन बार (Beth Allison Barr) अपनी इस धारणा को, कि यहाँ रोमी विचारों को दोहराया गया है, कौंसल काटो (Cato) के एक उद्धरण से निकालती हैं।[85] "यदि 1 कुरिन्थियों 14:34-35 को एक ऐसे उद्धरण के रूप में पढ़ा जाए जो कुरिन्थुस की एक प्रथा को प्रस्तुत करता है (जिसके पक्ष में डी. डब्ल्यू. ओडेल-स्कॉट (D. W. Odell-Scott) ने 1983 में, चार्ल्स टैलबर्ट (Charles Talbert) ने 1987 में, थोमस शिरमाखर (Thomas Schirrmacher) ने 1991 में, कैथरीन बुशनेल (Katharine Bushnell) ने 100 वर्ष पहले ही और हाल में पेपियाट (Peppiatt) ने फिर से तर्क दिया है), तो पौलुस का उद्देश्य स्पष्ट लगता है: यह अलग करना कि कुरिन्थी क्या कर रहे थे ('स्त्रियाँ चुप रहें'), और यह स्पष्ट करना कि मसीहियों को कुरिन्थुस की प्रथा का पालन नहीं करना चाहिए ('क्या!')। यद्यपि मैं गारंटी नहीं दे सकती कि पौलुस ने यही किया, फिर भी यह (ऐतिहासिक रूप से) बहुत अर्थपूर्ण है। पहली कुरिन्थियों की पत्री में पहले से ही कई अ-पौलुसीय उद्धरण हैं, और पद 34-35 का शब्द-विन्यास रोमी स्रोतों के आश्चर्यजनक रूप से निकट है। मार्ग मोव्च्को (Marg Mowczko) कहती हैं: 'यह मत कि 14:34-35 एक अ-पौलुसीय

85. "घर में हमारी स्वतंत्रता स्त्रियों के उन्माद से पराजित हो जाती है, यहाँ फ़ोरम में उसे पैरों तले रौंदा जाता है, और क्योंकि हमने एक-एक को वश में नहीं रखा, इसलिए हम परिणाम से डरते हैं ... सच में, मैं लज्जा से लाल हो गया, जब अभी हाल में मैं स्त्रियों की एक भीड़ के बीच से होकर निकला ... मुझे कहना चाहिए था: 'यह कैसा व्यवहार है? सार्वजनिक स्थानों पर इधर-उधर दौड़ना, सड़कें रोकना और दूसरी स्त्रियों के पतियों से बात करना! क्या आप घर पर अपने ही पतियों से यही नहीं माँग सकती थीं? क्या तुम सार्वजनिक स्थान पर दूसरों के पतियों के प्रति घर पर अपने पतियों से अधिक मनोहर हो? और फिर भी घर पर भी यह तुम्हें शोभा नहीं देता कि तुम इस बात की चिंता करो कि यहाँ कौन से कानून पारित या रद्द किए जाते हैं।' हमारे पूर्वज नहीं चाहते थे कि स्त्रियाँ कोई भी – यहाँ तक कि निजी – काम बिना किसी अभिभावक के करें; वे चाहते थे कि वे माता-पिता, भाइयों या पतियों के अधिकार के अधीन रहें; हम (देवता हमारी सहायता करें!) उन्हें अब शासन की लालसा करने और फ़ोरम में और हमारी सभाओं में दख़ल देने तक देते हैं। यदि वे ट्रिब्यूनों को रद्द करने के पक्ष में मत देने के लिए नहीं मना रहीं, तो अब वे सड़कों और चौराहों पर क्या कर रही हैं? ... यदि वे अब जीत जाती हैं, तो वे क्या-क्या प्रयास नहीं करेंगी? जैसे ही वे तुम्हारे बराबर होने लगेंगी, वे तुम्हारी अधिकारी बन चुकी होंगी।"

उद्धरण है, उन थोड़े से मतों में से एक है जो उस अचानक स्वर-परिवर्तन का, जो पद 34-35 पाठ में लाते हैं, और साथ ही पद 36 में विषय, स्वर और लिंग के उसके बाद के अचानक परिवर्तन का एक विश्वसनीय स्पष्टीकरण देते हैं'। यदि पौलुस वास्तव में रोमी विश्व-दृष्टि को उद्धृत करता है, ताकि उसके सामने मसीही विश्व-दृष्टि रखे, तो उसका अर्थ ठीक उसके विपरीत है जो सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) स्त्रियों को सिखाया गया है। क्या ऐसा हो सकता है कि पौलुस स्त्रियों से यह कहने के बजाय कि वे चुप रहें, जैसा रोमी संसार करता था, वास्तव में पुरुषों से यह कहना चाहता था कि यीशु के संसार में स्त्रियों को बोलने की अनुमति थी? क्या ऐसा हो सकता है कि हमने पौलुस की बात (फिर से) अनदेखी कर दी है? उसकी डाँट को मन में लेकर स्त्रियों को बोलने की अनुमति देने के बजाय, क्या हम ठीक उन्हीं पितृसत्तात्मक प्रथाओं को जारी रख रहे हैं जिनकी पौलुस ने निंदा की?"[86]

6.2.5 कदापि नहीं!

पद 36 की एक विशेषता की ओर मैं ध्यान दिलाता हूँ। वहाँ कहा गया है: "या क्या परमेश्वर का वचन तुम [पुरुषों या कुरिन्थियों] में से निकला है? या क्या वह केवल तुम्हीं तक पहुँचा है?"

मौन और अधीनता के कथन के बाद इन दोनों प्रश्नों को पौलुस निपात ἤ से आरंभ करता है। निपात "ἤ अक्सर ऐसे आलंकारिक प्रश्नों को आरंभ करने का काम करता है, जिनमें नकारात्मक उत्तर की अपेक्षा होती है: मत्ती 7:9 'या तुम में से कौन ऐसा मनुष्य है ...?'; 12:5 'या क्या तुम ने नहीं पढ़ा ...?'; तुलना करें मत्ती 20:15; 26:53; लूका 13:4; रोमियों 3:29; 6:5; 7:1; 9:21; 11:2; 1 कुरिन्थियों 6:9,16,19; 9:8; 10:22; 2 कुरिन्थियों 11:7; 13:5; याकूब 4:5; दोहरा प्रश्न 1 कुरिन्थियों 14:36।"[87]

"इसी प्रकार नकारात्मक स्वभाव वाले आलंकारिक प्रश्नों में ... ; लोग झाड़ियों से अंगूर या ऊँटकटारों से अंजीर तो नहीं बटोरते? मत्ती 7:16; तुलना करें मरकुस 4:21; 1 कुरिन्थियों 1:13; याकूब 3:12। ... सामान्य रूप से ἤ अक्सर प्रश्नवाचक वाक्यों में मिलता है — α. आलंकारिक प्रश्नों को आरंभ करने और जोड़ने के लिए (Just., D. 2,4 और अन्य स्थानों पर; Ath. 8,3 और अन्य स्थानों पर) ...; या क्या तुम सोचते हो कि? मत्ती 26:53। ...; या क्या परमेश्वर केवल यहूदियों का परमेश्वर है? रोमियों 3:29। ... या क्या तुम नहीं जानते? 6:3; 7:1; 1 कुरिन्थियों 6:9,16,19; तुलना करें 10:22; 2 कुरिन्थियों 11:7।" [88]

जर्मन भाषा में ἤ का समकक्ष "क्या?" (Was?), "बेतुकी बात!" (Unsinn!) या "कदापि नहीं!" (Auf keinen Fall!) होगा: किसी भी दशा में स्त्रियों को आराधना सभा में चुप नहीं रहना है। यह पौलुस का तीव्र विरोध है।

86. Barr, Beth Allison. The Making of Biblical Womanhood (पृ. 62). Baker Publishing Group.
87. PEPPERMÜLLER, R., "ἤ", in H. BALZ - G. SCHNEIDER (edd.), Exegetisches Wörterbuch zum Neuen Testament, Verlag W. Kohlhammer, Stuttgart 2011, 276.
88. BAUER, W., in K. ALAND - B. ALAND (edd.), Griechisch-Deutsches Wörterbuch zu den Schriften des Neuen Testaments und der frühchristlichen Literatur, Walter de Gruyter, 6वाँ संस्करण, Berlin; New York 1988, 693–694.

6.2.6 अन्य व्याख्याएँ

यदि उद्धरण के रूप में पढ़ने को अस्वीकार किया जाए, तो भी यह समझाना होगा कि मौन की आज्ञा सामान्य रूप से क्यों लागू हो। यदि ये पौलुस के शब्द माने जाएँ, तो पहले बताए गए विरोधाभासों को विश्वसनीय ढंग से सुलझाना होगा।

विश्वसनीय रूप से स्पष्ट करना होगा कि स्त्रियों का कौन सा "बोलना" अभिप्रेत है। क्या यह बाधा डालने वाली बकबक है, भविष्यद्वाणी का मूल्यांकन, (लगातार) (बीच में) प्रश्न पूछना, अव्यवस्थित, बाधा डालने वाला बोलना? शिक्षा देना? पति को सार्वजनिक रूप से (अनादरपूर्वक) सुधारना? आप जो भी टीकाएँ पढ़ें, इस पर, ठीक 1 कुरिन्थियों 11 की तरह, लगभग उतने ही स्पष्टीकरण हैं जितने व्याख्याकार।

एक से अधिक बार मुझसे कहा और लिखा गया कि इसके लिए हमें स्पष्टता के लिए प्रार्थना करते रहना चाहिए। आज इस स्थान पर मैं इस (धार्मिक) दृष्टिकोण को अस्वीकार करता हूँ। क्योंकि इस विषय में लाखों प्रार्थनाएँ स्वर्ग तक पहुँच चुकी हैं, पर स्पष्ट है कि उनका उत्तर नहीं मिला। प्रश्न बने रहे। अस्पष्टताएँ भी।

एक उल्लेखनीय स्पष्टीकरण आर्मिन बाउम (Armin Baum) का है, जो उद्धरण के रूप में पढ़ने के समर्थक नहीं हैं। उनका दृष्टिकोण "संस्कृति के प्रति संवेदनशील" और ऐतिहासिक है। प्राचीन काल की स्त्रियों को सार्वजनिक रूप से बोलने की अनुमति नहीं थी। यह पुरुषों का काम था। यहूदी धर्मविज्ञानी आश्वस्त थे कि पुरुष के क्षेत्र में स्त्री को नहीं बोलना है। इसी प्रकार प्रेरितों के काम में सार्वजनिक रूप से केवल पुरुष बोलते थे। इसके विपरीत स्त्रियाँ केवल निजी क्षेत्र में सक्रिय हो सकती थीं। इस प्राचीन रीति के कारण पौलुस ने स्त्रियों को सार्वजनिक रूप से बोलने से, या प्रश्न पूछने तक से, मना किया। पर क्यों? ताकि "संस्कृति के प्रति संवेदनशील" व्यवहार हो। पौलुस का आधार धर्मवैज्ञानिक नहीं है (जैसे कोई सृष्टि की व्यवस्था), बल्कि वह उस समय की रीतियों का ध्यान रखता है। स्त्री के लिए सार्वजनिक रूप से बोलना लज्जा की बात थी। इससे वह सुसमाचार और मसीहियों को अनावश्यक रूप से बदनाम कर सकती थी। लगभग 200 वर्ष पहले तक (!) स्त्रियों के लिए सार्वजनिक रूप से बोलने पर यह प्रतिबंध सामान्य बात थी। जैसा सब जानते हैं, आज यह सब अलग है।

आर्मिन बाउम ठीक ही समझाते हैं: "पर कोई पूछ सकता है: क्या कठिन बाइबल-स्थलों के साथ ऐसे व्यवहार से सब कुछ फिसलने नहीं लगता? क्या इस प्रकार नए नियम के सारे निर्देशों को 'संदर्भ के नाम पर हटाया' नहीं जा सकता? ऐसा नहीं है। क्योंकि संदर्भीकरण की पद्धति केवल उन निर्देशों के लिए है जिनका आधार सांस्कृतिक है। जिन निर्देशों का आधार धर्मवैज्ञानिक है, उनमें वह अनुचित है।"

माइकल बर्ड (Michael Bird) पौलुस के इस निर्देश को इस प्रकार समझाते हैं: "1 कुरिन्थियों 14:33ख-35 का सबसे संभावित स्पष्टीकरण यह है कि पौलुस इस बात से निपट रहा है कि सार्वजनिक आराधना के समय पत्नियाँ अपने पतियों के साथ कैसे संबंध रखती थीं और उनसे कैसे व्यवहार करती थीं। ध्यान दीजिए कि 14:33क और 14:40 कैसे सभाओं में क्रम और शालीनता पर केंद्रित हैं। पौलुस स्त्रियों के लिए कलीसिया में बोलने पर कोई सामान्य प्रतिबंध नहीं लगाता, क्योंकि 11:2-16 और दूसरे पाठ इसके

विपरीत कलीसिया में बोलने वाली स्त्रियों का उल्लेख करते हैं। पौलुस जिस बात को मना करता है, वह बोलने का एक विशेष ढंग है, न कि पत्नियों के बोलने की संभावना। सबसे अधिक संभावना यह है कि पौलुस कल्पना करता है कि पत्नियाँ कुछ ऐसा करती हैं, जैसे भविष्यद्वाणियों के समय या अन्य भाषाओं में बोलने के समय अपने पतियों से प्रश्न पूछने के लिए किसी वक्ता को बीच में टोकना, या फिर सुने जाने के लिए किसी की बात के ऊपर बोलना। शायद स्त्रियों ने कलीसिया के सामने भविष्यद्वाणी या पवित्रशास्त्र की व्याख्या के प्रश्नों पर अपने पतियों से पूछताछ भी की या उनका विरोध किया। यदि स्त्रियाँ वास्तव में सीखने और चर्चा में रुचि रखती हैं, तो यह बहुत अच्छी बात है, पर इसके लिए सही स्थान घर है, बजाय इसके कि वे बाधा डालें या झगड़ालू बनें।"[89]

इस व्याख्या में पौलुस के शब्द ऐसे पढ़े जाएँगे, जैसा इस भावानुवाद में व्यक्त किया गया है:

> पवित्र लोगों की सब कलीसियाओं की तरह, कलीसियाओं में पत्नियों को ऐसे ढंग से नहीं बोलना चाहिए जो अशिष्ट या अनैतिक माना जाए। उन्हें [इस प्रकार] बोलने की अनुमति नहीं है, बल्कि उन्हें अधीन रहना चाहिए, जैसा उत्पत्ति 2 कहती है [इस विषय में कि पत्नियाँ अपने पतियों के लिए उपयुक्त पूरक हैं, न कि उनकी सार्वजनिक आलोचक]। यदि वे कुछ सीखना चाहें, तो घर पर अपने-अपने पति से पूछें; क्योंकि स्त्री का सभा में [अशिष्ट या अनैतिक ढंग से] बोलना लज्जा की बात है। क्या परमेश्वर के वचन का उद्गम तुम में है [और यहूदियों में नहीं]? या क्या वे ही एकमात्र लोग हैं जिन तक वह पहुँचा है [सुसमाचार बहुत से ऐसे लोगों तक पहुँचा है जो स्त्रियों के द्वारा पुरुषों पर प्रश्न उठाने को बहुत अनैतिक मानते हैं]?

धर्मविज्ञान के इतिहास से एक और उदाहरण, कि पौलुस के इस स्थल की व्याख्या अलग-अलग ढंग से की जाती है: फ़िलिप याकोब श्पेनर (Philipp Jacob Spener) इन स्थलों को यथासंभव ठीक-ठीक व्यवहार में लाना चाहते थे। इसलिए उनकी सभाओं में स्त्रियों को एक अलग कमरे में बैठना पड़ता था। वहाँ वे सुन तो सकती थीं, पर बातचीत में भाग नहीं ले सकती थीं। कुछ बाद की, काउंट निकोलाउस लुडविग फ़ॉन ज़िन्ज़ेनडॉर्फ़ (Nikolaus Ludwig von Zinzendorf) की हर्नहूटी ब्रदरन कलीसिया (Herrnhuter Brüdergemeine) ने विपरीत मार्ग अपनाया: स्त्रियों के पास कलीसिया में सक्रिय होने की बहुत सी संभावनाएँ थीं। पौलुस के इस स्थल की व्याख्या उस समय की परिस्थिति के प्रकाश में की गई।

6.2.7 संभवतः पौलुस का नहीं

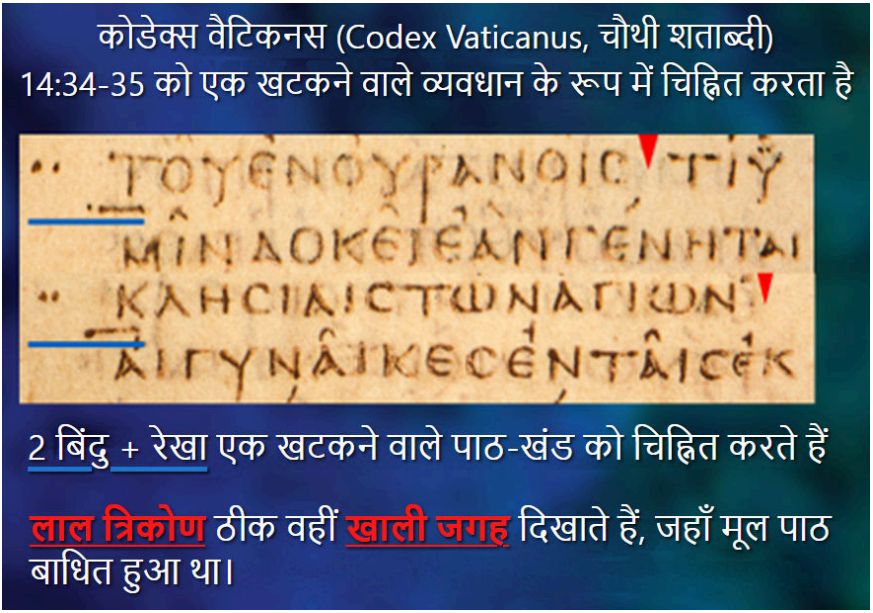
जैसा प्रस्तावना में संकेत किया गया है, यह अध्याय 6.2.7 जोड़ा गया, क्योंकि (कम से कम मेरे लिए) नई जानकारियाँ हैं, जिनका संबंध पुरानी हस्तलिपियों से है। फ़िलिप बार्टन पेन (Philip Barton Payne) ने इस विषय पर गहन कार्य किया है और, कुछ दूसरे पाठ-शोधकर्ताओं की तरह, पहचाना है कि ये विचित्रताएँ हैं:

89. Wunderli, वही।

कुछ हस्तलिपियों में पद 34 और 35 वहीं हैं जहाँ वे हमारी बाइबलों में हैं, परन्तु दूसरी हस्तलिपियों में वे पद 40 के बाद हैं।

एक अपेक्षाकृत लंबा पाठ खिसकाया गया। यह बहुत असामान्य है और यह अनुमान लगाने देता है: ये पद बाद में जोड़े गए। वे हाशिये पर लिखे हुए थे, और सामान्यतः अगला प्रतिलिपिकार उन्हें पाठ में डाल देता था, क्योंकि शायद वे पहले भूल से छूट गए थे। वही तय करता था कि उन्हें कहाँ डाला जाए।

इस मत को कोडेक्स वैटिकनस (Codex Vaticanus) में हुई एक खोज से बल मिलता है, जो चौथी शताब्दी की सबसे विस्तृत और सबसे महत्वपूर्ण कोडेक्सों में से एक है। वहाँ ये पद वास्तव में एक जोड़ के रूप में चिह्नित हैं:



चित्र का स्रोत: Bibliothèque nationale de France

इस पर मैं फ़िलिप बी. पेन (Philip B. Payne) को उद्धृत करता हूँ, जिन्होंने इस विषय पर अग्रणी शोध किया है: "हस्तलिपियों से निकलने वाले सात कारण और इन पदों के शब्दों से निकलने वाले नौ कारण मुझे और बहुत से दूसरे लोगों को इस बात का विश्वास दिलाते हैं कि ये पद पौलुस की मूल पत्री में नहीं थे, बल्कि बाद में जोड़े गए। अभी मैं केवल तीन का सारांश दूँगा।

पहला, इन पदों का स्पष्ट अर्थ इस अध्याय के उन कथनों के विरुद्ध है कि "सब" शिक्षा दे सकते हैं और भविष्यद्वाणी कर सकते हैं, और अध्याय 11:5 के इस कथन के विरुद्ध है कि स्त्रियाँ भविष्यद्वाणी करती हैं।

दूसरा, पौलुस की पत्रियों की हस्तलिपियों में कोई दूसरा पाठ-अंश नहीं है जो लगभग इतना लंबा हो और जो (अलग-अलग हस्तलिपियों में) दो अलग-अलग स्थानों पर एक-दूसरे से इतनी दूर हो, बिना इसके कि इसका कोई स्पष्ट कारण हो।

तीसरा, सबसे पुरानी बाइबल इन पदों को बाद का अप्रामाणिक जोड़ बताती है।[90]

पहला, ये पद इस अध्याय के बहुत से दूसरे कथनों के विरुद्ध हैं।

विरोधों से बचने के लिए बहुत से लोग कहते हैं कि पौलुस केवल बाधा डालने वाली बकबक को चुप कराता है या, जैसा पहली बार 1962 में सुझाया गया[91], केवल भविष्यद्वाणियों के मूल्यांकन को। परन्तु ये व्याख्याएँ मौन की उस असीमित माँग के अनुरूप नहीं हैं, जो इस खंड में तीन बार ज़ोर देकर दोहराई गई है। यदि पद 34 केवल भविष्यद्वाणियों के मूल्यांकन को मना करता है, तो पद 34 ऐसे बोलने की भी अनुमति देता है जिसे पद 35 मना करता है। आख़िरकार, कुछ सीखने की इच्छा से प्रश्न पूछना भविष्यद्वाणियों के मूल्यांकन से बिलकुल अलग बात है, और यह शायद ही कभी बाधा डालता है। ये व्याख्याएँ इस परिणाम पर पहुँचाती हैं कि पौलुस उसी बात का खंडन करता जो उसने अभी-अभी लिखी है।

दूसरा, सब "पश्चिमी" यूनानी हस्तलिपियों में ये पद पद 40 के बाद आते हैं, परन्तु अधिकतर दूसरी हस्तलिपियों में ये पद 33 के बाद आते हैं।

यहाँ छठी शताब्दी का प्रसिद्ध "पश्चिमी" कोडेक्स D है। इस चित्र का पहला पूरा अनुच्छेद अध्याय 14 का अंत है। अगला अनुच्छेद पद 34 से 35 है। अंतिम खंड से अध्याय 15 आरंभ होता है।

वे दो अलग-अलग स्थान, जहाँ पद 34 से 35 मिलते हैं, यह संकेत देते हैं कि किसी ने उन्हें हाशिये पर लिखा और बाद के प्रतिलिपिकारों ने उन्हें या तो पद 33 के बाद या पद 40 के बाद डाल दिया। मुझे यह समझाने दीजिए:

पवित्रशास्त्र के मूल पाठ के निर्धारण में मूलभूत सिद्धांत यह है: "जो पाठ सब दूसरे पाठों की उत्पत्ति को सबसे अच्छी तरह समझाता है, वही सबसे अधिक संभावना से मूल पाठ है।"

पौलुस की किसी पत्री की कोई हस्तलिपि बिना किसी दिखाई देने वाले कारण के किसी बड़े पाठ-खंड को लगभग इतनी दूर नहीं खिसकाती, और आरंभिक समय के किसी पाठक ने इस पाठ के स्थान की आलोचना नहीं की।[92] परन्तु यह सामान्य बात थी कि लेखक हाशिये के पाठ को मुख्य पाठ में उतार लेते थे।

90. कोडेक्स वैटिकनस B (Codex Vaticanus B), जिसे व्यापक रूप से नए नियम की सबसे विश्वसनीय यूनानी हस्तलिपि माना जाता है।
91. W. Klein, "The Church and the Prophets", ATR 44 (1962) 8.
92. Ulrich Schmid, "Conceptualizing 'Scribal' Performances: Reader's Notes", in The Textual History of the Greek New Testament: Changing Views in Contemporary Research, ed. Klaus Wachtel and Michael Holmes (Atlanta: SBL, 2011), 49-64, at 62, 50, 58: "Readers ... react[ed] to what they read by adding comments in the margin. . . . इनमें से कुछ टिप्पणियाँ शायद उन लेखकों ने पाठ में उतार लीं, जिन्हें ऐसी 'सजाई हुई' [हस्तलिपि] की प्रतिलिपि बनानी पड़ी। . . . कम से कम प्राचीन लोगों की दृष्टि से, लेखकों की प्रवृत्ति हाशिये की टिप्पणियों को मुख्य पाठ में ले लेने की रही लगती है।"

उदाहरण के लिए, चौथी शताब्दी के कोडेक्स वैटिकनस में मत्ती के पाठ के हाशिये पर पुराने पाठ वाले 20 स्थान हैं। 3 को छोड़कर ये सब बाद की लगभग सब हस्तलिपियों के मुख्य पाठ में शामिल हैं।

यूनानी दृढ़ता से मानते थे कि स्त्रियों को सार्वजनिक सभाओं में चुप रहना चाहिए।[93] इसलिए यह शायद ही आश्चर्य की बात है कि किसी पाठक ने ईसवी 200 से पहले किसी समय हाशिये पर वह "जानी-मानी या प्रचलित बुद्धि" जोड़ दी, जिसे ये पद व्यक्त करते हैं।

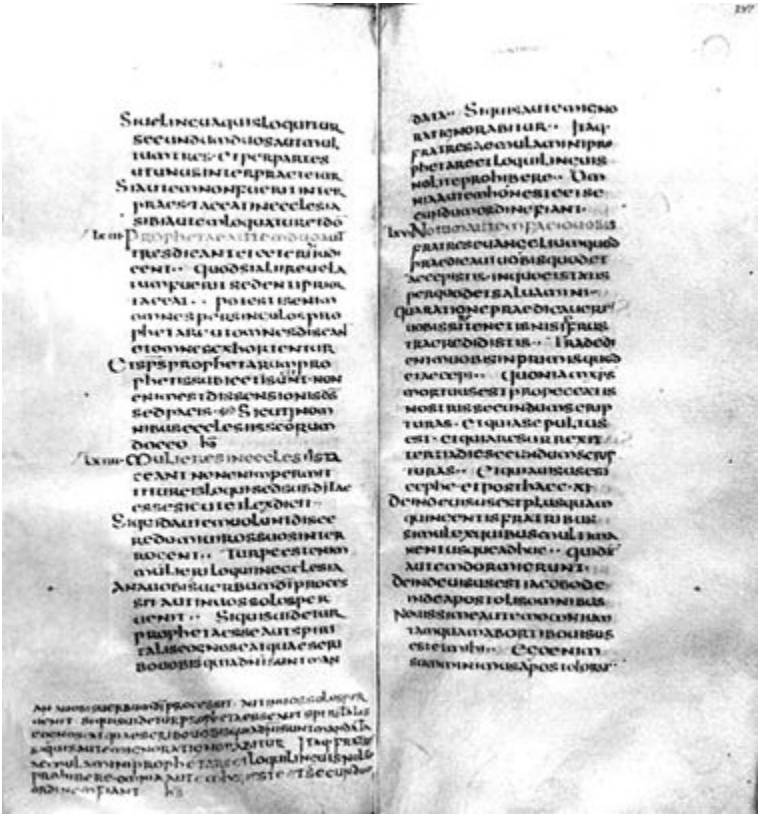
उन दो स्थानों का, जहाँ ये पद मिलते हैं, एकमात्र स्पष्टीकरण जो लेखकों की ज्ञात आदतों से मेल खाता है, यह है कि किसी ने पहले इन दोनों पदों को किसी हस्तलिपि के हाशिये पर लिखा और बाद के प्रतिलिपिकारों ने उन्हें या तो पद 33 के बाद या पद 40 के बाद डाल दिया।

सामान्य बुद्धि यह माँग करती है कि कोई सामान्य बात – हाशिये के पाठ को मुख्य पाठ में डालना – किसी ऐसी असाधारण बात से अधिक संभावित मानी जाए जिसका कोई दूसरा उदाहरण ज्ञात नहीं – इतने अधिक पाठ को बिना किसी स्पष्ट कारण के इतनी दूर खिसकाना।[94]

तीसरा, हमारी सबसे पुरानी बाइबल, कोडेक्स वैटिकनस, जिसकी अपनी सटीकता के लिए व्यापक रूप से प्रशंसा की जाती है, इन पदों को, जो कलीसिया में स्त्रियों को चुप कराते हैं, एक अप्रामाणिक, झूठे व्यवधान के रूप में चिह्नित करती है।

फिर भी यह सच है कि पद 34-35 सब उपलब्ध हस्तलिपियों में कहीं न कहीं (अर्थात् पद 33 या 40 के बाद) आते हैं, जिसके लिए एक असाधारण रूप से प्रारंभिक जोड़ आवश्यक है। परन्तु केवल वैटिकनस ही उन्हें अप्रामाणिक के रूप में चिह्नित नहीं करता। बिशप विक्टर (Victor) ने कोडेक्स फ़ुल्डेन्सिस (Codex Fuldensis) के निचले हाशिये पर एक सुधारा हुआ पाठ लिखवाया, जो इन पदों को छोड़ देता है, और अ-पश्चिमी पाठ MS 88 उन्हें पद 33 के बाद छोड़ देता है, परन्तु पद 40 के बाद ऐसे चिह्नों के साथ डालता है जो बताते हैं कि उन्हें पद 33 के बाद आना चाहिए। चूँकि ये पद 1 कुरिन्थियों के विक्टर के पाठ-साक्षियों में नहीं आते, इसलिए डैन वॉलेस (Dan Wallace) का यह दावा कि "ये पद 1 कुरिन्थियों के सब पाठ-साक्षियों में आते हैं" सच नहीं है (https://bible.org/article/textual-problem-1-corinthians-1434-35)। पाठ-विद्वान एक ही हस्तलिपि में अलग-अलग पाठों को अलग-अलग हस्तलिपि-चिह्न देते हैं। खंड 14:34-35 उन सब पाठों में नहीं आता जिन्हें इन अलग-अलग हस्तलिपि-चिह्नों द्वारा पहचाना जाता है। यह सच नहीं है कि 14:34-35 के पाठ का सब हस्तलिपियाँ "समर्थन" करती हैं।

93. उदाहरण के लिए प्लूटार्क (Plutarch), अरिस्टोफ़ेनीज़ (Aristophanes), अरस्तू (Aristoteles), सोफ़ोक्लीज़ (Sophokles), डेमोक्रिटस (Demokrit), एलियस अरिस्टाइडीज़ (Aelius Aristides) और बहुत से रब्बी।
94. इसे "प्रतिलेखन-संभाव्यता" कहा जाता है। यह एक अनोखा मामला है। जिस मुख्य कारण से हम इसे हाशिये का पाठ मानते हैं, वह किसी दूसरे पाठ की विश्वसनीयता को कमज़ोर नहीं करता।



कोडेक्स फ़ुल्डेन्सिस (Codex Fuldensis) (मूल प्रति फ़ुल्डा (Fulda) में रखी है) में नीचे यह पाठ पद 34 और 35 के बिना सुधार या फ़ुटनोट के रूप में लिखा गया है। स्पष्ट है कि छठी शताब्दी के मध्य में प्रतिलिपिकार के पास इन पदों के बिना एक पाठ था।

संक्षिप्त विषयांतर: कोडेक्स फ़ुल्डेन्सिस

कोडेक्स फ़ुल्डेन्सिस (F) वल्गेट (Vulgata) की एक हस्तलिपि है, जिसमें नए नियम की 23 धर्मशास्त्रीय (कैनोनिकल) पुस्तकों का पाठ और साथ ही डायटेस्सरॉन (Diatessaron) और लौदीकियों की पत्री का पाठ है। यह नए नियम की सबसे पुरानी दिनांकित हस्तलिपियों में से एक है और नए नियम की एकमात्र प्रारंभिक हस्तलिपि है जिसके बारे में ज्ञात है कि उसे एक महत्वपूर्ण विद्वान, कापुआ के बिशप विक्टर (Victor von Capua) ने संपादित किया। यह वल्गेट के पाठ का दूसरा महत्वपूर्ण साक्षी है, और डायटेस्सरॉन के पूर्ण पाठ का सबसे महत्वपूर्ण और सबसे पुराना साक्षी। यह कोडेक्स 1 कुरिन्थियों 14:34-35 के पाठ की प्रामाणिकता पर चर्चा में एक महत्वपूर्ण, यदि सबसे महत्वपूर्ण नहीं, साक्ष्य है।

इसे 541-546 के वर्षों में कापुआ में बिशप विक्टर के आदेश पर लिखा गया। उन्होंने स्वयं भी इसकी जाँच और सुधार किया। प्रकाशितवाक्य के अंत में 2 मई 546 की तिथि है, जो स्वयं विक्टर ने लिखी। विक्टर ने कोडेक्स के पाठ की दूसरी बार जाँच की, और इसलिए एक दूसरी तिथि भी है – 12 अप्रैल 547।

Codex Fuldensis – Wikipedia, मुक्त विश्वकोश (जर्मन में)

अपनी गलत आधार-धारणा के आधार पर वॉलेस आपत्ति करते हैं "कि वे प्रसारण के बिलकुल आरंभिक चरण में पाठ में घुस आए होंगे ... मूल दस्तावेज़ में।" ऐसा संभव है, यह इफिसियों 5:22 में "समर्पण करना" क्रिया के तेज़ी से जोड़े जाने से समझा जा सकता है[95], जिससे यह भी आसानी से समझ में आ सकता है कि पद 34-35 का यह जोड़ दूसरी शताब्दी में दूर तक पहुँचकर सब उपलब्ध हस्तलिपियों में आ गया।"

"प्रसिद्ध रोमन कैथोलिक विद्वान जोसेफ़ ए. फ़िट्ज़मायर (Joseph A. Fitzmyer)[96] कहते हैं कि 'आज के अधिकांश व्याख्याकार' इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि यह पाठ [14:34-35] बाद का जोड़ है। पाठ-विदुषी किम हेन्स-आइट्ज़ेन (Kim Haines-Eitzen) यह बात 'आज लगभग सब विद्वानों' के बारे में कहती हैं।[97] गॉर्डन फ़ी (Gordon Fee), जो संभवतः सबसे प्रतिष्ठित सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) पाठ-शोधकर्ता हैं, तर्क देते हैं कि ये पद पौलुस की पत्री में नहीं थे, बल्कि किसी हस्तलिपि के हाशिये पर जोड़े गए और बाद के प्रतिलिपिकारों द्वारा या तो पद 33 के बाद या पद 40 के बाद डाले गए।[98] मेरी पुस्तक Man and Woman, One in Christ, 226-227, पचपन अध्ययनों का उल्लेख करती है जो इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि 1 कुरिन्थियों 14:34-35 पौलुस की मूल पत्री में नहीं था। पृष्ठ 227-53 पर सात बाहरी कारण और पृष्ठ 253-65 पर नौ भीतरी कारण दिए गए हैं कि यह पाठ पौलुस का नहीं है, और पृष्ठ 265-67 पर टिप्पणी (ग्लॉस) होने के विरुद्ध आपत्तियों का उत्तर दिया गया है। कुल मिलाकर, मेरी राय में पाठ-आलोचना

95. जैसा लगभग सब यूनानी संस्करण दिखाते हैं, इफिसियों 5:22 की सबसे प्रारंभिक हस्तलिपियों में "अधीन रहना" क्रिया नहीं है। जेरोम (Hieronymus) की टीका में कहा गया है कि यूनानी हस्तलिपियों में पद 22 में पद 21 की "अधीन रहना" क्रिया कभी दोहराई नहीं जाती। UBS-पाठ में कहा गया है कि यह "लगभग निश्चित" है कि "अधीन रहना" बाद में जोड़ा गया। पहली हस्तलिपि, जिसमें पद 22 में कहीं "अधीन रहना" का कोई रूप आता है, कोडेक्स साइनाइटिकस (Codex Sinaiticus), लगभग ईसवी 360 में लिखी गई। पर उसके बाद हर बची हुई हस्तलिपि में "अधीन रहना" है। क्योंकि किसी बाद की हस्तलिपि ने "अधीन रहना" को हटाया नहीं, इसलिए यह विश्वसनीय नहीं कि "अधीन रहना" सब सबसे प्रारंभिक हस्तलिपियों से हटा दिया गया हो। क्योंकि पौलुस ने लिखा: "मसीह के भय से एक-दूसरे के अधीन रहो, हे पत्नियो, अपने-अपने पति के ..."। इसलिए पत्नी की अधीनता अपनी क्रिया के लिए "एक-दूसरे के अधीन रहो" पर निर्भर है। पारस्परिक सर्वनाम आपसी अधीनता की माँग करता है। इसलिए इसका संबंध किसी वरिष्ठ के अधीन होने से नहीं हो सकता। बल्कि यहाँ अधीन रहने का अर्थ है "प्रेम में स्वेच्छा से झुक जाने के अर्थ में समर्पण", BDAG 1042। कुलुस्सियों 3:18 में कहा गया है कि पत्नी अधीन रहे "जैसा प्रभु में उचित है"। बाइबल पत्नी की अधीनता के लिए जो कारण देती है, वह कोई ईश्वरीय रूप से स्थापित लिंग-पदानुक्रम नहीं, बल्कि यह है "कि परमेश्वर के वचन की निन्दा न हो" [तीतुस 2:5], अर्थात् ऐसा व्यवहार करना कि वह सांस्कृतिक मानदंडों के विरुद्ध न जाए। तुलना करें: "ताकि यदि उनके कुछ पति वचन को न मानते हों, तो भी वे बिना वचन के अपनी पत्नियों के चालचलन के द्वारा जीत लिए जाएँ ... पति भी उसी प्रकार [अपनी-अपनी पत्नियों के] अधीन रहें, एक-दूसरे के साथ बुद्धिमानी से जीवन बिताएँ, उन्हें एक निर्बल स्त्री-सुलभ [BDAG 208, gynaikeios, 'स्त्री-संबंधी'] बहुमूल्य पात्र जानें, और उन्हें वह आदर दें जिसकी वे जीवन के अनुग्रह-दान की संगी वारिस होने के नाते अधिकारी हैं, ताकि तुम्हारी प्रार्थनाएँ रुक न जाएँ" [1 पतरस 3:1,7]।
96. Joseph A. Fitzmyer, First Corinthians, AB (New Haven: Yale, 2008), 530
97. Kim Haines-Eitzen, The Gendered Palimpsest: Women, Writing, and Representation in Early Christianity (Oxford: Oxford University Press, 2012), 62
98. Gordon D. Fee, The First Epistle to the Corinthians, NICNT (Grand Rapids: Eerdmans, 1987), 699-708

के साक्ष्य दृढ़ता से इस पक्ष में हैं कि यह एक टिप्पणी (ग्लॉस) है, जो संभवतः ईसवी 197 से पहले किसी पाठक ने लिखी।"

6.2.8 अंतिम मूल्यांकन

मैं एक दूसरे लेखक को, जिन्होंने इस विषय पर बहुत गहन कार्य किया है, उनकी पुस्तक Men and Women in Christ से उद्धृत करता हूँ:

"कुछ पाठकों को शायद यह लगे कि पद 34-35 को हटा देना बस बहुत सुविधाजनक है। यह समझ में आता है। हमें उचित ही यह सिखाया जाता है कि बाइबल से कठिन पाठों को हटाने के सुझावों के प्रति अत्यंत संशयी रहें।

यह ज़ोर देना महत्वपूर्ण है कि यहाँ हमारा सामना अप्रामाणिकता के ऐसे तर्कों से नहीं है जो केवल भीतरी प्रमाणों पर आधारित हों। यदि इन पदों की समस्या केवल इस तथ्य तक सीमित होती कि वे अपने संदर्भ से मेल नहीं खाते, कि उनमें पुराने नियम की विषय-वस्तु के संबंध में एक स्पष्ट भूल है, और कि व्याख्या का कोई ऐसा समाधान नहीं मिला जो उन्हें संतोषजनक अर्थ दे, तो हम उन्हें पाठ में रहने देते, अपनी सीमाओं को स्वीकार करते और भविष्य में नए प्रकाश की आशा करते।

यहाँ बाहरी संकेतों को भी समझाना होगा। ऐसा कैसे है कि ये शब्द अलग-अलग हस्तलिपियों में अलग-अलग स्थानों पर मिलते हैं? कुछ न कुछ गड़बड़ हुई है, पर क्या? जैसा हमने देखा, बाहरी प्रमाण की इस विशेषता का सबसे संभावित समाधान यह है कि पद 34-35 पौलुस के नहीं हैं, बल्कि हाशिये की एक प्रारंभिक टिप्पणी से आए हैं, जिसे मुख्य पाठ में ले लिया गया।

इसकी अतिरिक्त पुष्टि कोडेक्स फ़ुल्डेन्सिस में बिशप विक्टर की टिप्पणियों से होती है, जो एक ऐसे पाठ के अस्तित्व की ओर संकेत करती हैं जिसमें ये दोनों पद पूरी तरह अनुपस्थित हैं। और यदि कोडेक्स वैटिकनस के प्रमाणों के बारे में पेन का दृष्टिकोण सही है, तो यह एक और पुष्टि है।

जब हम बाहरी और भीतरी प्रमाणों को एक साथ जोड़ते हैं, तो इन दोनों पदों को अस्वीकार करने के तर्क स्पष्ट हैं। उन्हें हटाना कोई वैचारिक चाल नहीं है; बात प्रमाणों के पीछे चलने की है। सिद्धांत रूप में यह दूसरे जोड़ों (जैसे मरकुस के अंत, यूहन्ना 5:3-4 और प्रेरितों के काम 24:6-7) को अस्वीकार करने से भिन्न नहीं है, जो पाठ में प्रकट हुए, कुछ समय तक हमारी बाइबलों में लिए गए और फिर हटा दिए गए, जब उपलब्ध प्रमाणों की जाँच इस निष्कर्ष पर पहुँची कि वे संभवतः प्रामाणिक नहीं थे।

कम से कम हमारी बाइबलों में एक फ़ुटनोट होना चाहिए, कुछ इस प्रकार: हस्तलिपियों के संकेत बताते हैं कि पद 34 और 35 बाद का एक जोड़ हो सकते हैं, जो पौलुस का नहीं है, और इसलिए उन्हें छोड़ देना चाहिए। बेहतर यह होगा कि पद 34-35 को तिरछे अक्षरों में छापा जाए या फ़ुटनोट में रखा जाए, साथ में इस स्पष्टीकरण के साथ कि हस्तलिपियों में विसंगतियों का स्वरूप यह निष्कर्ष निकालने देता है कि उनकी प्रामाणिकता संदिग्ध है। 'यहोवा की व्यवस्था खरी है, वह प्राण को बहाल कर देती है' (भजन संहिता 19:7)।

मैं इसे यहाँ प्रामाणिकता की कसौटी के रूप में प्रस्तावित नहीं कर रहा। परन्तु यदि कुछ पाठकों ने स्वयं को दोषी अनुभव किया है कि उनके प्राणों को 1 कुरिन्थियों 14:34-35 से अधिक ताज़गी नहीं मिली, तो अब वे शायद इस बात से संतोष कर सकते हैं कि ये पद शायद बाइबल में हैं ही नहीं।"

मुझे यह अध्याय इस प्रकार समाप्त करने दीजिए: जब मैंने यह पुस्तक लिखी, तब मैं इस दृष्टिकोण को जानता था, परन्तु इस पाठ पर प्रश्न उठाने का साहस नहीं किया। परन्तु अब तथ्यों की स्थिति ऐसी है कि इन दोनों पदों को परमेश्वर का प्रेरित वचन समझना लगभग संभव नहीं रहा।

इससे एक बहुत बड़ा अंतर पड़ता है। क्यों? क्योंकि सब स्पष्टीकरण-प्रयास (उद्धरण वाले मत को छोड़कर) इस बात पर विफल हो जाते हैं कि यह पूर्ण मौन की आज्ञा है। सब व्याख्याओं में स्पष्टीकरण के प्रयास इस माँग की स्पष्टता से टकराते हैं। परन्तु यह माँग पौलुस की नहीं है, बल्कि सांसारिक सोच के अनुरूप है। कितनी दुखद बात है! क्योंकि जो लोग स्त्रियों के पक्ष में खड़े होते हैं, उन्हीं पर नारीवाद और संसार के अनुरूप ढल जाने का आरोप लगाया जाता है।

क्या ऐसा हो सकता है कि शत्रु, विरोधी और गड़बड़ी फैलाने वाला, बाइबल में कुछ ऐसा चुपके से घुसा देने में सफल हो गया, जिसके सब शताब्दियों में कलीसिया की स्त्रियों और पूरी कलीसिया के लिए घातक परिणाम हुए?

हम ऐसी दुखद स्थिति से कैसे बाहर निकल सकते हैं? यह झूठी धारणा आज तक कितनी गंभीर है? यहाँ अंतिम रूप से स्पष्ट पक्ष लेना और तथ्यों का सामना करना आवश्यक है।

इस अध्याय के अंत में कुरिन्थियों का पाठ पद 34 और 35 के बिना पढ़िए और देखिए कि वह इस रूप में कितना सुसंगत और अर्थपूर्ण है:

"क्योंकि तुम सब एक-एक करके भविष्यद्वाणी कर सकते हो, ताकि सब सीखें और सब को शान्ति मिले। और भविष्यद्वक्ताओं की आत्माएँ भविष्यद्वक्ताओं के अधीन रहती हैं। क्योंकि परमेश्वर अव्यवस्था का नहीं, परन्तु शान्ति का परमेश्वर है, जैसा पवित्र लोगों की सब सभाओं में है। यदि कोई समझता है कि वह भविष्यद्वक्ता है या आत्मिक है, तो वह पहचान ले कि जो मैं तुम्हें लिखता हूँ, वह प्रभु की आज्ञा है। परन्तु यदि कोई अनजान है, तो अनजान ही रहे। इसलिए, मेरे भाइयो, भविष्यद्वाणी करने की लालसा रखो, और अन्य भाषाओं में बोलने से मना न करो। पर सब कुछ शालीनता से और क्रम से हो।" [1 कुरिन्थियों 14:31-40, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित]

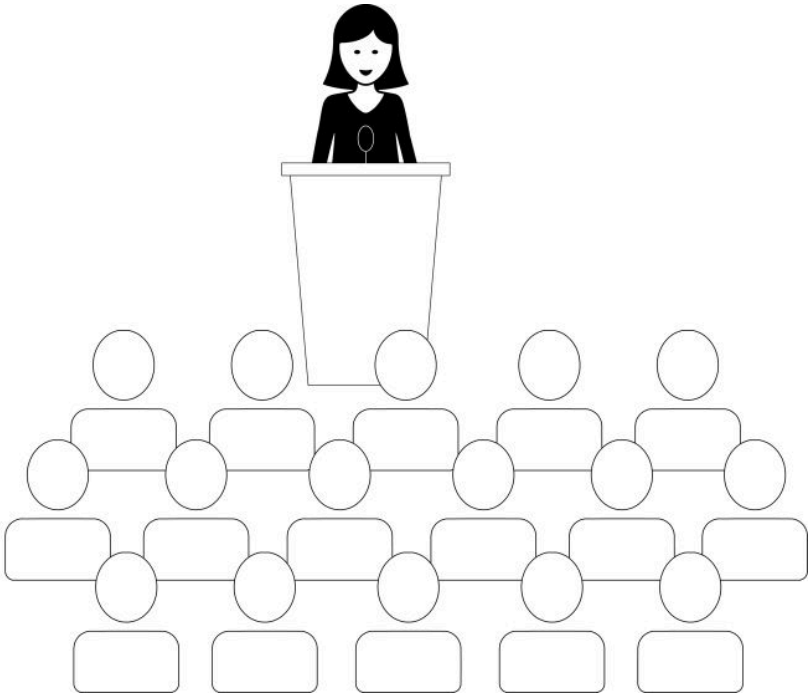
यीशु की कलीसिया की सभाओं में स्त्रियों के लिए मौन की कोई आज्ञा न थी, न है! यूनानी भाषा के ज्ञान के बिना और उद्धरण-सिद्धांत के बिना भी इस निष्कर्ष तक पहुँचा जा सकता है। क्या यह सचमुच हो सकता है कि वह प्रेरित, जिसकी बहुत सी स्त्री सहकर्मी थीं, जिनका वह नाम लेकर उल्लेख करता है, जिन पर वह भरोसा करता था, जो सुसमाचार में उसके साथ संघर्ष करती थीं, ठीक उन्हीं स्त्रियों का मुँह बंद कर दे?

अंत में मैं पूछता हूँ: बहनें चुप रहें, इसमें सबसे अधिक रुचि किसकी है? जब मसीह की देह आधी गूँगी हो जाए? जब इकट्ठा होने पर स्त्रियाँ पुरुषों को पूरा न करें? वह पुराना साँप है, विरोधी और नाश करने वाला,

झूठ का पिता और आरंभ से हत्यारा। केवल स्त्री के प्रति उसकी शत्रुता ही ऐसे अंधेपन का कारण हो सकती है, जिसकी ज़िम्मेदारी अगुवाई और शिक्षा में लगे पुरुष उठाएँगे।

जो कलीसिया स्त्रियों को चुप कराती है, वह पवित्र आत्मा को चुप करा देगी। कैथरीन सी. बुशनेल (Katharine C. Bushnell)

मैं परमेश्वर के वचन में देखता हूँ कि यीशु ने, जो किसी पुरुष के योगदान के बिना एक स्त्री के गर्भ में आया, स्त्रियों को चुप नहीं कराया, बल्कि इसके विपरीत उन्हें बोलने के लिए कहा। कि उसने इसे ठीक समझा कि एक स्त्री रब्बी के चरणों में बैठकर सीखे, जैसे पौलुस गमलीएल के चरणों में बैठा था। और कि उसने एक स्त्री को अपने लिए एक महत्वपूर्ण याजकीय सेवा करने दी और उससे अपने गाड़े जाने के लिए अपना अभिषेक ग्रहण किया। स्त्रियाँ क्रूस के पास सबसे अंत तक थीं और क़ब्र पर सबसे पहले। क्रूस पर के 7 “वचनों” में से 5 की गवाही और परंपरा केवल स्त्रियों से मिलती है (रोमी सैनिकों को छोड़कर), और उद्धार के इतिहास की सबसे महत्वपूर्ण घटनाओं की गवाही केवल स्त्रियों ने दी। अपने पुनरुत्थान के बाद यीशु जान-बूझकर स्त्रियों से मिला और उन्हें यह काम सौंपा कि वे उसके भाइयों को बताएँ कि वह जी उठा है। एक बार और सदा के लिए यह स्पष्ट करने के लिए कि परमेश्वर की छुड़ाई हुई कलीसिया में स्त्री की पूर्ण समानता मूल और अपरिवर्तनीय उद्देश्य है, वह इससे अधिक क्या कर सकता था?	
क्रिस्टियान बेसे (Christian Beese)	



6.3 क्या स्त्रियाँ शिक्षा दे सकती हैं?

जब कोई प्रेरितों के काम पढ़ता है, तो 18 अध्यायों के बाद वह इस स्थान पर पहुँचता है: "और वह (अपुल्लोस, Apollos) आराधनालय में निडर होकर बोलने लगा। परन्तु जब (दम्पति) प्रिस्किल्ला (Priszilla) और अक्विला (Aquila) ने उसकी सुनी, तो वे उसे अपने साथ ले गए और परमेश्वर का मार्ग उसे और भी ठीक-ठीक समझाया" (18:26)। परमेश्वर का मार्ग – वह उद्धार का इतिहास है और उसका केंद्र, मसीहा। "समझाने" को "शिक्षा देने" या "सिखाने" के रूप में भी समझा जा सकता है।

पौलुस किसी मसीही सभा में उपस्थित सब लोगों से आग्रह करता है: "तो भाइयो, क्या करना चाहिए? जब तुम इकट्ठे होते हो, तो तुम में से हर एक के पास कोई भजन होता है, कोई शिक्षा होती है, कोई प्रकाशन होता है, कोई अन्य भाषा होती है, कोई अर्थ बताना होता है; सब कुछ उन्नति के लिए हो।" (1 कुरिन्थियों 14:26)। यह भाइयों और बहनों दोनों पर लागू होता है (यूनानी में इस अर्थ में "बहनों" के लिए कोई शब्द नहीं था)।

लोग (भाई और बहनें) दूसरों को सिखाएँ, ताकि वे भी फिर दूसरों को सिखा सकें (2 तीमुथियुस 2:2)। इसी अर्थ में बूढ़ी स्त्रियाँ "अच्छी बातें सिखानेवाली" हों (तीतुस 2:3)। इस शिक्षा का स्थान और ढाँचा न तो पहले से तय है, न सीमित।

यीशु चाहता है कि शिष्य और शिष्याएँ शिक्षा दें: "इसलिए तुम जाओ, सब जातियों के लोगों को चेला बनाओ, और उन्हें पिता और पुत्र और पवित्र आत्मा के नाम से बपतिस्मा दो, और उन्हें सब बातें जो मैं ने तुम्हें आज्ञा दी है, मानना सिखाओ!" (मत्ती 28:19-20)

आज हर स्कूल में, मसीही स्कूलों में भी, शिक्षिकाएँ हैं। हर विश्वविद्यालय में, हर विषय में, धर्मविज्ञान में भी, स्त्री प्रोफ़ेसर हैं। स्त्रियों की लिखी अनगिनत पुस्तकें, जिनमें धर्मनिरपेक्ष प्रकार की शिक्षा भी है और मसीही विषय-वस्तु भी, पुरुषों द्वारा पढ़ी जाती हैं। और अंत में, पर कम महत्वपूर्ण नहीं: एक स्त्री 16 वर्ष तक जर्मनी की संघीय चांसलर रही। आज बहुत-सी स्त्रियाँ हर प्रकार के अगुवाई के पदों पर हैं। बहुतों की दृष्टि में अब भी बहुत कम, पर वह एक अलग विषय है।

आज की दृष्टि से इसका कारण साधारण है: स्त्रियाँ बौद्धिक रूप से पुरुषों जितनी ही सक्षम हैं। या उनसे बढ़कर। इसमें कोई आश्चर्य नहीं। वे उतनी ही अच्छी तरह शिक्षा दे सकती हैं और सिखा सकती हैं, अक्सर पुरुषों से बेहतर।

सौ वर्ष पहले ऐसा नहीं था। स्त्रियाँ तब भी उतनी ही प्रतिभाशाली और बुद्धिमान थीं, पर पुरुष-प्रधान संसार में उन्हें विश्वविद्यालय की पढ़ाई से, और पढ़ाने से तो और भी, वंचित रखा जाता था। इस ऐतिहासिक विषय पर ध्यान दिया जा सकता है; मैं कलीसिया की ओर देखता हूँ, सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) और रूढ़िवादी कलीसियाई संसार की ओर।

इस अध्याय के आरंभ में भी मैं एक प्रश्न से शुरू करता हूँ: क्या आप बाइबल, विशेषकर नया नियम, पढ़ने के बाद इस निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि स्त्रियों को शिक्षा देने की अनुमति नहीं है?

शायद नहीं। हाँ, तब एक छोटे खंड को, अर्थात् 1 तीमुथियुस 2:11-15 को, छोड़ना पड़ेगा। ठीक यही एक पाठ, और कोई भी नहीं, ऐसा निर्देश रखता है जिसे अनदेखा नहीं किया जा सकता, यदि पवित्रशास्त्र हमारे विश्वास और जीवन का मानदंड है। यही प्रश्न मैंने तब पूछा था जब आराधना सभा में स्त्रियों के चुप रहने की बात थी। 1 कुरिन्थियों 14 में मैंने पाया कि यह छोटा-सा अनुच्छेद, एकमात्र संकेत होते हुए, सभा में मसीह की आधी देह को मौन नहीं कर सकता।

इसलिए यह भी विचित्र है कि बहुत-से पुरुष, कलीसिया के अगुवे और प्राचीन स्त्रियों को शिक्षा देने से मना करते हैं। यह आराधना सभा पर लागू होता है, पर सभाओं के बाहर भी। और यदि अनुमति है, तो केवल स्त्रियों या बच्चों को सिखाने की। इसके प्रयोगों का दायरा बहुत चौड़ा है; यहाँ मैंने उस एक रूप का उल्लेख किया है जिसमें मैं बड़ा हुआ।

शिक्षा देने पर प्रतिबंध के इस एकमात्र बाइबल-पाठ पर मैं प्रकाश डालूँगा। पहले यह संकेत कि यह पाठ अपनी मूल भाषा में जटिल है और बिल्कुल भी स्पष्ट नहीं है – यह बहुत-से व्याख्या-विशेषज्ञों और मूल भाषाओं के जानकारों का निष्कर्ष है। क्या इसके मसीही स्त्रियों के लिए, और इसलिए मसीह की देह के लिए, इतने दूरगामी परिणाम और प्रतिबंध हो सकते हैं?

6.3.1 पाठ 1 तीमुथियुस 2:8-15

> इसलिए मैं चाहता हूँ कि पुरुष हर जगह पवित्र हाथ उठाकर, बिना क्रोध और संदेह-भरे विचार के, प्रार्थना करें।
>
> उसी प्रकार स्त्रियाँ भी शालीन वेश में, लज्जा और संयम के साथ अपने आप को सँवारें, न बाल गूँथने से, न सोने या मोतियों या बहुमूल्य वस्त्रों से, परन्तु – जैसा उन स्त्रियों को शोभा देता है जो परमेश्वर की भक्ति को मानती हैं – भले कामों से। स्त्री शांति में पूरी अधीनता के साथ सीखे। परन्तु मैं स्त्री को अनुमति नहीं देता कि वह शिक्षा दे, न यह कि वह पुरुष पर प्रभुता करे, बल्कि यह कि वह शांत रहे, क्योंकि आदम पहले बनाया गया, उसके बाद हव्वा; और आदम बहकाया नहीं गया, परन्तु स्त्री बहकाई गई और अपराध में पड़ गई। परन्तु वह बच्चे जनने में उद्धार पाएगी, यदि वे विश्वास और प्रेम और पवित्रता में संयम के साथ बने रहें। [1 तीमुथियुस 2:8-15, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित]

पाठ को क्रम से देखने से पहले कुछ सामान्य और ऐतिहासिक संकेत सहायक हैं।

6.3.2 इफिसुस की ऐतिहासिक परिस्थिति

तीमुथियुस को लिखी पहली पत्री व्यक्तिगत रूप से पौलुस के सबसे निकट सहकर्मी को संबोधित है, जो उस समय इफिसुस में है और वहाँ की घरेलू कलीसियाओं की सेवा करता है। पौलुस ने सीधे कलीसिया को क्यों नहीं लिखा, जैसे हमें ज्ञात इफिसियों की पत्री, यह हम नहीं जानते। वह पत्री न केवल पहले लिखी गई, बल्कि बिल्कुल अलग भी है। तीमुथियुस को पौलुस बहुत-से संकेत और चेतावनियाँ देता है। वह कल्पित कथाओं, अंतहीन वंशावलियों, व्यवस्था के शिक्षकों, विवेकहीन लोगों, भरमानेवाली आत्माओं, दुष्टात्माओं की शिक्षाओं, तपस्वियों, विधवा स्त्रियों, प्रभु यीशु मसीह की खरी बातों के विरोधियों और बहुत कुछ के बारे में लिखता है। इस पत्री में ठोस समस्याओं की बात है, जो इफिसुस में कलीसिया के लिए गंभीर खतरा थीं। इसके साथ ऊपर के पाठ वाली बात भी थी: पुरुषों को झगड़ने से रोकना और प्रार्थना के लिए प्रेरित करना था, और स्त्रियों से मर्यादा में रहने को कहना था।

इफिसुस विभिन्न धर्मों, पंथों, टोने-टोटके और जादू का संगम-स्थल था। लूका प्रेरितों के काम 19 में इसका वर्णन करता है। केंद्र में, और सीमाओं के बहुत दूर तक प्रसिद्ध और पूजित, इफिसुस की अरतिमिस (Artemis) थी, (यूनानी) देवी, ज़्यूस (Zeus) की पुत्री और अपोलो (Apollo) की पहले जन्मी जुड़वाँ बहन। इस देवी की सेवा बड़े उत्साह और भारी खर्च के साथ की जाती थी। उसके लिए एक मंदिर बनाया गया, जो अपने समय की सबसे बड़ी इमारत के रूप में प्राचीन संसार के सात आश्चर्यों में से एक था। उसे बलि चढ़ाई जाती थी। उसके सम्मान में पर्व और जुलूस मनाए जाते थे। लोग मानते थे कि इफिसुस की अरतिमिस के पास नया जीवन रचने की शक्ति थी। और उसे छीन लेने की भी। वह प्रसव में सहायता कर सकती थी और पीड़ा को कम कर सकती थी। वह कुँवारों की रक्षक थी, पुरुषों और स्त्रियों दोनों की।[99] रोमी उसे डायना (Diana) भी कहते थे।

प्राचीन संसार के इस महानगर में अरतिमिस का पंथ निजी और सार्वजनिक जीवन के लगभग हर क्षेत्र में उपस्थित था और उसका प्रभाव ऐसा था जिसकी आज हम कल्पना भी नहीं कर सकते।

फिर भी पौलुस वहाँ तीन वर्ष तक काम कर सका और पूरे रोमी प्रांत आसिया में सुसमाचार पहुँचा सका। बड़ी संख्या में घरेलू कलीसियाएँ बन गई थीं। पर इस वातावरण में उनका सामना इस और दूसरे पंथों से भी होता था। विश्वास में आए लोग बटन दबाते ही अपने अतीत को झटक नहीं सकते थे। संभव है कि पौलुस जिन कल्पित कथाओं और मिथकों का उल्लेख करता है, उनका संबंध अरतिमिस के पंथ और उससे जुड़े विचार-संसार और शिक्षाओं से भी था, भले ही वह उनका नाम इस तरह नहीं लेता। समन्वयवाद (सिंक्रेटिज़्म) – मसीही विश्वास का मूर्तिपूजक पंथों और उनकी प्रथाओं और शिक्षाओं के साथ मेल और मिश्रण – असामान्य नहीं था, और उसके रूप कभी अधिक और कभी कम दिखाई देते थे। इस तरह देवी अरतिमिस को हव्वा से भी जोड़ा गया। इरेनियस (Irenäus) ने इफिसुस की झूठी शिक्षाओं को ज्ञानवाद (ग्नोसिस) से जोड़ा, कम से कम उसके अग्रदूतों से। तर्तुल्लियन (Tertullian) ने मिथकों और अंतहीन वंशावलियों को इसी दिशा में

99. इस विषय में देखें: Paulus an die Epheser, Nacherzählt, Erklärt, für heute (पौलुस की इफिसियों को पत्री – पुनर्कथित, व्याख्यायित, आज के लिए), Hans-Jörg Ronsdorf

समझा। यहूदी संदर्भों के अलावा इनका संबंध ज्ञानवाद और उसके अनगिनत युगों (आयोन) और उनके क्रमों या उत्पत्तियों से भी हो सकता है। आरंभिक "मसीही" ज्ञानवाद ने तोरा और यहूदी धर्म के पहलुओं को विभिन्न यूनानी और रोमी पंथों के साथ घोल-मेल कर दिया, जो स्वयं भी निकट-पूर्व के धर्मों से पोषित थे। इरेनियस लिखता है कि ज्ञानवादी सृष्टि की कथा की और पतन की भी अपने ढंग से व्याख्या करते और उसे दोबारा सुनाते थे। हव्वा वह स्त्री-रूपी, आत्मिक शक्ति थी जिसने आदम की आत्मा में जीवन फूँका। सृष्टि के दूसरे रूपांतरों में हव्वा को आदम पर वरीयता और प्राथमिकता प्राप्त थी। इफिसुस में अरतिमिस के पंथ पर स्त्रियों का प्रभुत्व था। हव्वा का विशेष स्थान था, क्योंकि उसने वह ज्ञान खोजा जिसके द्वारा मनुष्य उद्धार पाता है (ग्नोसिस)। पौलुस अपनी पत्री को "झूठे नामवाले ज्ञान" (ग्नोसिस) से चेतावनी के साथ समाप्त करता है, जिसे कुछ लोगों ने अपनाया और जो विश्वास से भटक गए थे (6:20-21)।

इफिसुस पर ऐतिहासिक शोध आगे बढ़ रहा है। जैसा मैंने स्वयं पाया है, यह एक जटिल विषय है। पर चाहे कोई इस पुनर्रचना को स्वीकार करे या नहीं, यह तर्क देना कठिन है कि अरतिमिस की पृष्ठभूमि से 1 तीमुथियुस 2:8-15 की व्याख्या में कोई अंतर नहीं पड़ता, जैसा पदानुक्रम के बहुत-से समर्थक विश्वास दिलाना चाहते हैं, जो स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर सामान्य प्रतिबंध का पक्ष लेते हैं। किसी न किसी रूप में इस खंड को समझने के लिए इस पृष्ठभूमि पर ध्यान देना ही होगा।

6.3.3 पृष्ठभूमि

बाइबल अनुवादों में "आराधना में उचित आचरण" जैसे शीर्षक होते हैं। क्या ऐसी स्थिति में शिक्षा देने पर प्रतिबंध केवल आराधना सभा में लागू होगा, दूसरे अवसरों पर नहीं? पर पौलुस आराधना सभा की बात करता हुआ नहीं लगता, बल्कि सामान्य रूप से पुरुषों और स्त्रियों से बात करता है, वे जहाँ कहीं भी हों और एक-दूसरे से मिलें। घर में पति-पत्नी की स्थिति की बात भी लगती है। "1 तीमुथियुस 2:1-8 में ऐसा कुछ नहीं है जो संदर्भ को 'सार्वजनिक आराधना सभा' तक सीमित करे, बिना इस बात पर विचार किए कि आराधनाएँ घरेलू वातावरण में होती थीं, किसी सार्वजनिक स्थान पर नहीं। इसलिए यह स्पष्ट नहीं है कि अध्याय का शेष भाग आराधना की सभाओं में या किसी सार्वजनिक ढाँचे में आचरण के निर्देश देता है, और शेष खंड की विषय-वस्तु भी 'सार्वजनिक आराधना सभा' के संदर्भ में मुश्किल से बैठती है, विशेषकर बच्चे के जन्म का उल्लेख।"[100]

"पौलुस किसी ऐसी स्त्री की बात कर सकता था जो पुरुषों के एक समूह को सिखाती है, या ऐसी स्त्रियों की जो पुरुषों के समूहों को सिखाती हैं, पर किसी सभा में 'एक पुरुष' को सिखाने वाली एक स्त्री की बात करना सामान्य नहीं है। बल्कि एकवचन का प्रयोग एक स्त्री और एक पुरुष के बीच निजी व्यवहार का संकेत देता है। यूनानी-रोमी संस्कृति में एक स्त्री और एक पुरुष के बीच निजी व्यवहार सबसे अधिक परिवार के सदस्यों के बीच होता, और इस खंड में बहुत कुछ है जो घरेलू संदर्भ की ओर संकेत करता है।"

100. Cynthia Westfall, Paul and Gender: Reclaiming the Apostle's Vision for Men and Women in Christ, 2015, 291

इसके अतिरिक्त: यह किसी कलीसिया को लिखी पत्री नहीं, बल्कि एक व्यक्तिगत पत्र है, जिसके पीछे ऐसा ज्ञान है जिसे हम 100% पुनर्निर्मित नहीं कर सकते। इस तथ्य पर कम से कम विचार अवश्य किया जाना चाहिए।

मूल रूप से इससे यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि ये कलीसिया के एकत्र होने के लिए निर्देश नहीं हैं, भले ही इसकी नैतिक शिक्षाएँ निश्चय ही हर अवसर पर लागू होती हैं।

6.3.4 हर जगह प्रार्थना, क्रोध और आभूषण

> इसलिए मैं चाहता हूँ कि पुरुष हर जगह पवित्र हाथ उठाकर, बिना क्रोध और संदेह-भरे विचार के, प्रार्थना करें।
>
> उसी प्रकार स्त्रियाँ भी शालीन वेश में, लज्जा और संयम के साथ अपने आप को सँवारें, न बाल गूँथने से, न सोने या मोतियों या बहुमूल्य वस्त्रों से, परन्तु – जैसा उन स्त्रियों को शोभा देता है जो परमेश्वर की भक्ति को मानती हैं – भले कामों से।

इससे पहले का पाठ, पद 1-7, वह पृष्ठभूमि है जिसके सामने ये शब्द सही प्रकाश में आते हैं: पौलुस सब मनुष्यों के लिए प्रार्थना को मसीही जीवन की सबसे महत्वपूर्ण बातों में से एक बताता है। मसीहियों के लिए यह संसार पर पड़ने वाला महत्वपूर्ण, अप्रत्यक्ष और आशीष-भरा प्रभाव है। यह परमेश्वर के सबसे बड़े सपने को सहारा देता और आगे बढ़ाता है: सब मनुष्यों का उद्धार हो।

इस प्रकार यह पाठ प्रार्थना को केंद्र में रखता है, जो संसार का उद्धार करने के परमेश्वर के मिशन का भाग है। इसी के लिए पौलुस के भीतर आग जलती है, और वह इफिसियों में यह आग (फिर से) जलाना चाहता है – इस प्रकार कि वे प्रार्थना करें! पुरुष क्रोध और शंकाओं को पीछे छोड़ दें। प्रार्थना से न हटें। पौलुस यहाँ पुरुषों (और स्त्रियों) से बात करता है और दोनों के लिए ऐसे आचरण पर ज़ोर देता है जो सुसमाचार को आगे बढ़ाए, रोके नहीं। पुरुष और स्त्रियाँ अपने पुराने, घिसे-पिटे जीवन-ढंग को छोड़ दें। टेस्टोस्टेरोन से भरे पुरुष एक-दूसरे से होड़ करना, बहस करना और सही ठहरना चाहते हैं। स्त्रियाँ अपने को सँवारना और बाहरी बातों को बहुत महत्व देना चाहती हैं। पर अब यह उनके जीवन को निर्धारित न करे।

जब यहाँ सार्वजनिक रूप से प्रार्थना करने की बात हो रही है, तो प्रश्न यह है कि क्या पौलुस चाहता है कि

1. पुरुष एक विशेष ढंग से प्रार्थना करें (पद 8) और 2. स्त्रियाँ “उसी प्रकार” (पद 9) एक विशेष ढंग से वस्त्र पहनें,

या यह कि

1. पुरुष एक विशेष ढंग से प्रार्थना करें और 2. “उसी प्रकार” स्त्रियाँ भी प्रार्थना करें, और वह भी एक विशेष ढंग से, जिसका संबंध वस्त्रों से है।

विशेषज्ञों के अनुसार दोनों व्याख्याएँ और अनुवाद व्याकरण की दृष्टि से संभव हैं। तो क्या प्रार्थना के लिए पौलुस का प्रोत्साहन (2:1) केवल पुरुषों के लिए है? नहीं। न उनकी प्रार्थना अधिक सुनी जाती है, न उनमें स्त्रियों से अधिक विश्वास है। पौलुस बस चाहता है कि पूरी कलीसिया प्रार्थना करे। पुरुष और स्त्रियाँ प्रार्थना करें, जहाँ कहीं अवसर मिले, हर जगह, ताकि परमेश्वर का अनंत सपना सच हो। पुरुष बिना क्रोध के और स्त्रियाँ शालीनता और मर्यादा के साथ।

“उसी प्रकार स्त्रियाँ भी” एक बराबर के चिह्न जैसा है और प्रार्थना से संबंधित है। इससे पुरुषों के सामने या उनकी उपस्थिति में सार्वजनिक प्रार्थना की अनुमति है – और भी ठीक कहें तो: आज्ञा है।

स्त्रियों के बाहरी रूप का संबंध इफिसुस की विशेष परिस्थिति से है। अरतिमिस-पंथ के वातावरण में स्त्रियाँ, विशेषकर धनी स्त्रियाँ जो ऐसा कर सकती थीं, बड़े ठाठ से और ध्यान खींचने वाले ढंग से अपने को सँवारती थीं। परमेश्वर के घर में अब ऐसा नहीं होना था। यहाँ मनुष्य भले कामों से ध्यान खींचता है। इस मूर्तिपूजक पंथ से दृढ़ता से दूरी बनाना महत्वपूर्ण था, और वह भी हर दृष्टि से। स्वाभाविक है कि एक स्त्री अपने को सँवार सकती है, पर कुछ भी इस मूर्तिपूजक पंथ की झलक न दे।

आभूषण और केश-सज्जा पर प्रतिबंध को कठोरता से और शब्दशः हमारे समय में लागू करना शायद वे लोग भी नहीं करते, जो स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर प्रतिबंध मानते हैं। जो पुरुष ऊँचे स्वर में प्रार्थना करते हैं, वे भी सब अपने हाथ नहीं उठाते। आशा और ग्रहणशीलता के साथ खुले हाथ उठाना परमेश्वर से आशा रखते हुए मध्यस्थता की प्रार्थना की एक पहचानने योग्य मुद्रा है। पर इससे भी कोई नियम नहीं बनाया जा सकता। हाथ जोड़ना, जो हमारे यहाँ प्रार्थना की एक प्रचलित मुद्रा है, गलत नहीं है और हमारे यहाँ भी प्रार्थना के रूप में ही समझा जाता है।

6.3.5 शांति और अधीनता में सीखना

स्त्री शांति में पूरी अधीनता के साथ सीखे।

पूरे खंड में यही एकमात्र वाक्य आज्ञार्थक रूप में है। बहुत कम स्त्रियाँ पढ़ी-लिखी थीं। पौलुस यहाँ लगभग सब स्त्रियों को सीखने वालों के रूप में सम्मान देता है – यह सचमुच क्रांतिकारी है। अधिकांश स्त्रियों के लिए पढ़ाई-लिखाई सुलभ नहीं थी, न वह चाही जाती थी, न उसे बढ़ावा दिया जाता था। वह पुरुषों का काम था। इस पृष्ठभूमि में पौलुस के शब्द का स्वर बदल जाता है। इससे भी अधिक: यह शिक्षा देने पर प्रतिबंध को सही समझने की कुंजी हो सकता है।

यह संभावना नकारी नहीं जा सकती कि पौलुस यहाँ केवल एक विशेष स्त्री की बात कर रहा है, जो इफिसुस की कलीसिया में समस्याएँ खड़ी कर रही थी, क्योंकि “स्त्री” एकवचन में है। कभी-कभी पौलुस समस्याएँ खड़ी करने वाले लोगों के नाम लेता है। कभी-कभी वह उनका नाम नहीं लेता। यदि बात एक विशेष स्त्री की है, तो ऐसा निर्देश आज भी केवल उन्हीं स्त्रियों पर लागू किया जा सकता है जो उस स्त्री जैसा आचरण करती हैं।

अधीनता का कारण प्रायः सृष्टि की व्यवस्था बताया जाता है। जैसा मैं नीचे दिखाऊँगा, बात यह नहीं है। यहाँ बात विद्रोह के विपरीत अधीनता की एक मनोवृत्ति की है। मनुष्य तभी सीख सकता है जब वह ग्रहण करने को तैयार हो, सीखने की इच्छा के साथ सुसमाचार की सच्चाई को ग्रहण करे और पुरानी सोच और कल्पित कथाओं की शिक्षाओं को छोड़ दे। यह केवल शांति में होता है। बात चुप रहने की नहीं, बल्कि सीखने की उस मनोवृत्ति की है जिसमें प्रश्न पूछने की अनुमति है और प्रश्न आगे बढ़ने में सहायता करते हैं। पर विरोध, खंडन या प्रतिपक्ष के प्रयास के रूप में नहीं। यह इफिसुस की एक ठोस समस्या थी – स्त्रियों की कोई सामान्य समस्या नहीं, मानो सब स्त्रियाँ स्वभाव से ऐसी हों और उन्हें पौलुस के इस निर्देश को मानने की आवश्यकता हो। साफ़ कहूँ तो: इस संदर्भ में बात प्रेरितों की शिक्षा और सुसमाचार के अधीन रहने की है, किसी पुरुष के अधीन रहने की नहीं।

6.3.6 न शिक्षा देना और न पुरुष पर प्रभुता करना

> परन्तु मैं स्त्री को अनुमति नहीं देता कि वह शिक्षा दे, न यह कि वह पुरुष पर प्रभुता करे, बल्कि यह कि वह शांत रहे।

यह पद एक ऐसा केंद्र-बिंदु है जिस पर मसीही दो खेमों में बँट जाते हैं। एक खेमा यहाँ स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर सामान्य प्रतिबंध देखता है, दूसरा इफिसुस की एक विशेष, समस्या-भरी परिस्थिति मानता है। क्या हम इस वचन को सीधे वैसे ही लें, जैसा वह जर्मन में या किसी आधुनिक भाषा में लिखा है, और उसका पालन करें?

पौलुस के सबसे निकट सहकर्मी के रूप में तीमुथियुस स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर किसी सामान्य प्रतिबंध को जानता होता। यह विचित्र होता कि बहुत वर्षों तक साथ काम करने के बाद यहाँ उसे इसकी याद दिलाई जाए। यह इफिसुस की किसी विशेष परिस्थिति के पक्ष में अधिक बोलता है।

हव्वा और आदम के विषय में आगे के शब्दों को शिक्षा देने पर प्रतिबंध का कारण माना जाता है। तब कारण सृष्टि का एक पदानुक्रम होता है। यदि कोई स्त्री किसी पुरुष को सिखाए, तो इसका अर्थ उस पर प्रभुता करना होगा। कोई स्त्री चाहे कितनी भी नम्रता से सिखाए, शायद सिर ढककर भी, यह वर्जित होगा, क्योंकि यह प्रभुता करना होगा। क्या सचमुच यही अभिप्राय है?

6.3.7 क्या शिक्षा देना प्रभुता करना है?

मेरा मूल प्रश्न हमेशा यह रहा है: शिक्षा देने को प्रभुता या अधिकार से क्यों जोड़ा जाता है? क्या आप नए नियम में किसी भी स्थान पर यह संबंध जानते हैं? क्या आप कोई ऐसी घटना जानते हैं जहाँ शिक्षा देने को साथ ही प्रभुता करना कहा गया हो? एक हानिकारक काम के रूप में? या एक अच्छे मेल के रूप में? क्या शिक्षा देना दूसरों की सेवा नहीं है, जिसमें मनुष्य अपने को सीखने और सुनने वालों के नीचे रखता है?

शिक्षा और शिक्षा देना इस पत्री का एक विषय है: शिक्षा और शिक्षा देना 15 बार आते हैं, किसी भी दूसरी पत्री से दुगुने। शिक्षा देना केवल प्रचार करना नहीं लगता, बल्कि उसका स्वभाव कहीं अधिक दृढ़ और बाध्यकारी है। खरी शिक्षा सिखाना बचाव और रक्षा है, कलीसिया की चंगाई और उन्नति है। पर क्या यह प्रभुता करना है? या अधिकार चलाना?

"पौलुस 1 तीमुथियुस 4:11 में – अर्थात् उसी पत्री में – यह वाक्यांश प्रयोग करता है: 'इन बातों की आज्ञा दे और सिखा।' 'आज्ञा देना' के लिए यूनानी में parangello शब्द है, जो 1 तीमुथियुस 5:7 और 6:17 में भी आता है। इसका अर्थ है 'आदेश देना, कहना, आज्ञा देना'। 1 तीमुथियुस 4:11 में यह 'सिखाना' के साथ प्रयोग हुआ है। यह संबंध 1 तीमुथियुस 2:12 में भी है, पर 'प्रभुता करना' के लिए एक दूसरे शब्द के साथ। इसलिए इसका अर्थ 1 तीमुथियुस 4:11 से अनिवार्य रूप से मेल नहीं खाता।"[101]

"शिक्षण-अधिकार"[102] की धारणा कलीसियाई क्षेत्र में पाई जाती है। प्रश्न यह है कि किसके पास ऐसा शिक्षा-संबंधी कथन करने का अधिकार है जो दूसरों के लिए बाध्यकारी हो और जिसका विरोध न किया जा सके। विश्वास के प्रश्नों में मनमानी नहीं है। पर क्या पौलुस का यहाँ यही अभिप्राय हो सकता है? किसी शिक्षा का सही होना कभी भी सिखाने वाले के लिंग पर निर्भर नहीं करता। क्या किसी पुरुष के पास, केवल इसलिए कि वह पुरुष है, शिक्षण-अधिकार है? शिक्षा में तो बात विषय-वस्तु की, सच्चाई की है, लिंग के प्रश्न की नहीं।

अपुल्लोस पवित्रशास्त्र में सामर्थी था (प्रेरितों के काम 18:24), क्योंकि स्पष्ट है कि उसमें शिक्षा देने का गहरा वरदान था।

बाध्यकारी ढंग से शिक्षा देने का अर्थ प्रभुता करना नहीं है। उसके लिए कोई दूसरा शब्द मिलता।

6.3.8 "प्रभुता करने" का क्या अर्थ है?

"प्रभुता करना" के लिए प्रयुक्त शब्द "अधिकार चलाना" का सामान्य शब्द नहीं है: यह केवल एक ही बार, इसी स्थान पर आता है। इसलिए मैं इस पद को स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर प्रतिबंध का एकमात्र आधार मानने में और भी अधिक सावधान हूँ।

101. Wunderli, 37

102. कलीसियाई शिक्षण-पद (magisterium ecclesiae) कलीसियाओं में उस शिक्षण-अधिकार को कहते हैं जिसका प्रयोग कुछ पदाधिकारी और कलीसियाई संस्थाएँ करती हैं। कलीसियाई शिक्षण-पद कलीसिया के इतिहास में बिशप-पद के साथ, विशेषकर एकतंत्रीय बिशप-व्यवस्था (मोनार्किक एपिस्कोपेट) के उदय के साथ विकसित हुआ। इस विकास का परिणाम पश्चिमी मसीहियत में पोप की प्रधानता थी, जो पहले ius appellationis के अर्थ में और बाद में प्रथम वैटिकन परिषद के अचूकता-सिद्धांत के द्वारा और तीव्र हुई। कलीसियाई शिक्षा का आधार पवित्रशास्त्र और परंपरा माने जाते हैं। इसके विपरीत मार्टिन लूथर (Martin Luther) ने 1523 में कहा, "कि एक मसीही सभा या कलीसिया को सब शिक्षा को परखने और शिक्षकों को बुलाने, नियुक्त करने और हटाने का अधिकार और सामर्थ्य है"। इसमें मापदंड केवल बाइबल हो। धर्मसुधार के सुदृढ़ होने के साथ शिक्षा को परखने का काम प्रादेशिक कलीसियाओं के स्तर पर उठा दिया गया, और बाइबल के साथ विश्वास-अंगीकार के लेख गौण मानदंडों के रूप में आ गए। (Wikipedia)

"'प्रभुता करना' ('authentein') शब्द नए नियम में केवल इसी स्थान पर प्रयुक्त हुआ है।[103] इससे जुड़े संज्ञा-शब्द 'प्रभुता करने वाला' का मूल अर्थ 'हत्यारा' है[104], और ठीक कहें तो 'आत्महत्या करने वाला' या 'परिवार का हत्यारा'[105]। बाद में बोलचाल की भाषा में इसे 'स्वामी', 'शासक', 'स्वेच्छाचारी शासक' का अर्थ मिला[106]।"[107]

यहाँ बताए गए ढंग की प्रभुता कोई अच्छी और वांछनीय बात नहीं है। पर यदि इसे सकारात्मक रूप में देखा जाए, तो पुरुष शिक्षा देकर प्रभुता करें, पर स्त्रियाँ नहीं। यही उस धर्म-सिद्धांत का निष्कर्ष होता, जिसमें पुरुष स्त्री के ऊपर अधिकार में है। जब पुरुष शिक्षा देता है, तो वह स्त्री पर और सब सुनने और सीखने वालों पर प्रभुता करता है।

कलीसिया में अगुवों, संचालकों या प्राचीनों की सेवा को, जिसमें शिक्षा देना भी आता है, कभी भी "प्रभुता करना" नहीं कहा गया है।

मैरिलिन स्मिथ (Marilyn Smith) और इंग्रिड केर्न (Ingrid Kern) भी ऐसा ही आकलन करती हैं: "तीमुथियुस की पत्री के इस खंड में एक और बात authentein शब्द का प्रयोग है, जिसका अनुवाद 'अधिकार चलाना' किया गया है। authentein के अर्थ के विषय में सहमति नहीं है, पर एक बात निश्चित है: यदि पौलुस का इरादा स्त्रियों को इस शब्द के सामान्य अर्थ में किसी भी प्रकार का अधिकार चलाने से मना करना होता, तो बहुत संभव है कि वह इसके लिए प्रचलित शब्द exousia का प्रयोग करता। इसके बजाय पौलुस एक बिल्कुल अलग शब्द का प्रयोग करता है, जो नए नियम में और कहीं नहीं आता, यह संकेत देने के लिए कि उसका अभिप्राय यहाँ एक बिल्कुल अलग प्रकार के अधिकार से है। इतिहासकार योसेफ़स (Josephus) authentein का प्रयोग हेरोदेस के पुत्र अन्तिपातर (Antipater) का वर्णन करने के लिए करता है, जिस पर अपने दो भाइयों की हत्या और अपने पिता की हत्या के प्रयास का आरोप था (...)

103. हापाक्स लेगोमेनॉन (hapax legomenon) होने के कारण इस शब्द पर Kittels Theologisches Wörterbuch में भी चर्चा नहीं की गई है। पर यह यूनानी भाषा के बहुत-से महान शास्त्रीय लेखकों के यहाँ मिलता है, तुलना करें N. J. Hommes. "Let Women be Silent in Church". Calvin Theological Journal 4 (1969) 5-22, यहाँ पृ. 18 और वहाँ दिया गया साहित्य; Hommes के लेख का एक अच्छा सारांश New Testament Abstracts 13 (1969) 365 में।
104. C. D. Osburn. "Authenteo (1Timothy 2: 12)". Restoration Quarterly 25 (1982) 1-12.
105. N. J. Hommes. "Let Women be Silent in Church". पूर्वोक्त, पृ. 18.
106. वही। Walter Lock. A Critical and Exegetical Commentary on The Pastoral Epistles (I & II Timothy and Titus). International Critical Commentary. T. & T. Clark: Edinburgh, 1936. पृ. 32 पर बोलचाल की यूनानी में 'authentein' का अर्थ 'despotes' (= 'निरंकुश शासक') बताया गया है, और अंग्रेज़ी अनुवाद के रूप में: "a self-actor", "to lord it over" आदि। Sir Robert Falconer. "1 Timothy 2 14,15: Interpretative Notes". Journal of Biblical Literature 60 (1941) 375-379, यहाँ पृ. 375 मिलता-जुलता अनुवाद करते हैं: "a master, an autocrat". Joseph H. Thayer. Greek-English Lexicon of the New Testament. Baker Book House: Grand Rapids (MI), 1977. पृ. 84 (क्र. 830) पर 'authenteo' का अर्थ दिया गया है: "one who with his own hand kills either others or himself", "one who does a thing himself, the author", "one who acts on his own authority, autocratic", 'autokrator' का समानार्थी, "an absolute master".
107. Schirrmacher, 122

इसलिए authentein का अर्थ लगभग 'प्रभुता करना' या लोगों पर 'पूर्ण सत्ता चलाना' है, उन्हें नष्ट करने के इरादे से।"[108]

इस संदर्भ में बात दो अलग-अलग बातों की नहीं है – वे यहाँ एक साथ हैं, एक-दूसरे पर निर्भर हैं और नकारात्मक ढंग से जुड़ जाती हैं: शिक्षा देना और प्रभुता करना। इफिसुस की ऐतिहासिक और धार्मिक परिस्थिति को देखते हुए बात प्रभुता करने वाले ढंग से शिक्षा देने की है। नकारात्मक, हावी होने वाले, यहाँ तक कि सीमा लाँघने वाले ढंग से, जैसा अरतिमिस के वातावरण की स्त्रियों में होता था। ठीक-ठीक कहें तो यह ऐसी परिस्थिति की बात भी हो सकती है, जैसी अरतिमिस के पंथ में थी, जिसमें प्रजनन और जीवन-दान की बात होती थी। यौन क्षेत्र में पुरुषों पर प्रभुता। यह कितना भी अजीब लगे, यही वह वातावरण था जिसमें पौलुस तीमुथियुस को पहली पत्री लिखता है। तब यह वाक्य इस प्रकार होता: मैं स्त्री को अनुमति नहीं देता कि वह (गलत) शिक्षा दे और पुरुष पर यौन रूप से प्रभुता करे।

इसलिए बात पुरुषों के सामने सार्वजनिक रूप से शिक्षा देने पर प्रतिबंध की नहीं है। न ही इस बात पर प्रतिबंध की कि पत्नी कभी अपने पति को कुछ सिखाए। उस समय स्त्रियाँ पढ़ाई-लिखाई में पीछे थीं, क्योंकि उन्हें अध्ययन और सीखने से लगभग पूरी तरह वंचित रखा जाता था। पर यदि कोई स्त्री बहुत समय से यीशु की शिष्या थी, तो वह अपने पति को, जो उसके बाद विश्वास में आया, अवश्य सिखाती।

इफिसुस में शायद बात उन स्त्रियों की है जो ज्ञानवादी आदर्श के अनुसार आत्म-प्रशंसा के साथ और प्रभुता करते हुए सिखाती थीं। उन्होंने शिक्षा देने के लिए अपने लिए अधिकार का दावा किया, मानो उसे छीन लिया। इससे भी बुरा, वे झूठी शिक्षाएँ सिखाती थीं। न इन स्त्रियों को सहा जा सकता था, न उनकी शिक्षाओं को। परमेश्वर के घर में ऐसे आचरण और झूठी शिक्षाओं के लिए कोई स्थान नहीं है। और यदि पुरुष ऐसा करते, तो उनके लिए भी नहीं। पर इफिसुस में एक विशेष स्त्री या स्त्रियों का एक समूह समस्या था। सब मसीही स्त्रियों को इस स्तर पर रखने का कोई कारण नहीं है! थुआतीरा में सिखाने वाली स्त्री ईज़ेबेल (प्रकाशितवाक्य 2:20) का उदाहरण इसी ढाँचे में बैठता है: वहाँ समस्या यह नहीं थी कि वह स्त्री होकर सिखाती थी, बल्कि यह कि वह गलत बातें सिखाती थी।

इस संदर्भ में प्रभुता करने को आत्मिक "अगुवाई" या "अधिकार" के रूप में नहीं समझाया जा सकता। अर्थात् कलीसिया में अगुवाई या चरवाहे की भूमिका के रूप में। यीशु और पौलुस इसे प्रभुता करना नहीं समझते। प्रभुता करने का मसीही ढंग सेवा करना है। और पहला नहीं, बल्कि अंतिम होना (मरकुस 10:42-45)। यह मनोवृत्ति तब संभव है जब मनुष्य अगुवे के रूप में दूसरों के आगे चलता है। पतरस चरवाहों को ध्यान दिलाता है कि प्रभुता करने का चरवाही सेवा से कोई लेना-देना नहीं है:

"परमेश्वर के उस झुंड की रखवाली करो जो तुम्हारे बीच में है, और यह देखरेख दबाव से नहीं, परन्तु स्वेच्छा से करो, न नीच कमाई के लिए, परन्तु मन लगाकर, और न उनके समान जो अपनी संपत्ति पर प्रभुता करते हैं, बल्कि झुंड के लिए आदर्श बनकर।" 1 पतरस 5:2-3

108. Wunderli में: Smith/Kern 2005, 98; Bauer 1988, 1240

शांत रहने का अर्थ मुँह बंद रखना नहीं है, क्योंकि चुप रहना ही पड़े, बल्कि एक विशेष आचरण, अर्थात्: "शांति में बने रहना", "चैन में बने रहना" या "सुव्यवस्था बनाए रखना"।[109] सीखने और एक-दूसरे को सुनने की प्रक्रिया में यह आचरण संबंधित स्त्रियों के लिए निर्देश है, पर ठीक यही पुरुषों के लिए भी होता, यदि वे वही समस्याएँ खड़ी करते।

शांत और ध्यान से मरियम की तरह यीशु के चरणों में बैठना, सब शिक्षकों के शिक्षक को सुनने के लिए सीखने की आदर्श मनोवृत्ति है।

6.3.9 इफिसुस में आदम और हव्वा

> ... क्योंकि आदम पहले बनाया गया, उसके बाद हव्वा; और आदम बहकाया नहीं गया, परन्तु स्त्री बहकाई गई और अपराध में पड़ गई।

इन शब्दों से पौलुस यह कारण देता हुआ लगता है कि स्त्री सार्वजनिक रूप से शिक्षा क्यों नहीं दे सकती। क्योंकि "शिक्षा देना" अधीन रहना नहीं, बल्कि प्रभुता करना है। यह मैंने अक्सर सुना है। और स्वयं भी हमेशा ऐसा ही समझा। फिर भी, सच कहूँ तो, मन के किसी कोने में कुछ संदेहों के साथ। क्या ऐसा हो सकता है कि कुछ घंटों के अंतर वाला एक समय-क्रम (यदि कोई 24 घंटे के सृष्टि-दिनों पर विश्वास करता है) इतना दूरगामी महत्व रखे? आदम और हव्वा जुड़वाँ जैसे हैं, जो थोड़े-थोड़े अंतर पर रचे गए। क्या यह थोड़ा-सा समय सब स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर ऐसा प्रतिबंध तय कर दे? और क्या यह परमेश्वर का दंड है कि स्त्रियाँ शिक्षा नहीं दे सकतीं, क्योंकि हव्वा बहकाई गई? अदन के बाद से कोई भी स्त्री इसी कारण शिक्षा नहीं दे सकती? चाहे उसमें इसका वरदान हो?

कम से कम यहूदी मसीहियों के पास सेप्टुआजिंट और/या तोरा थी। नए नियम के कैनन से पहले यही मसीहियों की बाइबल थी। पौलुस अब कुछ ऐसा दोहराता है जिसे हर कोई पढ़ सकता था। पौलुस ऐसी बात का उल्लेख क्यों करता है जो इतनी प्रसिद्ध और स्पष्ट थी? कि आदम पहले सृजा गया और हव्वा की परीक्षा हुई।

इसके अतिरिक्त, यदि इस पाठ को अभी बताए गए ढंग से समझा जाए, तो पौलुस किसी तरह अपनी ही बात का खंडन करता। रोमियों 5 में पद 12 से वह आदम का वर्णन करता है, जो पाप को संसार में लाया और इस प्रकार पहले व्यक्ति के रूप में अपने परिवार का, अर्थात् पाप में जन्म लेने वाले सब मनुष्यों के विश्व-समुदाय का, सिर बनता है। आदम उत्तरदायी है। परमेश्वर का उत्तर और उद्धार एक नया सिर है, जो हमें अपनी संगति में "गोद लेता" है: यीशु मसीह।

यहाँ 1 तीमुथियुस में कोई सोच सकता है कि पौलुस हव्वा को उत्तरदायी सिर बनाता है। उसके यहाँ इसे इस प्रकार प्रस्तुत करने का कोई विशेष कारण होना चाहिए। और जैसा ऊपर कहा जा चुका है, आद्य-ज्ञानवादी (प्रोटो-ग्नॉस्टिक) सृष्टि-कथाएँ प्रचलित थीं, जो इसका उल्टा दावा करती थीं। कि हव्वा पहले सृजी गई और आदम की पहले परीक्षा हुई। अरतिमिस के वातावरण में इस प्रभावशाली पंथ में स्त्रियाँ पुरुषों से अधिक

109. तुलना करें ExWNT, खंड II, पृ. 311

महत्वपूर्ण थीं। यही एक स्त्री या कुछ स्त्रियों के लिए यह आधार हो सकता था कि वे हावी होकर सिखाएँ और मसीह की शिक्षा के विरुद्ध खड़ी हों और उसका विरोध करें।

आदम और हव्वा का उल्लेख शायद एक सकारात्मक संकेत भी है। हव्वा की कमज़ोरी या आदम की श्रेष्ठता की ओर नहीं, बल्कि पढ़ाई-लिखाई, अध्ययन और परमेश्वर के प्रति समर्पण की आवश्यकता की ओर। हव्वा धोखे में आई, क्योंकि शायद उसे पर्याप्त शिक्षा नहीं दी गई थी। इसके विपरीत आदम ने परमेश्वर की सीधी आज्ञा न मानकर जान-बूझकर पाप किया। "आइए, हम और बिना फटे गोले और बारूदी सुरंगें इधर-उधर पड़ी न छोड़ें, जिनसे लोग उलझन में पड़ जाएँ। आइए, इस पाठ को वैसे पढ़ें जैसा मेरी समझ में उसका अभिप्राय था – परमेश्वर की कलीसिया की, पुरुषों और स्त्रियों की समान रूप से, उन्नति के एक साधन के रूप में। जैसे पौलुस को इसे एक विशेष परिस्थिति में लागू करने की चिंता थी, वैसे ही हमें ध्यान से सोचना और प्रार्थना करनी चाहिए कि हमारी अपनी संस्कृति, अपने पूर्वाग्रह और आक्रोश हमें कहाँ ले जाते हैं। हमें पूरा प्रयास करना चाहिए कि हम संसार द्वारा प्रस्तुत अनेक रूढ़ छवियों में से किसी के अनुरूप न ढलें, बल्कि यीशु के सुसमाचार के चंगा करने वाले, स्वतंत्र करने वाले, मनुष्य-प्रेमी संदेश के अनुरूप।"[110]

6.3.10 मैं अभी अनुमति नहीं देता

"मैं अभी अनुमति नहीं देता" उन स्त्रियों के लिए कोई स्थायी या सार्वभौमिक प्रतिबंध नहीं है जो अगुवाई करती हैं और शिक्षा देती हैं (पद 12)। फ़िलिप पेन (Philip Payne) और दूसरों ने तर्क दिया है कि "मैं स्त्री को शिक्षा देने की अनुमति नहीं देता" यूनानी पाठ का सबसे अच्छा अनुवाद नहीं है। "मैं अभी इसकी अनुमति नहीं देता" एक बेहतर अनुवाद है। "मैं अभी इसकी अनुमति नहीं देता" इफिसुस की एक विशेष और समय-सीमित समस्या के लिए एक वर्तमान और विशिष्ट निर्देश की ओर संकेत करता है (स्त्रियों के शिक्षा देने पर किसी स्थायी या सार्वभौमिक प्रतिबंध की ओर नहीं)। विभिन्न विद्वानों ने दिखाया है कि पौलुस द्वारा निषेध ouk ("मैं अनुमति नहीं देता ...") के साथ सक्रिय निश्चयार्थ epitrepō का प्रयोग प्रबल रूप से एक विशेष परिस्थिति के लिए विशिष्ट निर्देश की ओर संकेत करता है। अधिकांश मामलों में, जहाँ epitrepō नए नियम में प्रयुक्त हुआ है, और यूनानी पुराने नियम में हर बार, संकेत "एक निश्चित समय की ओर या केवल थोड़े या सीमित समय के लिए" होता है।[111] इसलिए जब वह विशेष स्त्री या स्त्रियों का समूह शिक्षा को समझ, ग्रहण कर और सीख लेता, तो शिक्षा देने पर यह प्रतिबंध तर्कसंगत रूप से हट जाता।

इसे जितनी बार दोहराया जाए, कम है: यह पहले दो मनुष्यों की सृष्टि की व्यवस्था के आधार पर स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर कोई सार्वभौमिक प्रतिबंध नहीं है। यह पौलुस की शिक्षा का कथन नहीं है। यह संसार की सब कलीसियाओं के लिए सब समयों का निर्देश नहीं है, बल्कि इफिसुस की एक विशेष परिस्थिति को संबोधित है। यह स्त्रियों के लिए शिक्षा देने पर प्रतिबंध नहीं, बल्कि मनोवृत्ति की आज्ञा है। ये स्त्रियाँ हावी होकर न सिखाएँ, बल्कि नम्रता से सीखें।

110. Wright, N. T., पृ. 27, Paul for Everyone: The Pastoral Letters, London, 2003
111. Hill, Graham Joseph, पृ. 63-64, Holding Up Half the Sky: A Biblical Case for Women Leading and Teaching in the Church

6.3.11 बच्चे जनने के द्वारा उद्धार?

परन्तु वह बच्चे जनने में उद्धार पाएगी, यदि वे विश्वास और प्रेम और पवित्रता में संयम के साथ बने रहें।

यदि ऐतिहासिक पृष्ठभूमि ज्ञात न हो, तो ये विचित्र संबंध हैं। शिक्षा देने और सीखने का जन्म से क्या संबंध है? मुझसे एक से अधिक बार कहा गया कि बहुत-से मसीही बाइबल पढ़ते हैं, पर इन प्राचीन पृष्ठभूमियों को जान ही नहीं सकते। क्या परमेश्वर ने यह प्रबंध नहीं किया कि यह पाठ इन सब पृष्ठभूमि-जानकारियों के बिना भी समझा जा सके?

हमें प्रकाशित बुद्धि मिली है। पवित्र आत्मा हमारा शिक्षक है। आज हमारे पास यह संभावना है कि बहुत-से शोध-परिणाम पलक झपकते स्क्रीन पर आ जाएँ। इन पाठों पर हमारे पास अनगिनत अध्ययन हैं। हर संभव संभावना पर मूल भाषा के अनुसंधान। कुल मिलाकर फिर से लगभग इतने अधिक कि सब पर दृष्टि बनाए रखना कठिन है। हर शिक्षा देने वाले को ऐसे प्रश्नों की खोज करनी चाहिए।

जो भी हो, हर बाइबल पढ़ने वाले को पाठ की पृष्ठभूमि से जूझना चाहिए। उन साधनों और संभावनाओं के साथ जो उसे मिलें। स्कूल में पाठों के साथ काम करना और उनसे पूछे जाने वाले प्रश्न सीखे और अभ्यास किए जाते हैं। इसलिए मैं केवल हमारे समय के लिए बोल सकता हूँ, जब हम बाइबल पढ़ते हैं और किसी को इस कर्तव्य से मुक्त नहीं करते कि वह शब्दशः समझ से आगे बढ़कर पाठ पर कुछ अधिक विचार करे। और परमेश्वर से विनती करे कि वह स्पष्टता दे और आज्ञा मानने की सामर्थ्य दे। बात हम पर अटकनी नहीं चाहिए – मेरे सतहीपन पर, नई खोजों के डर पर, सुविधा-प्रियता पर या पाठ पर बहुत कम विचार करने पर।

इफिसुस में गर्भवती स्त्रियाँ प्रसव के समय अपने को देवी अरतिमिस को सौंपती थीं। वह प्रसव को सफल करने में सामर्थी थी। पर यह उतना ही गलत था, जितनी यह कथा कि हव्वा पहले सृजी गई और आदम पहले बहकाया गया। प्रसव में, जो अक्सर जानलेवा और पीड़ादायक होता है, एकमात्र बचाव परमेश्वर ही दे सकता है। वही अकेला हमारा उद्धारकर्ता और सहायक है। इसलिए पौलुस यह कहना चाहता है कि लोग इन सब कल्पित कथाओं, मिथकों और डराने वाली अपेक्षाओं को आख़िरकार झटक दें, उन्हें पूरी तरह फेंक दें और हर बात में अपने को एकमात्र उद्धारकर्ता परमेश्वर को सौंप दें।

इस कठिन पद के लिए मैं एक और संभव व्याख्या उद्धृत करता हूँ: “एक और प्रतीत होने वाली समस्या ‘बच्चे जनने के द्वारा उद्धार’ से उत्पन्न होती है। क्या पौलुस ने यह सिखाया होगा कि स्त्रियाँ बच्चे जनने पर उद्धार पाती हैं?! इस शिक्षा की कल्पना भी असंभव है! यह उसकी पूरी शिक्षा के विरुद्ध होती, और इसलिए यहाँ इसका अभिप्राय हो ही नहीं सकता। बल्कि ऐसा प्रतीत होता है कि पौलुस यहाँ उत्पत्ति 3:15 की ओर संकेत करता है, अर्थात् यह कि स्त्री का वंश उद्धार लाता है। क्योंकि जिन झूठी शिक्षिकाओं को पौलुस यहाँ चेतावनी देता है, वे मानती थीं कि उद्धार सीधे स्त्रियों के द्वारा आता है, इसलिए पौलुस स्पष्ट करता है कि उद्धार सचमुच स्त्रियों के द्वारा आता तो है, पर वास्तव में एक स्त्री से जन्मे वंशज, मसीह, के द्वारा (जबकि ज्ञानवादी

देह को – और इसलिए बच्चे जनने को भी – आदिम और पुराना मानते थे)।"[112]

6.3.12 1 तीमुथियुस आज

"हम आज के विश्वासियों के लिए प्रश्न यह नहीं है कि हम 21वीं शताब्दी के पुरुषों और स्त्रियों को पुरुषत्व और स्त्रीत्व के यूनानी-रोमी आदर्शों में कैसे ठूँस सकते हैं। हमारे लिए प्रश्न यह है कि हम पवित्रता की मनोवृत्ति में प्रार्थना करने वाले लोग कैसे बन सकते हैं। आज के लोगों के रूप में हम इसे कैसे प्रमाणित करें? मेरा सुझाव है कि क्रोध और फूट से बचना सार्वभौमिक है, इसलिए शायद हमें यहीं से आरंभ करना चाहिए। दूसरा प्रश्न यह है कि 'परमेश्वर की भक्ति को मानने वाले' लोगों के रूप में हम इसे भले कामों में कैसे दिखाएँ। हमारे आज के संदर्भ में किस प्रकार के भले काम ऐसे होंगे?

और ध्यान दीजिए अध्याय 2 के अंत में पद 15 के 'वे' पर। 'वे' उन पुरुषों और स्त्रियों से संबंधित है जिन्हें यह खंड संबोधित करता है। पूरा अध्याय 2 हुमिनयुस और सिकन्दर के निंदापूर्ण आचरण के विपरीत है (1 तीमुथियुस 1:20)। तो हम यीशु मसीह की महान दया और अनुग्रह से मिले अपने उद्धार में विश्वास, प्रेम और पवित्रता में आत्म-संयम के साथ कैसे आगे बढ़ सकते हैं? यह कैसा दिखता है?

फिर से दोहराऊँ तो, मैं कहना चाहूँगी कि मेरी समझ में पौलुस यह निष्कर्ष नहीं निकालता कि स्त्रियाँ पुरुषों से इतनी भिन्न हैं कि वे सामान्य रूप से कलीसिया या घर-परिवार में कुछ भूमिकाओं से बाहर हैं। वास्तव में बात इसके उलट है। पुरुष और स्त्रियाँ प्रभु के सामने बराबर हैं। वह यह नहीं कहना चाहता कि स्त्रियों को उनके लिंग के कारण कुछ भूमिकाओं में नियुक्त नहीं किया जा सकता। प्राचीन काल में स्त्रियाँ नियमित रूप से घर या घराने की प्रधान होती थीं। आदम और हव्वा पद 12 की आज्ञा का आधार नहीं हैं, बल्कि वे इस बात के उदाहरण हैं कि क्या नहीं करना चाहिए। 2 कुरिन्थियों 11:3 में पौलुस साँप द्वारा हव्वा के धोखा खाने को पूरी कलीसिया के लिए एक दृष्टांत के रूप में प्रयोग करता है। यहाँ 1 तीमुथियुस में इसे केवल स्त्रियों पर लागू किया गया है।

व्यक्तिगत रूप से मैं अपने पति से यह अपेक्षा नहीं रखती कि वह ऐसा व्यवहार करे मानो वह किसी यूनानी-रोमी घराने का मुखिया हो। यदि वह इस प्रकार व्यवहार करता, तो यह विचित्र होता। हम 21वीं शताब्दी के लोग हैं, जो 21वीं शताब्दी का जीवन जीते हैं। यदि मैं उससे अपेक्षा रखूँ कि वह ऐसे अधिकार चलाए मानो वह पहली शताब्दी का पति हो, तो मैं अविश्वासियों को मसीही विश्वास के प्रति आलोचनात्मक बना दूँगी। जैसा 1 तीमुथियुस 5:14 चेतावनी देता है, हमें विरोधी को निंदा का कोई अवसर नहीं देना चाहिए।"[113]

112. Michael Trenkel, 2017 (देखें साहित्य-सूची)
113. Kidson, Persuading Shipwrecked Men: The Rhetorical Strategies of 1 Timothy 1, 2020, Mohr Siebeck Tübingen

6.3.13 निष्कर्ष

इफिसुस की ऐतिहासिक परिस्थिति पर एक दृष्टि डालने से कई बातें स्पष्ट हो जाती हैं। फिर भी कुछ प्रश्न खुले रहते हैं। पर पाठ का अभिप्राय पहचाना जा सकता है। परिणाम यह निकला है: यह शिक्षा देने या प्रचार करने पर कोई सामान्य प्रतिबंध नहीं है, न अगुवाई पर प्रतिबंध, बल्कि एक बिल्कुल विशेष धर्मविज्ञान, अर्थात् एक झूठे धर्मविज्ञान, को सिखाने पर प्रतिबंध है। और हावी होकर, आज्ञापालन की माँग करते हुए या सीमा लाँघते हुए शिक्षा देने पर प्रतिबंध। या शिक्षण-अधिकार का अनुचित दावा करने पर। यह मसीही जीवन में और परमेश्वर की सभा में नहीं होना चाहिए। यह इफिसुस की एक विशिष्ट समस्या थी। सामान्य रूप से कहें तो यह निश्चय ही पुरुषों पर भी लागू होता है। इस विषय में इस बार वे फटकार का कारण नहीं थे। इसलिए पौलुस सार्वभौमिक कलीसिया में स्त्रियों की भूमिका को परिभाषित नहीं करता, बल्कि इफिसुस में होने वाले दुरुपयोगों को सुधारता है।

हमारे बीच कितनी स्त्रियाँ हैं जिन्हें शिक्षा देने का वरदान मिला है, पर वे उसका प्रयोग नहीं कर पातीं, क्योंकि पुरुष उनका मार्ग रोकते हैं?

इस एक पद के द्वारा मसीह में अनगिनत वरदान-प्राप्त स्त्रियों के लिए पुरुषों की तरह शिक्षा देना असंभव बना दिया गया है। इसके लिए पुरुष उत्तरदायी हैं! उन्हें यह अन्याय समाप्त करना होगा।

6.3.14 तीमुथियुस के पाठ का व्याख्यात्मक भावानुवाद

आगे इस खंड का एक व्याख्यात्मक, भावानुवाद-रूपी रूपांतर है। यदि मुझे इस पाठ की संक्षेप में व्याख्या करनी हो, तो मैं इसे इसी प्रकार प्रस्तुत करूँगा। यह मेरा पाठ है, मेरे शब्द हैं, बाइबल का पाठ नहीं।

प्रिय तीमुथियुस, इफिसुस में कुछ पुरुषों और कुछ स्त्रियों से जुड़ी समस्याओं को सँभालने के लिए यह होना चाहिए: पुरुष प्रार्थना करना आरंभ करें। हर जगह, जहाँ वे मिलते हैं। सार्वजनिक रूप से भी। मिथकों और झूठी शिक्षाओं पर झगड़ने के बजाय। क्रोध और झगड़ा प्रार्थना को रोकते हैं। मिलकर प्रार्थना करना शांत और चैन-भरे जीवन की ओर ले जाता है। उठे हुए, खुले और ग्रहणशील हाथों से, जो झगड़े और हिंसा से शुद्ध हैं, वे मिलकर हमारे उद्धारकर्ता परमेश्वर की आराधना करें और परमेश्वर के सिंहासन के सामने सब मनुष्यों के लिए विनती करें।

स्वाभाविक है कि स्त्रियाँ भी प्रार्थना करें, ठीक पुरुषों की तरह। इसमें यह महत्वपूर्ण है कि स्त्रियाँ – मेरा अभिप्राय विशेषकर धनी स्त्रियों से है – जहाँ भी वे जाएँ और देखी जाएँ, सादगी दिखाएँ। उनके आभूषण, जो ध्यान उनकी ओर खींचते हैं, और वह भी दूसरी स्त्रियों से आगे निकलने के लिए, ठाठदार और ध्यान खींचने वाली केश-सज्जा में न हों, न सोने और मोतियों के गहनों में, न महँगे और अनोखे वस्त्रों में। मसीहा के पीछे चलने वाली स्त्रियों को इस प्रकार अपना प्रदर्शन करने या इस ढंग से प्रभाव और प्रभुत्व जमाने की

आवश्यकता नहीं है। एक ऐसा आभूषण और प्रभाव है जो अधिक मूल्यवान है, जिसका सब लोग आदर भी करते हैं: भले काम।

स्त्री सीखे कि सुसमाचार की सच्चाई क्या है। सीखने की इच्छा के साथ, ध्यान से और जिज्ञासा के साथ। अपने ही घर में। विशेषकर इन स्त्रियों में से एक को मैं अनुमति नहीं देता कि वह ये सब झूठे मिथक और शिक्षाएँ आगे फैलाए। वह अपने पति के या सामान्य रूप से पुरुषों के ऊपर अपने को न उठाए और ऐसे शिक्षण-अधिकार का दावा न करे जो उसका नहीं है, क्योंकि वह खरी शिक्षा को न जानती है, न समझती है। जब उसे खरी शिक्षा समझाई जाए, तो वह सुने। क्योंकि उसे इसकी आवश्यकता है, क्योंकि उसमें ज्ञान की कमी है, और जब वह घरों में मिथक फैलाती है, तो यह अज्ञान बड़ी हानि करता है। आदम और हव्वा की सृष्टि इस परिस्थिति के लिए उचित उदाहरण है। आदम पहले रचा गया, और उसी को हव्वा को सिखाना था। वह बहकाया नहीं गया। पर हव्वा बहकाई गई और धोखे में आई। यदि स्त्रियाँ तत्परता से नहीं सीखेंगी, तो वे हव्वा की तरह धोखा खाएँगी और दूसरों के लिए फंदा बन जाएँगी। यदि इफिसुस की कुछ स्त्रियाँ अपने पतियों से नहीं सीखेंगी, तो ठीक यही होगा।

और इन स्त्रियों को जानना चाहिए कि बच्चे जनने में वे सुरक्षित रखी जाएँगी। हव्वा के बहकाए जाने और प्रसव की बड़ी पीड़ा के बावजूद। परमेश्वर, हमारा उद्धारकर्ता, बचाता है, न कि इफिसुस की मनुष्यों द्वारा गढ़ी रक्षक-देवी अरतिमिस। इसलिए वे विश्वास, प्रेम और पवित्रता पर ध्यान लगाएँ। पति-पत्नी के रूप में मिलकर, जो आदम और हव्वा की तरह एक तन हैं। स्त्रियाँ बच्चे पैदा करने से न डरें, और पुरुष यौन संयम रखें और ध्यान रखें कि बहुत अधिक गर्भधारण उनकी पत्नियों के लिए खतरा हैं।

6.4 सार्वभौमिक और समय से बँधी आज्ञाएँ

इस छोटे पाठ पर विचार करने के बाद, जिसमें यहाँ भी कुछ प्रश्न खुले रह जाते हैं, मैं वैधता के सिद्धांत की ओर ध्यान दिलाना चाहता हूँ:

हम कैसे जानें कि पवित्रशास्त्र में कौन-सी आज्ञाएँ सार्वभौमिक हैं और कौन-सी संदर्भ से सीमित या सांस्कृतिक?

अक्सर हम उन्हें संदर्भ के आधार पर पहचान सकते हैं। उदाहरण के लिए व्यभिचार हमेशा पाप है। यह निश्चय ही सार्वभौमिक है! पर कभी-कभी यह बहुत कठिन होता है, क्योंकि बाइबल में विभिन्न विधाएँ हैं – अर्थात् साहित्यिक विधाएँ या पाठ के प्रकार या रूप, जैसे इतिहास, कथा, निर्देश, उपदेश आदि –, और इन्हीं के आधार पर व्यवहार और नैतिकता अलग-अलग ढंग से निकाली जाती है। इसके साथ यह प्रश्न भी जुड़ता है कि ठोस रूप से किसे संबोधित किया गया है। एक सरल उदाहरण: पुराने नियम में इस्राएल को ऐसे निर्देश मिले जो आज नई वाचा की कलीसिया पर लागू नहीं होते।

पौलुस की पत्रियों में इसे पहचानने के लिए संकेत हैं:

क्या निर्देश दोहराए जाते हैं? क्या हम उन्हें अलग-अलग संदर्भों में देखते हैं? क्या कोई स्पष्ट और साझा भाषा है; या दूसरे शब्दों में, जब पौलुस दुर्लभ और असामान्य धारणाओं या शब्दों का प्रयोग करता है, तो इससे यह मानना पड़ता है कि परिस्थिति विशेष और अधिक सीमित है। इस पुस्तक के विशेष विषय के लिए यह दिखाई देता है कि केंद्रीय पाठों (1 कुरिन्थियों 11; 14; 1 तीमुथियुस 2) में इतने विशेष तर्क और इतनी अनोखी शब्दावली है कि वे शिक्षा और अगुवाई में स्त्रियों पर किसी सार्वभौमिक प्रतिबंध को मुश्किल से ही प्रमाणित कर सकते हैं।

सार्वभौमिक आदेश बाइबल के समग्र संदर्भ में ठीक बैठते हैं और कोई विरोधाभास उत्पन्न नहीं करते।

बाइबल की व्याख्या कभी भी किसी तटस्थ शून्य में नहीं होती। जब हम बाइबल के पास आते हैं, तो अपनी पूर्वधारणाएँ, अनुभव, संस्कार और मूल्य अलग नहीं रख देते। पाठ को समझने और उसकी व्याख्या करने में हम स्वयं को भी ले आते हैं। यदि इस पर विचार न किया जाए, तो एक अस्वस्थ बाइबलवाद का खतरा रहता है।

6.4.1 बाइबलवाद और Sola Scriptura

आरंभ में मैंने "बाइबलवाद" शब्द का उल्लेख किया था। बाइबल और मसीही जीवन के प्रति एक नकारात्मक और अस्वस्थ दृष्टिकोण के रूप में। बाइबलवाद वह मनोवृत्ति है जो सार्वभौमिक और समय से बँधी आज्ञाओं के अंतर की उपेक्षा करती है। यह ऐसी मनोवृत्ति है जो उन दूसरों से अलग दिखते हुए अपने लिए बाइबल-निष्ठा का दावा करती है, जो कुछ स्थानों पर बाइबल को शब्दशः नहीं लेते, बल्कि उसे संदर्भ में रखते हैं। ऐसे बाइबल-निष्ठ लोगों के लिए इससे कोई अंतर नहीं पड़ता कि वे दूसरे अपनी स्थिति का कितना अच्छा आधार देते हैं। अक्सर उन पर यह आरोप लगाया जाता है कि वे बाइबल को अपनी इच्छाओं या संसार की युग-धारा के अनुसार ढालना चाहते हैं।

बाइबलवाद कलीसिया में स्त्री की भूमिका को कुछ ही बाइबल-पाठों से समझाता और सीमित करता है, और उस बड़े चित्र को अनदेखा करता है जिसे बाइबल स्पष्ट रूप से दिखाती है – पुराने नियम में भी। आराधना के ढाँचे और मसीही जीवन के ढाँचे की हर परंपरा और हर रीति के लिए आधार के रूप में एक बाइबल-पद माँगा जाता है। निश्चय ही बाइबल मापदंड और मानदंड है, पर जहाँ निर्देश बिल्कुल स्पष्ट नहीं हैं, वहाँ बाइबल के समग्र चित्र का पालन करना चाहिए और दासों की तरह अलग-अलग पदों पर अड़ना नहीं चाहिए। एक निश्चित ऊँचाई से ही व्यापक दृष्टि मिलती है, ताकि पूरा बाइबल-परिदृश्य देखा जा सके। ठीक वैसे ही जैसे किसी चित्र को देखते समय उसे पूरा देखने के लिए थोड़ा पीछे हटना पड़ता है, ताकि मनुष्य केवल बारीकियों में न अटका रहे। कभी-कभी खुलेपन और परमेश्वर पर भरोसे के साथ व्यावहारिक समाधान खोजने होते हैं।

बाइबलवाद बाइबल को पढ़ने और उस तक पहुँचने का वह ढंग है जो उसे मसीही विश्वास को, और विशेषकर मसीही जीवन-व्यवहार को, सूत्रबद्ध करने का एकमात्र स्रोत मानता है। अपने आप में यह एक अच्छी मनोवृत्ति है। पर जब ऐतिहासिक पृष्ठभूमियों की उपेक्षा की जाती है या उन्हें अनिश्चित और महत्वहीन कहकर ठुकरा दिया जाता है, तब यह समस्या बन जाती है। बाइबलवाद व्यापक मसीही परंपरा की अंतर्दृष्टियों को

अनदेखा करता है, और नए नियम के लिखे जाने के समय की तुलना में अपनी सांस्कृतिक परिस्थिति और स्थान का आकलन करने में असमर्थ है। बाइबलवाद उचित प्रश्नों और तर्कों से अप्रभावित रहता है। अपने समूह, आंदोलन, संघ या "कबीले" की अपनी समझ को जाने-अनजाने सबसे ऊँची या सबसे गहरी माना जाता है और हर पीढ़ी को सौंपा जाता है। बाइबलवाद इस बात के प्रति अंधापन है कि मनुष्य स्वयं भी व्याख्या की एक परंपरा में खड़ा है – अपने संस्कारों के साथ, अपने अग्रणी विचारकों और समूह के दबावों के साथ।

धर्मसुधार का "Sola Scriptura", अर्थात् "केवल पवित्रशास्त्र", बाइबलवाद नहीं है! जब धर्मसुधारकों ने या उनके उत्तराधिकारियों ने "Solas" को शब्दों में रखा, तो उनका अभिप्राय नंगा या मात्र पवित्रशास्त्र नहीं था, बल्कि परंपरा, अनुभव और प्रकृति के साथ पवित्रशास्त्र की प्राथमिकता। जब प्रोटेस्टेंटों ने पवित्रशास्त्र की स्पष्टता पर ज़ोर दिया, तो उनका अभिप्राय यह नहीं था कि पूरा पवित्रशास्त्र समान रूप से स्पष्ट है, बल्कि यह कि जब बात सुसमाचार और उद्धार की हो, तो वह स्पष्ट है। जब उन्होंने पवित्रशास्त्र की पूर्ण पर्याप्तता पर बल दिया, तो उनका अभिप्राय यह नहीं था कि वह बाइबल के संदर्भ से आगे की बातों – जैसे खुले हृदय की शल्य-चिकित्सा, बाइपोलर विकार का उपचार या समष्टि अर्थशास्त्र – से निपटने के लिए पर्याप्त है। बाइबल में ऐसे मूल्य, सिद्धांत और कथन तो हो सकते हैं जो इन बातों में योगदान दें, पर वे इन्हें उनकी संपूर्णता में सँभालने के लिए पर्याप्त नहीं हैं।

जब प्रोटेस्टेंटों ने पवित्रशास्त्र के अधिकार की बात की, तो उनका अभिप्राय उस पवित्र आत्मा के अधिकार से था जो पवित्रशास्त्र में बोलता है। उस आत्मा से, जो विश्वासियों को सच्चाई में ले जाता और प्रकाशित करता है, जो कलीसिया के लिए शिक्षकों को तैयार करता और देता है, और जो उसके विश्वास-अंगीकार और आराधना-विधि की विरासत को जीवंत करता है।

21वीं शताब्दी के मसीहियों के रूप में हम अपने पूर्वजों के कंधों पर खड़े हैं, जैसे वे भी अपने पूर्वजों के कंधों पर खड़े थे। बाइबल-निष्ठा और बाइबल की समझ कभी "शून्य में" नहीं होती, कभी "तटस्थ भूमि" पर नहीं। बाइबल पढ़ते समय, वचन का अध्ययन करते समय, शिक्षा के निर्माण में और मसीही जीवन-व्यवहार के वर्णन में इस बात का ध्यान रखना पहले से ही एक अच्छी शुरुआत है।

कठोर बाइबलवाद अक्सर वहाँ कठोर हठधर्मिता और व्यवस्थावादी कठोरता और संकीर्णता में ले जाता है, जहाँ विषय स्पष्ट नहीं है। यह सुसमाचार और अनुग्रह की उस स्वतंत्रता से मेल नहीं खाता, जिसके लिए मसीही बुलाए गए हैं।

यहाँ मैं यह संकेत करने की अनुमति लेता हूँ कि बाइबल के प्रति निष्ठावान मसीही भी बाइबल के वचनों को अब समयानुकूल नहीं मानते, जब उदाहरण के लिए करिश्माई वरदानों (1 कुरिन्थियों 12) की बात आती है, जिनके बारे में वे मानते हैं कि वे आज नहीं रहे। कोई बाइबल-पाठ इस धारणा की पुष्टि नहीं करता। ये निष्कर्ष हैं, अक्सर यह शुद्ध अनुभव-आधारित धर्मविज्ञान है, क्योंकि वे स्वयं इन वरदानों का अनुभव नहीं करते। और यह तब, जबकि ये संसार भर में बहुत जगह मौजूद और सक्रिय हैं और उदाहरण के लिए चंगाई के बहुत-से चमत्कार प्रमाणित किए जा सकते हैं। यह धर्मविज्ञान पूर्वधारणाओं और अनुभवों से निर्धारित होता है। दूसरे शब्दों में, वे इन पाठों को शब्दशः नहीं लेते।

पवित्रशास्त्र पहली मसीही पीढ़ी के बहुत-से प्रश्नों का उत्तर देता है। 21वीं शताब्दी के प्रश्नों का उत्तर केवल पवित्रशास्त्र के आशय के अनुसार दिया जा सकता है। यह एक चुनौती बनी रहती है, जिसमें अलग-अलग उत्तर भी निकलते हैं – एक कठिनाई जो बनी रहेगी।

राइन पुटमैन (Rhyne Putman) से उनकी नई पुस्तक "जब शिक्षा परमेश्वर के लोगों को बाँटती है"[114] के विषय में साक्षात्कार लिया गया, और उन्होंने यह कथन कहा: "Sola Scriptura (केवल पवित्रशास्त्र) का अर्थ 'nuda Scriptura' (नंगा पवित्रशास्त्र) या 'solo Scriptura' (मात्र पवित्रशास्त्र) नहीं है। ... मैं मानता हूँ कि जब हम पवित्रशास्त्र और परंपरा, तर्क-बुद्धि, अनुभव आदि दूसरे स्रोतों के संबंध की बात करते हैं, तो हम suprema Scriptura (पवित्रशास्त्र की सर्वोच्चता) कह सकते हैं। पवित्रशास्त्र को दूसरे स्रोतों पर प्राथमिकता है, पर ये स्रोत हमारे धर्मवैज्ञानिक और आत्मिक प्रशिक्षण के लिए मूल्यवान हैं। फिर भी केवल पवित्रशास्त्र ही परमेश्वर-प्रेरित और अचूक स्रोत है। केवल पवित्रशास्त्र ही इन दूसरे स्रोतों के ऊपर मानदंड देने वाला मानदंड है।"

6.4.2 शब्दशः लेना और शाब्दिक अर्थ

बाइबल को समझना, उसकी व्याख्या करना और फिर जीवन-व्यवहार में लागू करना वास्तव में जटिल है। इसमें पाठ का शाब्दिक अर्थ और शब्दशः लेना एक ही बात नहीं हैं। हर बाइबल-पाठ में शाब्दिक अर्थ की खोज करनी है। पर सब कुछ शब्दशः लेने से विवादास्पद और लगभग हास्यास्पद परिणाम निकलेंगे।

शाब्दिक अर्थ की खोज परिणाम में सबसे पहले यह निश्चित करती है कि पाठ किस प्रकार (विधा) का है। बाइबल में इनके बहुत-से प्रकार हैं: दृष्टांत, पत्र, शिक्षात्मक पाठ, काव्य, प्रकाशनात्मक (एपोकैलिप्टिक) साहित्य, व्यवस्था के नियम, इतिहास, प्रवचन आदि। आगे यह खोजा जाता है कि कथन का अभिप्राय क्या है, उस पाठ-प्रकार के अनुसार जिसमें वह कहा गया है। किसी दृष्टांत का प्रायः एक केंद्रीय अभिप्राय होता है, एक साथ कई नहीं। सामान्यतः वह कोई सचमुच घटी हुई घटना भी नहीं होगा।

पूरी बाइबल को हमेशा शाब्दिक अर्थ में समझाना या उसकी व्याख्या करनी है। उसमें से क्या हमारे जीवन में शब्दशः लागू किया जाए, और कैसे, इसे बहुत अच्छी तरह और ध्यान से परखना है। बहुत कुछ शब्दशः लागू नहीं किया जा सकता। यह विशेषकर संस्कृति और समय से बँधी प्रथाओं पर लागू होता है।

तेरे वचन का सार सत्य है, और तेरी धार्मिकता की सारी व्यवस्था सदा तक मान्य है।

भजन संहिता 119:160 (Zürcher Bibel, जर्मन बाइबल अनुवाद)

114. Putman, Rhyne R., When Doctrine Divides the People of God: An Evangelical Approach to Theological Diversity, Crossway, 2020

7 याजिकाएँ, प्राचीनाएँ और सेविकाएँ

स्वर्ग-वाटिका में आदम और हव्वा, निर्दोषता की अवस्था में, राजा हैं जो प्रभुता करते हैं, और याजक हैं जो परमेश्वर की उपस्थिति में रहते हैं। अदन की स्वर्ग-वाटिका ब्रह्मांडीय मंदिर के परमपवित्र स्थान का एक चित्र है। नया और बेहतर अदन, अर्थात् नई पृथ्वी, एक विश्वव्यापी परमपवित्र स्थान होगा। पूरी पृथ्वी एक स्वर्ग-वाटिका होगी। इसलिए नया यरूशलेम, जो नई सृष्टि का चित्र है, एक विशाल घन के आकार का है। यह मिलापवाले तम्बू और मंदिर के परमपवित्र स्थान के आकार से मेल खाता है। नई पृथ्वी स्त्रियों और पुरुषों से, राजाओं और रानियों से, याजकों और याजिकाओं से बसी होगी। क्या आप मानते हैं कि तब कोई पदानुक्रम होगा? कुछ लोग कहते हैं, नहीं, क्योंकि वह नई सृष्टि है। पदानुक्रम केवल पुरानी सृष्टि के लिए है। पर कलीसिया में नई सृष्टि आरंभ हो चुकी है। वह पहला फल है। वह इस संसार में परमेश्वर का अग्रिम मोर्चा है। तो फिर कलीसिया में फिर भी हमेशा पदानुक्रम क्यों होना चाहिए?

अब मैं ऐसे बिंदु पर आता हूँ जहाँ पहले की सब अंतर्दृष्टियाँ ठोस और व्यावहारिक बननी चाहिए। पिछले अध्यायों की सब जानकारियों, निष्कर्षों और सबकों के साथ हम अब क्या करें? सच्चाई को अब वास्तविकता की भूमि और कलीसियाओं के रोज़मर्रा के यथार्थ को छूना होगा। पहले कही गई सब बातों से मैं एक सार निकालता हूँ:

लिंगों का कोई पदानुक्रम नहीं है! कलीसिया में भी नहीं!

7.1 सब विश्वासियों का याजकपद

धर्मसुधार ने इस लंबे समय से दबी हुई सच्चाई को फिर से प्रकाश में लाया। पर कलीसियाई व्यवहार में यह दिखाई नहीं दिया। कोई भी, कैथोलिक कलीसिया भी नहीं[115], सब विश्वासियों के याजकपद पर संदेह नहीं करता। प्रश्न यह है कि सबके द्वारा स्वीकार की गई इस सच्चाई का कलीसियाई जीवन के लिए व्यावहारिक अर्थ क्या है।

115. कैथोलिक कलीसिया की धर्मशिक्षा (कैटेकिज़्म) से, याजकीय अभिषेक के विषय में: "प्रभु यीशु ने बारह प्रेरितों का मंडल बनाने के लिए पुरुषों को चुना, और प्रेरितों ने भी ऐसा ही किया जब उन्होंने ऐसे सहकर्मी चुने जो उनके कार्य में उनके उत्तराधिकारी हों। बिशपों का मंडल, जिसके साथ याजक याजकपद में एक हैं, मसीह के पुनरागमन तक बारह के मंडल को वर्तमान करता है। कलीसिया जानती है कि वह स्वयं प्रभु के इस चुनाव से बँधी है। इसलिए स्त्रियों का अभिषेक संभव नहीं है।" इस अर्थ में केवल पुरुष ही मसीह का प्रतिनिधित्व कर सकते हैं। यह दृष्टिकोण भी आज दबाव में है। यह द्विविधापूर्ण और विरोधाभासी लगता है कि स्त्रियाँ याजक नहीं हो सकतीं, पर कैथोलिक लोक-भक्ति में मरियम को परमेश्वर की माता के रूप में लगभग परमेश्वर के समान पुकारा और पूजा जाता है। कैथोलिक कलीसिया दबाव में है, क्योंकि बहुत-सी कैथोलिक स्त्रियाँ अभिषिक्त पद में आना चाहती हैं। उनका तर्क सब विश्वासियों का याजकपद है। परिवर्तन कलीसियाई विभाजनों/फूट के बिना संभव नहीं हैं, या केवल परिषदों के द्वारा संभव हैं। इसके पीछे आत्मिक प्रेरणा है या सांसारिक, यह मेरा विषय नहीं है। मेरा ध्यान कैथोलिक कलीसिया पर नहीं, बल्कि मेरे रूढ़िवादी सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) परिवेश पर है, जिसे अपनी ही समस्याओं की चिंता करनी है।

यह कि हर विश्वासी, स्त्री और पुरुष, याजक है, अपने आप में पर्याप्त कारण होना चाहिए कि आराधना सभा में दोनों लिंगों की भूमिका समान हो। ऐसा बिल्कुल नहीं है। एक ओर सब विश्वासियों का याजकपद व्यक्तिगत रूप से जिया जाता है। प्रार्थना और परमेश्वर के साथ संगति एक व्यक्तिगत, निजी आशीष है।

याजकपद और उससे जुड़ी बलिदान-सेवा का पूरा आदर्श पुराने नियम से आता है, जहाँ याजक आधिकारिक आराधना की अगुवाई करता और उसे संपन्न करता था। इसलिए सब विश्वासियों के याजकपद में – केवल नहीं, पर साथ ही – विश्वासियों के एकत्र होने के बारे में सोचना स्वाभाविक है, जो मिलकर आराधक के रूप में स्वर्गीय पवित्रस्थान में प्रवेश करते हैं। और स्तुति के आत्मिक बलिदान चढ़ाते हैं। क्या वहाँ लिंगों में अंतर हो सकता है या होना चाहिए? परमेश्वर का वचन नई वाचा में ये अंतर नहीं करता। तो हमें भी नहीं करने चाहिए।

7.2 प्राचीन और प्राचीनाएँ

प्राचीन-पद में बात अगुवाई के एक कार्य की है। कलीसिया की देखभाल, निगरानी और रक्षा की बात है। यह शिक्षा के कार्यों के साथ चरवाही सेवा है। आगे चलने और आदर्श बनने के साथ। क्या स्त्रियाँ भी अध्यक्ष या प्राचीन की सेवा कर सकती हैं?

बेन विदरिंगटन (Ben Witherington) बात को सटीक कहते हैं: “कभी-कभी यह तर्क सुनने को मिलता है कि 1 तीमुथियुस में कहा गया है कि प्राचीन एक ही पत्नी के पति हों, जो विश्वासयोग्य हों, और यह संकेत देता है कि केवल पुरुष ही प्राचीन हों। इसमें यह पूरी तरह भुला दिया जाता है कि पौलुस एक मिशनरी के रूप में एक प्रबल पितृसत्तात्मक सांस्कृतिक वातावरण में बोल रहा था, चाहे इफिसुस में या क्रेते में। उसका सिद्धांत वहाँ से आरंभ करना है जहाँ लोग खड़े हैं, न कि वहाँ से जहाँ वह उन्हें देखना चाहता। इसका अर्थ है संस्कृति के मौजूदा पुरुष-नेतृत्व के ढाँचे से आरंभ करना, जब तक सुसमाचार का ख़मीर अपना पूरा प्रभाव न दिखा दे और बातों को भीतर से बदल न दे। इसलिए स्वाभाविक रूप से केवल पुरुष ही हैं जिन्हें तीमुथियुस और तीतुस इन नई स्थापित कलीसियाओं के लिए पहले अगुवों के रूप में नियुक्त करते हैं। इसका अर्थ यह नहीं कि ऐसा सदा के लिए रहना है। पर नए विश्वासियों को प्रेमपूर्ण समझाने के द्वारा यह विश्वास दिलाना होगा कि यह ठीक है यदि स्त्रियाँ भी उसी तरह ऐसी भूमिकाएँ निभाएँ। आप देख सकते हैं कि पौलुस किस प्रकार पहले से ही इस दिशा में धकेलना आरंभ करता है, क्योंकि रोमियों 16 में वह फीबे (Phöbe) नाम की एक स्त्री अगुवा का उल्लेख करता है, जो किंख्रिया की कलीसिया की सेविका (डीकन) है। और संभवतः पास्टरीय पत्रियों में प्राचीनों और सेवकों की चर्चा में सेविकाओं का एक संकेत है। जैसा मैंने पहले कहा, मनुष्य को केवल यह आकलन नहीं करना है कि पौलुस क्या कहता है, बल्कि उसे उसके सांस्कृतिक संदर्भ में पढ़ना है और पूछना है कि जब पौलुस सुसमाचार को परिस्थिति पर लागू करता है, तो वह किस प्रकार के परिवर्तन करने का प्रयास कर रहा है।”[116]

स्त्रियों को इस पद से बाहर रखने की तुलना मैं पौलुस के इस वचन से करूँगा: [इफिसियों 5:29] “क्योंकि किसी ने कभी अपने शरीर से बैर नहीं रखा, बल्कि वह उसका पालन-पोषण करता है, जैसे मसीह भी सभा

116. Ben Witherington III, Why Arguments against Women in Ministry Aren’t Biblical

का।" जब हम पुरुष स्त्रियों को प्राचीन के पद से बाहर रखते हैं, तो यह कलीसिया के लिए आशीष नहीं है। यह हानि से भी अधिक है। इसके कारण अक्सर गलत पुरुष ऐसी भूमिका में आ जाते हैं जिसके वे योग्य नहीं हैं (चाहे आधिकारिक रूप से प्राचीन नियुक्त हों या किसी "भाइयों की बैठक" के सदस्य हों): "मेरी समझ में लैंगिक पूर्वाग्रह इसके लिए उत्तरदायी हैं कि हमने न केवल बहुत-सी वरदान-प्राप्त स्त्रियों को अगुवाई से बाहर रखा है; उन्होंने इसके अलावा बहुत-से ऐसे पुरुषों को भी योग्य ठहरा दिया है जो अगुवों के रूप में विशेष वरदान-प्राप्त नहीं हैं।"[117]

कुछ स्त्रियाँ, अच्छे और कम अच्छे उद्देश्यों से, "पीछे के रास्ते से" अपने पतियों के द्वारा अगुवाई के प्रश्नों पर प्रभाव डालेंगी। बेहतर यह होता कि प्राचीनों की पत्नियाँ बहुत-सी बैठकों में उपस्थित हों और पीछे का सारा शोर खुलकर, आमने-सामने कहा जाए।

7.3 वह एक भले काम की लालसा रखती है

जिम राइहर (Jim Reiher) ने 1 तीमुथियुस 2 और 3 की एक बात की ओर ध्यान दिलाया है: "बहुत-से लोग 3:1 को मुख्य रूप से अध्याय 3 के शेष भाग का तर्कसंगत आरंभ मानते हैं, जिसमें प्राचीनों और सेवकों के विषय में एक लंबी चर्चा है। पर मेरा तर्क यह होगा कि वास्तव में यह अध्याय 2 के समापन का भाग है, अध्याय 3 की भूमिका से भी अधिक। कलीसिया में स्त्रियों के लिए यह महत्वपूर्ण है, क्योंकि इसका अर्थ यह होगा कि पद 1 पुरुषों और स्त्रियों दोनों को प्राचीन/अध्यक्ष बनने के लिए प्रोत्साहित करता है। यदि यह अध्याय 2 का समापन है, तो दिखाई देता है कि पौलुस दोनों लिंगों को अगुवाई के कार्यों में परमेश्वर की सेवा करने के लिए समर्थन देता है, बशर्ते वे विश्वास में अभ्यस्त और परिपक्व हों। हाँ, उसने इफिसुस की कलीसिया की स्त्रियों पर इस समय के लिए कुछ प्रतिबंध लगाए, पर वह नहीं चाहता कि इसे एक 'अंतिम खेल' के रूप में देखा जाए। बल्कि वह सामान्य रूप से जोड़ता है कि यदि पुरुष और स्त्रियाँ दोनों प्राचीन बनने का प्रयास करें, तो यह एक अच्छी बात है।

पौलुस बहुत स्पष्ट करता है कि वह चाहता है कि स्त्रियों को ठीक से प्रशिक्षित किया जाए (2:11)। रोचक बात यह है कि इस पद में इस खंड का एकमात्र आज्ञार्थक रूप है: सीखे। अर्थात् पद 11 वह है जो पौलुस के किसी आदेश के सबसे निकट आता है: वह इस बात पर ज़ोर देता है कि स्त्रियों को सिखाया जाए। यह उसके चिंतन और लेखन का एक शिखर है। वास्तव में यही इस अनुच्छेद की कुंजी है: पौलुस चाहता है कि कलीसियाओं के सब सदस्यों को विश्वास में ठीक से सिखाया जाए। केवल पुरुषों को नहीं, बल्कि पुरुषों और स्त्रियों दोनों को। जब वे ठीक से प्रशिक्षित और परिपक्व हो जाएँगे, तब शिक्षा देने और अगुवाई के पद स्त्रियों और पुरुषों दोनों के लिए समान रूप से संभव होंगे।

यदि 1 तीमुथियुस 3:1 इन स्त्रियों से कहा गया हो, तो? तब हम अध्याय 3 पद 1 पर आते हैं। वहाँ ठीक-ठीक क्या लिखा है? एक बात जो वहाँ नहीं लिखी, वह यह है कि "यह अच्छी बात है, यदि केवल पुरुष प्राचीन बनने की लालसा रखें।" नहीं। यह केवल पुरुषों का संकेत हो सकता है। पर यह केवल स्त्रियों से भी संबंधित

117. Danny Silk

हो सकता है। या बहुत संभव है कि यह पुरुषों और स्त्रियों दोनों से संबंधित है। NIV (New International Version) ने यहाँ बेहतर अनुवाद किया है। पाठ कहता है: "यह एक विश्वसनीय कथन है: 'जो कोई अध्यक्ष बनने की आकांक्षा रखता है, वह एक उत्तम कार्य की इच्छा करता है।'" (मुझे ज्ञात सब जर्मन अनुवादों में भी ऐसा ही है, जहाँ "जो कोई" का अर्थ पुरुष भी हो सकता है और स्त्री भी।)

अध्याय 3 पद 1 में "पुरुषों" या "पुरुष" के लिए यूनानी शब्द का प्रयोग नहीं हुआ है। न ही "वह (पुरुष)" के लिए स्वतंत्र शब्द का। पर यूनानी शब्द tis का प्रयोग हुआ है। यही शब्द पुरुषों और स्त्रियों दोनों के लिए प्रयुक्त होता है। इसी तरह "वह (पुरुष) या वह (स्त्री) लालसा रखता/रखती है" के लिए प्रयुक्त शब्द "लालसा रखना" की एक क्रिया-धातु है, जिसके साथ "वह (पुरुष), वह (स्त्री) या वह (वस्तु)" का प्रत्यय जुड़ा है। संदर्भ को तय करना होगा कि यह क्रिया किससे संबंधित है।

यदि हम 1 तीमुथियुस 3:1 को 2:8-15 के समापन के रूप में रखें, तो यह पद कलीसिया में स्त्रियों की अगुवाई की पुष्टि करने वाला एक प्रबल संकेत बन जाता है। क्योंकि, जैसा कहा गया, प्रयुक्त शब्द पुरुषों या स्त्रियों से संबंधित हो सकते हैं, यह संभव है कि 3:1 का सीधा अर्थ यह हो: "यदि किसी स्त्री की अध्यक्ष बनने की इच्छा है, तो वह एक अच्छी बात की इच्छा करती है।" इसका अर्थ है कि पौलुस कुछ ऐसा कह रहा हो सकता है: "इस बात पर मेरे ज़ोर देने के बावजूद कि स्त्रियों को सिखाया जाए या वे सीखें, और कि जब तक वे परिपक्व और सक्षम न हो जाएँ तब तक वे शिक्षा नहीं दे सकतीं या अधिकार नहीं रख सकतीं – किसी स्त्री के लिए यह एक अच्छी बात है, यदि वह प्राचीन बनना चाहती है।"

इसलिए 1 तीमुथियुस 2:8-3:14 के उन विभाजनों के बजाय, जो हम अक्सर देखते हैं:

कलीसिया में स्त्रियाँ और पुरुष (2:8-15)। पुरुष प्राचीन (3:1-7)। पुरुष सेवक (3:8-10)। स्त्री सेवक (या सेवकों की पत्नियाँ) (3:11)। फिर से पुरुष सेवक (3:12-14)।

हमें पत्री के विचार-क्रम को इस प्रकार समझना चाहिए:

कलीसिया में स्त्रियाँ और पुरुष (2:8-3:1)। वर्तमान स्थिति: वर्तमान अगुवाई को लिंग-विशिष्ट ढंग से संबोधित करना (3:2-7)। पुरुष सेवक (3:8-10)। स्त्री सेवक (3:11)। पुरुष सेवक (3:12-14)।"

7.4 सेविकाएँ (डीकन)

डीकन शब्द का कोई स्त्रीलिंग रूप नहीं था। डीकनेस (Diakonisse) एक ऐसा शब्द है जो कुछ सौ वर्ष बाद ही सामने आया, और जिसका कलीसियाई पदों या आराधना की सेवाओं से भी कोई संबंध नहीं रहा था।

प्राचीन-पद के अलावा कलीसिया में सेवक (डीकन) भी एक पद पर होते हैं, जिसकी पहचान वही है जो एक डीकन है: एक सेवक। यह कि स्त्रियाँ भी यह पद धारण कर सकती हैं, या बेहतर कहें तो, इस सेवा में अपने को दे सकती हैं और सेविका के रूप में पहचानी, सराही और पुष्ट की जा सकती हैं, रोमियों 16:1 दिखाता है।

फीबे एक सेविका है। वह कैसे सेविका बनी, यह हम नहीं जानते। शायद इसलिए कि कलीसिया उसके घर में थी। जो भी हो, कलीसिया की सेवा में उसकी भक्ति ने उसे सेविका बनाया।

1 तीमुथियुस 3:11 में यह संभव है कि सेवकों की पत्नियों की बात न हो, बल्कि स्त्री सेवकों का अभिप्राय हो:

उसी प्रकार स्त्रियाँ भी आदरणीय हों, दोष लगाने वाली नहीं, सचेत, सब बातों में विश्वासयोग्य।

यहाँ तक कि जॉन मैकआर्थर (John MacArthur), जो पदानुक्रम के जाने-माने समर्थक (पूरकतावादी) हैं, स्त्री सेवकों का समर्थन करते हैं: "1 तीमुथियुस 3:11 में पौलुस सेवकों के एक अलग समूह का उल्लेख करता है। कई कारण संकेत देते हैं कि पौलुस यहाँ सेवकों की पत्नियों की नहीं, बल्कि सेविकाओं के एक अलग समूह की बात कर रहा है। पहला, 'उसी प्रकार' का प्रयोग (तुलना करें 2:9; 3:8; तीतुस 2:3, 6) प्रबल रूप से इस पक्ष में है कि यहाँ प्राचीनों और सेवकों के साथ एक तीसरा समूह देखा जाए। दूसरा, कोई स्वामित्वसूचक सर्वनाम और कोई निश्चित उपपद (आर्टिकल) नहीं है जो इन स्त्रियों को सेवकों से जोड़े। तीसरा, क्योंकि पौलुस ने प्राचीनों की पत्नियों के लिए कोई योग्यताएँ नहीं बताईं, तो वह सेवकों की पत्नियों के लिए ऐसा क्यों करता? चौथा, पौलुस ने 'सेविकाएँ' शब्द का प्रयोग नहीं किया, क्योंकि यूनानी भाषा में ऐसा कोई शब्द नहीं था। रोमियों 16:1 में फीबे को सेवक (डीकन) कहा गया है, क्योंकि diakonos का कोई स्त्रीलिंग रूप नहीं है। ... 'स्त्रियाँ' (gunaikeios) शब्द का प्रयोग पौलुस के लिए उन्हें पुरुष सेवकों से अलग करने का एकमात्र उपाय था। अंत में, उनकी योग्यताएँ पुरुष सेवकों की योग्यताओं से मेल खाती हैं। स्पष्ट है कि पौलुस ने सेवकों की एक और श्रेणी आरंभ की। मैं उन्हें स्त्री सेवक कहना पसंद करता हूँ, क्योंकि इससे नए नियम की शब्दावली बनी रहती है।" [118]

यह संदेह किया जा सकता है कि यहाँ पदों का कोई तीसरा समूह आरंभ किया जा रहा है। "उसी प्रकार" उन्हें पुरुष सेवकों के बराबर रखता है! यह एक बार फिर दिखाता है कि मनुष्य कैसे निष्कर्षों पर लगभग विवश हो जाता है, जब पुरुष और स्त्री सेवक के इस पद को समान दर्जे के साथ नहीं रख सकते, क्योंकि एक पदानुक्रम का अंतर है, जिसमें पुरुष को स्त्री पर अधिकार हो।

सेवक की सेवा किस बात में है, यह नहीं बताया गया। यह कि एक सेवक के पास अगुवाई के कार्य भी हो सकते हैं, मैं इसे असंभव नहीं मानूँगा। अगुवाई के विषय में सेवकों की सेवा के प्रश्न पर एक और विचार: "ऐसी ही बात तब होती है जब 1 तीमुथियुस 3 में प्राचीनों और सेवकों की योग्यताओं की आपस में तुलना की जाए। विल्फ़्रिड हाउबेक (Wilfrid Haubeck) सूचियों की समानता से यह निष्कर्ष निकालते हैं कि प्राचीनों और सेवकों ने मिलकर कलीसिया की अगुवाई की, जिसका फिर यह अर्थ हो सकता है कि फीबे (रोमियों 16:1) कलीसिया की अगुवाई का भाग थी।"[119]

कुरिन्थियों की पत्री में प्राचीनों की बिल्कुल बात नहीं की गई, पर अगुवाई के वरदानों की बात है, जो हर अंग को, स्त्री और पुरुष को, दिए जा सकते हैं (12:28; वैसे ही रोमियों 12:8: अगुवाई करने का वरदान)।

118. MacArthur, J., Different by design, MacArthur Study Series, Victor Books, Wheaton, IL 1996, 153–154.
119. Wunderli, 48

1 कुरिन्थियों 12:23 में ऐसे अंगों की बात है जिनका आदर कम है। “बल्कि देह के वे अंग जो दूसरों से निर्बल प्रतीत होते हैं, बहुत ही आवश्यक हैं; और देह के जिन अंगों को हम कम आदर के योग्य समझते हैं, उन्हीं को हम और अधिक आदर देते हैं; और हमारे शोभाहीन अंगों को और भी अधिक शोभा मिलती है”। क्या ऐसा हो सकता है कि पौलुस यहाँ स्त्रियों, बच्चों और दासों के बारे में सोच रहा है?

7.5 प्रचारिकाएँ

आज सुसमाचारवादी (इवैन्जेलिकल) कलीसियाओं में आराधना सभा का मुख्य भाग प्रायः प्रवचन होता है। सब कुछ व्यवस्थित होता है। अक्सर प्रवचन का विषय या बाइबल-पाठ पहले से ज्ञात होता है। पहली शताब्दी में ऐसा नहीं था। बल्कि वैसा, जैसा पौलुस 1 कुरिन्थियों 11 और 14 में वर्णन करता है।

> [1 कुरिन्थियों 14:26] तो भाइयो, क्या करना चाहिए? जब तुम इकट्ठे होते हो, तो तुम में से हर एक के पास कोई भजन होता है, कोई शिक्षा होती है, कोई प्रकाशन होता है, कोई अन्य भाषा होती है, कोई अर्थ बताना होता है; सब कुछ उन्नति के लिए हो।

हर कोई कुछ लेकर आता था और इसमें योगदान देता था कि सबकी उन्नति हो। कम मंच, अधिक आदान-प्रदान और संगति। एक-दूसरे की अधिक प्रतीक्षा, परमेश्वर का आत्मा अधिक। उल्लेखनीय है कि इस सभा में प्रवचन (केरिग्मा) का, या जो हम आज उससे समझते हैं और उसे बना दिया है, उसका उल्लेख नहीं है।

क्योंकि मैं एक बंद ब्रदरन सभा से आता हूँ, मेरा डीएनए ऐसा बना था कि स्त्रियाँ भाग नहीं लेती थीं, और प्रचार तो बिल्कुल नहीं करती थीं। किसी समय मैं मेहमान के रूप में एक FEG-कलीसिया (स्वतंत्र इवैन्जेलिकल कलीसिया) में गया। एक स्त्री प्रचार कर रही थी। उस समय मेरे लिए यह ठीक नहीं था और सहना कठिन था। फिर भी मैंने सुना। अपनी आपत्तियों के बावजूद मुझे मानना पड़ा कि यह प्रवचन उन बहुतों से अधिक गहरा और जीवंत था, जो मैंने अपनी सभाओं में सुने थे।

शायद “भविष्यद्वाणी करना” या “नबूवत करना”, अर्थात् परमेश्वर की ओर से बोलना, वही है जिसे हम प्रवचन समझते हैं। क्योंकि 1 कुरिन्थियों 11:5 के अनुसार यह स्त्रियों पर लागू होता है, तो प्रचार की यह सेवा भी कलीसिया में उनके कार्य-क्षेत्र का भाग होनी चाहिए। परमेश्वर कलीसिया में पुरुष और स्त्री दोनों को अपनी आवाज़ के रूप में चाहता है। स्त्रियों की आवाज़ के बिना कलीसिया में वह कमी रह जाती है जो परमेश्वर ने उसके लिए रखा है।

कुछ समय पहले प्रसिद्ध धर्मविज्ञानी एन. टी. राइट (N. T. Wright) से पूछा गया कि वे प्रचारिकाओं के बारे में क्या सोचते हैं। राइट तर्क देते हैं, “यह आम धारणा कि प्राचीन काल में स्त्रियों का दमन होता था और हाल ही में नारीवाद ने उन्हें फिर से ऊपर उठाया है, पूरी तरह गलत है।” इस धर्मविज्ञानी ने, जिन्होंने हाल ही में नया नियम अपने संसार में नाम की एक पुस्तक प्रकाशित की, कहा कि जिन स्त्रियों के पास कलीसिया और समाज में कुछ अधिकार था, वे प्राचीन काल में कोई घृणित बात नहीं थीं। “पौलुस के संसार में बहुत-सी स्वतंत्र स्त्रियाँ थीं, और यह कुछ ऐसा था जिसके साथ पौलुस काम करता था।”

यूहन्ना 20 में, जब यीशु मरे हुओं में से जिलाया जाता है, तो पहला व्यक्ति जिससे वह मिलता है, मरियम मगदलीनी है। राइट समझाते हैं, "वह यह नहीं कहता: मरियम, मेरे पास एक बहुत महत्वपूर्ण समाचार है – मैं चाहता हूँ कि तुम पतरस को बुला लाओ, क्योंकि मुझे उसे बताना है, ताकि वह फिर जाकर सबको बता सके।" इसके बजाय "वह कहता है: मरियम, जाओ और मेरे भाइयों से कहो – उन पुरुषों से जो डर के मारे घर में छिपे हैं – जाओ और उनसे कहो कि मैं अपने पिता और तुम्हारे पिता के पास जा रहा हूँ ..."। यह समाचार कि क्रूस पर चढ़ाया गया यीशु मरे हुओं में से जिलाया गया और अब संसार का प्रभु है, राइट कहते हैं, "सारी मसीही सेवा की नींव" है। यदि यीशु यह समाचार अपने किसी पुरुष शिष्य के बजाय मरियम को सौंपता है, तो यह "लगभग उतनी ही बड़ी क्रांति है जितना स्वयं पुनरुत्थान"।

दूसरा उदाहरण, जिसका सहारा राइट इस प्रश्न का उत्तर देने के लिए लेते हैं कि स्त्रियाँ प्रचार कर सकती हैं या नहीं, रोमियों 16 में मिलता है। राइट कहते हैं, रोमियों की पत्री "शायद अब तक लिखी गई सबसे महत्वपूर्ण पत्री" है। यह तथ्य कि पौलुस ने यह सबसे महत्वपूर्ण पत्री फीबे को सौंपी, जो कुरिन्थुस के पास किंख्रिया की कलीसिया में सेविका थी, उस युग और संस्कृति के संदर्भ को देखते हुए बहुत अर्थपूर्ण है। "प्राचीन संसार में जो व्यक्ति पत्र ले जाता है, वही उसे पढ़कर सुनाता है"। राइट समझाते हैं कि फीबे "संभवतः एक स्वतंत्र व्यवसायी स्त्री" थी, जो व्यापार के सिलसिले में रोम गई। इसके अतिरिक्त इसकी बहुत संभावना है कि जब लोगों के मन में पत्री के बारे में प्रश्न थे, तो फीबे ने पौलुस का अभिप्राय भी समझाया। वास्तव में यह "बहुत संभव है कि रोमियों के नाम पौलुस की पत्री का सबसे पहला संस्करण कुरिन्थुस के पूर्वी बंदरगाह की एक मसीही व्यवसायी स्त्री द्वारा पहुँचाया गया", राइट ने कहा। "पौलुस आसानी से इसके लिए किसी पुरुष को चुन सकता था", उन्होंने समझाया। इसके बजाय उसने जान-बूझकर फीबे को चुना।

7.6 सार

मैं एक जागे हुए विवेक के साथ समाप्त करता हूँ: बाइबल के समग्र प्रमाण के सामने मैं कभी स्त्री के बारे में एक पितृसत्तात्मक दृष्टिकोण कैसे रख सका? और पिछली दो शताब्दियों के विश्व-मिशन में परमेश्वर ने स्त्रियों के द्वारा जो कुछ किया, उसके सामने? उन स्त्रियों के सामने, जिन्होंने सब कुछ दे दिया, जिन्होंने प्रचार किया, शिक्षा दी, अगुवाई की और सुसमाचार सुनाया? स्त्रियों को किसी भी सेवा से दूर रखना परमेश्वर के स्वभाव का कैसा अनादर है!

विश्वसनीय जानकारी है कि चीन में इस समय की 1,00,000 से कहीं अधिक घरेलू कलीसियाओं में से 70% से अधिक की अगुवाई स्त्रियाँ करती हैं। जिसने यीशु को समझा है, जिसने पौलुस को समझा है, उसे इस पर आश्चर्य नहीं होता। मैं अब कभी भी यूनानी दर्शन की स्त्री-अवमानना को, न यहूदीवादी स्त्री-भेदभाव को, और कलीसियाई स्त्री-भेदभाव को तो बिल्कुल नहीं, स्वीकार करूँगा या अपने उत्तरदायित्व के क्षेत्र में सहन करूँगा।

स्त्री और पुरुष के साथ "समान व्यवहार करने वाले" सांसारिक ढंग से नहीं सोचते और काम करते। सांसारिक वे हैं जो स्त्रियों को चुप रहने, शिक्षा न देने और अगुवाई न करने और कोई भी सार्वजनिक सेवा न

करने की आज्ञा देते हैं। बाइबल के प्रमाण के अनुसार सब सार्वजनिक और गैर-सार्वजनिक पद, सेवाएँ और कार्य बिना भेदभाव के स्त्रियों और पुरुषों के लिए हैं। आइए, हम पुरुष उनकी सहायता करें कि वे कदम-दर-कदम इन सेवाओं में बढ़ें। जैसे हमारी भी सहायता की गई!

8 “मसीह में एक जन”: गलातियों 3:28

जब लैंगिक भूमिकाओं की बात आती है, तो बाइबल का कोई और वचन इतनी बार उद्धृत नहीं किया जाता और उसका इतना गुणगान नहीं होता। कहा जाता है कि इसका “मसीही (सुसमाचारवादी) नारीवाद के मैग्ना कार्टा के रूप में जयजयकार” किया जाता है।[120] यहाँ पूरा पाठ-खंड है, जिस पर – सब खंडों की तरह – यह बात लागू होती है कि उसे उसके संबंध में, अर्थात् उसके संदर्भ में समझाना चाहिए:

> [गलातियों 3:23-29, जर्मन एल्बरफेल्डर बाइबल से अनूदित] परन्तु विश्वास के आने से पहले हम व्यवस्था के अधीन पहरे में रखे गए, उस विश्वास के लिए बन्द किए हुए, जो प्रकट होने वाला था। इसलिए व्यवस्था मसीह तक हमारी शिक्षक रही, ताकि हम विश्वास से धर्मी ठहराए जाएँ। परन्तु अब जब विश्वास आ गया है, तो हम किसी शिक्षक के अधीन नहीं रहे; क्योंकि तुम सब मसीह यीशु पर विश्वास के द्वारा परमेश्वर के पुत्र हो। क्योंकि तुम में से जितनों ने मसीह में बपतिस्मा लिया है, उन्होंने मसीह को पहन लिया है। अब न कोई यहूदी है, न यूनानी; न कोई दास है, न स्वतंत्र; न पुरुष और स्त्री; क्योंकि तुम सब मसीह यीशु में एक जन हो। और यदि तुम मसीह के हो, तो तुम अब्राहम के वंश हो और प्रतिज्ञा के अनुसार वारिस हो।

गलातिया में पृष्ठभूमि क्या थी और समस्या क्या थी? संक्षेप में यह: गलातियों ने वह सुसमाचार, जो पौलुस ने उन्हें सुनाया था, आनन्द से ग्रहण किया था। उन्होंने मसीह में बपतिस्मा लिया था और पवित्र आत्मा में परमेश्वर की उपस्थिति को सामर्थ के साथ अनुभव किया था। फिर यहूदी शिक्षक आए, यहूदीवादी – जैसा पौलुस स्वयं भी कभी था –, और सुसमाचार में कुछ जोड़ लाने का प्रयास किया: जो जातियाँ मसीह पर विश्वास करती थीं, उन सबको ख़तना करवाना चाहिए। ताकि वे मसीह पर विश्वास करने वाले यहूदी बन जाएँ। ताकि इस प्रकार वे अब्राहम के पुत्र बन जाएँ (जिसका ख़तना भी हुआ था और जिसे परमेश्वर से यह वाचा के चिह्न के रूप में मिला था)। ताकि ख़तने के द्वारा वे वाचा में प्रवेश करें और वारिस बन जाएँ। कोई और पत्री नहीं है, जिसमें पौलुस इन यहूदीवादियों और उनकी माँगों के विरुद्ध इतने कठोर शब्दों का प्रयोग करता है। क्योंकि वे उस सुसमाचार को बिगाड़ रहे थे, जो व्यवस्था के कामों की नहीं, बल्कि विश्वास की माँग करता था।

8.1 पाठ क्या कहता है

उद्धृत अनुच्छेद – केवल पद 28 ही नहीं – इन यहूदीवादियों के खंडन का एक शिखर है। परमेश्वर का एक सच्चा वचन, जिसमें परमेश्वर का हृदय महसूस होता है, उसकी असीम कृपा और मसीह में उद्धार देने की उसकी अदम्य इच्छा। विश्वास के द्वारा धर्मी ठहराया जाना इस पत्री के मूल संदेश का हिस्सा है। दूसरे शब्दों में: दोषमुक्त, मानो हमने कभी पाप किया ही न हो!

120. Strauch, 122

व्यवस्था एक सीमित समय के लिए केवल एक शिक्षक थी, जिसे मसीह को खोजने और उसे ग्रहण करने में सहायता करनी थी। विश्वास के द्वारा सब परमेश्वर के पुत्र बन गए! सब, पुरुष और स्त्रियाँ भी। उस समय की संस्कृति में स्त्रियों की कोई सार्वजनिक भूमिका नहीं थी। वे अलग-थलग रहती थीं, वारिस नहीं होती थीं और विवाह तक पिता या सबसे बड़े पुत्र की संरक्षकता में रहती थीं। फिर वे अपने पति की संपत्ति बन जाती थीं। यहाँ पौलुस स्त्रियों को पुत्रत्व के दर्जे तक ऊँचा उठाता है! बात पुरुष या स्त्री होने की नहीं, बल्कि उस विशेष स्थिति की है, पुत्रत्व के उस ऊँचे विशेषाधिकार की। इस स्थिति का आदर्श केवल उस समय की सांस्कृतिक और सामाजिक पारिवारिक परिस्थितियों से नहीं निकलता। इस पुत्रत्व का आदर्श स्वयं परमेश्वर के पुत्र का पुत्रत्व है। सब ग्रहण किए गए हैं और पुत्रों की स्थिति तक ऊँचे उठाए गए हैं। केवल आज की भाषा में हम उचित रूप से यह भी कह सकते हैं: पुत्रियों की स्थिति तक।

परन्तु उस समय के सांस्कृतिक संदर्भ में मसीही स्त्रियों के लिए परमेश्वर की पुत्रियाँ कहलाना कोई लाभ न होता। “पुत्रियों” के रूप में वे उस समय कलीसिया में अपने “भाइयों” के अधीन होतीं। परन्तु सब विश्वासियों को परमेश्वर के पुत्र घोषित करके पौलुस स्त्रियों को वही दर्जा देता है, जो पुरुषों का है। इसलिए वह स्वाभाविक रूप से “तुम सब एक जन हो” (जर्मन: einer – पुल्लिंग ‘एक’, अर्थात् एक व्यक्ति; न कि eins – नपुंसक ‘एक’, अर्थात् एक वस्तु!) पर समाप्त करता है, क्योंकि “मसीह में” तो सब के सब परमेश्वर के पुत्र हैं, विश्वास करने वाली स्त्रियाँ भी। उस समय की परिस्थितियों में स्त्रियों का यह “उद्धार से जुड़ा लिंग-परिवर्तन” स्त्री-विरोधी नहीं, बल्कि किसी नई बात का आरंभ है। यदि स्त्रियाँ भी “परमेश्वर के पुत्र” हैं, तो क्या इसका कलीसिया में उनकी भूमिका पर कोई परिणाम होता है?

परमेश्वर के सब पुत्रों और पुत्रियों ने जल-बपतिस्मा के द्वारा मसीह को पहन लिया है। उनमें, पद 28 में नामित हर एक में, अब मसीह दिखाई देता है। बिना किसी भेद के। यह बात बिना किसी अपवाद के और नस्ल, सामाजिक स्थिति या लिंग से स्वतंत्र होकर लागू होती है। पौलुस अलग करने वाले और भी उदाहरण दे सकता था, यह स्पष्ट करने के लिए कि कोई भी, चाहे किसी भी कारण से – और विशेषकर किसी ऐसे कारण से नहीं, जिसके लिए वह स्वयं कुछ नहीं कर सकता –, परमेश्वर के उद्धार-कार्य से बाहर नहीं रखा गया है। यह महान उद्धार सबको अब्राहम के वंशज और इस प्रकार वारिस बनाता है, मसीह के द्वारा, जो अब्राहम का वंश है। आत्मिक रूप से नई सृष्टि में जन्मे हुए। यह रक्त-संबंध और ख़तने को अर्थहीन बना देता है।

मसीह में सब समान हैं। पुत्रत्व और उत्तराधिकार तक समान रूप से ऊँचे उठाए गए। एक प्रचंड, एक क्रांतिकारी और पहले कभी न सुना गया संदेश, सीधे स्वर्ग से। वाचा में प्रवेश के रूप में ख़तना भी समाप्त हो जाता है। ख़तने का पुरुष-विशेषाधिकार क्रूस पर समाप्त हो गया है और सदा के लिए इतिहास बन गया है। स्त्रियों को अब कभी यह प्रश्न परेशान करने की आवश्यकता नहीं कि उनके लिए वाचा से जुड़े होने को कैसे व्यक्त और सुनिश्चित किया जा सकता है। अब सबके लिए बपतिस्मा उद्धार का नया प्रतीक है।

8.2 पाठ सीधे क्या नहीं कहता

पौलुस के इस वचन में बात मुख्य रूप से पुरुष और स्त्री की भूमिकाओं की समझ की नहीं है (यहाँ उत्पत्ति 1:27 के अनुसार ‘नर और नारी’ लिखा है)। यह पाठ इन तीनों जोड़ों के भेदों को समाप्त नहीं करता। ये संसार में बने रहते हैं। राष्ट्रीयताएँ बनी रहती हैं, कोई दास मसीह पर विश्वास करने से स्वतंत्र नहीं हो जाता, और लिंग एक दूसरे को निष्प्रभावी नहीं करते। पुरुष पुरुष रहता है और स्त्री स्त्री रहती है। एक होना और समान होना मसीह में उद्धार से संबंधित है। पिता के साथ संबंध से और मसीह की देह में स्थान से। दृश्य सृष्टि और सामाजिक परिस्थितियों से नहीं। या सृष्टि की व्यवस्था से नहीं। पूरकतावाद के समर्थक – जो स्त्री की पदानुक्रमिक अधीनता के पक्ष में हैं – इस बात पर विशेष रूप से और बार-बार ज़ोर देते हैं। मैं भी, जिसे स्ट्राउख (Strauch) और जॉनसन जूनियर (Johnson jun.) “सुसमाचारवादी नारीवादी”[121] कहेंगे, पौलुस के इस वचन को समान दर्जे के पक्ष में अपने तर्क का मुख्य आधार नहीं बनाता। इस स्थान पर यह पौलुस का विषय नहीं है।

8.3 पाठ परोक्ष रूप से फिर भी क्या कहता है

फिर भी इस वचन में कुछ ऐसा कहा गया है, जो लिंगों से ठोस रूप से संबंधित है। यह उसी कारण-शृंखला और तर्क-शृंखला में खड़ा है, जो उत्पत्ति 1 से आरंभ हुई थी। पद 28 में केवल एक तुलनात्मक सूची से कहीं अधिक है कि सब समान रूप से उद्धार में भागी हैं। यह एक ऐसा उद्धार है, जिसमें केवल पापों की क्षमा ही नहीं आती, बल्कि जो अभी से पतित सृष्टि और मानवजाति के विनाश से, उसके दिवालियेपन और टूटन से बचाता है। तीनों जोड़ों में परोक्ष रूप से एक तनाव, कोई अलग करने वाली बात, संकेतित है। नहीं तो पौलुस उन्हें उदाहरण के रूप में न लेता। पौलुस के समय और उस समय की संस्कृति और जीवन-शैली की पृष्ठभूमि में उस बात की चर्चा होती है, जो वैसी नहीं है, जैसी सृष्टिकर्ता की दृष्टि में होनी चाहिए। इन जोड़ों के तनाव में, उनकी असमानता में, अब परमेश्वर का अनुग्रह उसके भले आत्मा के द्वारा चंगाई देते हुए, मेल कराते हुए और पुनःस्थापित करते हुए काम करता है।

यदि यह पहलू उस समय प्रमुख न भी रहा हो, तो आज और कलीसिया और संस्कृति के 2000 वर्षों के इतिहास पर पीछे दृष्टि डालने पर निश्चय ही है। परमेश्वर का वचन कालातीत है और हर पीढ़ी और हर सदी में कुछ नया रच सकता है।

121. संभवतः अमेरिका में इस शब्द की ध्वनि उतनी नकारात्मक नहीं है, जितनी जर्मनी में। मैं स्त्री की अधीनता के किसी समर्थक को मसीही पुरुषवादी नहीं कहूँगा। नारीवाद एक बड़े समूह का, एक बहुस्तरीय आंदोलन का नाम है, जिसमें हर प्रकार की चरम सीमाएँ हैं। एक ऐसा आंदोलन, जिसने अच्छा, कम अच्छा और – हर दूसरे आंदोलन की तरह – बुरा भी किया है। मैं इस आंदोलन में प्रभुत्व का उलटाव देखता हूँ, जिसका अर्थ है एक चरम सीमा और भूल से दूसरी में पलट जाना। मैं नारीवाद के पक्ष में नहीं, बल्कि पुरुष और स्त्री की बाइबलीय समग्र तस्वीर के पक्ष में खड़ा हूँ। लगातार यह आरोप लगाना कि मैं इस आंदोलन से प्रभावित हूँ या परोक्ष रूप से उसका समर्थन करता हूँ, उपयोगी नहीं है।

8.3.1 यहूदी और यूनानी

यह भेद मूर्तिपूजक जातियों और इस्राएल के बीच, एक सच्चे परमेश्वर की प्रजा के बीच, विभाजन को चिह्नित करता है। यह एक छोटी और उस समय महत्वहीन जाति पर परमेश्वर का अनुग्रह दिखाता है। यह उसे अलग करके ऊँचा उठाता है। केवल वही सब जातियों में से परमेश्वर की निज प्रजा है। परन्तु वह बीत चुका है। यह विभाजन इतिहास बन चुका है। उद्धार सबके लिए है। सब परमेश्वर के पुत्र बनते हैं।

पौलुस जान-बूझकर इसी भेद से आरंभ करता है, क्योंकि यहूदीवादी विश्वास करने वाली जातियों पर दबाव डाल रहे थे कि वे ख़तना करवाएँ, ताकि इस प्रकार यहूदी बन जाएँ और अब्राहम की वाचा में प्रवेश करें।

अन्यजातियाँ भी, ठीक यहूदियों की तरह, अपनी राष्ट्रीयता परमेश्वर के नए और अनन्त संसार तक बनाए रखेंगी। कोई भी अपनी राष्ट्रीयता को झटककर अलग नहीं कर सकता। परन्तु मसीह में उद्धार के द्वारा वे सब नकारात्मक और पापपूर्ण, सब विनाशकारी साथ-साथ चलने वाली बातें मिट जाती हैं, जो अलग-अलग और अक्सर एक दूसरे की शत्रु जातियों के कारण होती हैं। कलीसिया में और परमेश्वर के राज्य में इसे जिया जाना चाहिए। सब एक दूसरे को ग्रहण करें, जैसे मसीह ने हमें ग्रहण किया है।

8.3.2 दास और स्वतंत्र

दासों के लिए, जो किसी वस्तु की तरह अपने स्वामियों की संपत्ति थे, यह कैसा अकल्पनीय संदेश था। मसीह में अब वे भाई हैं, परमेश्वर के सामने समान मूल्य के और समान रूप से आदरणीय। परन्तु दास-प्रथा पतित मानवजाति की अभिव्यक्ति है। वह कभी परमेश्वर की इच्छा नहीं थी। क्योंकि वह परमेश्वर के स्वरूप पर आधारित मानवीय गरिमा के अनुरूप नहीं है। कोई मनुष्य कभी किसी दूसरे मनुष्य की संपत्ति नहीं है, दबाव और हिंसा के अधीन।

शायद पौलुस की फिलेमोन को लिखी छोटी पत्री इसीलिए नए नियम के कैनन (धर्मशास्त्र-संग्रह) में है, क्योंकि उसमें एक दास, उनेसिमुस (Onesimus) – और वह भी एक भागा हुआ दास – को पौलुस भाई और सहकर्मी के रूप में सम्मान देता है। परन्तु वह यह फिलेमोन (Philemon) पर, उसके विश्वासी स्वामी पर, छोड़ देता है कि जब वह दास घर लौटेगा, तो वह उसके साथ कैसा व्यवहार करेगा। संक्षेप में, पौलुस सीधे दास-प्रथा के विरुद्ध नहीं लड़ता। वह युद्ध उस समय आरंभ होने से पहले ही हारा हुआ होता। परन्तु परोक्ष रूप से दास-प्रथा के विरुद्ध संघर्ष आरंभ हो गया है। मसीह की शिक्षा के द्वारा, सुसमाचार के द्वारा, दास अब एक पूर्ण मनुष्य है, जिसका ऐसे ही आदर किया जाना चाहिए। सुसमाचार हर प्रकार की दास-प्रथा पर प्राणघातक प्रहार है। सुसमाचार ही इस बात का कारण है कि उसे समाप्त किया गया, दुर्भाग्य से बहुत देर से।

यहाँ भी यह अनदेखा नहीं किया जा सकता कि सुसमाचार स्वतंत्रता लाता है। शाब्दिक दासता से भी (केवल आत्मिक दासता से नहीं)। नई सृष्टि में अब कोई दास नहीं होगा। कलीसिया में और परमेश्वर के राज्य में, जो

सुसमाचार का फल हैं, यह नई सृष्टि आरंभ हो चुकी है। भीतरी और बाहरी जीवन पर सुसमाचार का प्रभाव एक दूसरे से परस्पर जुड़ा हुआ है। वे अनिवार्य रूप से एक साथ हैं।

कलीसिया में दास और दासों का स्वामी समान हैं। पदानुक्रम का भेद पतित संसार का हिस्सा है। यही बात पुरुष और स्त्री के भेद पर भी लागू होती है, जो कलीसिया में, नई सृष्टि में, अब लागू नहीं होता।

8.3.3 दास-प्रथा के विषय में जानकारी

उन्मूलनवाद (अंग्रेज़ी abolition से, जो लातीनी abolitio – “उन्मूलन”, “समाप्ति” – से निकला है) दास-प्रथा को समाप्त करने के एक आंदोलन को कहते हैं। मसीही और प्रबोधन-युग (एनलाइटनमेंट) की, दोनों प्रकार की मान्यताओं से प्रेरित होकर यह अधिक से अधिक पश्चिमी देशों में हुआ, 1761 में पुर्तगाल से आरंभ होकर 1888 में ब्राज़ील तक। 1808 से ग्रेट ब्रिटेन ने दास-प्रथा के विरुद्ध संघर्ष में अग्रणी भूमिका निभाई। विलियम विल्बरफ़ोर्स (William Wilberforce, 1759-1833) एक ब्रिटिश सांसद थे और दास-प्रथा और दास-व्यापार के विरुद्ध संघर्ष के अगुवे थे। इंग्लैंड में यह महत्वपूर्ण था कि अठारहवीं और उन्नीसवीं सदी में पवित्रतावादी आंदोलन (पायटिज़्म) और प्रोटेस्टेंट मिशन में यह धारणा प्रबल हुई कि मनुष्य को परमेश्वर की सन्तान के रूप में समझना दास-प्रथा के साथ मेल नहीं खाता। अमेरिका के दक्षिणी राज्यों में दासों का शोषण खेतों और बागानों में होता रहा। क्योंकि उत्तरी राज्य पूरे देश में दास-प्रथा की समाप्ति की माँग कर रहे थे, 1861 में देश में युद्ध छिड़ गया (गृहयुद्ध)। अंत में उत्तरी राज्य जीते और इस प्रकार दिसंबर 1865 में संविधान के 13वें संशोधन के द्वारा पूरे अमेरिका में दास-प्रथा समाप्त कर दी गई।

यूरोपीय ही थे, मसीही यूरोप ही था, जिसने दास-प्रथा का बड़े पैमाने पर व्यापारीकरण किया था। मसीही यूरोप में यीशु की शिक्षा को देखते हुए यह भयावह है। ठीक वैसे ही यह भी कि इसे समाप्त करने में इतना लंबा समय लगा और यह इतना कठिन मार्ग था। आज भी मानव-तस्करी होती है। इसमें विशेषकर बच्चे और स्त्रियाँ शिकार होते हैं। जो सुसमाचार को जानता और उससे प्रेम करता है, उसे जहाँ भी संभव हो, इसके विरुद्ध खड़ा होना चाहिए।

8.3.4 पुरुष और स्त्री

अब तीनों उदाहरणों में से अंतिम पर, जो इस विषय के लिए सबसे अधिक प्रासंगिक है। यहाँ भी वही लागू होता है, जो पिछले उदाहरणों पर। पतन ने पुरुष और स्त्री के संबंध का संतुलन बिगाड़ दिया है। पुरुष ने स्वयं को बलवान, शासक बना लिया। संसार भर में, आदम से लेकर आज तक, पुरुष ने अन्यायपूर्वक स्त्री पर अधिकार छीन लिया है और उसे भेदभावपूर्ण ढंग से चलाता है।

सुसमाचार इस संबंध में चंगाई कैसे लाता है? नए हृदयों के द्वारा, बलिदान के लिए तैयार और निःस्वार्थ प्रेम के द्वारा। पवित्र आत्मा की सामर्थ में एक दूसरे के अधीन रहने, विश्वासयोग्यता और आदर के द्वारा। तब, जब पुरुष पहचानते हैं कि उनकी पत्नियाँ उनकी समकक्ष साथी हैं, जिनके बिना उनका जीवन वैसा सफल नहीं

होता, जैसा परमेश्वर चाहता है; ऐसे पुरुषों के द्वारा, जो अधीनता पर अड़े नहीं रहते, बल्कि निःस्वार्थ प्रेम में अपनी पत्नियों के पक्ष में खड़े होते हैं, उनके लिए लड़ते हैं और उनकी रक्षा करते हैं, अपना जीवन उनके साथ बाँटते हैं। और ऐसी स्त्रियों के द्वारा, जो ऐसे पुरुषों के अधीन तत्परता से रहती हैं और उनके पीछे चलती हैं। और इसका उल्टा भी। सुसमाचार वैवाहिक संबंधों को पूरी तरह स्वतंत्र कर सकता है, ताकि पुरुष और स्त्री एक दूसरे को परस्पर पूरा करें: शारीरिक रूप से, भावनात्मक रूप से, मानसिक रूप से।

यह अत्यंत महत्वपूर्ण है कि पौलुस के इस वचन पर उससे आगे सोचा जाए कि उसे केवल आत्मा के उद्धार से और केवल परमेश्वर के परिवार की एकता से जोड़ा जाए। जब दोनों सुसमाचार पर विश्वास करते हैं, तो एक टूटा और बिखरा हुआ विवाह फिर से ठीक क्यों हो जाता है? क्योंकि परमेश्वर केवल "शुद्ध हृदय" ही नहीं, बल्कि "नए हृदय" भी रचता है। क्योंकि पुरुष और स्त्री के विषय में पुराना, सांसारिक, पितृसत्तात्मक विश्व-दृष्टिकोण क्रूस में अपना अंत पाता है, ठीक वैसे ही जैसे दास-प्रथा और यहूदियों की विशिष्ट स्थिति।

उस समय भी पौलुस ने इस पतित, पितृसत्तात्मक भूमिका-समझ से सीधे संघर्ष नहीं किया। परन्तु परोक्ष रूप से, और इस प्रकार लंबे समय में प्रभावशाली ढंग से। यह कि पुरुष और स्त्री की यह छवि मसीही जगत में भी हठपूर्वक बनी रही है, एक ऐसी लज्जा है, जिस पर केवल शर्मिंदा ही हुआ जा सकता है।

8.3.5 सांसारिक और आत्मिक?

कार्ल-हाइन्ज़ वेबर (Karl-Heinz Weber) का मत है कि "सृष्टि की व्यवस्था" नई सृष्टि में ही समाप्त होती है। मसीह में होना किसी विश्वासी मनुष्य की पृथ्वी पर सांसारिक स्थिति के बराबर नहीं है। यह सब कार्य-क्षेत्रों पर लागू होता है। सभाओं पर भी, जहाँ सृष्टि की व्यवस्था के अनुसार बहनें चुप रहती हैं।[122]

पहले यह प्रश्न उठता है कि नई सृष्टि में "सृष्टि की व्यवस्था" क्यों समाप्त होनी चाहिए। नई सृष्टि में ही तो एक आशीषपूर्ण, अबाधित और सिद्ध सृष्टि की व्यवस्था होगी। अर्थात् वह, जो पतन से पहले थी। सृष्टि की व्यवस्था और मसीह में उद्धार की व्यवस्था एक दूसरे का विरोध नहीं कर सकतीं। उद्धार की व्यवस्था मूल सृष्टि की व्यवस्था को पुनःस्थापित करती है। उसमें पुरुष और स्त्री समान दर्जे के हैं। सुसमाचार के चंगाई देने वाले और सामाजिक रूप से प्रभावशाली परिणाम होते हैं। निश्चय ही पहले कलीसिया में, अर्थात् पहले विश्वासी लोगों के बीच। ये दूरगामी, सकारात्मक और क्रांतिकारी परिवर्तन हैं। यह उद्धार के लिए वह सामर्थ है, जो हज़ारों वर्ष पुराने पापपूर्ण ढाँचों को तोड़ सकती है और पूरी संस्कृतियों और राष्ट्रों को बदल और बचा सकती है।

सांसारिक अस्तित्व और सुसमाचार को अलग करना एक अबाइबलीय द्वैतवाद है। यह कोई सामाजिक सुसमाचार नहीं है, परन्तु यह एक प्रभावशाली संदेश है, जिसकी परमेश्वर के साथ संबंध में एक अजेय ऊर्ध्वाधर दिशा है। परन्तु साथ ही मनुष्यों के बीच एक क्षैतिज प्रभाव भी। सुसमाचार उद्धार के लिए भी और संस्कृति के लिए भी प्रासंगिक है। निश्चय ही "अभी से" और "अभी नहीं" के बीच एक तनाव है। परन्तु

122. Weber, 11-13

"अभी से" को खुला छोड़ा जाना चाहिए और उसे स्वतंत्र करने में सक्षम होना चाहिए, ताकि वह इस संसार में अपना पूरा प्रभाव दिखा सके।

एन्स्टी (Anstey) भी इसी प्रकार तर्क देते हैं: "दो अभिव्यक्तियाँ हैं, जो इन दो बातों में अंतर करती हैं: 'मसीह में' (गलातियों 3:28) और 'सभाओं में' (1 कुरिन्थियों 14:34)।" एक स्वर्ग में लागू होती है, दूसरी पृथ्वी पर। इस पर केवल इतना कहा जा सकता है कि हम सदा के लिए और हर स्थान पर "मसीह में" हैं, सभाओं में भी। इसके अतिरिक्त कुछ भी हमारे उद्धार को प्रश्न के घेरे में डाल देगा और सीधे-सीधे पवित्रशास्त्र का विरोध करेगा।

8.3.6 न कोई नर है, न नारी

"यह कि प्रेरित उद्धार के कारण स्त्रियों के 'पुरुष बनाए जाने' के विषय में पूरी तरह गंभीर है, यह उसके द्वारा एक लिंग-निरपेक्ष कलीसिया-विज्ञान (एक्लीसियोलॉजी) के सुसंगत समर्थन में दिखाई देता है, जो एक ऐसी कलीसियाई व्यवहार-पद्धति में परिणत होता है, जो सबको – सामाजिक स्थिति, जातीय-धार्मिक मूल और लिंग का विचार किए बिना – सिद्धांततः कलीसिया में हर कार्य सँभालने की अनुमति देती है। एकमात्र कसौटी योग्यता है, जिसे पौलुस पवित्र आत्मा के द्वारा दिए गए वरदान के रूप में समझता है (1 कुरिन्थियों 12)। ... रोचक बात यह है कि लिंग की श्रेणी में यह नहीं कहा गया कि अब कोई पुरुष और कोई स्त्री नहीं रहे। बल्कि 'नर' और 'नारी' शब्दों का प्रयोग किया गया है। इससे यह अनुमान होता है कि ... बात व्यक्तियों के लिंग-निर्धारण को समाप्त करने की नहीं थी, बल्कि कलीसियाई कार्यों के लिंग-पहलू को मिटाने की थी।

व्यवहार में इसका अर्थ यह है: भविष्यद्वाणी करना न पुरुष-विशिष्ट है, न स्त्री-विशिष्ट। कलीसिया की अगुवाई करना न पुरुष-विशिष्ट है, न स्त्री-विशिष्ट। अन्य भाषाओं में बोलना न पुरुष-विशिष्ट है, न स्त्री-विशिष्ट। ... मसीह के द्वारा प्रचार के लिए भेजा जाना न पुरुष-विशिष्ट है, न स्त्री-विशिष्ट। प्रचार करना पुरुष-विशिष्ट नहीं है और सेवा करना स्त्री-विशिष्ट नहीं है, आदि। इसलिए पौलुस की कलीसियाओं में फीबे (Phoebe) जैसी स्त्री सेवक (डीकन) हैं (रोमियों 16:1), यूनिया (Junia) जैसी स्त्री प्रेरित हैं (रोमियों 16:7), आदि।

यह कि आदिम मसीही 'लिंग-निरपेक्ष' कलीसिया-विज्ञान ... तक सीमित नहीं था, यह रोम की कलीसिया दिखाती है। पौलुस से स्वतंत्र रूप से स्थापित इस कलीसिया में स्पष्ट रूप से स्त्रियों के एक मंडल ने उत्कृष्ट भूमिका निभाई। पौलुस मरियम (Maria; रोमियों 16:6), त्रूफैना (Tryphäna), त्रूफोसा (Tryphosa) और पिरसिस (Persis; रोमियों 16:12) के नाम लेता है।"[123]

मार्टिन (Martyn) अपनी टीका में लिखते हैं: "क्योंकि तुम सब मसीह यीशु में एक हो। धार्मिक, सामाजिक और लैंगिक विरोधों का स्थान समानता नहीं, बल्कि एक नई रची गई एकता लेती है। मसीह में (उसमें, जिसे पौलुस बाद में 'मसीह की देह' कहेगा, 1 कुरिन्थियों 12:13, 27) वे व्यक्ति, जो यहूदी थे, और वे व्यक्ति, जो अन्यजाति थे, एक नई इकाई बना दिए गए हैं, जिसे स्वयं मसीह के साथ इतनी मौलिक रूप से एक माना गया

123. Kügler, Joachim; Paulus und die prophetischen Frauen in Korinth, Zur Gender-Politik des Apostels (1Kor 11,2-16; Gal 3,26-28)

है कि पौलुस ‘एक’ शब्द का पुल्लिंग रूप प्रयोग करता है। कलीसिया के अंग कोई एक वस्तु नहीं हैं; वे एक व्यक्ति हैं, जिन्हें एक नए मनुष्य की देह में सम्मिलित कर लिया गया है।

पौलुस की दूसरी पत्रियों से हम जानते हैं कि प्रेरित इस तथ्य से अवगत था कि कलीसिया में भी – जो परमेश्वर की नई सृष्टि का अग्रिम मोर्चा है – अब भी लैंगिक और सामाजिक बहिष्कार के कुछ चिह्न थे (उदाहरण के लिए 1 कुरिन्थियों 7; फिलेमोन)। इसलिए उसे बाद में मसीह में वास्तविक एकता की पुष्टि और पुरानी सृष्टि के भेद-चिह्नों के चिंताजनक रूप से बने रहने के बीच के तनाव पर गंभीरता से विचार करना पड़ा।” [124]

8.4 सारांश और निष्कर्ष

माइकल बर्ड (Michael Bird) के शब्दों में मैं इस अध्याय का सारांश देता हूँ: “पौलुस यह संकेत नहीं देना चाहता कि मसीहियों के लिए लिंग का अस्तित्व समाप्त हो जाता है, मानो परमेश्वर मनुष्यों को केवल गर्दन से ऊपर देखता हो और इस प्रकार पुरुषों और स्त्रियों के बीच के शारीरिक भेद को मिटा देता हो। नए जन्म का अर्थ यह नहीं है कि हम कभी एक-लिंगता की ओर बढ़ें और कलीसिया में एक ही शौचालयों का प्रयोग कर सकें। पौलुस यह भी नहीं कहता कि यह शिक्षा केवल उद्धार या आत्मिक बातों पर लागू होती है। पौलुस जो कहना चाहता है, वह यह है कि नई सृष्टि का अर्थ उन भेदों का मिट जाना है, जिन्होंने अतीत में मनुष्यों को एक दूसरे से अलग किया।

यहाँ उसके मुख्य संवाद-साथी नारीवादी स्त्रियाँ या पदानुक्रम के समर्थक नहीं थे, बल्कि यहूदी मसीही थे, जो अपनी जातीय पहचान के विशेषाधिकारों को बचाए रखना चाहते थे। पौलुस के लिए कोई भी व्यक्ति न तो नस्ल के कारण, न वर्ग के कारण और न लिंग के कारण परमेश्वर के सिंहासन के अधिक निकट है। परमेश्वर एक परिवार बनाना चाहता था, दो या अधिक परिवार नहीं, और अब्राहम के परिवार में सब जातियों से सन्तानें हैं, धनी और निर्धन, नर और नारी। यह सुसमाचार के समानता-सिद्धांत को रेखांकित करता है, जिसके अनुसार कोई भी यह घमंड नहीं कर सकता कि परमेश्वर के साथ सीधा संबंध उसी के पास है, या उस पर यह आरोप नहीं लगाया जा सकता कि वह किसी भी दूसरे मनुष्य से बेहतर या अधिक उपयोगी है। जबकि गलातियों 3:27-28 की मुख्य विषय-वस्तु उद्धार-विज्ञान (सोटेरियोलॉजी – उद्धार) पर केंद्रित है, हमें ध्यान रखना चाहिए कि यह कलीसिया-विज्ञान (एक्लीसियोलॉजी – कलीसिया) और आत्मा-विज्ञान (न्यूमेटोलॉजी – पवित्र आत्मा) से भी जुड़ी है। यहाँ बात केवल परमेश्वर के सामने समानता की नहीं, बल्कि कलीसिया के भीतर उस एकता की है, जो बपतिस्मा के बंधनों के द्वारा बनाई गई है और पवित्र आत्मा के दान के द्वारा मुहरबंद की गई है।”[125]

बहुत से पहलुओं और विवरणों को तौलने के बाद यह बाइबल-वचन विवाह और कलीसिया में विश्वासी स्त्री की समान दर्जे वाली भूमिका के पक्ष में एक प्रबल, एक ईश्वरीय तर्क है। इस सरल और साथ ही गहरी उद्धार-सच्चाई के प्रकाश में उन सब दूसरे पाठों का अर्थ लगाया जाना चाहिए, जो पुरुष और स्त्री के संबंध के विषय

124. Martyn, J. L., Galatians: A New Translation with Introduction and Commentary, 33A, Anchor Yale Bible, New Haven; London 2008, 377.
125. Bird, 37

में, विवाह में और कलीसिया में भी स्त्री की भूमिका के विषय में बोलते हैं। आरंभ की बात पर लौटें तो: हाँ, पौलुस का यह वचन एक मैग्ना कार्टा के समान है।

9 परमेश्वर पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा

बाइबल में परमेश्वर को पुल्लिंग रूप में प्रस्तुत किया गया है। वह पिता है। उसका पुत्र यीशु, संसार का उद्धारकर्ता, एक पुरुष है। वह अपने अनुयायियों के रूप में 12 पुरुषों को चुनता है। कोई स्त्री नहीं। बाइबल की सब पुस्तकें पुरुषों ने लिखीं। पुरानी वाचा में केवल पुरुष ही याजक थे। क्या यह सब मिलाकर पर्याप्त रूप से यह नहीं कहता कि स्त्री की तुलना में पुरुष के पास एक ऊँचा अधिकार-पद और अगुवाई का कार्य है? इतना सारा पुरुषत्व हम पर बिना कोई छाप छोड़े नहीं गुज़रता। कम से कम यह अचेतन धारणा कि परमेश्वर पुरुष है या नहीं, हमारी सोच पर, हमारी आत्म-छवि पर और परमेश्वर के विषय में हमारी समझ पर कुछ प्रभाव डालती है। मेरा अनुमान है कि पुरुषों पर शायद स्त्रियों से अलग प्रकार का।

"पवित्रशास्त्र में और कलीसिया में पुरुष पात्रों और पुरुष चित्रों और भाषा पर इस ज़ोर को जॉन पाइपर (John Piper) ने मसीही विश्वास की एक 'पुरुष-भावना' कहा है। एक प्रकार से इसका खंडन करना कठिन है। फिर भी यह प्रश्न उठता है कि क्या यह परमेश्वर की इच्छित व्यवस्था का प्रतिबिंब है, या इस कथित रूप से स्पष्ट संदेश में कोई दूसरा संदेश बुना हुआ है। क्या बाइबल में पुरुष-केंद्रित (एंड्रोसेंट्रिक)[126] और पितृसत्तात्मक कथाओं पर ज़ोर कलीसिया, परिवार और समाज में पितृसत्तात्मक ढाँचों का एक स्पष्ट समर्थन है? या पाठों में दूसरे संकेत हैं, जो हमें इस निष्कर्ष तक पहुँचाते हैं कि बाइबल इन पितृसत्तात्मक ढाँचों को तोड़ती है और पुरुषों और स्त्रियों के लिए संबंध के वैकल्पिक पहलू प्रस्तुत करती है?"[127]

परमेश्वर यीशु में स्वयं को प्रकट करता है। वह परमेश्वर का प्रतिरूप है। वह उसके तत्व की छाप है। वह परमेश्वर का अंतिम, पूर्ण और सबसे गहरा प्रकाशन है, अपने जीवन में और अपनी क्रूस की मृत्यु में। फिर भी यीशु के आने से पहले ही हम परमेश्वर के विषय में बहुत कुछ जान सकते थे। पवित्रशास्त्र पहले ही प्रकट करता है कि परमेश्वर कौन है और कैसा है। यीशु इस चित्र को सिद्धता तक पूरा करता है।

जब परमेश्वर पहली सदी के एक पुरुष में स्वयं को प्रकट करता है, एक यहूदी में, एक अविवाहित निर्माण-कारीगर में, तो साथ ही मुझे यह भी बोध है कि परमेश्वर, वह अनन्त, वह पूर्णतः भिन्न, उससे कहीं अधिक है, जितना यीशु में देखा जा सकता था। स्वयं उसे, परमेश्वर के पुत्र को, हम पूरी तरह समझ भी नहीं सकते। हमारा ज्ञान अधूरा है। मैकफ़ारलैंड (McFarland) निष्कर्ष निकालते हैं: "इसलिए हमें ध्यान रखना चाहिए कि हम यीशु को इस प्रकार प्रस्तुत करें कि देह में आने वाला लोगोस [वचन] देह तक सीमित न कर दिया जाए।"

परमेश्वर आत्मा है (यूहन्ना 4:24)। परमेश्वर त्रिएक परमेश्वर है। परमेश्वर के स्वभाव की ये दोनों बातें पृष्ठभूमि में नहीं जानी चाहिए। भले ही पुराने नियम में परमेश्वर का वर्णन पुरुष रूप में किया गया हो, पिता, योद्धा या

126. पुरुष-केंद्रितता (Androzentrismus) से एक ऐसा दृष्टिकोण समझा जाता है, जो पुरुषों को केंद्र, मापदंड और मानक मानता है। पुरुष-केंद्रितता को पुरुष या "पुरुषोचित" पर एक सामाजिक स्थिरीकरण के रूप में समझा जा सकता है। Wikipedia

127. Peppiatt, Rediscovering Scripture's Vision for Women: Fresh Perspectives on Disputed Texts

राजा के रूप में। जो कभी-कभी मनुष्य की तरह अनुभव करता और कार्य करता भी है। तथाकथित "परमेश्वर के मानवरूपी (एंथ्रोपोमॉर्फ़िक)[128] चित्र" परमेश्वर के कार्य और अनुभव को मानवीय तुलनाओं और उपमाओं में दिखाते हैं। ये चित्र परमेश्वर की वास्तविकता के कितने निकट आते हैं? परमेश्वर, तीन में एक के रूप में, आत्मा के रूप में और बिना आरंभ के, हमारे लिए अगम्य है। जब वह हमारे पास आता है और हम में से एक बन जाता है, एक पुरुष, तो इसका अर्थ यह नहीं कि परमेश्वर पुरुष है, बल्कि यह कि वह स्वयं को इस प्रकार प्रकट करता है। परमेश्वर की हमारी तरह कोई देह नहीं है और इसलिए उसका कोई लिंग भी नहीं है।

9.1 क्या परमेश्वर पुरुष है?

परमेश्वर स्वयं को पिता के रूप में प्रकट करता है। क्या इससे उसका लिंग प्रकट होता है? नहीं, परन्तु इससे कुछ कहीं अधिक महत्वपूर्ण बात प्रकट होती है: वह एक व्यक्ति है और वह संबंध, स्नेह और संगति का परमेश्वर है। यह परमेश्वर, जिसका वर्णन हमारे लिए मानवीय चित्रों में किया गया है, बोलता है, सुनता है, चेतावनी देता है, रक्षा करता है, बल देता है, कार्य करता है, वाचाएँ बाँधता है, प्रतिज्ञाएँ करता है और सबसे बढ़कर बलिदान के लिए तैयार और कभी न बुझने वाले प्रेम से प्रेम करता है। वह अपरिवर्तनीय है, परन्तु उसकी गहरी भावनाएँ हैं। यद्यपि वह अथाह है, फिर भी उसके पास कम से कम – हमें अज्ञात मात्रा में – वे सब क्षमताएँ हैं, जो हम मनुष्यों के रूप में, स्त्री और पुरुष के रूप में, रखते हैं। मानवीय चित्र उस अवर्णनीय का वर्णन करने का प्रयास करते हैं। बहुत कुछ पुल्लिंग भाषा में। परन्तु परमेश्वर के अनगिनत स्त्री-रूपी चित्र भी हैं, जो उसके स्त्री-पक्ष को उभारते हैं और उसकी महिमा करते हैं। उनमें से कुछ मैं प्रस्तुत करूँगा और यह नहीं भूलूँगा कि परमेश्वर स्त्री भी नहीं है। एक बार फिर: उसका कोई लिंग नहीं है। परमेश्वर के विषय में स्त्री-रूपी चित्र दिखाते हैं कि अदन में क्या देहधारी हुआ: पुरुष और स्त्री परमेश्वर का स्वरूप हैं और अपने अस्तित्व में और अपने लिंग में उस परमेश्वर के अस्तित्व को प्रतिबिंबित करते हैं, जिसका कोई लिंग नहीं है।

पुल्लिंग व्याकरण में परमेश्वर का वर्णन भाषा की एक सीमा भी है, परन्तु केवल वही नहीं। यदि जर्मन में और बहुत-सी दूसरी भाषाओं में परमेश्वर का वर्णन न पुल्लिंग में और न स्त्रीलिंग में किया जाता, तो केवल नपुंसकलिंग, तटस्थ सर्वनाम "es" ('यह') ही बचता। वह अव्यक्तिगत होता और लक्ष्य तक नहीं पहुँचाता। यही बात बाइबल की मूल भाषाओं पर भी लागू होती है। उदाहरण के लिए आत्मा के लिए यूनानी शब्द, pneuma, नपुंसकलिंग है। परन्तु इब्रानी शब्द ruach स्त्रीलिंग है। जर्मन में इसे व्यक्त नहीं किया जा सकता, परन्तु परमेश्वर के आत्मा की बात करते समय कोई स्त्रीलिंग 'वह' या 'उसकी' कह सकता था (जर्मन: "Geistin", 'आत्मा' का गढ़ा हुआ स्त्रीलिंग रूप)। परन्तु यह भी ईश्वरीय व्यक्तियों को कोई लिंग नहीं दे सकता। यह हमें खटकता, शायद उलझन में डालता, क्योंकि हम पुल्लिंग व्यक्तिवाचक सर्वनामों के बस आदी हैं और कुछ और जानते ही नहीं। परमेश्वर के लिंग का प्रश्न भाषा से सुलझाया ही नहीं जा सकता, न बाइबल की भाषा से, न आधुनिक भाषा से।

128. मानवरूपता (Anthropomorphismus; यूनानी ἄνθρωπος anthrōpos 'मनुष्य' और μορφή morphē 'रूप, आकार' से) का अर्थ है पशुओं, देवताओं, प्रकृति की शक्तियों और ऐसी ही चीज़ों पर मानवीय गुणों का आरोपण (मानवीकरण)। ये मानवीय गुण आकार में भी और व्यवहार में भी दिखाई दे सकते हैं। Wikipedia

पुराने और नए नियम में परमेश्वर के लिंग का कोई ठोस संकेत नहीं है। इस पर इसलिए ज़ोर देना चाहिए, क्योंकि प्राचीन पूर्व और प्राचीन युग के देवता जान-बूझकर पुरुष और स्त्री थे। जीवन का चक्र लैंगिकता के द्वारा जीवित रखा जाता था। उर्वरता स्त्री-देवियों का आदर्श थी। लैंगिकता वह केंद्र थी, जिसके चारों ओर पूजा-पद्धतियाँ घूमती थीं। परन्तु याहवे (Jahwe), इस्राएल के परमेश्वर, के साथ ऐसा नहीं है। उसे न पुरुष कहा जाता है, न स्त्री। यहूदी विश्वास में, ठीक मसीही विश्वास की तरह, लैंगिकता किसी अनन्त, ब्रह्मांडीय लय का भाग नहीं है। लैंगिकता रची गई है। उसका एक आरंभ है और उसका एक अंत होगा।

“फिर भी पवित्रशास्त्र में परमेश्वर स्वयं को ‘हमारे प्रभु यीशु मसीह के परमेश्वर और पिता’ (इफिसियों 1:3) के रूप में प्रकट करता है, ‘माता’ के रूप में नहीं। परमेश्वर स्वयं को पिता-माता के मिश्रण के रूप में भी प्रस्तुत नहीं करता, मानो वह ‘पुरुषत्व’ और ‘स्त्रीत्व’ का मूर्त रूप हो। ‘पुरुषत्व’ और ‘स्त्रीत्व’ की धारणाएँ लिंगों के लैंगिक भेदों से अविभाज्य रूप से जुड़ी हैं। लैंगिकता और उसके लिंग केवल एक मूर्तिपूजक ब्रह्मांड-विज्ञान में ही अनन्त आत्मिक सिद्धांत हैं।”[129]

यदि परमेश्वर का कोई लिंग नहीं है और फिर भी उसका वर्णन पिता के रूप में किया गया है, तो चित्रों और भाषा को यूँ ही बदलकर “माता” नहीं रखा जा सकता। इसका अर्थ होगा एक भूल को – अर्थात् परमेश्वर को पुरुष प्राणी समझने को – दूसरी भूल से बदल देना। यही ‘न्यायसंगत भाषा में बाइबल’ (Bibel in gerechter Sprache, जर्मन बाइबल अनुवाद) में होता है, जिसमें “लिंग-निरपेक्ष” अनुवाद किया गया है।[130]

यद्यपि परमेश्वर को स्त्री-रूपी चित्रों की तुलना में कहीं अधिक पुरुष-रूपी चित्रों में प्रस्तुत किया गया है, फिर भी इससे लिंग के विषय में कोई निष्कर्ष नहीं निकाला जा सकता। यह कि कुल मिलाकर पुरुष-रूपी चित्र अधिक हैं और पुल्लिंग भाषा का प्रयोग होता है, इसका संबंध इस बात से भी हो सकता है कि बाइबल के लेखों की रचना एक पितृसत्तात्मक युग में हुई। पवित्रशास्त्र को भी ऐतिहासिक रूप से पढ़ना चाहिए, आज के लिए उसकी प्रासंगिकता और अधिकार को नकारे बिना।

9.2 तू अपने लिए कोई मूर्ति न बनाना

दस आज्ञाओं (डेकालॉग) की यह आज्ञा (निर्गमन 20:4) परमेश्वर के लिंग के प्रश्न को छूती है, यीशु में उसके प्रकट होने से पहले भी। मूर्ति-निषेध परमेश्वर की लैंगिकता को उसी प्रकार अस्वीकार करता है, जैसे यह तथ्य

129. R.K. McGregor Wright

130. वोल्फ़गांग हूबर (Wolfgang Huber) ने आलोचना की: “यह कि हर अनुवाद में सदा व्याख्या भी होती है, यहाँ उलट दिया गया है: व्याख्या को अनुवाद के रूप में प्रस्तुत किया जाता है। यह धर्मसुधार (रिफ़ॉर्मेशन) के पवित्रशास्त्र-सिद्धांत का उल्लंघन है। न्याय बाइबल का एक केंद्रीय विषय है। परन्तु न्याय के दृष्टिकोण से किसी बाइबल-पाठ को इस प्रकार तो नहीं मरोड़ा जा सकता कि, उदाहरण के लिए, जहाँ स्पष्ट रूप से बारह पुरुष अभिप्रेत हैं, वहाँ ‘स्त्री प्रेरित और प्रेरित’ लिखा जाए और पाठक को यह आभास हो कि इस मंडल में स्त्रियाँ भी थीं।” पेटर हाने (Peter Hahne): “एक लूथरन पत्रकार के मन को यह गहरी चोट पहुँचाता है कि उसके संशयी सहकर्मी उसका उपहास उसके पुनरुत्थान-विश्वास के कारण नहीं, बल्कि एक कट्टरपंथी नारीवाद की भावना से निकली सांप्रदायिक विशेष बाइबल के कारण करें।” Wikipedia, Bibel in gerechter Sprache के विषय में

कि परमेश्वर आत्मा है। दोनों सीधे जुड़े हुए हैं। परमेश्वर के अपने विषय में प्रसिद्ध कथन से भी: मैं वही होऊँगा जो मैं होऊँगा (निर्गमन 3:14), कोई लिंग नहीं निकाला जा सकता, न पुरुष, न स्त्री। स्त्री-लिंग निकालना नारीवादी धर्मविज्ञान की कुछ धाराओं का उद्देश्य है।

"बाइबल में परमेश्वर को बहुत बार एलोहीम (Elohim) कहा गया है। यह एक प्लूरालेटैंटम (Pluraletantum) है[131] – एक व्याकरणिक अभिव्यक्ति, जो ठीक ईश्वरीय गुणों की बहुलता के साथ – जो न पुल्लिंग हैं, न स्त्रीलिंग – न्याय करना चाहती है। क्योंकि हर समय और हर स्थान पर, संकट और दुःख की, परन्तु आनन्द और धन्यवाद की भी, अनगिनत भिन्न परिस्थितियों में, परमेश्वर के बहुत से चित्र हमारे मन में उभरते हैं।"[132]

9.3 परमेश्वर के स्त्री-रूपी चित्र

यहाँ मैं उदाहरण देता हूँ कि पवित्रशास्त्र परमेश्वर के स्त्री-पक्ष का वर्णन कैसे करता है:

वह माता, जो अपने बच्चों को दूध पिलाती है और उनकी देखभाल के लिए उत्तरदायी है (गिनती 11:12): "क्या मैं इस सारी प्रजा को गर्भ में लिए फिरा, या क्या मैंने इसे जन्म दिया, कि तू मुझसे कहता है: इसे अपनी गोद में उठाकर ले चल, जैसे पालनहार दूध-पीते बच्चे को उठाकर ले चलता है, उस देश तक, जिसकी शपथ तूने उनके पूर्वजों से खाई है?"

वह माता, जिसने इस्राएलियों को जन्म दिया (व्यवस्थाविवरण 32:18): "जिस चट्टान ने तुझे उत्पन्न किया, उसकी तूने उपेक्षा की, और उस परमेश्वर को भूल गया, जिसने तुझे जन्म दिया।"

प्रसव-पीड़ा में पड़ी वह स्त्री, जिसकी प्रबल साँस ईश्वरीय सामर्थ का चित्र है (यशायाह 42:14)। "मैं बहुत समय से चुप रहा, शान्त रहा, अपने को रोके रहा। अब जनने वाली स्त्री के समान मैं गहरी साँस लूँगा, हाँफूँगा और फुफकारूँगा भी।"

वह माता, जो इस्राएल को जन्म देती है और उसकी रक्षा करती है (यशायाह 46:3): "हे याकूब के घराने, और इस्राएल के घराने के सब बचे हुए लोगो, मेरी सुनो, तुम जो माता के गर्भ से ही उठाए गए, जन्म से ही ढोए गए हो!"

वह माता, जो उस बच्चे को नहीं भूलती, जिसे वह दूध पिलाती है (यशायाह 49:14-15): "क्या कोई स्त्री अपने दूध-पीते बच्चे को भूल सकती है, कि अपने गर्भ से जन्मे पुत्र पर दया न करे? हाँ, ये भी भूल जाएँ, तो भी मैं तुझे नहीं भूलूँगा।"

एक माता, जो अपने बच्चों को शान्ति देती है (यशायाह 66:13): "तुम गोद में उठाए जाओगे और घुटनों पर दुलारे जाओगे। जैसे किसी को उसकी माता शान्ति देती है, वैसे ही मैं तुम्हें शान्ति दूँगा।"

131. प्लूरालेटैंटम (Pluraletantum), बहुवचन-शब्द या केवल-बहुवचन संज्ञा, ऐसी संज्ञा है, जो केवल बहुवचन में प्रयुक्त होती है (उदाहरण: Ferien – छुट्टियाँ, Kosten – लागत, Leute – लोग)।
132. Lapide, Pinchas, Ist die Bibel richtig übersetzt, Gütersloh, 2004, 202

एक माता, जो अपने बच्चों को बुलाती है, सिखाती है, थामती है, चंगा करती है और खिलाती है (होशे 11:1-4)।

माता के और चित्र भजन संहिता 131:2; अय्यूब 38:8, 29; नीतिवचन 8:22-25; 1 पतरस 2:2-3; प्रेरितों के काम 17:28 में मिलते हैं।

इसी प्रकार बाइबल उन स्थानों का वर्णन करती है, जहाँ हम परमेश्वर का वर्णन स्त्रियों की सांस्कृतिक या सामाजिक गतिविधि के संबंध में पाते हैं:

एक दर्ज़िन, जो इस्राएल के लिए वस्त्र बनाती है (नहेमायाह 9:21)।

एक दाई, जो जन्म के समय उपस्थित रहती है (भजन संहिता 22:9-10; 71:6; यशायाह 66:9)।

अधिकार वाली एक स्त्री, जिसकी ओर उसकी दासी देखती है (भजन संहिता 123:2); एक स्त्री, जो ख़मीर से रोटी बनाती है (लूका 13:20-21)।

पवित्रशास्त्र किसी मादा पक्षी या पशु के चित्रों का प्रयोग करके भी परमेश्वर की बात करता है: परमेश्वर एक मादा पक्षी की तरह कार्य करता है, जो अपने बच्चों की रक्षा करती है (भजन संहिता 17:8; 36:7; 57:1; 91:1, 4; यशायाह 31:5; व्यवस्थाविवरण 32:11-12), एक उकाब की तरह (व्यवस्थाविवरण 32:11-12; निर्गमन 19:4; अय्यूब 39:27-30), एक मुर्गी की तरह (मत्ती 23:37; लूका 13:34; तुलना करें रूत 2:12) और एक रीछनी की तरह (होशे 13:8)।

परमेश्वर के स्वभाव के संबंध में स्त्रीत्व के सबसे आकर्षक संकेतों में से एक है नीतिवचन 1:20-33; 8:1–9:12 में बुद्धि का एक स्त्री के रूप में चित्रण।

9.4 पिता और पुत्र

यीशु के आने से पहले यह नहीं जाना जा सकता था कि परमेश्वर “तीन में एक” है। यह भी नहीं कि परमेश्वर अपने पुत्र का पिता उस अर्थ में है, जैसा यीशु के द्वारा ज्ञात हुआ। जब वचन देहधारी हुआ, तभी परमेश्वर ने स्वयं को अपने पुत्र में पिता के रूप में प्रकट किया। फिर भी वह ऐसा पिता नहीं है, जिसने किसी स्त्री के साथ अपने पुत्र को उत्पन्न किया हो। पिता, पुत्र और आत्मा सब अनन्त हैं, बिना आरंभ के। यह भाषा दिखाती है कि ईश्वरत्व के पहले और दूसरे व्यक्ति एक दूसरे से किस संबंध में हैं। यह उस संबंध को दिखाती है, जिसमें मनुष्य परमेश्वर के साथ हो सकते हैं। परन्तु यह वास्तविकता भी अनन्त पिता और अनन्त पुत्र को पुल्लिंग नहीं बना देती।

मुझे बोध है कि इन प्रश्नों पर इस रूप में कभी-कभार ही, या कभी नहीं, विचार किया जाता है। इस पुस्तक के ढाँचे में मैं इस विषय को उठाना आवश्यक समझता हूँ। फिर भी इस बोध के साथ कि जल्द ही सीमाओं से टकराना पड़ेगा।

9.5 अनन्त पुत्र की अधीनता?

इस पुस्तक में मैं यह तर्क देता हूँ कि स्त्री की पदानुक्रमिक अधीनता सदा पतन का परिणाम है और मूल, अपतित सृष्टि में उसका प्रावधान नहीं था। यह तब भी लागू होता है, जब परमेश्वर का वचन स्त्रियों को अधीन रहने के लिए कहता है। परन्तु इसे प्राचीन परिस्थितियों के संदर्भ में समझना चाहिए। इसका मैंने विस्तार से वर्णन किया है।

कुछ दशकों से अमेरिका के रूढ़िवादी सुसमाचारवाद में एक शिक्षा उभरी है, जो मेरे ऊपर दिए गए तर्क का खंडन कर सकती, यदि वह बाइबल के पाठों के अनुरूप होती। बात त्रिएक परमेश्वर की है और इस बात की कि पिता, पुत्र और पवित्र आत्मा एक दूसरे से किस संबंध में हैं। थोड़े शब्दों में यह शिक्षा कहती है कि ईश्वरत्व के तीनों व्यक्ति तत्व और महिमा में समान हैं। अपने अस्तित्व (सत्ता-विज्ञान, ऑन्टोलॉजी) में वे समान हैं। परन्तु एक दूसरे के संबंध में और सृष्टि के संबंध में वे अलग-अलग भूमिकाएँ निभाते हैं। इस प्रकार पुत्र "आरंभ से" पिता के अधीन है और आत्मा पिता और पुत्र के अधीन है। मसीह के देहधारण में, उसकी स्वैच्छिक दीनता में, वह व्यक्त होता है, जो अनन्तकाल में पहले से ही संबंध था।

आप सोच रहे होंगे कि इसका इस पुस्तक के विषय से क्या संबंध है? बहुत गहरा। क्योंकि यह "अनन्त पदानुक्रम" पुरुष और स्त्री की भूमिकाओं के लिए आदर्श का काम करे, ऐसा कहा जाता है। परिणामस्वरूप इसके अनुसार अपतित सृष्टि में ही एक स्पष्ट समान मूल्य दिखाई देता है, परन्तु ठीक उसी प्रकार भूमिकाओं का भिन्न बँटवारा भी, जिसमें पुरुष अगुवाई और शासन करने वाला सिर है, जिसके अधीन स्त्री रहती है। इस प्रकार, कहा जाता है, पुरुष और स्त्री सृष्टि से ही ऐसे बनाए गए हैं, विवाह, कलीसिया और समाज के लिए जाने-पहचाने परिणामों के साथ।

जर्मन-भाषी मसीही विचार-जगत और साहित्य से यह विचार मुझे ज्ञात नहीं है। परन्तु वेन ग्रूडेम (Wayne Grudem) के विस्तृत सुधारवादी (रिफ़ॉर्म्ड) धर्मसिद्धांत-ग्रंथ के साथ यह विचार अपने सब परिणामों सहित 2013 से जर्मनी में भी पहुँच गया है: "यहाँ विवाह में, ठीक वैसे ही जैसे त्रिएकता में पिता का पुत्र पर अधिकार है, पति का भी अपनी पत्नी पर अधिकार है। पति की भूमिका परमेश्वर पिता की भूमिका के समानांतर है, और पत्नी की भूमिका परमेश्वर पुत्र की भूमिका के समानांतर है। इसके अतिरिक्त, ठीक वैसे ही जैसे पिता और पुत्र ईश्वरत्व, महत्व और व्यक्तित्व में समान हैं, पति और पत्नी भी अपनी मनुष्यता, महत्व और व्यक्तित्व में समान हैं।"[133]

इस प्रकार इस धर्मसिद्धांत-ग्रंथ में, मानो एक "अनन्त भार" के साथ, अर्थात् ईश्वरत्व का हवाला देकर, सब स्त्रियों को प्राचीन-पद और प्रचार-सेवा जैसी अगुवाई की सेवाओं से बाहर कर दिया जाता है। जर्मनी में नई सुधारवादी धाराएँ इस शिक्षा के लिए सक्रिय रूप से और लगभग मिशनरी उत्साह के साथ प्रयास करती हैं।

133. GRUDEM, W., Biblische Dogmatik: Eine Einführung in die Systematische Theologie, XXIX, Theologisches Lehr- und Studienmaterial des Martin Bucer Seminars, VKW; arche-medien, Bonn; Hamburg 2013, 284–285.

यद्यपि यह बहिष्कार आरंभ से नहीं, परन्तु कम से कम 1700 वर्षों तक दुर्भाग्य से कलीसिया के इतिहास पर छाया रहा, फिर भी यह तर्क कभी प्रस्तुत नहीं किया गया।

इस अपेक्षाकृत नई शिक्षा पर इस ढाँचे में चर्चा नहीं की जा सकती। मैं केवल कुछ विचार-बिंदु देता हूँ और अपने समग्र विचार को इस शिक्षा पर आधारित नहीं करूँगा। इस प्रकार मैं अपने आरंभ-बिंदु पर, उत्पत्ति 1 और 2 पर, टिका रहता हूँ, जिसके प्रकाश में मैंने इस पुस्तक में नए नियम के प्रासंगिक बाइबल-पाठों की व्याख्या की है।

यदि पुत्र की यह अनन्त अधीनता – केवल उसके देहधारण से ही नहीं – सचमुच होती, तब भी इससे पुरुष और स्त्री की भूमिका अपने आप निर्धारित नहीं हो जाती। यह एक सादृश्य, एक तुलना होती, परन्तु कोई अनिवार्यता नहीं। यह कि पुत्र ने मनुष्य के रूप में पिता के प्रति समर्पण किया, इस पर कोई संदेह नहीं करेगा। परन्तु इस विषय के लिए यह बात महत्वपूर्ण बनी रहती है कि न पुत्र की किसी संभावित अनन्त अधीनता को, और न उसकी सामयिक अधीनता को, कभी पुरुष और स्त्री के संबंध और भूमिकाओं का – सामान्य रूप से या विवाह में – वर्णन करने के लिए आदर्श के रूप में लिया गया है। यीशु की दीनता के आदर्श पर निश्चय ही बहुत बार ज़ोर दिया जाता है, परन्तु सदा सब चेलों के लिए, लिंग पर किसी भी ज़ोर के बिना।

मसीही जगत में परमेश्वर के विषय में कोई अंगीकार या शिक्षा बनने में कुछ सदियाँ लगीं, अधिकतर झूठी शिक्षाओं की प्रतिक्रिया के रूप में। इस प्रकार अथानासियुस (Athanasius, चौथी सदी) ही थे, जिन्होंने त्रिएकता की शिक्षा को उत्कृष्ट रूप से गढ़ा, सूत्रबद्ध किया और उसकी रक्षा की। आज तक यह निर्विवाद रूप से मसीही धर्मसिद्धांत है।

मुझे आश्चर्यजनक लगता है कि पुरुष और स्त्री की भूमिका पर बहस में ऐसी शिक्षा सूत्रबद्ध की जाती है और इसके द्वारा स्त्री की अधीनस्थ भूमिका को स्थायी कर दिया जाता है। मेरे मन से यह संदेह नहीं हटता कि यहाँ "पूँछ कुत्ते को हिला रही है"। दूसरे शब्दों में, परमेश्वर के विषय में कौन-सी भारी शिक्षा को इस लिंग-भूमिका के प्रश्न के लिए काम में लाया जा रहा है? यह बात दर्ज करने योग्य है कि यह सब मनुष्य की सृष्टि के समय अज्ञात था और पुत्र के आने के साथ ही पहचाना जा सका। अदन में "परमेश्वर के स्वरूप" में यह ज्ञान अभी सम्मिलित नहीं हो सकता था।

मैं ऐसे निर्धारण को चिंताजनक मानता हूँ, जो ईश्वरत्व के विषय में एक अत्यंत दूरगामी कथन का साहस करता है। भले ही ऐसे निष्कर्षों के लिए कुछ संकेत हों, फिर भी इस धारणा के लिए मुझे स्पष्ट प्रमाण नहीं दिखते। इसके विपरीत के लिए भी संकेत हैं।

चौथे संस्करण में बाद की टिप्पणी: बहुत से पक्षों की प्रबल आपत्ति के कारण यह शिक्षा अब वापस ले ली गई है।



9.6 यीशु और उसके 12 चेले

यीशु भविष्यद्वाणियों में मसीहा और राजा के रूप में, मनुष्य के पुत्र के रूप में पहचाना जा सकता था। एक पुरुष के रूप में। ये वचन नासरत के उस पुरुष में पूरे हुए। पौलुस, मानो किसी पितृसत्तात्मक परिवार में, उसकी तुलना आदम से करता है, नई सृष्टि के सिर के रूप में।

अलेक्ज़ेंडर स्ट्राउख (Alexander Strauch) ज़ोर देते हैं कि यीशु को पुरुष ही होना था। इससे सहमत हुआ जा सकता है, परन्तु इससे पुरुष लिंग की श्रेष्ठता निकालना, जैसा वे करते हैं, सीधे-सीधे भ्रामक है।[134] वह सबसे पहले एक मनुष्य बना – वचन देहधारी हुआ, पुरुष नहीं! उनके विचार और इस सोच के सब प्रतिनिधि इस बात का उदाहरण हैं कि यूनानी दर्शन आज तक परमेश्वर की कलीसिया में कैसे घुसपैठ करने में सफल रहा है। और वह भी भक्ति के आवरण में।

134. Strauch, पृ. 42–44

पुरुष व्यक्तित्व परमेश्वर के उद्धार के इतिहास में प्रतीकात्मक और पूर्वरूपात्मक (टाइपोलॉजिकल) कार्य या भूमिकाएँ निभाते हैं। इसमें बात पुरुष लिंग को ऊँचा उठाने की नहीं है, तब भी नहीं, जब बार-बार यह आभास होता है। मैं यीशु के कार्य में उद्धार के इतिहास से जुड़े कार्य और उद्धार देने के कार्य के बीच अंतर करूँगा। पहले के लिए यह आवश्यक था कि वह पुरुष हो। उद्धार की रचना के लिए लिंग का कोई महत्व नहीं था। दूसरे शब्दों में, तीखे ढंग से कहें तो, एक स्त्री भी क्रूस पर उद्धार संपन्न कर सकती थी।

यीशु ने 12 चेले चुने, सब पुरुष। उस समय की पुरुष-प्रधान संस्कृति में यह सामान्य था। परन्तु इस्राएल के 12 गोत्रों के प्रतिनिधियों के रूप में उनका पुरुष होना आवश्यक था। "यीशु ने पुरुष प्रेरितों को उसी कारण से चुना, जिस कारण से उसने बारह यहूदी प्रेरितों को चुना। जिस मात्रा में यीशु के अनुयायी नए इस्राएल का प्रतिनिधित्व करते हैं, उसी मात्रा में यीशु के बारह प्रेरित पूर्वरूपात्मक रूप से इस्राएल के बारह गोत्रों का, और विशेषकर उन बारह कुलपतियों (याकूब के पुत्रों) का प्रतिनिधित्व करते हैं, जिनसे इस्राएल राष्ट्र निकला है। विट (Witt) बताते हैं कि बारह पुरुष प्रेरित इस्राएल के इतिहास को पूर्वरूपात्मक निरंतरता और पूर्ति देते हैं। 'बारहों को स्वतंत्र यहूदी पुरुष होना था, न कि दास, स्त्रियाँ या अन्यजाति, ताकि वे अपनी पूर्वरूपात्मक भूमिका का प्रतीकात्मक कार्य पूरा कर सकें'।"

यीशु ने 12 पुरुषों को बुलाया। जो इस बात का हवाला देता है कि केवल पुरुष ही हो सकते हैं, उसे केवल गलीली या यहूदी पुरुषों पर ही विचार करना चाहिए। ऐतिहासिक, भविष्यसूचक, सांस्कृतिक, परन्तु एक बार की परिस्थिति की माँग थी कि उसके चेले पुरुष हों, यहूदी हों। इसलिए यह कभी भी यीशु मसीह की विश्वव्यापी कलीसिया के लिए दिशा-निर्देश या मानक नहीं हो सकता, जो सब जातियों में से बनाई जाती है।

बारह की संख्या 12 विद्यार्थियों वाली किसी कक्षा की याद नहीं दिलाती, बल्कि मसीहा-आंदोलन के व्यापक स्वरूप की ओर भी संकेत करती है, जो किसी को पीछे नहीं छोड़ता और जिसमें स्त्रियाँ भी सम्मिलित थीं। उल्लेखनीय है कि बारहों को कभी पुरुष नहीं कहा गया। यीशु के पीछे चलने में सब सीखने वाले थे, सब शिष्य। यीशु की उपस्थिति में स्त्रियों के प्रति पुरुषों के दंभ के लिए कोई स्थान नहीं था।

पुरुष-केंद्रितता (एंड्रोसेंट्रिज़्म), अर्थात् बाइबल का अधिकतर पुल्लिंग दृष्टिकोण और बोलने का ढंग, निश्चित रूप से स्त्रियों की क़ीमत पर नहीं है। इससे उन्हें पीछे नहीं किया जाता।

पुरुष यीशु ने स्त्रियों को असाधारण और क्रांतिकारी ढंग से महत्व और आदर दिया। उसने स्त्रियों को उनकी गरिमा लौटा दी। रिचर्ड बॉकम (Richard Bauckham) यीशु की क़ब्र पर आई स्त्रियों के विषय में लिखते हैं: परमेश्वर स्त्रियों को प्रकाशन पाने वालियों के रूप में, और इस प्रकार पुरुषों तक इस प्रकाशन को पहुँचाने वालियों के रूप में, प्राथमिकता देता है। क्या यह उस अंतिम-कालीन (एस्केटोलॉजिकल) स्थिति-उलटाव का भाग नहीं है, जिसमें परमेश्वर अंतिम को पहला और पहले को अंतिम बनाता है, ताकि कोई परमेश्वर के सामने घमंड न कर सके?

9.7 निष्कर्ष

“हमारा निष्कर्ष यह होना चाहिए कि परमेश्वर के स्वभाव की मूल प्रकृति की हमारी समझ पर पुरुषत्व और स्त्रीत्व की धारणाओं के प्रभुत्वशाली प्रभाव के लिए कोई बाइबलीय आधार नहीं है। परमेश्वर ‘वह’ (पुल्लिंग) है, क्योंकि परमेश्वर व्यक्तिगत है, और हमारा पिता है, क्योंकि परमेश्वर एक प्रेम करने वाले पिता की तरह कार्य करता है। वह न पुरुष है, न स्त्री, न दोनों का मेल। लिंग-विशिष्ट परमेश्वर की धारणाएँ बहुत-सी मूर्तिपूजक धारणाओं की विशेषता हैं, परन्तु बाइबलीय मसीहियत में वे अनुपस्थित हैं।”[135]

पुरुष, और ठीक वैसे ही स्त्रियाँ, बाइबल पढ़ते समय अब्राहम, मूसा, दाऊद और एलिय्याह जैसे पुरुषों के साथ स्वयं को जोड़ते हैं। क्या हम पुरुष भी उसी प्रकार दबोरा, राहाब, रूत या मरियम जैसी स्त्रियों के साथ स्वयं को जोड़ते हैं? आइए, हम एक बार जान-बूझकर बाइबल और उसकी कहानियों को स्त्रियों के दृष्टिकोण से पढ़ें। आइए, हम जान-बूझकर स्त्रियों की कहानियाँ पढ़ें और उन्हें युवाओं तक और अपने प्रवचनों में आगे पहुँचाएँ।

135. वही।

10 मेरा पाप-स्वीकार

स्त्रियों के प्रति हम पुरुषों के अपराधों का योग बड़ा है। अधिकतर इस भावना के साथ कि हम परमेश्वर और उसके वचन के प्रति विश्वासयोग्य हैं। बात एक विवादित धर्मवैज्ञानिक दृष्टिकोण से कहीं अधिक की है। व्यक्तिगत रूप से मैं स्वयं को एक खुले और साथ ही निर्मम पाप-स्वीकार के लिए बुलाया हुआ पाता हूँ। पश्चाताप नए जीवन और जागृति का अवसर है। मेरी आशा है कि प्रभु में बहुत से भाई इस अंगीकार के साथ स्वयं को जोड़ेंगे और यह मसीह में बहनों के कानों और हृदयों तक पहुँचेगा, परमेश्वर के आनन्द के लिए।

हे परमेश्वर, याहवे एलोहीम (Jahwe Elohim), पुरुष और स्त्री के सृष्टिकर्ता, मुझे क्षमा कर कि मैंने ऐसा सोचा, ऐसी माँग की और ऐसा व्यवहार किया, मानो स्त्री समान दर्जे की नहीं, बल्कि निचले दर्जे की हो। कोई समकक्ष साथी नहीं, बल्कि मुझसे एक सीढ़ी नीचे।

हे प्रभु यीशु, मुझे क्षमा कर कि मैंने सोचा कि स्त्रियों को चुप रहना चाहिए और सार्वजनिक जीवन से दूर रहना चाहिए।

मुझे क्षमा कर कि मैंने सोचा कि तू चाहता है कि वे सार्वजनिक रूप से तेरी और तेरे सत्य की शिक्षा न दें।

मैं अपनी पत्नी के सामने, अपनी माता के सामने, अपनी सगी बहनों के सामने और प्रभु में सब सहेलियों के सामने, परमेश्वर के राज्य की सब सहकर्मियों के सामने, उन सब बहनों के सामने, जिनके साथ मैं अनगिनत सभाओं के घंटों में बैठा हूँ, यह स्वीकार करता हूँ कि मैंने आपको पदानुक्रम में पुरुष के अधिकार के अधीन देखा है!

मुझे इस ग़लत दृष्टिकोण के लिए क्षमा कीजिए, जिसके विषय में मैं सोचता था कि वह ईश्वरीय और बाइबलीय है!

हमें क्षमा कीजिए कि हमने महत्वपूर्ण बहसों और प्रश्नों पर आपके बिना चर्चा की और निर्णय लिए। हमने आपकी सलाह नहीं ली! हम अपने ही संसार में जीते रहे, मानो वही एकमात्र या सबसे महत्वपूर्ण संसार हो।

मैं स्वीकार करता हूँ कि हम पुरुष असफल रहे हैं। हम अक्सर, और बिना इसका एहसास किए, स्वार्थी, प्रभुत्व जमाने वाले और भेदभाव करने वाले ‘माचो’ और सब कुछ बेहतर जानने का दावा करने वाले थे।

अपने विषय में अंधे। आप स्त्रियों के विषय में और आपकी बुलाहटों और वरदानों के विषय में अंधे। और इसलिए इस विषय में परमेश्वर के विषय में भी अंधे, जो आपका सृष्टिकर्ता है।

हमें क्षमा कीजिए, जहाँ हम कायर थे और आपको आगे कर दिया और आप पर निर्भर रहे, जहाँ हमें डटकर खड़ा होना और आगे चलना चाहिए था और आपने उचित रूप से इसकी अपेक्षा की थी।

हमें हमारी उदासीनता के लिए क्षमा कीजिए – उस बात के प्रति, जो आपके लिए कठिन थी और जिसे आप कभी समझ नहीं पाईं। हमने आपसे कभी नहीं पूछा कि आपको इसमें कैसा लगता है।

हमें क्षमा कीजिए कि हमने इन भेदभावपूर्ण दृष्टिकोणों और शिक्षाओं के विषय में आपकी भावनाएँ नहीं पूछीं।

हमें खेद है। हम ग़लत थे।

स्वतंत्र हो जाइए! आनन्द के साथ प्रभु की सेवा कीजिए!

यथास्थिति के आदी मत बनिए! उठ खड़ी होइए!

भले ही परंपराओं के बदलने में समय लगता है, हम अभी आरंभ करना चाहते हैं और अब और समय नहीं गँवाना चाहते।

हम आपका साथ देंगे – ठीक वैसे ही, जैसे आपने सदा हमारा साथ दिया है, उस सबके बावजूद जो हमने किया।

हम इसकी भरपाई कैसे कर सकते हैं?

यीशु मसीह का क्रूस पापी का एकमात्र शरणस्थान है, जहाँ वह क्षमा और छुटकारा अनुभव कर सकता है। मसीही के लिए भी यह वह आत्मिक स्थान है, जहाँ वह अपनी क्षमा का निश्चय पा सकता है। वह स्थान, जहाँ याहवे एलोहीम ने स्वयं हमारे पापों को अपनी देह पर लिए हुए काठ पर उठाया। और जहाँ पापी एक दूसरे से मिलते हैं और एक दूसरे को क्षमा का वचन देते हैं।



जब पवित्र आत्मा हमारे हृदय और विवेक को प्रकाशित करता है और पाप का अंगीकार आवश्यक हो जाता है और पश्चाताप ही एकमात्र अगला क़दम होता है, तब क्रूस के सामने ही वह स्थान है, जहाँ पुरुष और स्त्रियाँ

एक दूसरे से मिलते हैं। एक दूसरे को क्षमा करने और मेल-मिलाप के लिए, स्वतंत्रता और चंगाई के लिए।

“पितृसत्तात्मक सोच से स्त्रियों के प्रति मित्रतापूर्ण सोच तक पहुँचना कोई आसान मार्ग नहीं है। इसके लिए आवश्यक है कि हम वह सब, जो हम अपने संसार और उसके काम करने के ढंग के विषय में, अपने विश्वास और परमेश्वर के साथ, एक दूसरे के साथ और अपने ब्रह्मांड के साथ अपने संबंध के विषय में समझते थे, नए सिरे से कल्पना करें। यह उतना ही कठिन परिवर्तन है, जितना हमारे पूर्वजों के लिए ब्रह्मांड की पृथ्वी-केंद्रित समझ से सूर्य-केंद्रित समझ तक पहुँचना था। जिन पहले वैज्ञानिकों ने यह सुझाव दिया कि पृथ्वी सूर्य के चारों ओर घूमती है, न कि इसका उल्टा, उन्हें बहिष्कृत कर दिया गया, क्योंकि माना गया कि इससे परमेश्वर की सामर्थ को ख़तरा है! इसी प्रकार एक पितृसत्तात्मक विश्व-दृष्टि से अलग होना बहुत कठिन है, जिसमें यह सामान्य माना जाता है कि स्त्रियों पर पुरुषों का प्रभुत्व हो और व्यवस्थाएँ और संस्थाएँ पुरुषों द्वारा संगठित और संचालित हों। एक समान अधिकार वाली, समानतावादी विश्व-दृष्टि वह विश्व-दृष्टि है, जो स्त्रियों और पुरुषों को परस्पर संबंध में देखती है, जो शक्ति को बाँटते हैं, एक दूसरे के वरदानों को पहचानते हैं, बढ़ावा देते हैं और स्वतंत्र करते हैं। और एक दूसरे से समान आदर और समान गरिमा के साथ मिलते हैं।”[136]

“जिसे सुसमाचार की आत्मा ने पकड़ लिया है, वह इस बात से सहमत होगा कि एक पितृसत्तात्मक भूमिका-समझ, जो स्त्रियों पर संरक्षकता थोपती है और उन्हें परमेश्वर के राज्य के लिए पंगु बनाती है, न केवल अन्याय है, बल्कि उसने परमेश्वर की कलीसिया को अकथनीय हानि पहुँचाई है। भले ही यह कभी नीच उद्देश्यों से, सत्ता-संघर्ष की भावना से, या जान-बूझकर अपमानित करने के लिए नहीं हुआ, बल्कि बहुत बार पवित्रशास्त्र की एक दुखद ग़लतफ़हमी के कारण हुआ, फिर भी अब समय आ गया है कि अपमानजनक परंपराओं पर साहस के साथ प्रश्न उठाया जाए और उनसे मुँह मोड़ा जाए, ताकि स्त्रियाँ भी अपने पाँव ‘चौड़े स्थान में’ रख सकें और यीशु मसीह के द्वारा प्राप्त किए गए पूर्ण छुटकारे को अंततः धन्यवाद के साथ अनुभव कर सकें।”[137]

“भीतर से स्वस्थ पुरुष अपनी ओर से सब कुछ करेगा, ताकि अपने साथ की स्त्री को प्रेम के द्वारा उसकी बुलाहट में ले जाए।” वेरोनिका श्मिट (Veronika Schmidt)

एक असाध्य रोग की तरह, अति प्राचीन, दृढ़ और गहराई तक जड़ जमाए हुए और हर ओर फैल चुके खरपतवार की तरह, मसीही पुरुषों की स्त्री-छवि आरंभ से ही उनके परिवेश की, और दुर्भाग्य से उनके हृदय की भी, प्रतिध्वनि है। जान-बूझकर और अनजाने में, कठोर रूप में, संयमित रूप में, यहाँ तक कि प्रेमपूर्ण ढंग से भी जिया गया हो, फिर भी बाइबलीय और इस प्रकार ईश्वरीय सत्य की ओर लौटने के अतिरिक्त कोई और विकल्प नहीं है, जो अकेला ही स्वतंत्र करता है।

136. Reid, Barbara E., पृ. 7, Wisdom's Feast, 2016
137. Krüger, Hartmut, पृ. 183, Frauen im Pietismus, Marburg, 2005

11 निष्कर्ष और आगे की दृष्टि

अपने अनुभव से – अर्थात् सीमित और व्यक्तिपरक रूप से – मैं इस निष्कर्ष पर पहुँचता हूँ कि “स्त्रियों के प्रश्न” (इसे लगभग केवल पुरुष ही ऐसा कहते हैं) के प्रति दृष्टिकोण में मानसिकता, कलीसियाई परिवेश और पृष्ठभूमि निर्णायक भूमिका निभाते हैं।

उन कलीसियाओं में, जिनमें स्त्रियाँ चुप रहती हैं, और दृढ़ विश्वास के साथ ऐसा करती हैं, मानवीय दृष्टि से इस व्यवहार के समाप्त होने की अपेक्षा कठिनाई से ही की जा सकती है। सोच के ढर्रे पीढ़ियों से बने हुए और जड़ हो चुके हैं। वे गढ़ हैं। ऐसे मंडलों में ऐसी आदतों और परंपराओं को बदलना “विश्व के नियमों को हिलाने” जैसा लगता है।

निश्चय ही हर बात का आधार “बाइबल के प्रति निष्ठा” और आज्ञाकारिता बताया जाता है। पर क्या सचमुच कोई बाइबल के प्रति निष्ठावान है, या बाइबल की अपनी व्याख्या के प्रति? परन्तु यह प्रश्न पूछा जाना चाहिए: क्या हम ग़लत हो सकते हैं?

यही बात उन कलीसियाओं पर भी लागू होती है, जिनमें स्त्रियाँ सेविका (डीकन) या प्राचीन नहीं हो सकतीं। वहाँ, जहाँ उन्हें अगुवाई के सब या कुछ कार्यों से बाहर रखा जाता है। वहाँ भी, जहाँ वे प्रचार नहीं कर सकतीं और शिक्षा नहीं दे सकतीं।

क्या ऐसा हो सकता है कि स्त्री और पुरुष की समानता और समान अधिकारों के विषय में हमारा समाज (हमारी सामाजिक व्यवस्था) और हमारा क़ानून रूढ़िवादी, बाइबल के प्रति निष्ठावान मसीहियों के दृष्टिकोण से अधिक बाइबलीय हो?

क्या होगा, यदि समान अधिकारों का क़ानून और किसी एक लिंग के प्रति भेदभाव का निषेध एक दिन सब क्षेत्रों में – सुसमाचारवादी कलीसियाओं और स्वतंत्र कलीसियाओं में, रूढ़िवादी प्रकार वाली कलीसियाओं में भी – स्त्रियों के लिए समान अधिकारों की माँग करे? शायद स्त्रियों के लिए कोटा माँगे? क्या तब पुरुष और स्त्री के विषय में हमारा पितृसत्तात्मक और मूल रूप से मध्ययुगीन दृष्टिकोण कुछ ऐसा है, जिसके लिए हम दुःख उठाएँगे? जिसके लिए हम बंदीगृह जाएँगे? निश्चय ही राज्य को कलीसिया में यह निर्धारित करने का कोई अधिकार नहीं है, परन्तु क्या होगा, यदि वह यह अधिकार अपने हाथ में ले ले और परिणामों की धमकी दी जाए?

हम पुरुषों को पश्चाताप करना चाहिए कि हमने अब भी नहीं समझा कि परमेश्वर ने आरंभ में पुरुष और स्त्री की भूमिका और संबंध को कैसे रचा। बहुत से मामलों में यह समझ बाइबल से बिल्कुल नहीं आई, बल्कि संस्कृति और समाज से बनी है। हम इस गहरे संबंध को आख़िर कब पहचानेंगे? कोई संसार की निंदा करे और साथ ही सांसारिक व्यवहार-ढर्रों को बाइबलीय घोषित करे, यह नहीं हो सकता।

आत्मा की स्वतंत्रता और मूल सृष्टि की व्यवस्था कब आएगी? जिसमें परमेश्वर के राज्य में और उसकी कलीसिया में सेवा, कार्यभार और बुलाहट को लिंग निर्धारित नहीं करता। बल्कि वरदान, योग्यता, चरित्र और विश्वासयोग्यता, और व्यक्तित्व और शिक्षा भी। सीधे-सीधे आत्मिक क्षमता: सेवा के लिए तत्परता और नम्रता, हृदय की भक्ति और आत्मिक अधिकार, जो आदेश से थोपा या प्रदान नहीं किया जाता, बल्कि देखा, पहचाना और सराहा जाता है। यह उन सब कलीसियाओं के लिए आशीष की एक सफलता होगी, जिन्होंने सांसारिक रूपों में – न कि आत्मिक, बाइबलीय और ईश्वरीय रूपों में – स्त्रियों की भूमिका निर्धारित की और उसमें कटौती की है।

इसके द्वारा मैंने अपना उत्तरदायित्व पूरा किया है और मैं स्वयं को उन रूपों से अलग करता हूँ, जो पवित्रशास्त्र से नहीं, बल्कि एक पतित संसार से आते हैं। ऐसे दृष्टिकोण, जिन्हें स्वयं मसीहियों ने, पुरुषों ने – जिनमें मैं भी हूँ –, कलीसियाओं में "बपतिस्मा देकर" भीतर लाया और धार्मिक बना दिया। ठीक यही साँप ने, भरमाने वाले ने, कर दिखाया है: बहुत से स्थानों पर स्त्रियों के अपरिहार्य योगदान को दबा देना या समाप्त कर देना। आदम और हव्वा मिलकर परमेश्वर के स्वरूप के वाहक थे। मसीह की देह का काम करना भी इसी प्रकार होता है। या फिर वह वैसे काम नहीं करती, जैसे मसीह चाहता है।

आइए, हम पुरुष स्त्रियों के प्रति यीशु के व्यवहार में उसके पदचिह्नों पर चलें। लौटने का एक मार्ग है। परमेश्वर क्षमा और एक नई शुरुआत देता है। इन प्रश्नों में भी।

परन्तु केवल पश्चाताप के साथ। मन फिराने और सोच बदलने के साथ ही हम साँप के उस विष का सामना कर सकेंगे, जिससे उसने हज़ारों वर्षों तक परमेश्वर की प्रजा और सारे संसार को धोखा दिया है, अर्थात् यह कि पुरुष का स्त्री पर अधिकार है।

हृदय से सोच का बदलना एक क्षण में हो सकता है, परन्तु वर्षों भी ले सकता है। मैं ये पंक्तियाँ 56 वर्ष की आयु में लिख रहा हूँ। मैंने इसका पूर्वानुमान नहीं किया था। 5 वर्ष पहले मैं यह अभी नहीं लिखता। इसलिए मैं किसी पर दोष नहीं लगाता। अधिक से अधिक स्वयं पर, कि इस प्रश्न में मैंने चार दशक खो दिए। पौलुस को अपनी नाटकीय मसीह-भेंट और मन फिराव के ठीक बाद अरब में तीन वर्ष लगे, ताकि वह फ़रीसी सोच के बोझ और मलबे से – अपनी स्त्री-छवि के संबंध में भी – मुक्त हो सके। परन्तु यह सफल हुआ। और आज भी यह सफल हो सकता है।

पास्टरीय दृष्टि से इस चंगाई और मुक्ति का पुनःस्थापित करने वाला, सुधारने वाला और चंगा करने वाला प्रभाव मुश्किल से आँका जा सकता है, क्योंकि यह परमेश्वर के वचन की खरी और इसलिए खरा करने वाली शिक्षा है। यदि विवाह स्त्री पर पुरुष के अधिकार के मिथक से मुक्त हो जाएँ। यदि कलीसियाएँ और चर्च अंततः अपनी पूरी क्षमता का उपयोग करें।

आइए, हम इन विषयों में अपनी प्रिय सहज प्रतिक्रियाओं और शत्रु-छवियों को अंततः पीछे छोड़ दें। हमारी पत्नियाँ और बेटियाँ, हमारी माताएँ और सगी बहनें और आत्मिक बहनें स्वर्ग का एक विचार हैं। जो उन्हें छूता है, उन्हें चुप रहने का दंड देता है, वह दोषी ठहरता है। उस महान दिन हम क्या उत्तर देंगे, जब याहवे एलोहीम हमसे लेखा माँगेगा?

डटे रहने के नारे ऐसी ही एक प्रिय सहज प्रतिक्रिया हैं: आइए, हम वचन पर बने रहें! और "वचन पर बने रहने" को "वचन की अपनी समझ पर बने रहने" के साथ उलझा दिया जाता है। हम पुरुषों को हथियार डालने होंगे और यह मानना होगा कि उस पुराने साँप को यीशु के नाम में हराया जा सकता है। पश्चाताप दूरदृष्टि वाली सबसे अच्छी अंतर्दृष्टि है! परमेश्वर की कलीसिया में सांसारिक और इसलिए पापपूर्ण व्यवस्थाओं के लिए लड़ने का अब कोई अर्थ नहीं है।

जब स्त्रियाँ स्वतंत्र होती हैं, तो पुरुष भी स्वतंत्र होते हैं।

प्रभु परमेश्वर, याहवे एलोहीम, हम पर अनुग्रह करे!

बाइबल के पाठों की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को अनदेखा करने का परिणाम यह नहीं होता कि कोई पाठों के शब्दों पर टिका रहता है; बल्कि यह कि बाइबल के शब्द अपने वर्तमान की सांस्कृतिक मान्यताओं का प्रक्षेपण-पटल बन जाते हैं।

बहुत से सुसमाचारवादियों को जो एक अनन्त बाइबलीय सत्य के रूप में सुनाया गया, वह वास्तव में उन्नीसवीं और बीसवीं सदी की उपज है। हर कोई इसकी जाँच कर सकता है।

कोई विवादित प्रश्नों में अलग-अलग दृष्टिकोणों की गंभीर चर्चा करना भी कैसे सीखे, यदि उसने दशकों तक यह अभ्यास किया हो कि विश्वास-धारणाओं का प्रतिनिधित्व न करे, बल्कि धर्मसिद्धांतीय अंगीकारों को थोपे?

थॉर्स्टन डीट्ज़ (Thorsten Dietz)

11.1 संकेत और सुझाव

विवाद को देखते हुए हम बाइबलीय सिद्धांतों को कैसे लागू करें, ताकि आज मसीह की कलीसिया में ये निष्कर्ष वास्तविकता बन सकें?

आज कलीसियाओं और चर्चों में एक बड़ी समस्या अनुग्रह के स्वभाव और पवित्र आत्मा के कार्य की एक गहरी ग़लतफ़हमी है। जब तक व्यवस्थावाद और परंपरा को मसीह के सुसमाचार के साथ उलझाया जाता रहेगा, परिवर्तनों के बाद सदा विभाजन होते रहेंगे। इसलिए हमें कलीसियाओं में शुभ संदेश सुनाने के लिए परिश्रम से काम करना होगा। हमें स्पष्ट रूप से व्यवस्थावाद की भूलों की ओर संकेत करना होगा और परमेश्वर के अनुग्रह के सत्य को साफ़-साफ़ कहना होगा।

जबकि बहुत से लोग ऐसी शिक्षा को उदारवादी (लिबरल) मानेंगे, वास्तव में यह पौलुस के कार्य की केवल पुनरावृत्ति है। पौलुस ने अपने जीवन का अधिकांश भाग यहूदीवादी शिक्षकों को सुधारने में लगाया, जो मूसा की व्यवस्था की ओर लौटना चाहते थे। हमें पौलुस के पीछे चलना चाहिए और उन्हें सुधारना चाहिए, जो पुराने नियम के धर्मविज्ञान की ओर लौटना चाहते हैं (केवल पुरुष याजक, रूपों और बाहरी बातों का पालन और उनका अति-मूल्यांकन, भूलों का भय, अंधी आज्ञाकारिता, आदि)। परन्तु हमें सत्य प्रेम में बोलना चाहिए।

फिर भी हमें समझना होगा कि भाई-बहनों को नए विचार स्वीकार करने में समय लगता है। एक खुले विचारों वाले व्यक्ति के लिए भी सोच के एक क्रांतिकारी परिवर्तन में, जब तक वह उसमें सहज न हो जाए, बहुत वर्ष लग सकते हैं। जब मुझे चश्मे का नया नुस्ख़ा मिलता है, तो नए, बेहतर शीशे मुझे सचमुच पुराने, धुँधले शीशों से बुरे लगते हैं, जब तक कि मैं उन्हें कुछ दिन पहन न लूँ। हमें धैर्य रखना होगा। हो सकता है कि व्यवहार शिक्षा की नई समझ के पीछे कई वर्षों बाद ही आए।

विभाजन अनिवार्य नहीं हैं, परन्तु ख़तरा बहुत बड़ा है। यदि कलीसियाएँ व्यवस्थावाद को अस्वीकार नहीं करतीं और क्रूस की ओर नहीं मुड़तीं, तो अलगाव और विभाजन होंगे। एकमात्र दूसरा समाधान यह है कि कुछ न बदला जाए। और फिर अपने ही बच्चों को भी खो देना।

परिवर्तन आवश्यक और अनिवार्य है। हम आधे से कहीं अधिक विश्वासियों को पूर्ण अधिकार वाले मसीही होने के अधिकार से वंचित नहीं कर सकते। यह उनके "अधिकारों" के कारण नहीं है। बल्कि परमेश्वर को कार्यकर्ताओं की आवश्यकता है। भूखों को भोजन देना है, बच्चों को पालना है और लोगों का उद्धार होना है। जब हम मसीह की देह के इतने सारे अंगों को कलीसिया के निर्णयों या अगुवाई में भाग लेने के अधिकार से वंचित करते हैं, तो हम शैतान की सेना के सामने एकतरफ़ा रूप से अपने हथियार डाल देते हैं। कल्पना कीजिए कि आप एक शत्रु सेना के सामने खड़े हैं, और फिर आप मुड़कर अपने ही सबसे अच्छे अधिकारियों में से अधिकांश के हथियार छीन लेते हैं, इस डर से कि कहीं सेना के नियमों का उल्लंघन न हो जाए। हमें इस बात की चिंता करनी चाहिए कि हम शैतान का सामना कैसे कर सकते हैं, और अपने अगुवों, शिक्षकों, वक्ताओं और प्रबंधकों के चुनाव की चिंता परमेश्वर पर छोड़ देनी चाहिए।

अंततः हम केवल इतना ही कर सकते हैं, बाक़ी परमेश्वर पर निर्भर है। यीशु ने भी अधिकतर फ़रीसियों के हृदय नहीं बदले, परन्तु उसने इतने हृदय बदल दिए कि संसार का इतिहास नए सिरे से लिखा गया। हम केवल बो सकते हैं। बढ़ाना परमेश्वर का काम है।

वास्तविक परिवर्तन तब आते हैं, जब लोग इस योग्य बनाए जाते हैं कि वे अपनी सोच और अपनी ऊर्जा को एक नए ढंग से लगाएँ, सोचने का एक दूसरा ढाँचा और एक दूसरी भाषा अपनाएँ और भविष्य के लिए ताज़ा दर्शन रखें।

पुरुष और स्त्री के रूप में

प्रेम करना, अगुवाई करना और शिक्षा देना

साथ मिलकर बेहतर!

एक साथ बेहतर!

एक दूसरे के संग बेहतर!

और मैं चौड़े स्थान में चलूँगा, क्योंकि मैंने तेरे उपदेशों की खोज की है।

भजन संहिता 119:45

12 अन्तर

मार्लिन बी. स्मिथ (Marilyn B. Smith) की, इंग्रिड केर्न (Ingrid Kern) द्वारा संपादित पुस्तक Ohne Unterschied; Frauen und Männer im Dienst für Gott, 2005, से मैंने दो संकलन और रेखाचित्र स्कैन किए हैं। वे एक अच्छा सिंहावलोकन देते हैं कि पूरकता के दोनों दृष्टिकोण – एक बार पुरुष और स्त्री के बीच पदानुक्रम या एकतरफ़ा अधीनता के साथ, और एक बार उसके बिना – कैसे समझे जाते हैं और उनका आधार कैसे दिया जाता है। यहाँ उन्हें पदानुक्रमिक मॉडल और वरदान-केंद्रित मॉडल कहा गया है।

मैं ये दोनों मॉडल इसलिए नहीं दिखा रहा कि कोई इनमें से एक को चुन ले, बल्कि इसलिए कि हर कोई अपने लिए पहचान ले कि वह – जान-बूझकर या अनजाने में – किस मॉडल का प्रतिनिधित्व करता है।

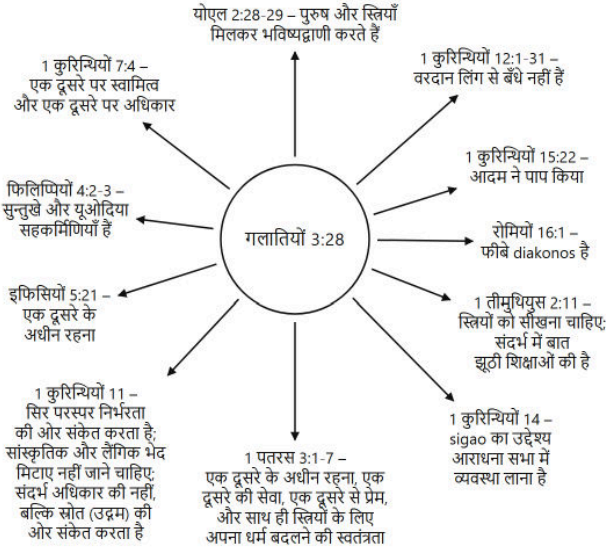
12.1 वरदान-केंद्रित मॉडल

उद्धार के इस नए दृष्टिकोण में निम्नलिखित अर्थ मान लिए जाते हैं:

ʿezer kᵉnägdo	समान मूल्य की सहायक का अर्थ है "आमने-सामने; एक दूसरे के लिए उपयुक्त"
kephale	सिर का अर्थ है "स्रोत"
authentein	इसे एक दुर्लभ रूप से प्रयुक्त शब्द समझा जाता है, जो प्रभुत्व जमाने की ओर संकेत करता है
sigao	इसका अर्थ है ध्यान से सुन पाने के लिए स्वेच्छा से शांत रहना
hypotasso	इसका अर्थ है स्वेच्छा से अपने आप को व्यवस्था में ढालना / किसी के साथ जोड़ना, और इसका प्रयोग एक दूसरे के अधीन रहने के संदर्भ में होता है

मुख्य बाइबल-अंश के रूप में गलातियों 3:28 दिया जाता है, जो मसीह में सब मनुष्यों की समानता की ओर संकेत करता है और जिसे आत्मिक और व्यावहारिक दोनों रूपों में समझना चाहिए, क्योंकि मसीह में हमारी नई पहचान को प्रतिदिन जीना, उसमें हमारे जीवन की अनंत वास्तविकता से अलग नहीं किया जा सकता।

वरदान-आधारित मॉडल के पक्ष में दी जाने वाली मान्यताओं का सारांश

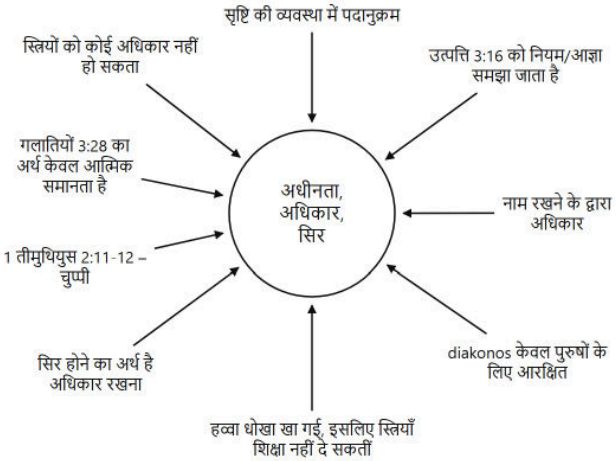


पुरुष और स्त्री दोनों समान रूप से परमेश्वर के स्वरूप में सृजे गए हैं; ताकि वे संगति में जीवन बिताएँ और इस संगति की सेवा करें – पवित्र आत्मा द्वारा बाँटे गए अपने वरदानों के आधार पर, न कि अपने लिंग के आधार पर। इस संगति का सार एक दूसरे के अधीन रहने और एक दूसरे के प्रति उत्तरदायित्व में है: सब सेवक बनें और अपने वरदानों से एक दूसरे की उन्नति में योगदान दें।

12.2 पदानुक्रमिक मॉडल

परिशिष्ट B

पदानुक्रम-आधारित मॉडल के पक्ष में दी जाने वाली मान्यताओं का सारांश



स्त्री पुरुष के अधीन है, जैसे मसीह पिता के अधीन है। सामान्यतः परंपरावादी कहते हैं कि स्त्रियाँ पुरुषों की तुलना में हीन नहीं हैं, परंतु आत्मिक रूप से समान मूल्य की होते हुए भी उनके कार्य अलग हैं। इसका अर्थ यह होगा कि उनके कार्य उनके लिंग पर निर्भर करते हैं। इसका बाइबल आधारित तर्क यह दिया जाता है कि "सिर" का अर्थ अधिकार है; और क्योंकि मसीह कलीसिया का सिर (अधिकार) है और पुरुष स्त्री का सिर (अधिकार) है, इसलिए स्त्री को अधीन रहना चाहिए और उसे पुरुष पर कोई अधिकार नहीं हो सकता। इसलिए वह पुरुषों को शिक्षा नहीं दे सकती और प्रचार भी नहीं कर सकती।

इस परंपरावादी दृष्टिकोण में निम्नलिखित अर्थ मान लिए जाते हैं:

ʿezer kᵉnägdo	समान मूल्य की सहायक का अर्थ है "अधीन"
kephale	सिर का अर्थ है "अधिकार"
authentein	इसका अनुवाद "अधिकार" किया जाता है
sigao	इसका अर्थ है "बोलना मना है"
hupotasso	इसका अर्थ है "पत्नी का पति के अधीन रहना", और कलीसिया इसे "स्त्रियों का पुरुषों के अधीन रहना" के अर्थ में अपना लेती है

मुख्य बाइबल-अंश के रूप में ये दिए जाते हैं:

इफिसियों 5:22 (अधीनता)
1 तीमुथियुस 2:12 (मैं अनुमति नहीं देता)
इफिसियों 5:23 और 1 कुरिन्थियों 11:3 (सिर)

(गलातियों 3:28 की व्याख्या केवल आत्मिक रूप से की जाती है – धर्मी ठहराए जाने की शिक्षा के एक महत्वपूर्ण कथन के रूप में – परंतु जीवन के व्यवहार पर इसका कोई ठोस प्रभाव नहीं माना जाता)

13 विभिन्न पाठकों के उपसंहार

मैं आभारी हूँ कि कुछ मित्रों ने पांडुलिपि को आलोचनात्मक दृष्टि से पढ़ने के बाद एक व्यक्तिगत वचन जोड़ने का कष्ट उठाया। यह उसे पूरा करता है, जो मेरे लेखन में नहीं है, और उसे गहरा करता है, जिसे मैंने केवल छुआ भर है।

13.1 खुली दृष्टि पर झाड़ियाँ उग आई हैं!

हम इस विषय पर पुस्तक क्यों लिखना चाहते हैं और क्यों लिखनी पड़ रही है? इसलिए नहीं कि हम सब कुछ उलट-पलट देना चाहते हैं। इसलिए नहीं कि हम बेहतर जानते हैं।

यह इसलिए हुआ कि Hans-Jörg से अचानक यह प्रश्न पूछा गया: “आप स्त्री की स्थिति और भूमिका को कैसे देखते हैं? सामान्य रूप से और विशेषकर मसीही कलीसियाई जीवन के संबंध में।”

यह प्रश्न हमारे जीवन में पहली बार सामने नहीं आया था। लंबे समय तक हम कलीसियाई संदर्भों से बँधे रहे, और वहाँ स्त्रियों की अधीन या चुप रहने वाली भूमिका पर प्रश्न उठाना उल्टा असर करता है, जब सब कुछ शान्ति से तय की हुई लीक पर चल रहा हो।

व्यक्तिगत रूप से मैं विद्रोही स्वभाव की नहीं हूँ, इस अर्थ में कि मैं अपना विचार और अपनी राय तुरंत सामने रख दूँ या उसे मनवाना चाहूँ। फिर भी अतीत में, विशेषकर मसीही कलीसियाई जीवन में, मेरे लिए ऐसे तरीक़ों को सहना और झेलना कठिन रहा, जिन पर मुझे प्रश्न उठाने की “अनुमति” नहीं थी, या जिन पर मुझे बहुत मानवीय और सतही उत्तर मिले।

Hans-Jörg के रूप में मेरे साथ एक ऐसे पति हैं, जिन्हें बाइबल में खोज करना और उसका अध्ययन करना सबसे अधिक प्रिय है। यह एक बड़ा वरदान है कि वे परमेश्वर के वचन को समझते और समझाते हैं। जो समझ में नहीं आता और जहाँ प्रश्न होते हैं, उसका कभी न कभी फिर से नए सिरे से अध्ययन होता है।

जमे हुए विचारों और मतों पर फिर से प्रश्न उठाने के लिए साहस चाहिए, और फिर यह पहचानने के लिए भी कि यह मेरे अब तक के जीवन से वास्तव में मेल नहीं खाता।

मेरा पालन-पोषण ऐसे हुआ कि स्त्रियाँ मसीही कलीसियाई सभा में ऊँचे स्वर में कुछ नहीं कहतीं। निश्चय ही बचपन में मैंने एक बार पूछा होगा कि ऐसा क्यों है। यह उत्तर, कि बाइबल में ऐसा ही लिखा है, उस समय मेरे लिए पर्याप्त था, और आगे पूछने की आवश्यकता नहीं थी। इसलिए मैंने इसे ठीक वैसे ही अपनाया और आगे जिया। – इसके कारण दशकों तक कलीसियाई जीवन की विषय-वस्तु में मेरी व्यक्तिगत सहभागिता बहुत निष्क्रिय रही, क्योंकि आराधना में योगदान देने वाला सब कुछ पूरी तरह पुरुष सँभालते थे। जब मैं प्रार्थना करती, तो धीरे से करती। एक स्त्री होने के नाते इसमें मेरा कोई उत्तरदायित्व नहीं था।

आज मैं स्वयं से पूछती हूँ कि प्रभु परमेश्वर ने आरंभ में इसकी कल्पना कैसे की थी। वह, आकाश और पृथ्वी का, सब पुरुषों और स्त्रियों का, सब पशुओं का सृष्टिकर्ता, चाहता है कि हम मनुष्य उसका स्वरूप हों, उसके सामने समान हों, उसके दिए हुए गुणों के साथ। जब हम वरदान-परीक्षण करते हैं, तो पाते हैं कि हर कोई कुछ न कुछ विशेष रूप से अच्छा कर सकता है, और हर किसी की हर बात में शक्तियाँ और कमज़ोरियाँ हैं।

क्या हो, यदि

- वह सृष्टिकर्ता, जिसने मुझे सृजनशील, आविष्कारशील, सामर्थी बनाया, और मुझे आराधना में / कलीसियाई सभा में उससे कुछ कहने को नहीं है
- यीशु, मानवजाति का उद्धारकर्ता, पृथ्वी पर आया, यहाँ जिया, स्त्री के जीवन और भूमिका को सचमुच उलट-पलट कर बदल दिया – मेरे लिए मरा, और अब उसके उद्धार-कार्य के एक बड़े भाग को – स्त्री-भाग को –, उसकी सृष्टि के आधे भाग को, आराधना में इसके लिए स्तुति और धन्यवाद करने को कुछ नहीं है

तब मैं अपनी निष्क्रियता से बाहर आना चाहती हूँ। अपने पालन-पोषण की छाप पर जय पाना चाहती हूँ। सक्रिय रूप से आगे बढ़ना चाहती हूँ। आप पुरुष स्त्रियों की सहायता कर सकते हैं! इसमें कौन किसके लिए सहायक है?

जहाँ तक हमारे वैवाहिक जीवन की बात है, हम पति और पत्नी के रूप में एक सुचारु सहयोग में जीते हैं। महत्वपूर्ण निर्णय हम साथ मिलकर लेते हैं। जो निर्णय मेरे वरदान और मेरे कार्य से संबंधित हैं, वे मैं निःसंकोच अकेले भी लेती हूँ। Hans-Jörg भी ऐसा ही करते हैं। इन सबमें हम एक दूसरे को बताते हैं और विचारों का आदान-प्रदान करते हैं। प्रेम और आदर परस्पर होते हैं और एक साथ एक ही रस्सी खींचते हैं, एक ही दिशा में। हम तो एक साझा लक्ष्य की ओर चल रहे हैं।

जब मैं संस्कृति के इतिहास में पढ़ती हूँ और देखती हूँ कि मध्य युग से लेकर सब भिन्न युगों में स्त्रियों के लिए कौन-सी भूमिका मानो स्वाभाविक थी, तो मैं दुखी हो जाती हूँ और आज इसकी कल्पना भी नहीं कर सकती, क्योंकि सबसे अच्छा यही माना जाता था कि स्त्रियाँ सार्वजनिक जीवन में, शिक्षा में और महत्वपूर्ण निर्णयों में दिखाई ही न दें। समय के साथ बीच-बीच में बदलाव और परिवर्तन आते रहे। परन्तु जीवन के कुछ क्षेत्रों और संस्कारों में भूमिकाओं के बँटवारे का ढंग अब भी बहुत गहराई में बैठा है।

मुझे एक चित्र याद आता है, जिस पर हमारी सुंदर झील के चारों ओर टहलते समय मेरा ध्यान गया: झील के चारों ओर के रास्ते पर बीच-बीच में बेंचें लगी हैं। साँस लेने के लिए रुकने पर मैं देखती हूँ कि झील का दृश्य झाड़ियों और पेड़ों से पूरी तरह ढक गया है। लिखते समय मुझे इसके साथ यह तुलना सूझी: झील और बेंच अब भी हैं = सृष्टि और मानव-स्वभाव अब भी हैं – केवल वह दृश्य, और वह जो सृष्टिकर्ता ने कभी आरंभ में सोचा था, झाड़ियों और पेड़ों के कारण लगभग लुप्त हो गया है। ताकि वह दृश्य, जिसके लिए कभी बेंच के होने का अच्छा कारण था, फिर से खुल जाए, बेतहाशा बढ़ती झाड़ियों और पेड़ों को हटाना होगा। इसी प्रकार उन अतिवृद्धियों को भी हटाना होगा, जिन्हें हमने परमेश्वर की सृष्टि-कल्पना के ऊपर उगने दिया है।

क्रिस्टीने रॉन्सडॉर्फ (Christine Ronsdorf), ऑलगॉय क्षेत्र का ज़ुल्त्सबर्ग (Sulzberg im Allgäu)

13.2 क्या कुछ सम्भव हो सकता था!

"'स्त्रियों के प्रश्न' पर एक और पुस्तक ..." – यह उस प्रीप्रिंट पर मेरी पहली प्रतिक्रिया थी, जो Hans-Jörg Ronsdorf ने मुझे भेजा था। परन्तु पहली बार सरसरी दृष्टि डालने के बाद इसके दृष्टिकोण ने मुझे इतना आकर्षित किया कि मैं पढ़ना ठीक से छोड़ ही नहीं पाया। मेरा मसीही समाजीकरण लेखक जैसा ही है। मैं 'बंद ब्रदरन कलीसियाओं' (geschlossene Brüdergemeinden) में बड़ा हुआ, 'युवा भाइयों की सभाओं' के साथ, जो केवल युवा पुरुषों के लिए आरक्षित थीं, जबकि युवा महिलाएँ 'बुनाई की घड़ी' में मिलती थीं। वहाँ कोई भक्ति-संदेश नहीं होते थे, क्योंकि स्त्री को तो शिक्षा देने की अनुमति नहीं थी। स्त्रियाँ शिक्षा नहीं देतीं, धर्मवैज्ञानिक प्रश्नों पर चर्चा में भाग नहीं लेतीं, वे कलीसिया में चुप रहती हैं, सिवाय 'आमीन' के या चार स्वरों वाले गायन के। मुझे आज भी अपनी गृह-कलीसिया में 'बंद ब्रदरन कलीसियाओं' के उस समय के राष्ट्रीय स्तर के एक अग्रणी भाई का एक प्रवचन अच्छी तरह याद है, जिसमें उसने 'स्त्रियों के सम्मेलनों' के विषय पर यह वाक्य कहा: "हम कहाँ पहुँच जाएँगे, यदि स्त्रियाँ सम्मेलनों में हों और पुरुषों को घर पर बच्चों की गाड़ी धकेलनी पड़े?" ठीक, हम कहाँ पहुँच जाएँगे? यह एक ऐसा प्रश्न है, जो किसी को – या मुझे – स्वयं से बहुत पहले पूछ लेना चाहिए था। चाहे अंतर्दृष्टि से हुआ हो या पूरे समाज के दबाव के कारण, पिछले दशकों में (ब्रदरन) कलीसियाओं के रूढ़िवादी मंडलों में भी परिस्थितियाँ निश्चय ही बदली हैं। युवा सभाएँ, गृह-समूह और दूसरे अवसर हैं, जिनमें स्त्रियों को मेरी युवावस्था के समय से अलग ढंग से देखा और उनके साथ अलग व्यवहार किया जाता है। कुछ कलीसियाएँ इस मार्ग पर थोड़ा आगे बढ़ती हैं और स्त्रियों को यह अवसर देती हैं कि वे अपने वरदानों और बुलाहटों के अनुसार कलीसियाई गतिविधियों के कुछ कोनों में सेवा करें। परन्तु व्यक्तिगत रूप से मैं स्वयं से यह प्रश्न पूछता हूँ: क्या यह पर्याप्त है? ब्रदरन कलीसियाओं के आरंभिक समय में डार्बी (Darby) और उसके साथियों ने सब विश्वासियों के सामान्य याजकत्व के सिद्धांत को फिर से खोजा। जैसा वह विवादप्रिय था, डार्बी ने राज्य-कलीसियाओं के पादरीवाद से अलग होते हुए इसे इस प्रकार कहा: "I believe the 'Notion of a clergyman' to be the sin against the Holy Ghost in this dispensation"। अर्थात् लगभग "पादरियों के एक वर्ग की स्थापना इस युग (प्रबंध-काल) में पवित्र आत्मा के विरुद्ध पाप है"। ब्रदरन आंदोलन के धर्मवैज्ञानिक केंद्र में खड़ी इस मान्यता ने व्यवहार में परमेश्वर की कलीसिया के लिए आत्मा की अगुवाई और स्वतंत्रता में एक बड़ा लाभ दिया। परन्तु दुर्भाग्य से इसने कलीसिया में सेवाओं की केवल 'पढ़े-लिखे और अभिषिक्त (ऑर्डेन किए गए)' होने की कसौटियों वाली सीमा को ही हटाया, "पुरुष" होने की कसौटी बनी रही। क्या कुछ सम्भव हो सकता था, यदि यह पहचाना गया होता कि 'बड़ी तस्वीर' (big picture), जैसी Hans-Jörg Ronsdorf ने खींची है, परमेश्वर की एक्लीसिया (Ecclesia) में स्त्री की भूमिका को कैसे बदल देती है? क्या होता, यदि ब्रदरन आंदोलन दृढ़ता से इस बात का प्रतिनिधित्व करता कि "हम सब तो भाई हैं", पुरुष भी और स्त्रियाँ भी? 'पवित्र आत्मा में धार्मिकता, शान्ति और आनन्द' वाला परमेश्वर का राज्य ऐसी खोज और उसके क्रियान्वयन के द्वारा इस संसार को कितना जीत और भेद सकता था, उस समय से बहुत पहले, जब धर्मनिरपेक्ष नारीवाद ने यह कुछ हद तक अनुचित ढंग से किया? इसलिए मैं डार्बी के वाक्य को जान-बूझकर

उकसाने वाले ढंग से नए और अलग रूप में लिखना चाहता हूँ: "मैं विश्वास करता हूँ कि यह धारणा, कि स्त्रियों को चुप रहना है और वे पुरुषों की तरह शिक्षा नहीं दे सकतीं और सेवा नहीं कर सकतीं, हमारे समय में पवित्र आत्मा का विरोध है"। पवित्रशास्त्र स्पष्ट है: "जो तूने बहुत से गवाहों के सामने मुझसे सुना है, उसे विश्वासयोग्य मनुष्यों को सौंप दे, जो दूसरों को भी सिखाने के योग्य होंगे!" (2 तीमुथियुस 2:2) पौलुस "मनुष्यों" (anthropoi) लिखता है, "पुरुषों" नहीं! यदि इसे जिया जाए, तो क्या होता है? कलीसिया के 50% से अधिक सदस्यों के वरदानों और बुलाहटों का धन सक्रिय हो जाता है, और ऐसी वृद्धि आरंभ होती है, जिसकी पहले कल्पना भी नहीं की जा सकती थी। अब मैं बहुत से अवसरों पर अपनी पत्नी के साथ मिलकर प्रसन्नता से और अक्सर सेवा करता हूँ, और मेरा विश्वास कीजिए: वह बहुत-सी बातें मुझसे कहीं बेहतर सिखा सकती है। और यही बात मैं अपने कलीसियाई परिवेश की बहुत-सी स्त्रियों में भी पाता हूँ। इसलिए व्यक्तिगत रूप से अब मेरे लिए बात 'कलीसिया में स्त्री' के थोड़ा और अधिक होने की नहीं, बल्कि इस बात की है कि स्त्रियों को वह स्थान दिया जाए, जो परमेश्वर ने उनके लिए ठहराया है। डैलस विलार्ड (Dallas Willard) ने इसे बहुत सटीक रूप से व्यक्त किया है: "परमेश्वर और अपने पड़ोसियों के लिए उनकी सेवा की शर्तें न तो स्त्रियों के 'आधिकारिक' सेवाएँ या आत्मिक पद सँभालने के अधिकार तय करते हैं, न इन पदों में पुरुषों के साथ उनके समान अधिकार। उन्हें उनके दायित्व तय करते हैं – ऐसे दायित्व, जो उनकी मानवीय क्षमताओं से निकलते हैं, जिन्हें ईश्वरीय अनुग्रह-वरदानों के द्वारा सामर्थ दी गई है" ("How I Changed My Mind About Women in Leadership" में)। इसी अर्थ में मैं इस पुस्तक से आनन्दित हूँ और हर किसी के लिए – चाहे पुरुष हो या स्त्री – यह कामना करता हूँ कि उसने इसे खुले हृदय से पढ़ा हो, ताकि फिर आनन्द के साथ कह और जी सके: "परन्तु हम सब भाई हैं!"

रोल्फ़ श्ट्युशर (Rolf Stücher), वेस्टरवाल्ड क्षेत्र का ज़ाल्त्सबुर्ग (Salzburg, Westerwald)

"स्त्रियों का प्रश्न" और "भाई-बहनों का प्रेम"

"स्त्रियों के प्रश्न" ने परमेश्वर की कलीसिया में पहले ही बहुत झगड़ा और टूटन ला दी है। क्या यह परमेश्वर की इच्छा हो सकती है कि ऐसे विवादित प्रश्नों के कारण हम एक दूसरे के सिर फोड़ें? हम में से हर कोई कहेगा: "बिल्कुल नहीं!" तो फिर यह दुखद वास्तविकता क्यों है?

अपने इस उपसंहार में हम पूरे उत्साह से इस बात की पैरवी करना चाहते हैं कि ऐसे मंच बनाए जाएँ, जिनमें आत्मिक प्रेम के साथ और रचनात्मक रूप से एक दूसरे से चर्चा और विचारों का आदान-प्रदान हो सके, इस जैसे कठिन विषयों पर भी। Hans-Jörg, उनकी पत्नी क्रिस्टीने (Christine) और साझा मित्रों के साथ एक भेंट में हमने यह अनुभव किया। "स्त्रियों के प्रश्न" पर कुछ हद तक भिन्न दृष्टिकोणों के बावजूद हम इस बातचीत से कृतज्ञता और आनन्द से भरे हुए लौटे कि हमारे इतने प्रिय भाई-बहन हैं। हमने अनुभव किया कि यह बाइबल-वचन कैसे जिया गया:

"मैं तुम्हें एक नई आज्ञा देता हूँ: एक दूसरे से प्रेम करो! तुम्हें एक दूसरे से वैसा ही प्रेम करना चाहिए, जैसा मैंने तुमसे प्रेम किया है। तुम्हारे आपसी प्रेम से सब जान लेंगे कि तुम मेरे चेले हो" (यूहन्ना 13:34-35)

हमारी कलीसिया में भी अब स्त्री की भूमिका पर विचार-विमर्श होने वाला है। हम एक छोटा और युवा समूह हैं – लगभग सब 20 और 40 वर्ष के बीच के हैं। इसके अतिरिक्त हमें बिल्कुल भिन्न-भिन्न शिक्षा-संबंधी पृष्ठभूमियाँ साथ में मिली हैं। मानवीय दृष्टि से ये सब आसान परिस्थितियाँ नहीं हैं। इसके साथ यह भी है कि युवा लोग अपनी मान्यताओं में अक्सर बड़े, अधिक परिपक्व मसीहियों से भी अधिक कट्टर होते हैं। परमेश्वर का धन्यवाद हो कि जो हमारे लिए असंभव है, वह उसके लिए संभव है। हम तो पवित्र आत्मा की प्रेमपूर्ण अगुवाई पर भरोसा रख सकते हैं! अपनी कलीसिया में हम बार-बार स्वयं को यह याद दिलाते हैं कि हमारा स्वभाव यीशु जैसा होना चाहिए: सदा दूसरे और उसकी आवश्यकताओं को ध्यान में रखो, नम्र रहो और अपनी ही बात पर अड़े मत रहो!

जब कोई इस विषय से रचनात्मक ढंग से जूझना चाहता है – जो हम करने वाले हैं –, तो हमें दो बातों पर ध्यान देना अनिवार्य लगता है: पहली, हमें बार-बार स्वयं को यह याद दिलाना होगा कि "भाई-बहनों के प्रेम" की तुलना में "स्त्रियों के प्रश्न" का क्या महत्व है। परमेश्वर इस बात से प्रसन्न नहीं होगा, यदि हम अपनी शिक्षा-संबंधी मान्यताओं को उन बहुत-सी आज्ञाओं से ऊपर रखें, जो हमें एक दूसरे से व्यावहारिक रूप से प्रेम करने को कहती हैं। हमने ठान लिया है कि हमारे आने वाले विचार-विमर्श में यह प्रेम इस प्रकार प्रकट हो कि हम भाई-बहनों के विवेक को अनदेखा करके काम न करें, और इसमें उसे ध्यान में रखें, जो निर्बल है। दूसरी, हम पाठों की यथासंभव निष्पक्ष होकर जाँच करना चाहते हैं, आलोचनात्मक प्रश्नों के लिए भी खुले रहना चाहते हैं और स्वयं पर ईमानदारी से चिंतन करना चाहते हैं। शायद हम इस साझा समझ तक पहुँचें कि व्याख्या की जिन परंपराओं को हम अब तक जीते आए हैं, उन्हें सचमुच सुधार की आवश्यकता है। अंततः हम जानते हैं कि एक फलदायी विचार-विमर्श तभी हो सकता है, जब सब परमेश्वर की अगुवाई के लिए खुले हों और विषय के साथ और एक दूसरे के साथ जुड़ने के लिए तैयार हों।

परन्तु एक बात हम अपनी प्राथमिकताओं की सूची में सदा सबसे ऊपर रखना चाहते हैं:

आइए, हम उस साझा कार्यभार को जीना अपना मुख्य कार्य बना लें – एक दूसरे से व्यावहारिक रूप से प्रेम करना!

आइए, हम एक दूसरे के साथ अपने व्यवहार के द्वारा लोगों को यीशु के लिए जीतें, क्योंकि इसीलिए तो हम यहाँ हैं!

हेलेन और माथियास ड्युन्ज़र (Helen & Matthias Dünser), ऑलगॉय क्षेत्र का मिसेन (Missen i. Allgäu)

13.3 परिवर्तन

हम क्रिस्टीने और Hans-Jörg Ronsdorf को दिसंबर 2015 से जानते हैं, जब उन्होंने "Kirche für Alle" ("सबके लिए कलीसिया") का अपना मिशनरी दर्शन हमारे साथ बाँटा। कंधे से कंधा मिलाकर हमने उनके और एक टीम के साथ मिलकर "Kirche für Alle e.V." पहल की नींव रखी और तब से केम्पटेन

(Kempten) के सार्वजनिक स्थानों पर बहुत-से रचनात्मक, सुसमाचार-प्रचार के कार्यक्रम किए हैं। साझा अगुवाई के इन पाँच वर्षों में हम दंपतियों और परिवारों के रूप में एक दूसरे को व्यक्तिगत रूप से गहराई से जान पाए हैं।

जब हम रॉन्सडॉर्फ़ परिवार से मिले, तब Hans-Jörg पहले से ही एक आत्मिक परिवर्तन के बीच में थे। परमेश्वर ने उनके हृदय को छुआ था और गहरी जड़ें जमाए हुए संस्कारों और मान्यताओं को हिला दिया था। इस परिवर्तन-प्रक्रिया को हमने अपनी आँखों से होते देखा। यह विशेष रूप से इसलिए रोमांचक था, क्योंकि केवल एक वर्ष पहले उनकी धर्मवैज्ञानिक मान्यता के कारण हमारे साथ सहयोग की कल्पना भी नहीं की जा सकती थी।

इन वर्षों में हमने विशेष रूप से Hans-Jörg के बाइबल के प्रति उत्साह, उनके पृष्ठभूमि-ज्ञान, परमेश्वर के प्रति उनके प्रेम और धर्मविज्ञान के मूल प्रश्नों से जूझने में उनकी ईमानदारी की बहुत सराहना करना सीखा। वे दूसरों की राय से अधिक परमेश्वर के प्रति प्रतिबद्ध हैं और आलोचनात्मक विषयों से पीछे नहीं हटते। उनकी पृष्ठभूमि, उनकी कलीसियाई कहानी और यही प्रामाणिक दृष्टिकोण उस चुनौतीपूर्ण विषय – "बाइबल में स्त्री की भूमिका" – से उनके जूझने को इतना विशेष, रोमांचक और पढ़ने योग्य बनाते हैं।

यह पुस्तक धर्मविज्ञान के सूक्ष्म दृष्टिकोणों में नहीं उलझती, बल्कि एक अच्छी ऊँचाई से उड़ते हुए ऐतिहासिक, सांस्कृतिक और बाइबलीय संबंध स्थापित करती है, जो समझने में कठिन बाइबल-स्थलों की व्याख्या को एक नई रोशनी में रख देते हैं। "स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!" (Frauen, vergebt uns!) अपने संस्कारों और धर्मवैज्ञानिक समझ को कसौटी पर कसने का आह्वान करती है – और स्त्रियाँ इसकी हक़दार हैं। विषय के प्रति बड़े आदर के साथ हमें इस पुस्तक के बनने की प्रक्रिया को निकट से देखने का अवसर मिला, और हम इस साहसी पुस्तक के लिए, और सबसे बढ़कर पहले हुई बहुत-सी गहरी और अच्छी बातचीतों के लिए आभारी हैं। धन्यवाद, Hans-Jörg और क्रिस्टीने।

टोबी और डानिएला श्ट्रिकर (Tobi und Daniela Stricker), ऑलगॉय क्षेत्र में केम्पटेन के निकट विगेन्सबाख (Wiggensbach bei Kempten im Allgäu)

14 समापन-निवेदन: क्या स्त्रियों का प्रश्न इतना महत्वपूर्ण है?[138]

एक बहन ने मेरा ध्यान इस ओर दिलाया कि इस प्रश्न में बात (केवल) धर्मविज्ञान की नहीं है। बात मनुष्यों की है। बात लड़कियों और स्त्रियों की, और उनकी गरिमा और उनके सम्मान की है। एक पुरुष होने के नाते मैं इस पूरे विषय को पुरुष के दृष्टिकोण से देखता हूँ, जो सीधे स्त्रियों की आवाज़ को व्यक्त नहीं करता, परन्तु उनके पक्ष में बोलता है।

मुझे आशंका है कि इस पदानुक्रमिक-धार्मिक ढाँचे (पूरकतावाद) ने बहुत सी स्त्रियों के भीतर कुछ घायल या नष्ट कर दिया है। मेरी पुस्तक पर मिली थोड़ी-सी प्रतिक्रियाएँ इस आकलन की पुष्टि करती हैं। वास्तविक संख्या इससे बड़ी होगी, विशेषकर जब मैं उन युवा स्त्रियों और लड़कियों के विषय में सोचता हूँ, जो समान अधिकार वाले समाज में बड़ी होती हैं, परन्तु अपने मसीही कलीसियाई परिवेश में प्राचीन काल के लैंगिक भूमिका-आदर्शों से "शिक्षा" पाती हैं। इस दुविधा से कैसे निपटा जाए?

14.1 बात कुछ (वर्जित) सेवाओं की नहीं है

स्पष्ट कर दूँ: बात मुख्य रूप से यह नहीं है कि स्त्रियों को प्रचार करने, शिक्षा देने या अगुवाई करने की अनुमति नहीं है। बहुत सी स्त्रियाँ वैसे भी इसकी आदी हो चुकी हैं, और इस बात की ओर उनकी दृष्टि ही नहीं रही कि इसमें कभी कुछ बदल सकता है। अक्सर वे इन ढाँचों और नियमों को अपने लिए बाइबलीय सत्य मानती हैं और स्वयं इन मान्यताओं पर अब प्रश्न नहीं उठातीं। परन्तु उन्हें ऐसा करना चाहिए। मैं इसे सत्य की पहचान के लिए एक स्वस्थ संघर्ष कहूँगा, विशेषकर तब, जब कोई यह सोचता है कि यह समझ आदिम कलीसिया के समय से निर्विवाद रूप से चली आ रही है। यह बात बाइबल के बहुत से विषयों पर लागू होती है। कभी-कभी विषयों को फिर से शुरू से अक्षर-अक्षर पढ़ना पड़ता है।

शीर्षक का प्रश्न लगभग झुँझलाई हुई प्रतिक्रिया है इस बात पर कि मैं अपनी पुस्तक (शीर्षक: "स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए!") और लेखों के द्वारा बार-बार ये "नारीवादी" प्रश्न उठाता हूँ। मेरे विचार में यह प्रश्न यह कहना, या इस बात को हल्का करना, चाहता है: बहनों के पास कलीसिया में, परमेश्वर के राज्य में और परिवार में सहयोग करने और अपने वरदानों को विकसित करने के इतने सारे कार्य और अवसर हैं, कि यदि उन्हें प्रचार करने, शिक्षा देने या अगुवाई करने की अनुमति न हो, तो यह कोई भेदभाव नहीं हो सकता। हर किसी का अपना स्थान और अपनी भूमिका है, जैसी सृष्टि की व्यवस्था ने पहले से निर्धारित कर दी है।

परन्तु यदि कोई पूरी तस्वीर देखने का प्रयास करे, तो बात उन दो-तीन सेवाओं की नहीं है, जो कथित रूप से स्त्री का अधिकार नहीं हैं। बात स्त्री के प्रति उस पूरे दृष्टिकोण की है, जो इसके पीछे है। इस प्रश्न के पीछे – कि क्या यह सचमुच इतना महत्वपूर्ण है – यह धारणा है कि स्त्री को आदम के लिए एक (अधीन) सहायक के

138. यह अध्याय जोड़ा गया है।

रूप में रचा गया और वह पदानुक्रम में उसके अधीन, उसके नीचे या उसके बाद रखी गई है। यही उस समस्या की जड़ है, जिससे बहुत सी (सब नहीं) स्त्रियाँ पीड़ित हैं। बाहर से अक्सर दिखाई न देने वाली एक भीतरी, गहराई में छिपी असुरक्षा है, अन्याय की एक भावना। जब स्त्री को, स्त्री होने के नाते, पुरुष के समान आदर नहीं दिया जाता। जब किसी को अपने विचारों में स्वतंत्र होकर नहीं, बल्कि व्यवस्था जैसी सीमाओं में सोचना और काम करना पड़ता है (मुझे क्या करने की अनुमति है और क्या नहीं), जिन्हें धार्मिकता का आवरण पहना दिया जाता है। स्त्री की भूमिका के विषय में यह दृष्टिकोण प्रभु में बहुत सी बहनों को सताने वाले प्रश्नों और आत्म-संदेह के साथ छोड़ देता है। वे स्वयं से पूछती हैं कि परमेश्वर ने ऐसा क्यों चाहा, जब तक उनके मन में यह ठूँसा जाता है कि यही परमेश्वर की योजना है। यदि परमेश्वर भला और सिद्ध है, तो मसीही विवाहों में स्त्रियाँ बुरी बातें क्यों अनुभव करती हैं और कलीसियाओं में ऐसी सीमाएँ क्यों, जिन्हें सामान्य बुद्धि से समझा नहीं जा सकता? परमेश्वर की आज्ञाएँ सदा भली हैं और वह चाहता है कि हम उनका अर्थ समझें, जो (कम से कम नए नियम में) सदा स्पष्ट होता है। परन्तु इस प्रश्न में कोई भी तर्कसंगतता नहीं दिखती!

14.2 पुरुष क्या अनुभव करते हैं और क्या नहीं

यह एक ऐसी भावना है, जिसे हम पुरुष इस रूप में नहीं जानते। पुरुष कम ही कमज़ोर पक्ष होते हैं। समय आ गया है कि इसे पहचानें और इसके प्रति संवेदनशील हों। कुछ पुरुषों की कल्पना और सोच में स्त्रियों की इन हीनता की भावनाओं को समझ पाना असंभव-सा लगता है।

क्या इस विषय पर इतनी अधिक भावुकता का वास्तविक कारण शायद बाइबल के प्रति निष्ठा कम, और यह अपना घमंड अधिक है कि उसकी अगुवाई की भूमिका, उसका सिर होना, प्रश्न के घेरे में आ गया है? शायद केवल अवचेतन में? कि अचानक पत्नी के भी वही अधिकार और कर्तव्य हों जो पति के हैं? यदि किसी ने दशकों तक इसे अलग ढंग से देखा और जिया हो, तो यह समझ, यदि आती है, भूकंप के समान होती है। केवल भूल को स्वीकार करना ही नहीं, बल्कि एक अलग साझा जीवन के लिए स्वयं को तैयार करना। इसके लिए शक्ति चाहिए। पहले अंतर्दृष्टि। परन्तु बाइबलीय मार्ग जीवन की ओर ले जाता है। सदा।

14.3 स्त्रियों के प्रश्न में हम बाइबल कैसे पढ़ते हैं

मैं कोई ऐसा विषय नहीं जानता, जो भावनात्मक रूप से इतना उत्तेजित हो। मानो बात जीवन और मृत्यु की हो। यीशु के व्यक्तित्व, उनके ईश्वरत्व और उनके उद्धार-कार्य जैसे विषयों पर यह समझ में आता। परन्तु इस प्रश्न पर नहीं कि क्या स्त्रियाँ आराधना में प्रार्थना और भविष्यद्वाणी कर सकती हैं (जिसे पौलुस स्वाभाविक रूप से मानकर चलते हैं, यदि कोई ध्यान से देखे, संदर्भ पर ध्यान दे और बाइबल की बड़ी और पूरी तस्वीर पर भी)।

जब स्त्रियों के प्रश्न की बात आती है, तो हम बाइबल कैसे पढ़ते हैं? क्या हम पूरे विषय को 1 तीमुथियुस 2 और 1 कुरिन्थियों 14 के दो (!) पदों के माध्यम से देखते हैं? यदि हम दूसरे महत्वपूर्ण शिक्षा-संबंधी प्रश्नों में भी बाइबल को इसी तरह दो पदों तक सीमित करके पढ़ें और परखें, तो कैसी विकृत शिक्षाएँ निकलेंगी? और पूरी बाइबलीय सामग्री को एक दूसरे के साथ एक स्वस्थ, विश्वसनीय संबंध में रखे और तौले बिना ही। केवल इसी प्रकार तो स्वस्थ शिक्षा उत्पन्न होती है!

तब हम शास्त्रियों की तरह पढ़ते हैं और सोचते हैं कि पवित्रशास्त्र में अनंत जीवन मिलता है, परन्तु उससे मिलने से चूक जाते हैं, जिसकी गवाही पवित्रशास्त्र देता है: मसीह (यूहन्ना 5:39)। पवित्रशास्त्र, जिससे हम इतना प्रेम करते हैं, उसकी गवाही देता है, जिसने स्त्रियों को स्वतंत्रता में पहुँचाया – सीखने, अंगीकार करने, गवाही देने और आराधना करने के लिए।

आइए, हम स्त्रियों के विषय में बाइबल की पूरी तस्वीर को सम्मान देना आरंभ करें और उसे पौलुस के दो ग़लत समझे गए वचनों के आधार पर न समझें।

14.4 अंतर्बोध

बहुत सी स्त्रियाँ, जब बाइबल पढ़ती हैं, जब यीशु को देखती हैं कि वे स्त्रियों के साथ कैसा व्यवहार करते थे, तो महसूस करती हैं कि कुछ ठीक नहीं है। उनके लिए यह और भी कठिन हो जाता है, जब वे देखती हैं कि जो पुरुष अगुवाई करने और सिर होने वाले हैं या होना चाहते हैं, वे असफल होते हैं। यद्यपि कहा जाता है कि परमेश्वर ने यह भूमिका – स्त्रियों के विपरीत – ठीक उन्हीं को सौंपी है। फिर भी कितनी ही बार पत्नियाँ ही आग से कोयले निकालती हैं (मुश्किल से उबारती हैं)।

अपनी पुस्तक पर मिली प्रतिक्रियाओं में मेरा यही अनुभव है। पुस्तक का शीर्षक एक ऐसे रिक्त स्थान को भरता प्रतीत होता है, जो बहुत बड़ा है। उससे भी बड़ा, जितना मैंने तब सोचा था, जब मैंने यह शीर्षक चुना।

अब मैं निश्चय ही ऐसे विवाहों को जानता हूँ – जहाँ तक निकट के लोगों के लिए भी जानना संभव है – जिनमें इस प्रकार का पदानुक्रम प्रेम में जिया जाता है। परन्तु क्या यह इस बात का संकेत है कि तब पदानुक्रम सही और पवित्र है? निश्चय ही नहीं। हम कितनी ही ग़लत बातें सोचते और करते हैं, जिन्हें हम सही मानते हैं, क्योंकि वे किसी न किसी तरह चल तो जाती हैं।

हाँ, "स्त्रियों का प्रश्न" निश्चित रूप से महत्वपूर्ण है। क्योंकि बात परमेश्वर और मनुष्य के विषय में हमारी समझ की है। बात इस समझ की हर विकृति और कुरूपता को मिटाने और सुधारने की है। परमेश्वर हम पर अनुग्रह करे और इस कार्य में हमारी सहायता करे, क्योंकि ग़लत धारणाएँ अकल्पनीय रूप से गहराई में बैठी हैं और बहुतों को ऊपर से ईश्वरीय सत्य भी प्रतीत होती हैं। जबकि यह एक सांसारिक व्यवहार है। यह युग की आत्मा है – पृथ्वी के हमारे भाग में इक्कीसवीं सदी की नहीं, बल्कि बीती हुई बीसवीं और उन्नीसवीं सदी की।

यदि हम पुरुष अपनी पत्नियों से वैसा प्रेम करना चाहते हैं, जैसा मसीह ने कलीसिया से प्रेम किया, तो हम उन्हें प्रेम के द्वारा इस ग़लत और अक्सर भेदभावपूर्ण भूमिका से बाहर निकालेंगे और उनके लिए वह स्थान

देंगे और खाली करेंगे, जो परमेश्वर की सृष्टि की व्यवस्था में उनका अधिकार है।

वास्तव में स्त्रियों का प्रश्न गहराई में पुरुषों का प्रश्न है। हम पुरुषों को स्वयं पर प्रश्न उठाना होगा! क्योंकि नए नियम की पदानुक्रमिक और कभी-कभी पितृसत्तात्मक व्याख्या के लिए कौन ज़िम्मेदार है? पुरुषों ने बाइबल की व्याख्या में सर्वोच्च अधिकार अपने हाथ में ले लिया है और मानते हैं कि यह उनका अपना निजी विशेषज्ञता-क्षेत्र है। कैसा आत्म-अतिरंजन! आत्मा के वरदान लिंग के अनुसार नहीं बाँटे जाते। इस व्यवहार के कारण स्त्रियों के अनगिनत वरदान भुला दिए गए, दबा दिए गए, निष्क्रिय कर दिए गए, अनदेखे किए गए और मंद कर दिए गए। आत्मा को बुझाना सचमुच कोई छोटी बात नहीं है। पुरुष ही तो कलीसियाओं की अगुवाई करते हैं और दिशा तय करते हैं – स्त्रियों को इसमें कुछ कहने का अधिकार नहीं, और यदि है भी, तो केवल अनौपचारिक रूप से अपने पतियों के द्वारा, जो परन्तु अपने अगुवों के मंडल में कभी स्वीकार नहीं करेंगे कि वे अपनी पत्नी की राय पर चल रहे हैं।

14.5 मेरा उद्देश्य क्या नहीं है

बात न तो कलीसिया के आधुनिकीकरण की है (बात कमरों और भवनों की नहीं है), न समय के साथ चलने की। बात यीशु के प्रति निष्ठा की है – और यही बाइबल के प्रति निष्ठा है! आधुनिकीकरण नहीं, बल्कि स्त्रियों के प्रश्न में सुधार (रिफ़ॉर्मेशन) – "स्त्रियों का प्रश्न" इस संदिग्ध शब्द का एक बिल्कुल अंतिम बार प्रयोग करते हुए।

बात किसी धर्मवैज्ञानिक बहस को जीतने की नहीं है। यह विषय इसके लिए उपयुक्त नहीं है, क्योंकि इससे सीधे मनुष्य (विशेषकर प्रभु में बहनें) प्रभावित होते हैं और हर पक्ष का दृष्टिकोण कलीसिया में, परमेश्वर के राज्य में और विवाह और परिवार में जीवन को गहराई से प्रभावित करता है।

परन्तु फिर भी केवल एक बहस, केवल आपत्ति और केवल भविष्यसूचक संबोधन ही इस विषय को नए सिरे से गति दे सकता है। बातचीत और रचनात्मक वाद-विवाद के बिना सब कुछ पहले जैसा ही रहेगा।

14.6 अलग होने का कारण?

इस प्रश्न पर भावनाओं का ऊँचा स्तर जल्दबाज़ी और कठोर कार्यवाही की ओर ले जाता है, जो अक्सर अलगाव, विभाजन और फूट में समाप्त होती है। एक पक्ष के लिए एक ईश्वरीय सीमा पार हो जाती है, जो दूसरे पक्ष के लिए है ही नहीं। अब क्या?

तनाव सहना कुछ समय तक चल सकेगा, परन्तु क्योंकि यह प्रश्न दोनों पक्षों के लिए इतना कुछ समेटे हुए है, अंत में एक साथ चलना संभव नहीं होगा। जब तक कि कोई उस बात को सह न सके, जो किसी कलीसिया में प्रचलित रीति है। हाँ, परमेश्वर भी बहुत कुछ सहता है, हमारी कल्पना से भी अधिक, बुरी बात को अच्छा ठहराए बिना।

और इसलिए हर किसी को अपने लिए निर्णय करना होगा। मेरे विचार में इस तनाव में कोई बीच का रास्ता तय करना भी कठिन है, जिसमें लोग एक दूसरे की ओर उतना बढ़ें, जितना वे उचित ठहरा सकें।

क्षमा कीजिए, यदि मैं इस विषय पर कोई समाधान नहीं दे सकता। अलगाव अधिकतर बुरे होते हैं, परन्तु समझौते भी बुरे हो सकते हैं।

14.7 स्त्रियों को खड़ा होना होगा

जीवन में कुछ बातें ऐसी हैं, जिन्हें केवल स्वयं ही किया जा सकता है। कोई और उन्हें हमारे लिए नहीं कर सकता। स्त्रियों को उठना होगा, अपना मार्ग पहचानना होगा और ग़लत समझी गई अधीनता से बाहर आना होगा। बड़ी कलीसियाओं में ऐसी स्त्रियाँ हैं, जो जाग गई हैं और पहचान गई हैं कि लिंग के प्रश्न में कुछ बहुत ग़लत है। कोई इन आंदोलनों के विषय में चाहे जो सोचे, परन्तु होशे 8:7 के साथ मैं कहता हूँ: जो वायु बोता है, वह बवंडर काटेगा।

Nice girls don't change the world – एक सच्चा वाक्य (भली लड़कियाँ संसार को नहीं बदलतीं)। यह विषय इतना जड़ हो गया है और ऐसा अछूता सत्य बन गया है कि इसके विरुद्ध खड़े होने के लिए एक लाउडस्पीकर भी बिल्कुल उचित है। दूसरी मसीही सच्चाइयों के लिए, जिन्हें उद्धार के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है, ऊँचे स्वर में पुकारा ही जाता है, है न?

दूसरा विकल्प यह है कि सब कुछ जैसा है वैसा ही रहे। ताकि फिर उस महान दिन, उसकी महिमा, स्पष्टता और सत्य के सामने, यह मानना पड़े कि हम ग़लत थे, दोनों लिंग। पुरुष अपनी समझ के साथ और स्त्रियाँ इन कथित बाइबलीय सत्यों को स्वीकार करने के साथ। तब एक बड़ा अवसर खो जाएगा और चला जाएगा, सदा के लिए।

अब न पुरुषों को कायर होना चाहिए, न स्त्रियों को! सत्य के पक्ष में खड़े होने की सदा कुछ क़ीमत चुकानी पड़ती है। यदि कलीसिया के इतिहास में बार-बार बहुत सी साहसी मसीही स्त्रियाँ और पुरुष खड़े न होते और धारा के विरुद्ध न तैरते, तो आज हम कहाँ होते? और यह हम भली-भाँति जानते हैं। मसीहियत का हर आंदोलन और हर धारा – और हम इनमें से किसी न किसी से जुड़े हैं – साहसी और प्रार्थना करने वाली स्त्रियों और पुरुषों के द्वारा आरंभ हुई।

14.8 आगे चलकर और अभी

अनंत काल में यह विषय हमारा पीछा नहीं करेगा। तब न कोई भावावेश होगा, न कोई आरोप या लांछन। न कोई नया नियम होगा, जिसके कथनों पर लोग विवाद करेंगे। पुरुष और स्त्री बस भाई और बहन के समान होंगे, पदानुक्रम और एकतरफ़ा अधीनता इतिहास बन जाएँगे। सब कुछ एक पतित संसार और बिगड़ी हुई सृष्टि-व्यवस्था का अतीत। वास्तव में तब लिंग की कोई भूमिका ही नहीं रहेगी। मसीह में न कोई नर है, न नारी

(गलातियों 3:28)। पौलुस इसे इतनी सुसंगत दृष्टि से देखता है। आइए, हम उसका अनुकरण करें, जैसे वह मसीह का अनुकरण करने वाला था!

तो आइए, हम अभी से, जहाँ तक हम पर निर्भर है, उस नई सृष्टि की स्वतंत्रता और सामर्थ को जिएँ, जो हम पुनर्जीवित और महिमान्वित मसीहा में बन गए हैं!

15 ग्रन्थ-सूची

Anstey, Stanley Bruce, 2020, Die Rolle der Schwestern in der Gemeinde, www.soundwords.de

Andreas J. Köstenberger, Southeastern Baptist Theological Seminary, Ascertaining Women’s God-Ordained Roles: An Interpretation of 1 Timothy 2:15

Bauer, Wörterbuch zum Neuen Testament

Baum, Armin, Die Bibel und ihre schwierigen Stellen

Beale, Gregory K., 2011, Der Tempel aller Zeiten, Die Wohnung Gottes und der Auftrag der Gemeinde, Oerlinghausen

Bielefeld, Frauke, 2007, Die Sache mit der Rippe, Die himmlische Idee von den Geschlechtern, Asslar

Bird, Michael F., Bourgeois Babes, Bossy Wives, and Bobby Haircuts: A Case for Gender Equality in Ministry (Fresh Perspectives on Women in Ministry) 2012, Grand Rapids, Mi

Carolyn Osiek; Margaret Y. MacDonald; Janet H. Tulloch. A Woman's Place: House Churches in Earliest Christianity

Clouse, Bonnidell और Robert, 1989, Women in Ministry, Downers Grove

Cunningham, Loren; Hamilton, Joel David, 2014, Warum nicht! Frauen in christlich-kirchlichen Führungspositionen, Altensteig

Dale, Felicity, 2014, The Black Swan Effect, A response to gender hierarchy in the church

Dangendorf, Daniel, 2010, Junia, die erste Apostelin? Eine exegetische Studie, MBS Texte

Bode van het heil in Christus 140 (1997) Frage & Antwort: “Was dürfen Frauen?”

Gooding, David, Symbole und Zeichen von Autorität und Herrlichkeit

Hardmeier, Roland, 2013, Himmelstöchter! Warum die Stärke der Frau in der Bibel gebraucht wird. Und warum das biblisch ist. Basel

Hempelmann, Heinzpeter, 1997, Gottes Ordnungen zum Leben, Lahr

Hohage, Jäger, Pletsch, Ziegeler, 2010, Frau sein, Mann sein in der Gemeinde, Dillenburg

Junker, Reinhard, Genesis 1 und 2: Zwei sich ergänzende Schilderungen vom Anfang, Wort und Wissen Diskussionsbeitrag 1/91

Hausoul, Raymond, Mannen en Vrouwen in Gods schepping

Keener, Craig S., Was Paul For or Against Women in Ministry?

Kiermeier, Gerhild, 1993, Den Frauen aber sage ich, Marburg

Kubsch, Ron, Gottebenbildlichkeit und Sünde

Kuen, Alfred, 1998, Die Frau in der Gemeinde, Wuppertal

Lapide, Pinchas, 2004, Ist die Bibel richtig übersetzt? Gütersloh

Lapide, Pinchas, 1995, War Eva an allem schuld?

Liebi, Roger, Genesis 2: Die Schöpfung des Menschen

Linder, Irmgard, 1995, Ich will aber, dass ihr wisst, Dillenburg

Logos Bibel Programm

Nunn, Philip, 2018, Sollten Schwestern schweigen, Hünfeld

Ortberg, John, 2006, Die Frau schweige, Holzgerlingen

Peppiatt, Lucy, 2020, Rediscovering Scripture's Vision for Women: Fresh Perspectives on Disputed Texts, IVP Academic, Downers Grove, Illinois

Peppiatt, Lucy, 2015, Women and Worship at Corinth: Paul’s Rhetorical Arguments in 1 Corinthians, Eugene, Oregon

Peters, Benedikt, Das Weissagen der Frau

Pierce & Groothuis, 2005, Discovering Biblical Equality, IVP Academic, Downers Grove, Illinois

Piper, John and Wayne Grudem, 1991, Recovering Biblical Manhood and Womanhood, Crossway Books, Wheaton, Illinois; जर्मन संस्करण: Zweimalig einmalig – eine biblische Studie, 2008, Friedberg

Ruthven, Jon Ph.D., Women and Ministry: Does Scripture Contradict Itself?

Schirrmacher, Thomas, 2002 संस्करण, Paulus im Kampf gegen den Schleier, Eine alternative Auslegung von 1. Korinther 11,2-16, Nürnberg

Schmalenbach, H., 2007, Frausein zur Ehre Gottes: ... im Kontext verschiedener Kulturen

Schmidt, Veronika, 2019, Endlich gleich, Holzgerlingen

Smith, Kern, 2000, OHNE UNTERSCHIED, Frauen und Männer im Dienst für Gott, Brunnen Verlag, Gießen

Stadelmann, Helge, Die Frau als Pastorin – Ja oder Nein?, और Die Frauenordination – Ein Testfall für Bibeltreue?

Steinmeister, Andreas, 2013, Wann immer ihr zusammenkommt, Daniel, Lychen

Steinmeister, Andreas, 1991, UNBEQUEM, Gottes Plan für Mann und Frau, CSV Hückeswagen

Spencer, Aída Besançon, 1985, Beyond the Curse: Women Called to Ministry,

Späth, Thomas / Beate Wagner, (सं.), 2006, Frauenwelten in der Antike, Geschlechterordnung und weibliche Lebenspraxis, Stuttgart

Strauch, Alexander, 2001, Die Revolution der Geschlechter, Bielefeld

Trenkel, Michael, 2017, Dürfen Frauen in der Gemeinde lehren? Kurzauslegung zu 1Tim 2,11-15

Ulm, Christoph, Die Rolle von Mann und Frau

Walton, J. H., 2001, Genesis, The NIV Application Commentary, Zondervan, Grand Rapids, MI

Weber, Karl-Heinz, 2007, Mann und Frau nach Gottes Plan, Neustadt

Welt und Umwelt der Bibel, 4/2025, Wer waren die ersten Christinnen

White, Joel R., Ehefrauen in den paulinischen Gemeinden

Wilson, Bunny, 1992, Ich? Mich unterordnen?, Bielefeld

Wunderli, Armin, 2020, “ihm gegenüber”: Geschlechter-Gleichberechtigung in der Kirche und was die Bibel dazu (nicht) sagt KSH.Digital

Zens, Jon, 2010, What’s with Paul and Women? Unlocking the cultural background to 1 Timothy 2, Lincoln, Nebraska

16 लेखक की पुस्तकें

Und die Toten leben doch (फिर भी मृतक जीवित हैं), 1992

Seitenwechsel, Von Adam zu Christus (पक्ष परिवर्तन – आदम से मसीह तक), 2011

Entrückung, Himmel, Ewigkeit, Ein neuer Blick auf alte Themen (उठा लिया जाना – स्वर्ग – अनंतकाल: पुराने विषयों पर एक नई दृष्टि), 2015

Gottes Lamm, Golgota und die Ewigkeit (परमेश्वर का मेम्ना – गुलगुता और अनंतकाल), 2015

Fantastische Himmelwelt, Lehre und Leben der Himmelwelt im Epheserbrief (अद्भुत स्वर्गीय लोक – इफिसियों की पत्री में स्वर्गीय लोक की शिक्षा और जीवन), 2016

Gott spricht, Eine erklärende Übertragung der allgemeinen Briefe und der Offenbarung (परमेश्वर बोलता है। – सामान्य पत्रियों और प्रकाशितवाक्य का एक व्याख्यात्मक रूपांतर), 2017

Epheser, nacherzählt, erklärt, für heute (पौलुस की इफिसियों को पत्री – पुनर्कथित, व्याख्यायित, आज के लिए), 2018

Gods good Gospel, Gottes gutes Evangelium (परमेश्वर का शुभ सुसमाचार), 2019

Markus, nacherzählt, erklärt für heute (मरकुस के अनुसार सुसमाचार – पुनर्कथित, व्याख्यायित, आज के लिए), 2019

Galater, nacherzählt, erklärt für heute (पौलुस की गलातियों को पत्री – पुनर्कथित, व्याख्यायित, आज के लिए), 2020

Die Briefe des Johannes, nacherzählt, erklärt für heute (यूहन्ना की पत्रियाँ – पुनर्कथित, व्याख्यायित, आज के लिए), 2020

Frauen, vergebt uns! Kurzversion (स्त्रियो, हमें क्षमा कीजिए! – संक्षिप्त संस्करण), 2022

Ein König voller Pracht – Die gute Botschaft von Jesus, dem Messias (वैभव से भरपूर एक राजा – यीशु मसीहा का सुसमाचार), 2022

17 अनुशंसित पुस्तकें



(जर्मन में) पुस्तक-विक्रेताओं के पास या सीधे प्रकाशक क्रिस्टियान बेसे (Christian Beese) से उपलब्ध: christian@rvbeese.de

कैथरीन सी. बुशनेल (Katharine C. Bushnell, 1855–1946) परमेश्वर की एक साहसी और प्रतिभाशाली सेविका थीं, जिन्होंने इस पद को अपने जीवन का आदर्श-वाक्य बना लिया था: “जो मुझे सामर्थ देता है, उसमें मैं सब कुछ कर सकती हूँ।” वे चिकित्सक, मिशनरी, क्रूस की राजदूत, सुधारक, लेखिका और वक्ता थीं, और साथ ही एक प्रतिभाशाली और मौलिक विदुषी भी, जो सात भाषाएँ बोलती थीं और प्राचीन यूनानी और इब्रानी पर अधिकार रखती थीं। बुशनेल ने चिकित्सा का क्षेत्र छोड़ दिया, ताकि वह कार्य करें, जिसे वे और भी अधिक महत्वपूर्ण मानती थीं, अर्थात् मनुष्यों की अपमानजनक जीवन-परिस्थितियों को

बदलना – उन्नीसवीं सदी के स्त्री-आंदोलन के वीमेन्स क्रिश्चियन टेम्परेंस यूनियन (Women's Christian Temperance Union, WCTU) में एक अग्रणी भूमिका सँभालकर। स्त्रियों की बाइबलीय स्थिति बुशनेल के लिए बहुत महत्वपूर्ण थी, क्योंकि वे इस निष्कर्ष पर पहुँचीं कि स्त्रियों की सामाजिक और आत्मिक अधीनता के लिए ग़लत अनुवाद उत्तरदायी थे। 1896 में उन्होंने WCTU छोड़ दिया, ताकि अपने शेष वर्ष इस कार्य को समर्पित करें कि वे लिखें और स्त्रियों की पूर्ण समानता के विषय में परमेश्वर के मूल और अपरिवर्तित अभिप्राय का बाइबलीय सत्य आगे पहुँचाएँ।

कैथरीन बुशनेल की God's Word to Women एक युगांतरकारी अध्ययन है, जो स्त्रियों के विषय में पवित्रशास्त्र के हर स्थल की सावधानी से जाँच करता है। जेसी पेन-लुइस (Jessie Penn-Lewis) ने कहा कि इस सामग्री ने पवित्रशास्त्र को एक ऐसे ढंग से खोल दिया है, जिसे केवल सीधे परमेश्वर से मिले प्रकाशन के रूप में ही वर्णित किया जा सकता है। आज बहुतों के लिए यह वह पुस्तक है, जिसने उन्हें वह बनने की स्वतंत्रता दी, जिसके लिए परमेश्वर ने उन्हें बुलाया है, और वह कार्य करने की, जो पवित्र आत्मा ने उनके हृदयों में रखा है।

चीन में मिशनरी चिकित्सक के रूप में अपने समय में बुशनेल ने पाया कि चीनी बाइबल का अनुवाद ग़लत ढंग से किया गया था, ताकि स्त्रियों की सेवा के विरुद्ध सांस्कृतिक पूर्वाग्रहों को बल मिले। उन्होंने स्वयं से पूछा कि क्या वही पुरुष-पूर्वाग्रह शायद अंग्रेज़ी अनुवादों को भी प्रभावित करते हैं, और उन्होंने इब्रानी और यूनानी का अपना अध्ययन गहरा किया। बाद में, जब वे WCTU के लिए सारे संसार में यात्रा कर रही थीं, तो उन्होंने रेलगाड़ियों में, जहाज़ों पर और उन ठहरने के स्थानों में, जहाँ वे रहती थीं, घंटों का उपयोग बाइबल-अनुवादों की मूल भाषाओं के शब्दों से सावधानीपूर्वक तुलना करने में किया।

अनुभव और अध्ययन के द्वारा परमेश्वर ने कैथरीन बुशनेल को God's Word to Women लिखने के लिए तैयार किया। 1908 में एक पत्राचार-पाठ्यक्रम के रूप में आरंभ हुई यह पुस्तक पहले बुशनेल ने स्वयं प्रकाशित की। आरंभिक सकारात्मक प्रतिक्रियाओं के बावजूद पुस्तक जल्द ही फिर से लुप्त हो गई; और बुशनेल इस विश्वास के साथ मरीं कि उनके जीवन ने कम ही प्रभाव छोड़ा। परन्तु परमेश्वर बेहतर जानता था! पुस्तक फिर से खोजी गई और उन लोगों के द्वारा प्रकाशित होती रहती है, जो उसके अमूल्य मूल्य को पहचानते हैं। आज अंततः इसे वह योग्य मान्यता मिल रही है, जो इसे उन लोगों के लिए एक आधारभूत साहित्यिक स्रोत के रूप में मिलनी चाहिए, जो स्त्रियों की बाइबलीय समानता के सबसे आगे के मोर्चे पर काम करते हैं।

हन्ना-मारिया श्मालेनबाख (Hanna-Maria Schmalenbach)

Frausein zur Ehre Gottes

In jeder Kultur anders? (क्या हर संस्कृति में अलग?)



परमेश्वर ने मनुष्य को पुरुष और स्त्री के रूप में रचा। क्या उसने साथ ही उन्हें सृष्टि की एक ऐसी व्यवस्था भी दी, जो पुरुष होने और स्त्री होने को परिभाषित करती है और लिंगों के संबंध को सब संस्कृतियों के लिए कालातीत रूप से नियंत्रित करती है? मनुष्य के पाप की क्या भूमिका है; सांस्कृतिक प्रभावों की क्या भूमिका है? और यीशु मसीह में उद्धार के द्वारा हम लिंगों के संबंध में किन परिवर्तनों की अपेक्षा कर सकते हैं?

इन और ऐसे ही प्रश्नों पर आज तक संघर्ष चल रहा है, विशेषकर स्त्री की स्थिति और कलीसिया में उसके कार्य-क्षेत्र के विषय में। परमेश्वर की महिमा के लिए स्त्री होना (Frausein zur Ehre Gottes) – यही बहुत-सी स्त्रियों की इच्छा है! परन्तु ठोस रूप से इसका क्या अर्थ है: हर संस्कृति में कुछ और?

हन्ना-मारिया श्मालेनबाख उद्धार के इतिहास के संबंध में और उस समय की संस्कृतियों की पृष्ठभूमि में स्त्री की बाइबलीय छवि को रेखांकित करती हैं। इससे आश्चर्यजनक अंतर्दृष्टियाँ और ऐसे दिशा-संकेत मिलते हैं कि हमारे समय की संस्कृतियों में स्त्रियाँ अपने जीवन को परमेश्वर की महिमा के लिए कैसे ढाल सकती हैं।

"... (यह) हमारी कलीसियाओं के लिए दिशा-संकेत भी दे सकती है, परन्तु बहस की चिंगारी भी।"

हाइके होयन (Heike Heun), Idea Spezial 7/2021 Buchjournal में

"कलीसिया में स्त्री की भूमिका पर अब तक की सबसे अच्छी पुस्तक ... विषय पर व्यापक, वस्तुनिष्ठ विचार, तार्किक संरचना, संस्कृति का ध्यान और व्यवहार से संबंध इस पुस्तक की कुछ शक्तियाँ हैं। इस पुस्तक के द्वारा पहली बार मुझे कलीसिया में अपनी भूमिका के विषय में सचमुच शान्ति मिली। एक महत्वपूर्ण, सामयिक विषय पर एक मूल्यवान और विश्वसनीय योगदान, जिसे हमारी कलीसियाओं के पुरुषों और स्त्रियों को अवश्य पढ़ना चाहिए!"

मारियाने म्युलर (Marianne Müller) अपने ब्लॉग strickleserl पर

"निश्चित रूप से 'स्त्रियों के प्रश्न' पर अब तक मुझे मिला सबसे अच्छा और सबसे विश्वसनीय कार्य!"

एक पाठिका की समीक्षा

"... 'स्त्रियों के प्रश्न' पर सबसे समझदार पुस्तकों में से एक, जो स्त्रियों के रूप में हमारी भूमिका को नए सिरे से खोजने में सहायता कर सकती है।"

मोनिका कुश्मीर्त्स (Monika Kuschmierz), पत्रिका Joyce में

"कलीसिया में स्त्री की सेवा पर कोई भी अध्ययन मानव-चिकित्सा, अंतर-सांस्कृतिक, ऐतिहासिक और बाइबलीय दृष्टि से मिली अंतर्दृष्टियों को इतनी अच्छी तरह एक साथ नहीं जोड़ता, जितना डॉ. श्मालेनबाख का अध्ययन। जो इस अध्ययन को गंभीरता से लेता है, उसे स्त्री की सेवा के प्रति अपनी स्थिति पर फिर से विचार करना होगा। इस प्रश्न से जुड़ा कोई भी व्यक्ति इस प्रस्तुति को अनदेखा न करे।"

डॉ. हेल्मुट एगेलक्राउट (Dr. Helmuth Egelkraut, 1938–2018)

Neufeld Verlag (प्रकाशक, जर्मन में)

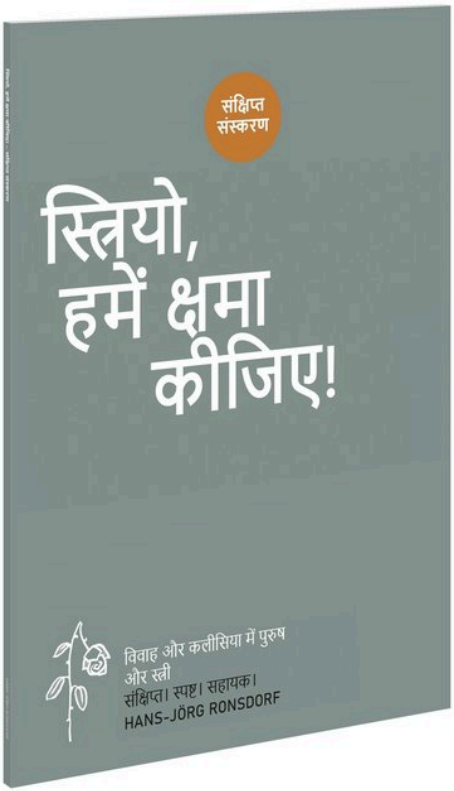
Sauerbruchstraße 16

27478 Cuxhaven

टेलीफ़ोन: 04723 5057260

ई-मेल: info@neufeld-verlag.de

इस पुस्तक का संक्षिप्त संस्करण (जर्मन में), नए पाठ-रूप में, 80 पृष्ठों का, लेखक से 3.80 यूरो में उपलब्ध है (www.hans-joerg-ronsdorf.de) और Amazon पर Kindle ई-बुक के रूप में भी।



Die Gleichstellung von Mann und Frau (स्त्री और पुरुष की समानता) धर्मवैज्ञानिक और भाषा-शोधकर्ता फ़िलिप बी. पेन (Philip B. Payne) का एक छोटा, परन्तु गहन कार्य है, जो सब प्रासंगिक बाइबल-पाठों के द्वारा प्रमाणित करते हैं कि पुरुष और स्त्री विवाह, कलीसिया और समाज में समान हैं।

56 पृष्ठ, जुलाई 2023, (जर्मन में) पुस्तक-विक्रेताओं के पास या जर्मन अनुवादक से उपलब्ध: hj-ronsdorf@t-online.de, Amazon पर Kindle ई-बुक के रूप में भी


DIE GLEICH
STELLUNG
VON MANN
UND FRAU
AUS SICHT
DER BIBEL
PHILIP B. PAYNE